॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

1361

संक्षिप्त

श्रीवराहपुराण

केवल हिन्दी, सचित्र, मोटा टाइप

गीताप्रेस गोरखपुर
GITA PRESS, GORAKHPUR

गीताप्रेस, गोरखपुर

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES
FIND ALL AT HTTPS://DSC.GG/DHARMA
Made with
By
Avinash/Shashi
[creator of
hinduism
server]
KAPWING

COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES
FIND ALL AT HTTPS://DSC.GG/DHARMA
Made with
By
Avinash/Shashi
[creator of
hinduism
server]
KAPWING

॥ श्रीहरिः ॥ 1361

संक्षिप्त

श्रीवराहपुराण

(सचित्र, मोटा टाइप, केवल हिन्दी)

गीताप्रेस, गोरखपुर

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi
In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust. Sharda Peeth

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

॥ ॐ ॥

संक्षिप्त

श्रीवराहपुराण

(सचित्र, मोटा टाइप, केवल हिन्दी)

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

गीताप्रेस, गोरखपुर

1 S. Varah Puran_Section_1_1_Front Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

सं० २०७४ तेरहवाँ पुनर्मुद्रण ३,०००
कुल मुद्रण ३८,०००

❖ मूल्य—₹ १२०
(एक सौ बीस रुपये)

प्रकाशक एवं मुद्रक—
गीताप्रेस, गोरखपुर—२७३००५
(गोबिन्दभवन-कार्यालय, कोलकाता का संस्थान)
फोन : (०५५१) २३३४७२१, २३३१२५०; फैक्स : (०५५१) २३३६९९७
web : gitapress.org e-mail : booksales@gitapress.org
गीताप्रेस प्रकाशन gitapressbookshop.in से online खरीदें।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth S. Varah Puran_Section_1_1_Back

॥ श्रीहरिः ॥

निवेदन

पुराण भारतकी सर्वोत्कृष्ट निधि हैं। प्राचीनकालसे ही भारतवर्षमें पुराणोंका बड़े आदरके साथ पठन-पाठन, श्रवण-मनन और अनुशीलन होता आया है। भारतीय मानसमें भगवद्भक्ति, ज्ञान, वैराग्य, सदाचार तथा धर्मपरायणताको दृढ़तापूर्वक प्रतिष्ठित करने एवं मानव-जीवनके अन्तिम लक्ष्य—'भगवत्प्राप्ति' अथवा 'मोक्ष्य-साधन'की ओर प्रेरित करनेका श्रेय वस्तुतः पुराणोंको ही है। वेदादि शास्त्रोंके गूढ़तम ज्ञान-तत्त्वों एवं रहस्योंको सरल, रोचक एवं सुमधुर आख्यान-शैलीमें सर्वसाधारणके लिये सुलभ (उपलब्ध) करा देना ही पुराणोंकी अपूर्व विशेषता है। इसीलिये पुराणोंको भारतीय वाङ्मयमें विशिष्ट सम्मान और लोकप्रियता प्राप्त है।

पुराणोंकी ऐसी विलक्षण महिमा और महत्त्वको सादर स्वीकार करते हुए गीताप्रेसने 'कल्याण'के विशेषाङ्कोंके माध्यमसे समय-समयपर अनेक पुराणोंका सरल हिन्दी-अनुवाद जनहितमें प्रकाशित किया है। 'संक्षिप्त वराहपुराणाङ्क' भी उनमेंसे एक है। यह 'कल्याण' के ५१वें वर्षके विशेषाङ्कके रूपमें जनवरी १९७७ ई०में प्रकाशित किया गया था। 'वराहपुराण'की गणना परम सात्त्विक पुराणोंमें की जाती है। इसकी कथाएँ बड़ी ज्ञानप्रद, रोचक और कल्याणकारी हैं। भगवत्परायणता, ज्ञान, वैराग्य, साधना एवं अध्यात्मके विकासके लिये इसका अनुशीलन बड़ा ही महत्त्वपूर्ण और उपयोगी है। इसमें भगवान् श्रीहरिके वराह-अवतारकी मुख्य कथाके साथ अनेक तीर्थ, व्रत, यज्ञ—यजन श्राद्ध, तर्पण, दान और अनुष्ठान आदिका शिक्षाप्रद और आत्मकल्याणकारी वर्णन है। भगवान् श्रीहरि (श्रीमन्नारायण)-की महिमा, पूजन-विधान, हिमालयकी पुत्रीके रूपमें गौरीकी उत्पत्तिका वर्णन और भगवान् शङ्करके साथ उनके विवाहकी रोचक कथा इसमें विस्तारसे वर्णित है। इसके अतिरिक्त इसमें वराह-क्षेत्रवर्ती आदित्य-तीर्थोंका वर्णन, भगवान् श्रीकृष्ण और उनकी लीलाओंके प्रभावसे मथुरामण्डल और व्रजके समस्त तीर्थोंकी महिमा और उनके प्रभावका भी विशद तथा रोचक वर्णन है।

अमावस्या-तिथिकी महिमाके प्रसङ्गमें पितरोंकी उत्पत्तिका कथन एवं पूर्णिमा-तिथिकी महिमाके प्रसङ्गमें चन्द्रमाकी उत्पत्तिका वर्णन, मोक्षदायिनी पवित्र नदियोंकी उत्पत्ति, प्रभाव तथा माहात्म्यादि भी इसमें वर्णित हैं। इसके अतिरिक्त इसमें स्नान, दान, तर्पण आदिकी महिमाके साथ पुण्यकर्मों तथा पापकर्मोंके फलोंका विस्तृत वर्णन है। ब्रह्मा, विष्णु, शिवादि त्रिदेवोंकी महिमासहित उनके दिव्य लोकों—ब्रह्मलोक, शिवलोक और वैकुण्ठ आदिका भी इसमें बड़ा ही सुन्दर वर्णन है। साथ ही पुण्यकर्मोंके फलस्वरूप स्वर्गादि दिव्य लोकोंकी प्राप्ति और पापकर्मोंके परिणाम-स्वरूप भयावह नरकोंकी यातनाका भी वर्णन है। जो मनुष्यको अच्छे और बुरे कर्मोंके करने या उनसे बचनेकी प्रेरणा देता है। संक्षेपमें इसकी सभी कथाएँ अत्यन्त ज्ञानप्रद, रोचक और पुण्यप्रद कर्मोंकी ओर प्रेरित करनेवाली एवं पापकर्मोंसे विरत करनेवाली हैं। वराहपुराणकी फलश्रुति भी इसमें महत्त्वपूर्ण है।

हमारा विशेष प्रेमानुरोध है कि कल्याणकामी सभी महानुभावों, अध्यात्मचेता साधकों और समस्त श्रद्धालुजनोंको इसके अधिकाधिक अध्ययन-अनुशीलनद्वारा विशिष्ट पारमार्थिक लाभ उठाना चाहिये।

—प्रकाशक

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

विषय-सूची

क्रम — पृष्ठ-संख्या

१-भगवान् वराहके प्रति पृथ्वीका प्रश्न और भगवान्‌के उदरमें विश्वब्रह्माण्डका दर्शनकर भयभीत हुई पृथ्वीद्वारा उनकी स्तुति ९

२-विभिन्न सर्गोंका वर्णन तथा देवर्षि नारदको वेदमाता सावित्रीका अद्‌भुत कन्याके रूपमें दर्शन होनेसे आश्चर्यकी प्राप्ति ११

३-देवर्षि नारदद्वारा अपने पूर्वजन्मवर्णनके प्रसङ्गमें 'ब्रह्मपारस्तोत्र'का कथन १५

४-महामुनि कपिल और जैगीषव्यद्वारा राजा अश्वशिराको भगवान् नारायणकी सर्वव्यापकताका प्रत्यक्ष दर्शन कराना १७

५-रैभ्य मुनि और राजा वसुका देवगुरु बृहस्पतिसे संवाद तथा राजा अश्वशिराद्वारा यज्ञमूर्ति भगवान् नारायणका स्तवन एवं उनके श्रीविग्रहमें लीन होना २०

६-पुण्डरीकाक्षपार-स्तोत्र, राजा वसुके जन्मान्तरका प्रसङ्ग तथा उनका भगवान् श्रीहरिमें लय होना ... २३

७-रैभ्य-सनत्कुमार-संवाद, गयामें पिण्डदानकी महिमा एवं रैभ्य मुनिका ऊर्ध्वलोकमें गमन २६

८-भगवान्‌का मत्स्यावतार तथा उनकी देवताओंद्वारा स्तुति ३०

९-राजा दुर्जयके चरित्र-वर्णनके प्रसङ्गमें मुनिवर गौरमुखके आश्रमकी शोभाका वर्णन ३२

१०- राजा दुर्जयका चरित्र तथा नैमिषारण्यकी प्रसिद्धिका प्रसङ्ग ३५

११-राजा सुप्रतीककृत भगवान्‌की स्तुति तथा श्रीविग्रहमें लीन होना ४०

१२-पितरोंका परिचय, श्राद्धके समयका निरूपण तथा पितृगीत ४२

१३-श्राद्ध-कल्प ४५

१४-गौरमुखके द्वारा दस अवतारोंका स्तवन तथा उनका ब्रह्ममें लीन होना ४८

१५-महातपाका उपाख्यान ५०

१६-प्रतिपदा तिथि एवं अग्निकी महिमाका वर्णन ५१

१७-अश्विनीकुमारोंकी उत्पत्तिका प्रसङ्ग और उनके द्वारा भगवत्स्तुति ५२

१८-गौरीकी उत्पत्तिका प्रसङ्ग, द्वितीया तिथि एवं रुद्रद्वारा जलमें तपस्या, दक्षके यज्ञमें रुद्र और विष्णुका संघर्ष ५४

१९-तृतीया तिथिकी महिमाके प्रसङ्गमें हिमालयकी पुत्रीरूपमें गौरीकी उत्पत्तिका वर्णन और भगवान् शंकरके साथ उनके विवाहकी कथा ५८

२०-गणेशजीकी उत्पत्तिका प्रसङ्ग और चतुर्थी तिथिका माहात्म्य ६१

२१-सर्पोंकी उत्पत्तिका प्रसङ्ग और पञ्चमी तिथिकी महिमा ६३

२२-षष्ठी तिथिकी महिमाके प्रसङ्गमें स्वामी कार्तिकेयके जन्मकी कथा ६५

२३-सप्तमी तिथिकी महिमाके प्रसङ्गमें आदित्योंकी उत्पत्तिकी कथा ६८

२४-अष्टमी तिथिकी महिमाके प्रसङ्गमें मातृकाओंकी उत्पत्तिकी कथा ६९

२५-नवमी तिथिकी महिमाके प्रसङ्गमें दुर्गादेवीकी उत्पत्ति-कथा ७१

२६-दशमी तिथिके माहात्म्यके प्रसङ्गमें दिशाओंकी उत्पत्तिकी कथा ७४

२७-एकादशी तिथिके माहात्म्यके प्रसङ्गमें कुबेरकी उत्पत्ति-कथा ७४

२८-द्वादशी तिथिकी महिमाके प्रसङ्गमें उसके अधिष्ठाता श्रीभगवान् विष्णुकी उत्पत्ति-कथा ७५

२९-त्रयोदशी तिथि एवं धर्मकी उत्पत्तिका वर्णन ७६

३०-चतुर्दशी तिथिके माहात्म्यके प्रसङ्गमें रुद्रकी

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

क्रम पृष्ठ-संख्या

उत्पत्तिका वर्णन ७८
३१-अमावास्या तिथिकी महिमाके प्रसङ्गमें पितरोंकी उत्पत्तिका कथन ८१
३२-पूर्णिमा तिथिकी महिमाके प्रसङ्गमें उसके स्वामी चन्द्रमाकी उत्पत्तिका वर्णन ८१
३३-प्राचीन इतिहासका वर्णन ८३
३४-आरुणि और व्याधका प्रसङ्ग, नारायण-मन्त्रश्रवणसे बाघका शापसे उद्धार ८४
३५-सत्यतपाका प्राचीन प्रसङ्ग ८७
३६-मत्स्य-द्वादशीव्रतका विधान तथा फल-कथन ८८
३७-कूर्म-द्वादशीव्रत ९३
३८-वराह-द्वादशीव्रत ९४
३९-नृसिंह-द्वादशीव्रत ९६
४०-वामन-द्वादशीव्रत ९७
४१-जामदग्न्य-द्वादशीव्रत ९८
४२-श्रीराम एवं श्रीकृष्ण-द्वादशीव्रत ९९
४३-बुद्ध-द्वादशीव्रत १००
४४-कल्कि-द्वादशीव्रत १०२
४५-पद्मनाभ-द्वादशीव्रत १०३
४६-धरणीव्रत १०५
४७-अगस्त्य-गीता १०७
४८-अगस्त्य-गीतामें पशुपालका चरित्र १०८
४९-उत्तम पति प्राप्त करनेका साधनस्वरूप व्रत १०९
५०-शुभ-व्रत ११०
५१-धन्य-व्रत ११२
५२-कान्ति-व्रत ११३
५३-सौभाग्य-व्रत ११४
५४-अविघ्नव्रत ११५
५५-शान्ति-व्रत ११६
५६-काम-व्रत ११६
५७-आरोग्य-व्रत ११७
५८-पुत्रप्राप्ति-व्रत ११९
५९-शौर्य एवं सार्वभौम-व्रत ११९
६०-राजा भद्राश्वका प्रश्न और नारदजीके द्वारा विष्णुके आश्चर्यमय स्वरूपका वर्णन १२०
६१-भगवान् नारायण-सम्बन्धी आश्चर्यका वर्णन १२२
६२-सत्ययुग, त्रेता और द्वापर आदिके गुणधर्म १२३

क्रम पृष्ठ-संख्या

६३-कलियुगका वर्णन १२५
६४-प्रकृति और पुरुषका निर्णय १२८
६५-वैराज-वृत्तान्त १२९
६६-भुवन-कोशका वर्णन १३२
६७-जम्बूद्वीपसे सम्बन्धित सुमेरुपर्वतका वर्णन १३४
६८-आठ दिक्पालोंकी पुरियोंका वर्णन १३७
६९-मेरुपर्वतका वर्णन १३७
७०-मन्दर आदि पर्वतोंका वर्णन १३९
७१-मेरुपर्वतके जलाशय १३९
७२-मेरुपर्वतकी नदियाँ १४१
७३-देवपर्वतोंपरके देव-स्थानोंका परिचय १४२
७४-नदियोंका अवतरण १४३
७५-नैषध एवं रम्यकवर्षोंके कुलपर्वत, जनपद और नदियाँ १४४
७६-भारतवर्षके नौ खण्डोंका वर्णन १४६
७७-शाक एवं कुशद्वीपोंका वर्णन १४७
७८-क्रौञ्च और शाल्मलिद्वीपका वर्णन १४८
७९-त्रिशक्ति-माहात्म्य और सृष्टिदेवीका आख्यान १४९
८०-त्रिशक्ति-माहात्म्यमें 'सृष्टि', 'सरस्वती' तथा 'वैष्णवी' देवियोंका वर्णन १५१
८१-महिषासुरकी मन्त्रणा और देवासुर-संग्राम १५३
८२-महिषासुरका वध १५५
८३-'त्रिशक्तिमाहात्म्य'में रौद्रीव्रत १५८
८४-रुद्रके माहात्म्यका वर्णन १६१
८५-सत्यतपाका शेष वृत्तान्त १६२
८६-तिलधेनुका माहात्म्य १६४
८७-जलधेनु एवं रसधेनु-दानकी विधि १६८
८८-गुड़धेनु-दानकी विधि १६९
८९-शर्करा तथा मधुधेनुके दानकी विधि १७०
९०-'क्षीरधेनु' तथा 'दधिधेनु'-दानकी विधि १७२
९१-'नवनीतधेनु' तथा 'लवणधेनु' की दानविधि १७३
९२-'कार्पास' एवं 'धान्य-धेनु' की दानविधि १७५
९३-कपिलादानकी विधि एवं माहात्म्य १७६
९४-कपिला-माहात्म्य, 'उभयतोमुखी' गोदान, हेम-कुम्भदान और पुराणकी प्रशंसा १७७
९५-पृथ्वीद्वारा भगवान्‌की विभूतियोंका वर्णन १८१
९६-श्रीवराहावतारका वर्णन १८२

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

क्रम पृष्ठ-संख्या

९७- विविध धर्मोंकी उत्पत्ति १८४
९८- सुख और दुःखका निरूपण १८६
९९- भगवान्‌की सेवामें परिहार्य बत्तीस अपराध १८८
१००- पूजाके उपचार १९०
१०१- श्रीहरिके भोज्य पदार्थ एवं भजन-ध्यानके नियम १९४
१०२- मुक्तिके साधन १९५
१०३- कोकामुखतीर्थ (वराहक्षेत्र) का माहात्म्य १९७
१०४- पुष्पादिका माहात्म्य २०१
१०५- वसन्त आदि ऋतुओंमें भगवान्‌की पूजा करनेकी विधि और माहात्म्य २०३
१०६- माया-चक्रका वर्णन तथा मायापुरी (हरिद्वार) का माहात्म्य २०५
१०७- कुब्जाम्रकतीर्थ (हृषीकेश) का माहात्म्य, रैभ्यमुनिपर भगवत्कृपा २१३
१०८- दीक्षासूत्रका वर्णन २२१
१०९- क्षत्रियादि-दीक्षा एवं गणान्तिकादीक्षाकी विधि तथा दीक्षित पुरुषके कर्तव्य २२३
११०- पूजाविधि और ताम्रधातुकी महिमा २२६
१११- राजाके अन्न-भक्षणका प्रायश्चित्त २२९
११२- दातुन न करने तथा मृतक एवं रजस्वलाके स्पर्शका प्रायश्चित्त २२९
११३- भगवान्‌की पूजा करते समय होनेवाले अपराधोंके प्रायश्चित्त २३०
११४- सेवापराध और प्रायश्चित्त-कर्मसूत्र २३३
११५- वराहक्षेत्रकी महिमाके प्रसङ्गमें गीध और शृंगालका वृत्तान्त तथा आदित्यको वरदान २३८
११६- वराहक्षेत्रान्तर्वर्ती 'आदित्यतीर्थ' का प्रभाव (खञ्जरीटकी कथा) २४७
११७- भगवान्‌के मन्दिरमें लेपन एवं संकीर्तनका माहात्म्य २५१
११८- कोकामुख-बदरी-क्षेत्रका माहात्म्य २५६
११९- 'बदरिकाश्रम' का माहात्म्य २५९
१२०- उपासनाकर्म एवं नारीधर्मका वर्णन २६१
१२१- मन्दारकी महिमाका निरूपण २६२
१२२- सोमेश्वरलिङ्ग, मुक्तिक्षेत्र (मुक्तिनाथ) और त्रिवेणी आदिका माहात्म्य २६४

क्रम पृष्ठ-संख्या

१२३- शालग्रामक्षेत्रका माहात्म्य २७०
१२४- रुरुक्षेत्र एवं हृषीकेशके माहात्म्यका वर्णन २७३
१२५- 'गोनिष्क्रमण'-तीर्थ और उसका माहात्म्य २७५
१२६- स्तुतस्वामीका माहात्म्य २७७
१२७- द्वारका-माहात्म्य २७८
१२८- सानन्दूर-माहात्म्य २८०
१२९- लोहार्गल-क्षेत्रका माहात्म्य २८१
१३०- मथुरातीर्थकी प्रशंसा २८३
१३१- मथुरा, यमुना और अक्रूरतीर्थोंके माहात्म्य २८५
१३२- मथुरा-मण्डलके 'वृन्दावन' आदि तीर्थ और उनमें स्नान-दानादिका महत्त्व २८९
१३३- मथुरा-तीर्थका प्रादुर्भाव, इसकी प्रदक्षिणाकी विधि एवं माहात्म्य २९१
१३४- देववन और 'चक्रतीर्थ' का प्रभाव २९५
१३५- 'कपिल-वराह' का माहात्म्य २९७
१३६-अन्नकूट (गोवर्धन) पर्वतकी परिक्रमाका प्रभाव ३००
१३७- असिकुण्ड-तीर्थ तथा विश्रान्तिका माहात्म्य ३०३
१३८- मथुरा तथा उसके अवान्तरके तीर्थोंका माहात्म्य . ३०५
१३९- गोकर्णतीर्थ और सरस्वतीकी महिमा ३०७
१४०- सुग्गेका मथुरा जाना और वसुकर्णसे वार्तालाप ३०९
१४१- गोकर्णका दिव्य देवियोंसे वार्तालाप तथा मथुरामें जाना ३११
१४२- ब्राह्मण-प्रेत-संवाद, सङ्गम-महिमा तथा वामन-पूजाकी विधि ३१३
१४३- ब्राह्मण-कुमारीकी मुक्ति ३१६
१४४- साम्बको शाप लगना और उनका सूर्याराधन व्रत ३१९
१४५-शत्रुघ्नका चरित्र, सेवापराध एवं मथुरा माहात्म्य ३२१
१४६- श्राद्धसे अगस्तिका उद्धार, श्राद्ध-विधि तथा 'ध्रुवतीर्थ' की महिमा ३२३
१४७- काष्ठ-पाषाण प्रतिमाके निर्माण, प्रतिष्ठा एवं पूजाकी विधि ३२७
१४८- मृन्मयी एवं ताम्र-प्रतिमाओंकी प्रतिष्ठा-विधि ३३०
१४९- कांस्य-प्रतिमा-स्थापनकी विधि ३३३
१५०-रजत-स्वर्णप्रतिमाके स्थापन तथा शालग्राम

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

क्रम पृष्ठ-संख्या

और शिवलिङ्गकी पूजाका विधान ३३४
१५१- सृष्टि और श्राद्धकी उत्पत्ति-कथा एवं पितृयज्ञका वर्णन ३३५
१५२- अशौच, पिण्डकल्प और श्राद्धकी उत्पत्तिका प्रकरण ३४०
१५३- श्राद्धके दोष और उसकी रक्षाकी विधि ३४५
१५४- श्राद्ध और पितृयज्ञकी विधि तथा दानका प्रकरण ३४८
१५५- 'मधुपर्क' की विधि और शान्तिपाठकी महिमा ३५३
१५६- नचिकेताद्वारा यमपुरीकी यात्रा ३५६
१५७- यमपुरीका वर्णन ३५८
१५८- यम-यातनाका स्वरूप ३६१
१५९- राक्षस-यमदूत-संघर्ष तथा नरकके क्लेश ३६७

क्रम पृष्ठ-संख्या

१६०- कर्मविपाक-निरूपण ३६९
१६१- दानधर्मका महत्त्व ३७१
१६२- पतिव्रतोपाख्यान ३७४
१६३- पतिव्रताके माहात्म्यका वर्णन ३७७
१६४- कर्मविपाक एवं पापमुक्तिके उपाय ३७८
१६५- पाप-नाशके उपायका वर्णन ३८१
१६६- गोकर्णेश्वरका माहात्म्य ३८४
१६७- गोकर्णमाहात्म्य और नन्दिकेश्वरको वर-प्रदान ३८७
१६८- गोकर्णेश्वर तथा जलेश्वरके माहात्म्यका वर्णन ३९२
१६९- 'गोकर्णेश्वर' और 'शृङ्गेश्वर' आदिका माहात्म्य ३९८
१७०- वराहपुराणकी फल-श्रुति ३९९

चित्र-सूची

सादे

नरकोंके दृश्य और उनके नाम—

१- संदंश ३६३
२- संतप्त ३६३
३- असिपत्रवन ३६३
४- कुम्भीपाक ३६३
५- रौरव ३६३
६- महारौरव ३६३
७- प्राणरोध ३६४
८- अवीचिमान ३६४
९- अय:पान ३६४
१०- सूकरमुख ३६४
११- शूलग्रह ३६४
१२- सूर्मि ३६४

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

श्रीवराहपुराण

ॐ नमो भगवते महावराहाय

भगवान् वराहके प्रति पृथ्वीका प्रश्न और भगवान्‌के उदरमें विश्वब्रह्माण्डका दर्शनकर भयभीत हुई पृथ्वीद्वारा उनकी स्तुति

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत्॥
नमस्तस्मै वराहाय लीलयोद्धरते महीम्।
खुरमध्यगतो यस्य मेरुः खणखणायते॥
दंष्ट्राग्रेणोद्धृता गौरुदधिपरिवृता पर्वतैर्निम्नगाभिः
साकं मृत्पिण्डवत्प्राग्बृहदुरुवपुषाऽनन्तरूपेण येन।
सोऽयं कंसासुरारिर्मुरनरकदशास्यान्तकृत्सर्वसंस्थः
कृष्णो विष्णुः सुरेशो नुदतु मम रिपूनादिदेवो वराहः॥

अन्तर्यामी नारायणस्वरूप भगवान् वराह, नररत्न नरऋषि, उनकी लीला प्रकट करनेवाली भगवती सरस्वती और उसके वक्ता भगवान् व्यासको नमस्कार करके आसुरी सम्पत्तियोंका नाश करके अन्तःकरणपर विजय प्राप्त करानेवाले वराहपुराणका पाठ करना चाहिये।

जिनके लीलापूर्वक पृथ्वीका उद्धार करते समय उनके खुरोंमें फँसकर सुमेरु पर्वत खन-खन शब्द करता है, उन भगवान् वराहको नमस्कार है।

जिन अनन्तरूप भगवान् विष्णु (वराह)-ने प्राचीन कालमें समुद्रोंसे घिरी, वन-पर्वत एवं नदियोंसहित पृथ्वीको अत्यन्त विशाल शरीरके द्वारा अपनी दाढ़के अग्रभागपर मिट्टीके (छोटे-से) ढेलेकी भाँति उठा लिया था, वे कंस, मुर, नरक तथा रावण आदि असुरोंका अन्त करनेवाले कृष्ण एवं विष्णुरूपसे सबमें व्याप्त देवदेवेश्वर आदिदेव भगवान् वराह मेरी सभी बाधाओं (काम, क्रोध, लोभ आदि आध्यात्मिक शत्रुओं)-को नष्ट करें।

सूतजी कहते हैं—पूर्वकालमें जब सर्वव्यापी भगवान् नारायणने वराह-रूप धारण करके अपनी शक्तिद्वारा एकार्णवकी अनन्त जलराशिमें निमग्न पृथ्वीका उद्धार किया, उस समय पृथ्वीने उनसे पूछा।

पृथ्वीने कहा—प्रभो! आप प्रत्येक कल्पमें सृष्टिके आदिकालमें इसी प्रकार मेरा उद्धार करते रहते हैं; परंतु केशव! आपके स्वरूप एवं सृष्टिके प्रारम्भके विषयमें मैं आजतक न जान सकी। जब

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

वेद लुप्त हो गये थे, उस समय आप मत्स्यरूप धारण कर समुद्रमें प्रविष्ट हो गये थे और वहाँसे वेदोंका उद्धार करके आपने ब्रह्माको दे दिया था। मधुसूदन! इसके अतिरिक्त जब देवता और दानव एकत्र होकर समुद्रका मन्थन करने लगे, तब आपने कच्छपावतार ग्रहण करके मन्दराचल पर्वतको धारण किया था। भगवन्! आप सम्पूर्ण जगत्के स्वामी हैं। जब मैं जलमें डूब रही थी, तब आपने रसातलसे, जहाँ सब ओर जल-ही-जल था, अपनी एक दाढ़पर रखकर मेरा उद्धार किया है। इसके अतिरिक्त जब वरदानके प्रभावसे हिरण्यकशिपुको असीम अभिमान हो गया था और वह पृथ्वीपर भाँति-भाँतिके उपद्रव करने लगा था, उस समय वह आपके द्वारा ही मारा गया था। देवाधिदेव! प्राचीन कालमें आपने ही जमदग्निनन्दन परशुरामके रूपमें अवतीर्ण होकर मुझे क्षत्रियरहित कर दिया था। भगवन्! आपने क्षत्रियकुलमें दाशरथि श्रीरामके रूपमें अवतीर्ण होकर क्षत्रियोचित पराक्रमसे रावणको नष्ट कर दिया था तथा वामनरूपसे आपने ही बलिको बाँधा था। प्रभो! मुझे जलसे ऊपर उठाकर आप सृष्टिकी रचना किस प्रकार करते हैं तथा इसका क्या कारण है? आपकी इन लीलाओंके रहस्यको मैं कुछ भी नहीं जानती।

विभो! मुझे एक बार जलके ऊपर स्थापित करनेके अनन्तर आप किस प्रकार सृष्टिके पालनकी व्यवस्था करते हैं? आपके निरन्तर सुलभ रहनेका कौन-सा उपाय है? सृष्टिका किस प्रकार आरम्भ और अवसान होता है? चारों युगोंकी गणनाका कौन-सा प्रकार है तथा युगोंका क्रम किस प्रकार चलता है? महेश्वर! उन युगोंमें किस युगकी प्रधानता है तथा किस युगमें आप कौन-सी लीला किया करते हैं? यज्ञमें सदा संलग्न रहनेवाले कितने राजा हो चुके हैं और उनमेंसे किन-किनको सिद्धि सुलभ हुई है? प्रभो! आप मुझपर प्रसन्न हों और ये सब विषय संक्षेपसे बतानेकी कृपा करें।

पृथ्वीके ऐसा कहनेपर शूकररूपधारी भगवान् आदिवराह हँस पड़े। हँसते समय उनके उदरमें जगद्धात्री पृथ्वीको महर्षियोंसहित रुद्र, वसु, सिद्ध एवं देवताओंका समुदाय दीखने लगा। साथ ही उसने वहाँ अपने-अपने कर्तव्यपालनमें तत्पर सूर्य, चन्द्रमा, ग्रहों और सातों लोकोंको भी देखा। यह सब देखते ही भय एवं विस्मयसे पृथ्वीके सभी अङ्ग काँपने लगे। इस प्रकार पृथ्वीको भयभीत देखकर भगवान् वराहने अपना मुख बंद कर लिया। तब पृथ्वीने उनको चतुर्भुज रूप धारणकर महासागरमें शेषनागकी शय्यापर सोये देखा। उनकी नाभिसे कमल निकला हुआ था। फिर तो चार भुजाओंसे सुशोभित उन परमेश्वरको देखकर देवी पृथ्वीने हाथ जोड़ लिया और उनकी स्तुति करने लगी।

पृथ्वीने कहा—कमलनयन! आपके श्रीअङ्गोंमें पीताम्बर फहरा रहा है, आप स्मरण करते ही भक्तोंके पापोंका हरण करनेवाले हैं, आपको बारम्बार नमस्कार है। देवताओंके द्वेषी दैत्योंका दलन करनेवाले आप परमात्माको नमस्कार है। जो शेषनागकी शय्यापर शयन करते हैं, जिनके वक्षःस्थलपर लक्ष्मी शोभा पाती हैं तथा भक्तोंको मुक्ति प्रदान करना ही जिनका स्वभाव है, ऐसे सम्पूर्ण देवताओंके ईश्वर आप प्रभुको बारम्बार नमस्कार है। प्रभो! आपके हाथमें खड्ग, चक्र और शार्ङ्ग धनुष शोभा पाते हैं, आपपर जन्म एवं मृत्युका प्रभाव नहीं पड़ता तथा आपके नाभिकमलपर ब्रह्माका प्राकट्य हुआ है, ऐसे आप प्रभुके लिये बारम्बार नमस्कार है। जिनके अधर और करकमल

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

लाल विद्रुममणिके समान सुशोभित होते हैं, उन जगदीश्वरके लिये नमस्कार है। भगवन्! मैं निरुपाय नारी आपकी शरणमें आयी हूँ, मेरी रक्षा करनेकी कृपा करें। जनार्दन! सघन नील अञ्जनके समान श्यामल आपके इस वराहविग्रहको देखकर मैं भयभीत हो गयी हूँ। इसके अतिरिक्त चराचर सम्पूर्ण जगत्को आपके शरीरमें देखकर भी मैं पुनः भयको प्राप्त हो रही हूँ। नाथ! अब आप मुझपर दया कीजिये। महाप्रभो! मेरी रक्षा आपकी कृपापर निर्भर है।

भगवान् केशव मेरे पैरोंकी, नारायण मेरे कटिभागकी तथा माधव दोनों जङ्घाओंकी रक्षा करें। भगवान् गोविन्द गुह्याङ्गकी रक्षा करें। विष्णु मेरी नाभिकी तथा मधुसूदन उदरकी रक्षा करें। भगवान् वामन वक्षःस्थल एवं हृदयकी रक्षा करें। लक्ष्मीपति भगवान् विष्णु मेरे कण्ठकी, हृषीकेश मुखकी, पद्मनाभ नेत्रोंकी तथा दामोदर मस्तककी रक्षा करें।

इस प्रकार भगवान् श्रीहरिके नामोंका अपने अङ्गोंमें न्यास करके पृथ्वीदेवी 'भगवन्! विष्णो! आपको नमस्कार है' ऐसा कहकर मौन हो गयीं।

[अध्याय १]

विभिन्न सर्गोंका वर्णन तथा देवर्षि नारदको वेदमाता सावित्रीका अद्भुत कन्याके रूपमें दर्शन होनेसे आश्चर्यकी प्राप्ति

सूतजी कहते हैं—सभी जीवधारियोंके शरीरोंमें आत्मारूपसे स्थित भगवान् श्रीहरि पृथ्वीकी भक्तिसे परम संतुष्ट हो गये। उन्होंने वराह-रूप धारण करके पृथ्वीको अपनी योगमायाका दर्शन कराया और फिर उसी रूपमें स्थित रहकर बोले—'सुश्रोणि! तुम्हारा प्रश्न यद्यपि बहुत कठिन है एवं यह पुरातन इतिहासका विषय है, तथापि मैं सभी शास्त्रोंसे सम्मत इस विषयका प्रतिपादन करता हूँ। पृथ्वीदेवि! साधारणतः सभी पुराणोंमें यह प्रसङ्ग आया है।'

भगवान् वराहने कहा—सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वन्तर और वंशानुचरित—जहाँ ये पाँच लक्षण विद्यमान हों, उसे पुराण समझना चाहिये। वरानने! पुराणोंमें सर्ग अर्थात् सृष्टिका स्थान प्रथम है। अतः मैं पहले उसीका वर्णन करता हूँ। इसके आरम्भसे ही देवताओं और राजाओंके चरित्रका ज्ञान होता है। परमात्मा सनातन हैं। उनका कभी किसी कालमें नाश नहीं होता। वे परमात्मा सृष्टिकी इच्छासे चार भागोंमें विभक्त हुए, ऐसा वेदज्ञ पुरुष जानते हैं। सृष्टिके आदिकालमें सर्वप्रथम परमात्मासे अहंतत्त्व, फिर आकाश आदि पञ्च महाभूत उत्पन्न हुए। उसके पश्चात् महत्तत्त्व प्रकट हुआ और फिर अणुरूपा प्रकृति और इसके बाद समष्टि बुद्धिका प्रादुर्भाव हुआ। सत्त्व, रज और तम—इन तीन गुणोंसे युक्त होकर वह बुद्धि पृथक्-पृथक् तीन प्रकारके भेदोंमें विभक्त हो गयी। इस गुणत्रयमेंसे तमोगुणका संयोग प्राप्त करके महद्ब्रह्मका प्रादुर्भाव हुआ, इसको सभी तत्त्वज्ञ प्रधान अर्थात् प्रकृति कहते हैं। इस प्रकृतिसे भी क्षेत्रज्ञ अधिक महिमायुक्त है। उस परब्रह्मसे सत्त्वादि गुण, गुणोंसे आकाश आदि तन्मात्राएँ और फिर इन्द्रियोंका समुदाय बना। इस प्रकार जगत्की सृष्टि व्यवस्थित हुई। भद्रे! पाँच महाभूतोंसे स्वयं मैंने स्थूल शरीरका निर्माण किया। देवि! पहले केवल शून्य था। फिर उसमें शब्दकी उत्पत्ति हुई। शब्दसे आकाश हुआ। आकाशसे वायु, वायुसे तेज एवं तेजसे जलकी उत्पत्ति हुई। इसके बाद प्राणियोंको अपने ऊपर

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth

धारण करनेके लिये तुम्हारी—(पृथ्वीकी) रचना हुई।

पृथ्वी और जलका संयोग होनेपर बुद्बुदाकार कलल बना और वही अण्डेके आकारमें परिणत हो गया। उसके बढ़ जानेपर मेरा जलमय रूप दृष्टिगोचर हुआ। मेरे इस रूपको स्वयं मैंने ही बनाया था। इस प्रकार नार अर्थात् जलकी सृष्टि करके मैं उसीमें निवास करने लगा। इसीसे मेरा नाम 'नारायण' हुआ। वर्तमान कल्पके समान ही मैं प्रत्येक कल्पमें जलमें शयन करता हूँ और मेरे सोते समय सदैव मेरी नाभिसे इसी प्रकार कमल उत्पन्न होता है, जैसा कि आज तुम देख रही हो। देवि! ऐसी स्थितिमें मेरे नाभिकमलपर चतुर्मुख ब्रह्मा उत्पन्न हुए। तब मैंने उनसे कहा—'महामते! तुम प्रजाकी रचना करो।' ऐसा कहकर मैं अन्तर्धान हो गया और ब्रह्मा भी सृष्टिरचनाके चिन्तनमें लग गये। वसुन्धरे! इस प्रकार चिन्तन करते हुए ब्रह्माको जब कोई मार्ग नहीं सूझ पड़ा, तो फिर उन अव्यक्तजन्माके मनमें क्रोध उत्पन्न हुआ। उनके इस क्रोधके परिणामस्वरूप एक बालकका प्रादुर्भाव हुआ। जब उस बालकने रोना प्रारम्भ किया, तब अव्यक्तरूप ब्रह्माने उसे रोनेसे मना किया। इसपर उस बालकने कहा—'मेरा नाम तो बता दीजिये।' तब ब्रह्माने रोनेके कारण उसका नाम 'रुद्र' रख दिया। शुभे! उस बालकसे भी ब्रह्माने कहा—'लोकोंकी रचना करो।' परंतु इस कार्यमें अपनेको असमर्थ जानकर उस बालकने जलमें निमग्न होकर तप करनेका निश्चय किया।

उस रुद्र नामक बालकके तपस्याके लिये जलमें निमग्न हो जानेपर ब्रह्माने फिर दूसरे प्रजापतिको उत्पन्न किया। दाहिने अँगूठेसे उन्होंने प्रजापतिकी तथा बायें अँगूठेसे प्रजापतिके लिये पत्नीकी सृष्टि की। प्रजापतिने उस स्त्रीसे स्वायम्भुव मनुको उत्पन्न किया। इस प्रकार पूर्वकालमें ब्रह्माने स्वायम्भुव मनुके द्वारा प्रजाओंकी वृद्धि की।

पृथ्वी बोली—देवेश्वर! प्रथम सृष्टिका और विस्तारसे वर्णन करनेकी कृपा करें तथा नारायण ब्रह्मारूपसे कैसे विख्यात हुए? मुझे यह सब भी बतलानेकी कृपा करें।

वराह भगवान् कहते हैं—देवि पृथ्वि! नारायणने ब्रह्मारूपसे जिस प्रकार प्रजाओंकी सृष्टि की, उसे मैं विस्तृत रूपसे कहता हूँ, सुनो। शुभे! पिछले कल्पका अन्त हो जानेपर रात्रि व्याप्त हो गयी। भगवान् श्रीहरि उस समय सो गये। प्राणोंका नितान्त अभाव हो गया। फिर जगनेपर उनको यह जगत् शून्य दिखायी पड़ा। भगवान् नारायण दूसरोंके लिये अचिन्त्य हैं। वे पूर्वजोंके भी पूर्वज, ब्रह्मस्वरूप, अनादि और सबके स्रष्टा हैं। ब्रह्माका रूप धारण करनेवाले वे परम प्रभु जगत्की उत्पत्ति और प्रलयकर्ता हैं। उन नारायणके विषयमें यह श्लोक कहा जाता है—

आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः।
अयनं तस्य ताः पूर्वं ततो नारायणः स्मृतः॥

पुरुषोत्तम नरसे उत्पन्न होनेके कारण जलको 'नार' कहा जाता है, क्योंकि जल भी नार अर्थात् पुरुषोत्तम परमात्मासे उत्पन्न हुआ है। सृष्टिके पूर्व वह नार ही भगवान् हरिका अयन—निवास रहा, अतएव उनकी नारायण संज्ञा हो गयी। फिर पूर्व-कल्पोंकी भाँति उन श्रीहरिके मनमें सृष्टिरचनाका संकल्प उदित हुआ। तब उनसे बुद्धिशून्य तमोमयी सृष्टि उत्पन्न हुई। पहले उन परमात्मासे तम, मोह, महामोह, तामिस्र और अन्धतामिस्र—यह पाँच पर्वोंवाली अविद्या उत्पन्न हुई। उनके फिर चिन्तन करनेपर तमोगुणप्रधान चेतनारहित जड़ (वृक्ष, गुल्म, लता, तृण और पर्वत)-रूप पाँच प्रकारकी सृष्टि उत्पन्न हुई। सृष्टि-रचनाके रहस्यको जाननेवाले विद्वान् इसे मुख्य सर्ग कहते हैं। फिर

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

उन परम पुरुषके चिन्तन करनेपर दूसरी पहलेकी अपेक्षा उत्कृष्ट सृष्टि-रचनाका कार्य आरम्भ हो गया। यह सृष्टि वायुके समान वक्र गतिसे या तिरछी चलनेवाली हुई, जिसके फलस्वरूप इसका नाम तिर्यक्स्रोत पड़ गया। इस सर्गके प्राणियोंकी पशु आदिके नामसे प्रसिद्धि हुई। इस सर्गको भी अपनी सृष्टि-रचनाके प्रयोजनमें असमर्थ जानकर ब्रह्माद्वारा पुनः चिन्तन किये जानेपर एक और दूसरा सर्ग उत्पन्न हुआ। यह ऊर्ध्वस्रोत नामक तीसरा धर्मपरायण सात्त्विक सर्ग हुआ, जो देवताओंके रूपमें ऊर्ध्व स्वर्गादि लोकोंमें रहने लगा। ये सभी देवता ऊर्ध्वगामी एवं स्त्री-पुरुष-संयोगके फलस्वरूप गर्भसे उत्पन्न हुए थे। इस प्रकार इन मुख्य सृष्टियोंकी रचना कर लेनेपर भी जब ब्रह्माने पुनः विचार किया, तो उनको ये भी परम पुरुषार्थ (मोक्ष)-के साधनमें असमर्थ दीखे। तब फिर उन्होंने सृष्टिरचनाका चिन्तन करना प्रारम्भ किया और पृथ्वी आदि नीचेके लोकोंमें रहनेवाले अर्वाक्स्रोत सर्गकी रचना की। इस अर्वाक्स्रोतवाली सृष्टिमें उन्होंने जिनको बनाया, वे मनुष्य कहलाये और वे परम पुरुषार्थके साधनके योग्य थे। इनमें जो सत्त्वगुणविशिष्ट थे, वे प्रकाशयुक्त हुए। रज एवं तमोगुणकी जिनमें अधिकता थी, वे कर्मोंका बारंबार अनुष्ठान करनेवाले एवं दुःखयुक्त हुए। सुभगे! इस प्रकार मैंने इन छः सर्गोंका तुमसे वर्णन किया। इनमें पहला महत्तत्त्वसम्बन्धी सर्ग, दूसरा तन्मात्राओंसे सम्बन्धित भूतसर्ग और तीसरा वैकारिक सर्ग है, जो इन्द्रियोंसे सम्बन्ध रखता है। इस प्रकार समष्टि बुद्धिके संयोगसे (प्रकृतिसे) उत्पन्न होनेके कारण यह प्राकृत सर्ग कहलाया। चौथा मुख्य सर्ग है। पर्वत-वृक्ष आदि स्थावर पदार्थ ही इस मुख्य सर्गके अन्तर्गत हैं। वक्र गतिवाले पशु-पक्षी तिर्यक्स्रोतमें उत्पन्न होनेसे तिर्यग्योनि या तैर्यक स्रोतके प्राणी कहे जाते हैं।

विधाताकी सभी सृष्टियोंमें उच्च स्थान रखनेवाली छठी सृष्टि देवताओंकी है। मानव उनकी सातवीं सृष्टिमें आता है। सत्त्वगुण और तमोगुणमिश्रित आठवाँ अनुग्रहसर्ग माना गया है; क्योंकि इसमें प्रजाओंपर अनुग्रह करनेके लिये ऋषियोंकी उत्पत्ति होती है। इनमें बादके पाँच वैकृत सर्ग और पहलेके तीन प्राकृत सर्गके नामसे जाने जाते हैं। नवाँ कौमार सर्ग प्राकृत-वैकृतमिश्रित है। प्रजापतिके ये नौ सर्ग कहे गये हैं। संसारकी सृष्टिमें मूल कारण ये ही हैं। इस प्रकार मैंने इन सर्गोंका वर्णन किया। अब तुम दूसरा कौन-सा प्रसङ्ग सुनना चाहती हो?

पृथ्वी बोली—भगवन्! अव्यक्तजन्मा ब्रह्माद्वारा रचित यह नवधा सृष्टि किस प्रकार विस्तारको प्राप्त हुई? अच्युत! आप मुझे यह बतानेकी कृपा करें।

भगवान् वराह कहते हैं—सर्वप्रथम ब्रह्माद्वारा रुद्र आदि देवताओंकी सृष्टि हुई। इसके बाद सनकादि कुमारों तथा मरीचि-प्रभृति मुनियोंकी रचना हुई। मरीचि, अत्रि, अङ्गिरा, पुलह, क्रतु, महान् तेजस्वी पुलस्त्य, प्रचेता, भृगु, नारद एवं महातपस्वी वसिष्ठ—ये दस ब्रह्माजीके मानस पुत्र हुए। उन परमेष्ठीने सनकादिको निवृत्तिसंज्ञक धर्ममें तथा नारदजीके अतिरिक्त मरीचि आदि सभी ऋषियोंको प्रवृत्तिसंज्ञक धर्ममें नियुक्त कर दिया। ये जो आदि प्रजापति हैं, इनका ब्रह्माके दाहिने अँगूठेसे प्राकट्य हुआ है (इसी कारण ये दक्ष कहलाते हैं) और इन्हींके वंशके अन्तर्गत यह सारा चराचर जगत् है। देवता, दानव, गन्धर्व, सरीसृप तथा पक्षिगण—ये सभी दक्षकी कन्याओंसे उत्पन्न हुए हैं। इन सबमें धर्मकी विशेषता थी।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

ब्रह्माके जो रुद्र नामक पुत्र हैं, उनका प्रादुर्भाव क्रोधसे हुआ था। जिस समय ब्रह्माकी भौंहें रोषके कारण तन गयी थीं, तब उनके ललाटसे इनका प्रादुर्भाव हुआ। उस समय इनका शरीर अर्धनारीश्वरके रूपमें था। 'तुम स्वयं अपनेको अनेक भागोंमें बाँटो'—इनसे यों कहकर ब्रह्मा अन्तर्धान हो गये। यह आज्ञा पाकर उन महाभागने स्त्री और पुरुष—इन दो भागोंमें अपनेको विभाजित कर दिया। फिर अपने पुरुष-रूपको उन्होंने ग्यारह भागोंमें विभक्त किया। तभीसे ब्रह्मासे प्रकट होनेवाले इन ग्यारह रुद्रोंकी प्रसिद्धि हुई। अनघे! तुम्हारी जानकारीके लिये मैंने इस रुद्र-सृष्टिका वर्णन कर दिया।

अब मैं संक्षेपसे युगमाहात्म्यका वर्णन करता हूँ। सत्ययुग, त्रेता, द्वापर और कलि—ये चार युग हैं। इन चारों युगोंमें परम पराक्रमी तथा प्रचुर दक्षिणा देनेवाले जो राजा हो चुके हैं एवं जिन देवताओं और दानवोंने ख्याति प्राप्त की है तथा जिन धर्म-कर्मोंका उन्होंने अनुष्ठान किया है; वह मुझसे सुनो। पूर्वकालकी बात है, प्रथम कल्पमें स्वायम्भुव मनु हुए। उनके दो पुत्र उत्पन्न हुए, जिनके लोकोत्तर कर्म मनुष्योंके लिये असम्भव ही थे। धर्ममें श्रद्धा रखनेवाले वे महाभाग प्रियव्रत और उत्तानपाद नामसे विख्यात हुए। प्रियव्रतमें तपोबल था और वे महान् यज्ञशाली थे। उन्होंने पुष्कल (अधिक) दक्षिणावाले अनेक महायज्ञोंद्वारा भगवान् श्रीहरिका यजन किया था। उन्होंने सातों द्वीपोंमें अपने भरत आदि पुत्रोंको अभिषिक्त कर दिया था और स्वयं वे महातपस्वी राजा वरदायिनी विशाला* नगरी—बदरिकाश्रममें जाकर तपस्या करने लगे थे। महाराज प्रियव्रत चक्रवर्ती नरेश थे। धर्मका अनुष्ठान करना उनका स्वाभाविक गुण था। अतएव उनके तपस्यामें लीन होनेपर उनसे मिलनेकी इच्छासे वहाँ स्वयं नारदजी पधारे। नारदमुनिका आगमन आकाश-मार्गसे हुआ था। उनका तेज सूर्यके समान छिटक रहा था। उन्हें देखकर महाराज प्रियव्रतको बड़ा हर्ष हुआ और उन्होंने आसन, पाद्य एवं नैवेद्यसे नारदजीका भलीभाँति सत्कार किया। तत्पश्चात् उन दोनोंमें परस्पर वार्ता प्रारम्भ हो गयी। अन्तमें वार्तालापकी समाप्तिके समय राजा प्रियव्रतने ब्रह्मवादी नारदजीसे पूछा।

राजा प्रियव्रत बोले—नारदजी! आप महान् पुरुष हैं। इस सत्ययुगमें आपने कोई अद्भुत घटना देखी या सुनी हो, तो उसे बतानेकी कृपा करें।

नारदजीने कहा—महाराज! अवश्य ही मैंने एक आश्चर्यजनक बात देखी है, वह सुनो। कल मैं श्वेतद्वीप गया था, मुझे वहाँपर एक सरोवर दिखलायी पड़ा। उस सरोवरमें बहुत-से कमल खिले हुए थे। उसके तटपर विशाल नेत्रोंवाली एक कन्या खड़ी थी। उस कन्याको देखकर मैं अत्यन्त आश्चर्यमें पड़ गया। उसकी वाणी भी बड़ी मधुर थी। मैंने उससे पूछा—'भद्रे! तुम कौन हो, इस स्थानपर कैसे निवास करती हो और यहाँ तुम्हारा क्या काम है?' मेरे इस प्रकार पूछनेपर उस कुमारीने एकटक नेत्रोंसे मुझे देखा, पर न जाने क्या सोचकर वह चुप ही रही। उसके देखते ही मेरा सारा ज्ञान पता नहीं, कहाँ चला गया? राजन्! सम्पूर्ण वेद, समस्त शास्त्र, योगशास्त्र और वेदोंके शिक्षादि अङ्गोंकी मेरी सारी स्मृतियाँ उस किशोरीने मुझपर दृष्टिपात करके ही अपहृत कर लीं। तब मैं शोक और चिन्तासे ग्रस्त होकर महान् विस्मयमें पड़ गया। राजन्! ऐसी स्थितिमें मैंने उस कुमारीकी शरण ग्रहण की। इतनेमें ही मुझे उस कुमारीके शरीरमें एक दिव्य पुरुष

*महाभारत वनपर्व ९०। २४। २५ तथा भागवत-माहात्म्यके अनुसार विशालापुरी बदरिकाश्रम ही है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

दृष्टिगोचर हुआ। फिर उस पुरुषके भी हृदयमें दूसरे और उस दूसरे पुरुषके हृदयमें तीसरेका दर्शन हुआ, जिसके नेत्र लाल थे और वह बारह सूर्योंके समान तेजस्वी था। इस प्रकार उन तीनों पुरुषोंको मैंने वहाँ देखा, जो उस कन्याके शरीरमें स्थित थे। सुव्रत! फिर क्षणभरके बाद देखा, तो वहाँ केवल वह कन्या ही रह गयी थी एवं अन्य तीनों पुरुष अदृश्य हो गये थे। तत्पश्चात् मैंने उस दिव्य किशोरीसे पूछा—भद्रे! मेरा सम्पूर्ण वेदज्ञान कैसे नष्ट हो गया? इसका कारण बताओ।

कुमारी बोली—'मैं समस्त वेदोंकी माता हूँ। मेरा नाम सावित्री है। तुम मुझे नहीं जानते। इसीके फलस्वरूप मैंने तुमसे वेदोंको अपहृत कर लिया है।' तपरूपी धनका संचय करनेवाले राजन्! उस कुमारीके इस प्रकार कहनेपर मैंने विस्मय-विमुग्ध होकर पूछा—'शोभने! ये पुरुष कौन थे, मुझे यह बतानेकी कृपा करो।'

कुमारी बोली—मेरे शरीरमें विराजमान इन पुरुषोंकी जो तुम्हें झाँकी मिली है, इनमेंसे जिसके सभी अङ्ग परम सुन्दर हैं, इसका नाम ऋग्वेद है। यह स्वयं भगवान् नारायणका स्वरूप है। यह अग्निमय है। इसके सस्वर पाठ करनेसे समस्त पाप तुरंत भस्म हो जाते हैं। इसके हृदयमें यह जो दूसरा पुरुष तुम्हें दृष्टिगोचर हुआ है, जिसकी उसीसे उत्पत्ति हुई है, वह यजुर्वेदके रूपमें स्थित महाशक्तिशाली ब्रह्मा हैं। फिर उसके वक्षःस्थलमें भी प्रविष्ट, जो यह परम पवित्र और उज्ज्वल पुरुष दीख रहा है, इसका नाम सामवेद है। यह भगवान् शंकरका स्वरूप माना गया है। स्मरण करनेपर सूर्यके समान सम्पूर्ण पापोंको यह तत्काल नष्ट कर देता है। ब्रह्मन्! तुमको दृष्टिगोचर हुए ये दिव्य पुरुष तीनों वेद ही हैं। नारद! तुम ब्रह्मपुत्रोंके शिरोमणि और सर्वज्ञानसम्पन्न हो! यह सारा प्रसङ्ग मैंने तुम्हें संक्षेपसे बता दिया। अब तुम पुनः सभी वेदों और शास्त्रोंको तथा अपनी सर्वज्ञताको पुनः प्राप्त करो। इस वेद-सरोवरमें तुम स्नान करो। इसमें स्नान करनेसे तुम्हें अपने पूर्वजन्मकी स्मृति हो जायगी।

राजन्! यह कहकर वह कन्या अन्तर्धान हो गयी। तब मैंने उस सरोवरमें स्नान किया और तदनन्तर आपसे मिलनेकी इच्छासे यहाँ चला आया। [अध्याय २]

देवर्षि नारदद्वारा अपने पूर्वजन्मवर्णनके प्रसङ्गमें ब्रह्मपारस्तोत्रका कथन

प्रियव्रत बोले—भगवन्! आपके द्वारा पूर्व-जन्मोंमें जो-जो कार्य सम्पन्न हुए हों, उन सबको मुझे बतानेकी कृपा करें, क्योंकि देवर्षे! उन्हें सुननेकी मुझे बड़ी उत्कण्ठा है।

नारदजीने कहा—राजेन्द्र! कुमारी सावित्रीकी बात सुनकर उस वेद-सरोवरमें मैंने ज्यों ही स्नान किया, उसी क्षण मुझे अपने हजारों जन्मोंकी बातें स्मरण हो आयीं। अब तुम मेरे पूर्वजन्मकी बात सुनो। अवन्ती नामकी एक पुरी है। मैं पूर्वजन्ममें उसमें निवास करनेवाला एक श्रेष्ठ ब्राह्मण था। उस जन्ममें मेरा नाम सारस्वत था और सभी वेद-वेदाङ्ग मुझे सम्यक् अभ्यस्त थे। राजन्! यह दूसरे सत्ययुगकी बात है। उस समय मेरे पास बहुत-से सेवक थे, धन-धान्यकी अटूट राशि थी, भगवान्ने उत्तम बुद्धि भी दी थी। एक बार मैं एकान्तमें बैठकर विचार करने लगा कि संसार द्वन्द्वस्वरूप है; इसमें सुख-दुःख, हानि-लाभ आदिका चक्र सदा चलता रहता है। मुझे ऐसे संसारसे क्या लेना-देना है? अतः मुझे अब अपनी सारी सांसारिक धन-सम्पदा पुत्रोंको सौंपकर

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sherda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

तपस्या करनेके लिये तुरंत सरस्वती नदीके तटपर चल देना चाहिये। यह विचार करनेके पश्चात्, क्या यह तत्काल करना उचित होगा, इस जिज्ञासाको लेकर मैंने भगवान्‌से प्रार्थना की। फिर भगवान्‌के आज्ञानुसार मैंने श्राद्धद्वारा पितरोंको, यज्ञद्वारा देवताओंको तथा दानद्वारा अन्य लोगोंको भी संतुष्ट किया। राजन्! तत्पश्चात् सभी ओरसे निश्चिन्त होकर मैं सारस्वत नामक सरोवरपर, जो इस समय पुष्करतीर्थके नामसे विख्यात है, चला गया। वहाँ जाकर परम मङ्गलमय पुराणपुरुष भगवान् विष्णुके नारायणमन्त्र (**ॐ नमो नारायणाय**)-का जप एवं ब्रह्मपार नामक उत्तम स्तोत्रका पाठ करता हुआ मैं भक्तिपूर्वक आराधना करने लगा। तब परम प्रसन्न होकर स्वयं भगवान् श्रीहरि मेरे सम्मुख प्रत्यक्ष रूपसे प्रकट हो गये।

प्रियव्रत बोले— महाभाग देवर्षे! ब्रह्मपारस्तोत्र कैसा है? इसे मैं सुनना चाहता हूँ। आप मुझपर सदा प्रसन्न रहते हैं, अतएव कृपापूर्वक मुझे इसका उपदेश करें।

नारदजीने कहा—जो परात्पर, अमृतस्वरूप, सनातन, अपार शक्तिशाली एवं जगत्‌के परम आश्रय हैं, उन पुराणपुरुष भगवान् महाविष्णुको मैं निरन्तर नमस्कार करता हूँ। जो पुरातन, अतुलनीय, श्रेष्ठसे भी श्रेष्ठ एवं प्रचण्ड तेजस्वी हैं, जो गहन-गम्भीर बुद्धि-विचार करनेवालोंमें प्रधान तथा जगत्‌के शासक हैं, उन श्रीहरिको मैं प्रणाम करता हूँ। जो परसे भी पर हैं, जिनसे परे दूसरा कोई है ही नहीं, जो दूसरोंको आश्रय देनेवाले एवं महान् पुरुष हैं, जिनका धाम विशुद्ध एवं विशाल है, ऐसे पुराणपुरुष भगवान् नारायणकी परम शुद्धभावसे मैं स्तुति करता हूँ। सृष्टिके पूर्व जब केवल शून्यमात्र था, उस समय पुरुषरूपसे जिन्होंने प्रकृतिकी रचना की, वे भक्तजनोंमें प्रसिद्ध, शुद्धस्वरूप पुराणपुरुष भगवान् नारायण मेरे लिये शरण हों। जो परात्पर, अपारस्वरूप, पुरातन, नीतिज्ञोंमें श्रेष्ठ, क्षमाशील, शान्तिके आगार तथा जगत्‌के शासक हैं, उन कल्याणस्वरूप भगवान् नारायणकी मैं सदा स्तुति करता हूँ। जिनके हजारों मस्तक हैं, असंख्य चरण और भुजाएँ हैं, चन्द्रमा और सूर्य जिनके नेत्र हैं, क्षीरसागरमें जो शयन करते हैं, उन अविनाशी सत्यस्वरूप परम प्रभु भगवान् नारायणकी मैं स्तुति करता हूँ। जो वेदत्रयीके अवलम्बनद्वारा जाने जाते हैं, जो परब्रह्मरूप एक मूर्तिसे द्वादश आदित्यरूप बारह मूर्तियोंमें अभिव्यक्त होते हैं, जो ब्रह्मा, विष्णु और महेशरूप तीन परमोज्ज्वल मूर्तियोंमें स्थित हैं, जो अग्निरूपमें दक्षिणाग्नि, गार्हपत्य और आहवनीय—इन तीन भेदोंमें विभक्त होते हैं, जो स्थूल, सूक्ष्म तथा कारण—इन तीन तत्त्वोंके अवलम्बनद्वारा लक्षित होते हैं, जो भूत, वर्तमान और भविष्यरूपसे त्रिकालात्मक हैं तथा सूर्य, चन्द्रमा एवं अग्निरूप तीन नेत्रोंसे युक्त हैं, उन अप्रमेयस्वरूप भगवान् नारायणको मैं प्रणाम करता हूँ। जो अपने श्रीविग्रहको सत्ययुगमें शुक्ल, त्रेतामें रक्त, द्वापरमें पीतवर्णसे अनुरञ्जित और कलियुगमें कृष्णवर्णमें प्रकाशित करते हैं, उन पुराणपुरुष श्रीहरिको मैं नमस्कार करता हूँ। जिन्होंने अपने मुखसे ब्राह्मणोंका, भुजाओंसे क्षत्रियोंका, दोनों जङ्घाओंसे वैश्योंका एवं चरणोंके अग्रभागसे शूद्रोंका सृजन किया है, उन विश्वरूप पुराणपुरुष भगवान् नारायणको मैं प्रणाम करता हूँ। जो परेसे भी परे, सर्वशास्त्रपारंगत, अप्रमेय और योद्धाओंमें श्रेष्ठ हैं, साधुओंके परित्राणरूप कार्यके निमित्त जिन्होंने श्रीकृष्ण-अवतार धारण किया है तथा जिनके हाथ ढाल, तलवार, गदा

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

और अमृतमय कमलसे सुशोभित हैं, उन अप्रमेय-स्वरूप भगवान् नारायणको मैं प्रणाम करता हूँ।

राजन्! इस प्रकार स्तुति करनेपर देवाधिदेव भगवान् नारायण प्रसन्न होकर मेघके समान गम्भीर वाणीमें मुझसे बोले—'वर माँगो।' तब मैंने उन प्रभुके शरीरमें लय होनेकी इच्छा व्यक्त की। मेरी बात सुनकर उन सनातन देवेश्वरने मुझसे कहा—'ब्रह्मन्! अभी तुम शरीर धारण करो, क्योंकि इसकी आवश्यकता है। तुमने अभी जो तपस्या प्रारम्भ करनेके पूर्व पितरोंको नार (जल) दान किया है, अतः अबसे तुम्हारा नाम नारद होगा।'*

ऐसा कहकर भगवान् नारायण तुरंत ही मेरी आँखोंसे ओझल हो गये। समय आनेपर मैंने वह शरीर छोड़ दिया। तपस्याके प्रभावसे मृत्युके पश्चात् मुझे ब्रह्मलोककी प्राप्ति हुई। राजन्! तदनन्तर ब्रह्माजीके प्रथम दिवसका आरम्भ होनेपर मेरी भी उनके दस मानस पुत्रोंमें उत्पत्ति हुई। सम्पूर्ण देवताओंकी भी सृष्टिका वह प्रथम दिन है—इसमें कोई संशय नहीं। इसी प्रकार भगवद्धर्मानुसार सारे जगत्की सृष्टि होती है।

राजन्! यह मेरे प्राकृत जन्मका प्रसङ्ग है, जिसके विषयमें तुमने प्रश्न किया था। राजेन्द्र! भगवान् नारायणका ध्यान करनेसे ही मुझे लोकगुरुका पद प्राप्त हुआ, अतएव तुम भी उन श्रीहरिके परायण हो जाओ। [अध्याय ३]

महामुनि कपिल और जैगीषव्यद्वारा राजा अश्वशिराको भगवान् नारायणकी सर्वव्यापकताका प्रत्यक्ष दर्शन कराना

पृथ्वी बोली—भगवन्! जो सनातन, देवाधिदेव, परमात्मा नारायण हैं, वे भगवान्के परिपूर्णतम स्वरूप हैं या नहीं? आप इसे स्पष्ट बतानेकी कृपा करें।

भगवान् वराह कहते हैं—समस्त प्राणियोंको आश्रय देनेवाली पृथ्वि! मत्स्य, कच्छप, वराह, नरसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध और कल्कि—ये दस उन्हीं सनातन परमात्माके स्वरूप कहे जाते हैं। शोभने! उनके साक्षात् दर्शन पानेकी अभिलाषा रखनेवाले पुरुषोंके लिये ये सोपानरूप हैं। उनका जो परिपूर्णतम स्वरूप है, उसे देखनेमें तो देवता भी असमर्थ हैं। वे मेरे एवं पूर्वोक्त अन्य अवतारोंके रूपका दर्शन करके ही अपनी मनःकामना पूर्ण करते हैं। ब्रह्मा उन्हींकी रजोगुण और तमोगुण-मिश्रित मूर्ति हैं, उनके माध्यमसे ही श्रीहरि संसारकी सृष्टि एवं संचालन करते हैं। धरणि! तुम उन्हीं भगवान् नारायणकी आदि मूर्ति हो, उनकी दूसरी मूर्ति जल और तीसरी मूर्ति तेज है। इसी प्रकार वायुको चौथी और आकाशको पाँचवीं मूर्ति कहते हैं। ये सभी उन्हीं परब्रह्म परमात्माकी मूर्तियाँ हैं। इनके अतिरिक्त क्षेत्रज्ञ, बुद्धि एवं अहंकार—ये उनकी तीन मूर्तियाँ और हैं। इस प्रकार उनकी आठ मूर्तियाँ हैं। देवि! यह सारा जगत् भगवान् नारायणसे ओत-प्रोत है। मैंने तुम्हें ये सभी बातें बता दीं। अब तुम दूसरा कौन-सा प्रसङ्ग सुनना चाहती हो?

पृथ्वी बोली—भगवन्! नारदजीके द्वारा भगवान् श्रीहरिके परायण होनेके लिये कहनेपर राजा प्रियव्रत किस कार्यमें प्रवृत्त हुए? मुझे यह बतानेकी कृपा करें।

भगवान् वराह कहते हैं—पृथ्वि! मुनिवर नारदकी विस्मयजनक बात सुनकर राजा प्रियव्रतको

* नारं पानीयमित्युक्तं पितॄणां तद्दौ भवान्। तदाप्रभृति ते नाम नारदेति भविष्यति॥ (३।२३)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

महान् आश्चर्य हुआ। उन्होंने अपने राज्यको सात भागोंमें बाँटकर पुत्रोंको सौंप दिया और स्वयं तपस्यामें संलग्न हो गये। परब्रह्म परमात्माके 'नारायण' नामका जप करते-करते उनकी मनोवृत्ति भगवान् नारायणमें स्थिर हो गयी; अतः उन्हें देहत्यागके पश्चात् भगवान्के परमधामकी प्राप्ति हुई। सुन्दरि! अब ब्रह्माजीसे सम्बन्ध रखनेवाला एक दूसरा प्रसङ्ग है, उसे सुनो।

प्राचीन कालमें अश्वशिरा नामके एक परम धार्मिक राजा थे। उन्होंने अश्वमेध यज्ञके द्वारा भगवान् नारायणका यजन किया था, जिसमें उन्होंने बहुत बड़ी दक्षिणा बाँटी थी। यज्ञकी समाप्तिपर उन राजाने अवभृथ स्नान किया। इसके पश्चात् वे ब्राह्मणोंसे घिरे हुए बैठे थे, उसी समय भगवान् कपिलदेव वहाँ पधारे। उनके साथ योगिराज जैगीषव्य भी थे। अब महाराज अश्वशिरा बड़ी शीघ्रतासे उठे, अत्यन्त हर्षके साथ उनका सत्कार किया और तत्काल दोनों मुनियोंके विधिवत् स्वागतकी व्यवस्था की। जब दोनों मुनिश्रेष्ठ भलीभाँति पूजित होकर आसनपर विराजमान हो गये, तब महापराक्रमी राजा अश्वशिराने उनकी ओर देखकर पूछा—'आप दोनों अत्यन्त तीक्ष्ण बुद्धिवाले और योगके आचार्य हैं। आपने कृपापूर्वक स्वयं अपनी इच्छासे यहाँ आकर मुझे दर्शन दिया है। आप मनुष्योंमें श्रेष्ठ ब्राह्मणदेवता हैं। आप दोनों मेरे इस संशयका समाधान करें कि भगवान् नारायणकी आराधना मैं कैसे करूँ?'

दोनों ऋषियोंने कहा—राजन्! तुम नारायण किसे कहते हो? महाराज! हम दो नारायण तो तुम्हारे सामने प्रत्यक्षरूपसे उपस्थित हैं।

राजा अश्वशिरा बोले—आप दोनों महानुभाव ब्राह्मण हैं, आपको सिद्धि सुलभ हो चुकी है। तपस्यासे आपके पाप भी नष्ट हो गये—यह मैं मानता हूँ, किंतु 'हम दोनों नारायण हैं,' ऐसा आपलोग कैसे कह रहे हैं? भगवान् नारायण तो देवताओंके भी देवता हैं। शङ्ख, चक्र और गदासे उनकी भुजाएँ अलङ्कृत रहती हैं। वे पीताम्बर धारण करते हैं। गरुड़ उनका वाहन है। भला, संसारमें उनकी समानता कौन कर सकता है?

(भगवान् वराह कहते हैं—) कपिल और जैगीषव्य—ये दोनों ऋषि कठोर व्रतका पालन करनेवाले थे। वे राजा अश्वशिराकी बात सुनकर हँस पड़े और बोले—'राजन्! तुम विष्णुका दर्शन करो।' इस प्रकार कहकर कपिलजी उसी क्षण स्वयं विष्णु बन गये और जैगीषव्यने गरुड़का रूप धारण कर लिया। अब तो उस समय राजाओंके समूहमें हाहाकार मच गया। गरुड़वाहन सनातन भगवान् नारायणको देखकर महान् यशस्वी राजा अश्वशिरा हाथ जोड़कर कहने लगे—'विप्रवरो! आप दोनों शान्त हों। भगवान् विष्णु ऐसे नहीं हैं। जिनकी नाभिसे उत्पन्न कमलपर प्रकट होकर ब्रह्मा अपने रूपसे विराजते हैं, वह रूप परमप्रभु भगवान् विष्णुका है।'

कपिल एवं जैगीषव्य—ये दोनों मुनियोंमें श्रेष्ठ थे। राजा अश्वशिराकी उक्त बात सुनकर उन्होंने योगमायाका विस्तार कर दिया। अब कपिलदेव पद्मनाभ विष्णुके तथा जैगीषव्य प्रजापति ब्रह्माके रूपमें परिणत हो गये। कमलके ऊपर ब्रह्माजी सुशोभित होने लगे और उनके श्रीविग्रहसे कालाग्निके तुल्य लाल नेत्रोंवाले परम तेजस्वी रुद्रका प्राकट्य हो गया। राजाने सोचा—'हो-

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

न-हो यह इन योगीश्वरोंकी ही माया है; क्योंकि जगदीश्वर इस प्रकार सहज ही दृष्टिगोचर नहीं हो सकते, वे सर्वशक्तिसम्पन्न श्रीहरि तो सदा सर्वत्र विराजते हैं। भूत-प्राणियोंको धारण करनेवाली पृथ्वि! राजा अश्वशिरा अपनी सभामें इस प्रकार कह ही रहे थे कि उनकी बात समाप्त होते-न-होते खटमल, मच्छर, जूँ, भौंरे, पक्षी, सर्प, घोड़े, गाय, हाथी, बाघ, सिंह, शृगाल, हरिण एवं इनके अतिरिक्त और भी करोड़ों ग्राम्य एवं वन्य पशु राजभवनमें चारों ओर दिखायी पड़ने लगे। उस समय झुंड-के-झुंड प्राणियोंके समूहको देखकर राजाके आश्चर्यकी सीमा न रही। राजा अश्वशिरा यह विचार करने लगे कि अब मुझे क्या करना चाहिये। इतनेमें ही सारी बात उनकी समझमें आ गयी। अहो! यह तो परम बुद्धिमान् कपिल और जैगीषव्य मुनिका ही माहात्म्य है। फिर तो राजा अश्वशिराने हाथ जोड़कर उन ऋषियोंसे भक्तिपूर्वक पूछा—'विप्रवरो! यह क्या प्रपञ्च है?'

कपिल और जैगीषव्यने कहा—राजन्! हम दोनोंसे तुम्हारा प्रश्न था कि भगवान् श्रीहरिकी आराधना एवं उनको प्राप्त करनेका क्या विधान है? महाराज! इसीलिये हम लोगोंने तुमको यह दृश्य दिखलाया है। राजन्! सर्वज्ञ भगवान् श्रीहरिकी यह त्रिगुणात्मिका सृष्टि है, जो तुम्हें दृष्टिगोचर हुई है। भगवान् नारायण एक ही हैं। वे अपनी इच्छाके अनुसार अनेक रूप धारण करते रहते हैं। किसी कालमें जब वे अपनी अनन्त तेजोराशिको आत्मसात् करके सौम्यरूपमें सुशोभित होते हैं, तभी मनुष्योंको उनकी झाँकी प्राप्त होती है। अतएव उन नारायणकी अव्यक्त रूपमें आराधना सद्यः फलवती नहीं हो पाती।* वे जगत्प्रभु परमात्मा ही सबके शरीरमें विराजमान हैं। भक्तिका उदय होनेपर अपने शरीरमें ही उन परमात्माका साक्षात्कार हो सकता है। वे परमात्मा किसी स्थानविशेषमें ही रहते हों, ऐसी बात नहीं है; वे तो सर्वव्यापक हैं। महाराज! इसी निमित्त हम दोनोंके प्रभावसे तुम्हारे सामने यह दृश्य उपस्थित हुआ है। इसका प्रयोजन यह है कि भगवान्‌की सर्वव्यापकतापर तुम्हारी आस्था दृढ़ हो जाय। राजन्! इसी प्रकार तुम्हारे इन मन्त्रियों एवं सेवकोंके—सभीके शरीरमें भगवान् श्रीहरि विराजमान हैं। राजन्! हमने जो देवता एवं कीट-पशुओंके समूह तुमको अभी दिखलाये, वे सब-के-सब विष्णुके ही रूप हैं। केवल अपनी भावनाको दृढ़ करनेकी आवश्यकता है; क्योंकि भगवान् श्रीहरि तो सबमें व्याप्त हैं ही। उनके समान दूसरा कोई भी नहीं है, ऐसी भावनासे उन श्रीहरिकी सेवा करनी चाहिये। राजन्! इस प्रकार मैंने सच्चे ज्ञानका तुम्हारे सामने वर्णन कर दिया। अब तुम अपनी परिपूर्ण भावनासे भगवान् नारायणका, जो सबके परम गुरु हैं, स्मरण करो। धूप-दीप आदि पूजाकी सामग्रियोंसे ब्राह्मणोंको तथा तर्पणद्वारा पितरोंको तृप्त करो। इस प्रकार ध्यानमें चित्तको समाहित करनेसे भगवान् नारायण शीघ्र ही सुलभ हो जाते हैं। [अध्याय ४]

---

* श्रीमद्भगवद्गीतामें भगवान् श्रीकृष्णने भी कहा है—

क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम्। अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते॥ (१२।५)

उन सच्चिदानन्दघन निराकार ब्रह्ममें आसक्त चित्तवाले पुरुषोंके साधनमें क्लेश विशेष है; क्योंकि देहाभिमानियोंके द्वारा अव्यक्तविषयक गति दुःखपूर्वक प्राप्त की जाती है।

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

रैभ्य मुनि और राजा वसुका देवगुरु बृहस्पतिसे संवाद तथा राजा अश्वशिराद्वारा यज्ञमूर्ति भगवान् नारायणका स्तवन एवं उनके श्रीविग्रहमें लीन होना

राजा अश्वशिरा बोले—'मुनिवरो! मेरे मनमें एक संदेह है, उसे दूर करनेमें आप दोनों पूर्ण समर्थ हैं। उसके फलस्वरूप मुझे मुक्ति सुलभ हो सकती है।' उनके इस प्रकार कहनेपर योगीश्वर, परम धर्मात्मा कपिलमुनिने यज्ञ करनेवालोंमें श्रेष्ठ उस राजासे कहा।

कपिलजीने कहा—राजन्! तुम परम धार्मिक हो। तुम्हारे मनमें क्या संदेह है? बताओ, उसे सुनकर मैं दूर कर दूँगा।

राजा अश्वशिरा बोले—मुने! मोक्ष पानेका अधिकारी कर्मशील पुरुष है या ज्ञानी?—मेरे मनमें यह संदेह उत्पन्न हो गया है। यदि मुझपर आपकी दया हो तो इसे दूर करनेकी कृपा करें।

कपिलजीने कहा—महाराज! प्राचीन कालकी बात है, यही प्रश्न ब्रह्माजीके पुत्र रैभ्य तथा राजा वसुने बृहस्पतिसे पूछा था। पूर्वकालमें चाक्षुष मन्वन्तरमें एक अत्यन्त प्रसिद्ध राजा थे, जिनका नाम था वसु। वे बड़े विद्वान् और विख्यात दानी थे। ब्रह्माजीके वंशमें उनका जन्म हुआ था। राजन्! वे महाराज वसु ब्रह्माजीका दर्शन करनेके विचारसे ब्रह्मलोकको चल पड़े। मार्गमें ही चित्ररथ नामक विद्याधरसे उनकी भेंट हो गयी। राजाने प्रेमपूर्वक चित्ररथसे पूछा—'प्रभो! ब्रह्माजीका दर्शन किस समय हो सकता है?' चित्ररथने कहा—'ब्रह्माजीके भवनमें इस समय देवताओंकी सभा हो रही है।' ऐसा सुनकर वे नरेश ब्रह्मभवनके द्वारपर ठहर गये। इतनेमें महान् तपस्वी रैभ्य भी वहीं आ गये। उनको देखकर राजा वसुके मनमें बड़ी प्रसन्नता हुई। उनका रोम-रोम आनन्दसे खिल उठा। तदनन्तर रैभ्य मुनिकी पूजा करके राजाने उनसे पूछा—'मुने! आप कहाँ चल पड़े?'

रैभ्य मुनि बोले—'महाराज! मैं देवगुरु बृहस्पतिके पाससे आ रहा हूँ। किसी कार्यके विषयमें पूछनेके लिये मैं उनके पास चला गया था।' रैभ्य मुनि इस प्रकार बोल ही रहे थे कि इतनेमें ब्रह्माजीकी वह विशाल सभा विसर्जित हो गयी। सभी देवता अपने-अपने स्थानको चले गये। अतः अब बृहस्पतिजी भी वहीं आ गये। राजा वसुने उनका स्वागत-सत्कार किया। तत्पश्चात् तीनों ही एक साथ बृहस्पतिके भवनपर गये। राजेन्द्र! वहाँ रैभ्य, बृहस्पति एवं राजा वसु—तीनों बैठ गये। सबके बैठ जानेपर देवताओंके गुरु बृहस्पतिने रैभ्य मुनिसे कहा—'महाभाग! तुम्हें तो स्वयं वेद एवं वेदाङ्गोंका पूर्ण ज्ञान है। कहो, तुम्हारा मैं कौन-सा कार्य करूँ?'

रैभ्य मुनि बोले—बृहस्पतिजी! कर्मशील और ज्ञानसम्पन्न—इन दोनोंमें कौन मोक्ष पानेका अधिकारी है? इस विषयमें मुझे संदेह उत्पन्न हो गया है। प्रभो! आप इसका निराकरण करनेकी कृपा करें।

बृहस्पतिजीने कहा—मुने! पुरुष शुभ या अशुभ जो कुछ भी कर्म करे, वह सब-का-सब भगवान् नारायणको समर्पण कर देनेसे कर्मफलोंसे लिप्त नहीं हो सकता। द्विजवर! इस विषयमें एक ब्राह्मण और व्याधका संवाद सुना जाता है। अत्रिके वंशमें उत्पन्न एक ब्राह्मण थे। उनकी वेदाभ्यासमें बड़ी रुचि थी। वे प्रातः, मध्याह्न तथा सायं—त्रिकाल स्नान करते हुए तपस्या करते थे। संयमन नामसे उनकी प्रसिद्धि थी। एक दिनकी बात है—वे ब्राह्मण धर्मारण्यक्षेत्रमें परम पुण्यमयी गङ्गानदीके तटपर स्नान करनेके उद्देश्यसे गये।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

वहाँ मुनिने निष्ठुरक नामके व्याधको देखकर उसे मना करते हुए कहा—'भद्र! तुम निन्द्य कर्म मत करो।' तब मुनिपर दृष्टि डालकर वह व्याध मुस्कुराते हुए बोला—'द्विजवर! सभी जीवधारियोंमें आत्मारूपसे स्थित होकर स्वयं भगवान् ही इन जीवोंके वेशमें क्रीडा कर रहे हैं। जैसे माया जाननेवाला व्यक्ति मन्त्रोंका प्रयोग करके माया फैला देता है, ठीक वैसे ही यह प्रभुकी माया है, इसमें कोई संदेह नहीं करना चाहिये। विप्रवर! मोक्षकी इच्छा करनेवाले पुरुषोंको चाहिये कि वे कभी भी अपने मनमें अहंभावको न टिकने दें। यह सारा संसार अपनी जीवनयात्राके प्रयत्नमें संलग्न रहता है। हाँ, इस कार्यके विषयमें 'अहम्' अर्थात् 'मैं कर्ता हूँ'—इस भावका होना उचित नहीं है। जब विप्रवर संयमनने निष्ठुरक व्याधकी बात सुनी तो वे अत्यन्त आश्चर्ययुक्त होकर उसके प्रति यह वचन बोले—'भद्र! तुम ऐसी युक्तिसंगत बात कैसे कह रहे हो?'

ब्राह्मणकी बात सुनकर धर्मके मर्मज्ञ उस व्याधने पुनः अपनी बात प्रारम्भ की। उसने सर्वप्रथम लोहेका एक जाल बनाया। उसे फैलाकर उसके नीचे सूखी लकड़ियाँ डाल दीं। तदनन्तर ब्राह्मणके हाथमें अग्नि देकर उसने कहा—'आर्य! इस लकड़ीके ढेरमें आग लगा दीजिये।'

तत्पश्चात् ब्राह्मणने मुखसे फूँककर अग्नि प्रज्वलित कर दी और शान्त होकर बैठ गये। जब आग धधकने लगी, तो वह लोहेका जाल भी गरम हो उठा। साथ ही उसमें जो गायकी आँखके समान छिद्र थे, उनमेंसे निकलती हुई ज्वाला इस प्रकार शोभा पाने लगी, मानो हंसके बच्चे श्रेणीबद्ध होकर निकल रहे हों। उस जलती हुई अग्निसे हजारों ज्वालाएँ अलग-अलग फूट पड़ीं। आगके एक जगह रहनेपर भी उस लौहमय जालके छिद्रोंसे ऐसा दृश्य प्रतीत होने लगा। तब व्याधने उन ब्राह्मणसे कहा—'मुनिवर! आप इनमेंसे कोई भी एक ज्वाला उठा लें, जिससे मैं शेष ज्वालाओंको बुझाकर शान्त कर दूँ।'

इस प्रकार कहकर उस व्याधने जलती हुई आगपर जलसे भरा एक घड़ा तुरंत फेंका। फिर तो वह आग एकाएक शान्त हो गयी। सारा दृश्य पूर्ववत् हो गया। अब व्याधने तपस्वी संयमनसे कहा—'भगवन्! आपने जो जलती आग ले रखी है, वह उसी अग्निपुञ्जसे प्राप्त हुई है। उसे मुझे दे दें, जिसके सहारे मैं अपनी जीवनयात्रा सम्पन्न कर सकूँ।' व्याधके इस प्रकार कहनेपर जब ब्राह्मणने लोहेके जालकी ओर दृष्टि डाली तो वहाँ अग्नि थी ही नहीं। वह तो पुञ्जीभूत अग्निके समाप्त होते ही शान्त हो गयी थी। तब कठोर व्रतका पालन करनेवाले संयमनकी आँखें मुँद गयीं और वे मौन होकर बैठ गये। ऐसी स्थितिमें व्याधने उनसे कहा—'विप्रवर! अभी थोड़ी देर पहले आग धधक रही थी, ज्वालाओंका ओर-छोर नहीं था; किंतु मूलके शान्त होते ही सब-की-सब ज्वालाएँ शान्त हो गयीं। ठीक यही बात इस संसारकी भी है।'

'परमात्मा ही प्रकृतिका संयोग प्राप्त करके समस्त भूत-प्राणियोंके आश्रयरूपमें विराजमान होते हैं। यह जगत् तो प्रकृतिमें विक्षोभ—विकार उत्पन्न होनेसे प्रादुर्भूत होता है, अतएव संसारकी यही स्थिति है।'

'यदि जीवात्मा शरीर धारण करनेपर अपने स्वाभाविक धर्मका अनुष्ठान करता हुआ हृदयमें सदा परमात्मासे संयुक्त रहता है तो वह किसी प्रकारका कर्म करता हुआ भी विषादको प्राप्त नहीं होता।'

बृहस्पतिजीने कहा—राजेन्द्र! निष्ठुरक व्याध

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

और संयमन ब्राह्मणकी उपर्युक्त बातें समाप्त होते ही उस व्याधके ऊपर आकाशसे पुष्पोंकी वर्षा होने लगी। साथ ही द्विजश्रेष्ठ संयमनने देखा कि कामचारी अनेक दिव्य विमान वहाँ पहुँच गये हैं। वे सभी विमान बड़े विशाल एवं भाँति-भाँतिके रत्नोंसे सुसज्जित थे, जो निष्ठुरकको लेने आये थे। तत्पश्चात् विप्रवर संयमनने उन सभी विमानोंमें निष्ठुरक व्याधको मनोऽनुकूल उत्तम रूप धारण करके बैठे हुए देखा। क्योंकि निष्ठुरक व्याध अद्वैत ब्रह्मका उपासक था, उसे योगकी सिद्धि सुलभ थी, अतएव उसने अपने अनेक शरीर बना लिये। यह दृश्य देखकर संयमनके मनमें बड़ी प्रसन्नता हुई और वे अपने स्थानको चले गये। अतः द्विजवर रैभ्य एवं राजा वसु! अपने वर्णाश्रम-धर्मके अनुसार कर्म करनेवाला कोई भी व्यक्ति निश्चय ही ज्ञान प्राप्त करके मुक्तिका अधिकारी हो सकता है।

राजन्! यह प्रसङ्ग सुनकर रैभ्य और वसुके मनमें जो संदेह था, वह समाप्त हो गया। अतः वे दोनों बृहस्पतिजीके लोकसे अपने-अपने आश्रमोंको चले गये। अतएव राजेन्द्र! तुम भी परमप्रभु भगवान् नारायणकी उपासना करते हुए अभेदबुद्धिसे उन परमप्रभु परमेश्वरकी अपने शरीरमें स्थितिका अनुभव करते रहो।

(भगवान् वराह कहते हैं—) पृथ्वि! मुनिवर कपिलजीकी यह बात सुनकर राजा अश्वशिराने अपने यशस्वी ज्येष्ठ पुत्रको, जिसका नाम स्थूलशिरा था, बुलाया और उसे अपने राज्यपर अभिषिक्त कर वे स्वयं वनमें चले गये। नैमिषारण्य पहुँचकर, वहाँ यज्ञमूर्ति भगवान् नारायणका स्तवन करते हुए उन्होंने उनकी उपासना आरम्भ कर दी।

पृथ्वी बोली—परम शक्तिशाली प्रभो! राजा अश्वशिराने यज्ञपुरुष भगवान् नारायणकी किस प्रकार स्तुति की और वह स्तोत्र कैसा है? यह भी मुझे बतानेकी कृपा करें।

भगवान् वराह कहते हैं—राजा अश्वशिराद्वारा यज्ञमूर्ति भगवान् नारायणकी स्तुति इस प्रकार हुई—

जो सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि, इन्द्र, रुद्र तथा वायु आदि अनेक रूपोंमें विराजमान हैं, उन यज्ञमूर्ति भगवान् श्रीहरिको मेरा नमस्कार है। जिनके अत्यन्त भयंकर दाढ़ हैं, सूर्य एवं चन्द्रमा जिनके नेत्र हैं, संवत्सर और दोनों अयन जिनके उदर हैं, कुशसमूह ही जिनकी रोमावली है, उन प्रचण्ड शक्तिशाली यज्ञस्वरूप सनातन श्रीहरिको मैं प्रणाम करता हूँ।

स्वर्ग और पृथ्वीके बीचका सम्पूर्ण आकाश तथा सभी दिशाएँ जिनसे परिपूर्ण हैं, उन परम आराध्य, सर्वशक्तिसम्पन्न एवं सम्पूर्ण जगत्की उत्पत्तिके कारण सनातन श्रीहरिको मैं प्रणाम करता हूँ।

जिनपर कभी देवताओं और दानवोंका प्रभुत्व स्थापित नहीं होता, जो प्रत्येक युगमें विजयी होनेके लिये प्रकट होते हैं, जिनका कभी जन्म नहीं होता, जो स्वयं जगत्की रचना करते हैं, उन यज्ञरूपधारी परम प्रभु भगवान् नारायणको मैं नित्य नमस्कार करता हूँ। जो महातेजस्वी श्रीहरि शत्रुओंपर विजय प्राप्त करनेके लिये महामायामय परम प्रकाशयुक्त जाज्वल्यमान सुदर्शनचक्र धारण करते हैं तथा शार्ङ्गधनुष एवं शङ्ख आदिसे जिनकी चारों भुजाएँ सुशोभित होती हैं, उन यज्ञरूपधारी भगवान् नारायणको मैं नित्य नमस्कार करता हूँ।

जो कभी हजार सिरवाले, कभी महान् पर्वतके समान शरीर धारण करनेवाले तथा कभी त्रसरेणुके समान सूक्ष्म शरीरवाले बन जाते हैं, उन यज्ञपुरुष भगवान् नारायणको मैं सदा प्रणाम

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

करता हूँ। जिनकी चार भुजाएँ हैं, जिनके द्वारा अखिल जगत्की सृष्टि हुई है, अर्जुनकी रक्षाके निमित्त जिन्होंने हाथमें रथका चक्र उठा लिया था तथा जो प्रलयके समय कालाग्निका रूप धारण कर लेते हैं, उन यज्ञस्वरूप भगवान् नारायणको मैं नित्य नमस्कार करता हूँ।

संसारके जन्म-मरणरूप चक्रसे मुक्ति पानेके लिये जिन सर्वव्यापक पुराणपुरुष परमात्माकी मानव पूजा किया करते हैं तथा जिन अप्रमेय परम प्रभुका दर्शन योगियोंको केवल ध्यानद्वारा प्राप्त होता है, उन यज्ञमूर्ति भगवान् नारायणको मैं नित्य नमस्कार करता हूँ।

भगवन्! जिस समय मुझे अपने शरीरमें आपके वास्तविक स्वरूपकी झाँकी प्राप्त हुई, उसी क्षण मैंने मन-ही-मन अपनेको आपके अर्पण कर दिया। मेरी बुद्धिमें यह बात भलीभाँति प्रतीत होने लगी कि जगत्में आपके अतिरिक्त कुछ है ही नहीं। तभीसे मेरी भावना परम पवित्र बन गयी है।

इस प्रकार राजा अश्वशिरा यज्ञमूर्ति भगवान् नारायणकी स्तुति कर रहे थे। इतनेमें यज्ञवेदीसे निकलकर उनके सामने अग्निशिखाके तुल्य एक महान् तेज उपस्थित हो गया। अब इस शरीरका त्याग करनेकी इच्छासे राजा अश्वशिरा उसीमें समा गये और यज्ञपुरुष भगवान् नारायणके उस तेजोमय श्रीविग्रहमें लीन हो गये। [अध्याय ५]

पुण्डरीकाक्षपार-स्तोत्र, राजा वसुके जन्मान्तरका प्रसङ्ग तथा उनका भगवान् श्रीहरिमें लय होना

पृथ्वी बोली—भगवन्! जब बृहस्पतिकी बात सुनकर राजा वसु और महाभाग रैभ्यका संदेह दूर हो गया, तब उन लोगोंने फिर कौन-सा कार्य किया?

भगवान् वराह कहते हैं—पृथ्वि! राजा वसुने अपने राज्यका पालन करते हुए पुष्कल दक्षिणावाले अनेक विशाल यज्ञोंद्वारा भगवान् श्रीहरिका यजन किया। उन्होंने देवदेवेश्वर भगवान् नारायणको यज्ञादि कर्मोंके अनुष्ठानद्वारा तथा सभी प्राणियोंमें अभेद-दर्शनकी साधना करके प्रसन्न कर लिया। इस प्रकार बहुत समय बीत जानेपर राजा वसुके मनमें राज्यका उपभोग करनेकी इच्छा निवृत्त हो गयी और उनके मनमें इस द्वन्द्वमय संसारसे मुक्त होनेकी कामना जाग उठी; अतः उन्होंने अपने सौ पुत्रोंमें सबसे बड़े राजकुमार विवस्वान्को राजसिंहासनपर अभिषिक्त कर दिया और स्वयं तपस्या करनेके विचारसे वनमें चले गये। वे सभी तीर्थोंमें श्रेष्ठ पुष्कर तीर्थमें जा पहुँचे, जहाँ भगवत्परायण पुरुषोंद्वारा पुण्डरीकाक्ष भगवान् केशवकी सदा उपासना होती रहती है। वहाँ जाकर काश्मीर-नरेश राजर्षि वसुने कठिन तपस्याद्वारा अपने शरीरको सुखाना प्रारम्भ कर दिया। उन परम बुद्धिमान् राजर्षिका मन शुद्धस्वरूप भगवान् नारायणकी आराधनाके लिये अत्यन्त उत्सुक था; अतः वे परम अनुरागपूर्वक 'पुण्डरीकाक्षपार' नामक स्तोत्रका जप करनेमें संलग्न हो गये। दीर्घ कालतक उस स्तोत्रका जप करके महाराज वसु पुण्डरीकाक्ष भगवान् श्रीहरिमें विलीन हो गये।

पृथ्वीने पूछा—देव! इस 'पुण्डरीकाक्षपार'-स्तोत्रका स्वरूप क्या है? परमेश्वर! आप इसे मुझे बतानेकी कृपा करें।

भगवान् वराह कहते हैं—पृथ्वि! (राजा वसुके द्वारा अनुष्ठित पुण्डरीकाक्षपार-स्तोत्र इस प्रकार है—) पुण्डरीकाक्ष! आपको नमस्कार है। मधुसूदन!

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

आपको नमस्कार है। सर्वलोकमहेश्वर! आपको नमस्कार है। तीक्ष्ण सुदर्शनचक्र धारण करनेवाले श्रीहरिको मेरा बारंबार नमस्कार है। महाबाहो! आप विश्वरूप हैं, आप भक्तोंको वर देनेवाले और सर्वव्यापक हैं, आप असीम तेजोराशिके निधान हैं, विद्या और अविद्या—इन दोनोंमें आपकी ही सत्ता विलसित होती है, ऐसे आप कमलनयन भगवान् श्रीहरिको मैं प्रणाम करता हूँ। प्रभो! आप आदिदेव एवं देवताओंके भी देवता हैं। आप वेद-वेदाङ्गमें पारङ्गत, समस्त देवताओंमें सबसे गहन एवं गम्भीर हैं। कमलके समान नेत्रोंवाले आप श्रीहरिको मैं नमस्कार करता हूँ। भगवन्! आपके हजारों मस्तक हैं, हजारों नेत्र हैं और अनन्त भुजाएँ हैं। आप सम्पूर्ण जगत्को व्याप्त करके स्थित हैं, ऐसे आप परम प्रभुकी मैं वन्दना करता हूँ। जो सबके आश्रय और एकमात्र शरण लेने योग्य हैं, जो व्यापक होनेसे विष्णु एवं सर्वत्र जयशील होनेसे जिष्णु कहे जाते हैं, नीले मेघके समान जिनकी कान्ति है, उन चक्रपाणि सनातन देवेश्वर श्रीहरिको मैं प्रणाम करता हूँ। जो शुद्धस्वरूप, सर्वव्यापी, अविनाशी, आकाशके समान सूक्ष्म, सनातन तथा जन्म-मरणसे रहित हैं, उन सर्वगत श्रीहरिका मैं अभिवादन करता हूँ। अच्युत! आपके अतिरिक्त मुझे कोई भी वस्तु प्रतीत नहीं हो रही है। यह सम्पूर्ण चराचर जगत् मुझे आपका ही स्वरूप दिखलायी पड़ रहा है।*

(भगवान् वराह कहते हैं—) राजा वसु इस प्रकार स्तोत्रपाठ कर ही रहे थे कि एक नीलवर्ण पुरुष मूर्तिमान् होकर उनके शरीरके बाहर निकल आया, जो देखनेमें अत्यन्त प्रचण्ड एवं भयंकर प्रतीत होता था। उसके नेत्र लाल थे और वह ह्रस्वकाय पुरुष ऐसा प्रतीत होता था, मानो कोई जलता हुआ अंगार हो। वह दोनों हाथ जोड़कर बोला—'राजन्! मैं क्या करूँ?'

राजा वसु बोले—अरे! तुम कौन हो और तुम्हारा क्या काम है? तुम कहाँसे आये हो? व्याध! मुझे बताओ, मैं ये सब बातें जानना चाहता हूँ।

व्याधने कहा— राजन्! प्राचीन कालकी बात है; कलियुगके समय तुम दक्षिण दिशामें जनस्थान नामक प्रदेशके राजा थे। वीरवर! एक समय तुम वन्य पशुओंका शिकार करनेके लिये जंगलमें गये थे। उस समय तुम्हारे पास बहुत-से घोड़े थे। यद्यपि तुम्हारा उद्देश्य हिंस्र जन्तुओंका वध करनामात्र ही था, किंतु मृगका रूप धारण कर वनमें विचरण करनेवाले एक मुनि तुम्हारे न चाहते हुए भी बाणोंके शिकार होकर भूमिपर गिर पड़े और गिरते ही चल बसे। तुम्हारे मनमें यह सोचकर बड़ा हर्ष हुआ कि एक हरिण मारा गया। किंतु जब तुमने पास जाकर देखा तो मृगरूप धारण करनेवाले वे मृतक ब्राह्मण दिखलायी पड़े। यह घटना प्रस्रवण पर्वतपर घटित हुई थी। महाराज! उस समय ब्राह्मणको मृत देखकर तुम्हारी इन्द्रियाँ और मन सब-के-सब क्षुब्ध हो

* नमस्ते पुण्डरीकाक्ष नमस्ते मधुसूदन। नमस्ते सर्वलोकेश नमस्ते तिग्मचक्रिणे॥
विश्वमूर्तिं महाबाहुं वरदं सर्वतेजसम्। नमामि पुण्डरीकाक्षं विद्याविद्यात्मकं विभुम्॥
आदिदेवं महादेवं वेदवेदाङ्गपारगम्। गम्भीरं सर्वदेवानां नमस्ये वारिजेक्षणम्॥
सहस्रशीर्षणं देवं सहस्राक्षं महाभुजम्। जगत्संव्याप्य तिष्ठन्तं नमस्ये परमेश्वरम्॥
शरण्यं शरणं देवं विष्णुं जिष्णुं सनातनम्। नीलमेघप्रतीकाशं नमस्ये चक्रपाणिनम्॥
शुद्धं सर्वगतं नित्यं व्योमरूपं सनातनम्। भावाभावविनिर्मुक्तं नमस्ये सर्वगं हरिम्॥
नान्यत् किंचित् प्रपश्यामि व्यतिरिक्तं त्वयाच्युत। त्वन्मयं च प्रपश्यामि सर्वमेतच्चराचरम्॥
(अ० ६। १०—१६)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

उठे। तुम वहाँसे घर लौट आये। तुमने यह घटना किसी औरको भी बतला दी। राजन्! कुछ समय बीत जानेपर सहसा एक रातको ब्रह्महत्याके भयसे तुम आतङ्कित हो उठे; अतः तुमने विचार किया कि इस ब्रह्महत्याकी शान्तिके लिये मैं कोई ऐसा प्रयत्न करूँ, जिसके परिणामस्वरूप इस पापसे मुक्त हो जाऊँ। महाराज! तदनन्तर समय आनेपर भगवान् नारायणका अनवरत चिन्तन करते हुए तुमने परम पवित्र द्वादशीपर्यन्त व्याप्त शुद्ध एकादशीका उपवासपूर्वक व्रत किया। फिर दूसरे दिन तुमने 'भगवान् नारायण मुझपर प्रसन्न हों', इस संकल्पके साथ विधिपूर्वक गोदान किया। इसके बाद किसी दिन उदर-शूलकी असह्य पीड़ासे तुम्हारे प्राण-पखेरू उड़ गये। किंतु द्वादशीव्रत-पुण्यके होते हुए भी तुमको मुक्ति प्राप्त न हो सकी। इसका कारण मैं बताता हूँ, सुनो। तुम्हारी सौभाग्यवती रानीका नाम नारायणी था। मृत्युके समय जब तुम्हारे प्राण कण्ठमें आ गये थे, उस समय तुम्हारे मुखसे उसके नामका उच्चारण हुआ, उसीसे तुम्हें उत्तम गतिकी प्राप्ति हुई और तुमको एक कल्पपर्यन्त विष्णुलोकमें निवास प्राप्त हुआ।* विष्णुलोकमें गमन करनेके पूर्व मैं तुम्हारे शरीरमें स्थित था। अतः ये सब बातें मैं जानता हूँ। मैं उस समय एक भयंकर

* उक्त प्रकरणसे यह शङ्का होनी स्वाभाविक है कि क्या विष्णुलोकमें गमनके पश्चात् इस जन्म-मृत्युमय संसारमें लौटकर पुनः आना पड़ता है? क्योंकि भगवद्गीतामें स्वयं श्रीभगवान्ने—**'यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम'** कहकर अपने परमधामको प्राप्त होनेपर जीवका इस संसारमें पुनरागमन न होनेकी घोषणा की है। इस विषयमें प्रमाणभूत ग्रन्थोंका आश्रय लेकर विचार करनेसे निम्नाङ्कित बातें प्रतीत होती हैं—

श्रीभगवान्के परम विशुद्ध वैकुण्ठधामके भी कई स्तर हैं। यद्यपि ये सभी स्तर प्राकृत-प्रपञ्चसे अतीत हैं, फिर भी प्रलयकालमें इसके बाह्य अंशका प्रलय होता है, जब कि आभ्यन्तर भाग उस समय अन्तर्हित हो जाता है। राजा वसुका कल्पपर्यन्त विष्णुलोकमें निवास वैकुण्ठके किसी बाह्य स्तरपर कल्पान्तजीवी पुरुषोंका निवास होनेकी ओर संकेत करता है। श्रीमद्भागवतसे भी इसकी पुष्टि होती है—

किमन्यैः कालनिर्धूतैः कल्पान्ते वैष्णवादिभिः। (७।३।१)

इसी कल्पान्तपर्यन्त आयुवाले लोकके ऊपर ध्रुवकी स्थिति मानी गयी है। इसी ग्रन्थमें श्रीभगवान् नारायण ध्रुवको वर देते समय कहते हैं—

नान्यैरधिष्ठितं भद्र यद्भ्राजिष्णु ध्रुवक्षिति। यत्र ग्रहर्क्षताराणां ज्योतिषां चक्रमाहितम्॥
मेढ्यां गोचक्रवत्स्थास्नु परस्तात्कल्पवासिनाम्। (४।९।२०$\frac{१}{२}$)

भद्र! जिस तेजोमय अविनाशी लोकको आजतक किसीने प्राप्त नहीं किया, जिसके चारों ओर ग्रह, नक्षत्र और तारागण एवं ज्योतिश्चक्र उसी प्रकार चक्कर काटते रहते हैं, जिस प्रकार स्थिर मेढ़ीके चारों ओर दँवरीके बैल घूमते रहते हैं। अवान्तर कल्पपर्यन्त जीवन धारण करनेवालोंके लोकसे परे उसकी स्थिति है।

इसी प्रकार सनकादि महर्षियोंके वैकुण्ठलोक-गमनके समय वैकुण्ठके छः स्तरोंको पार करके सप्तम स्तरपर उन्हें जय-विजय आदि भगवत्पार्षदोंके दर्शन होते हैं—

तस्मिन्नतीत्य मुनयः षडसज्जमानाः कक्षाः समानवयसावथ सप्तमायाम्।
देवावचक्षत गृहीतगदौ परार्ध्यकेयूरकुण्डलकिरीटविटङ्कवेषौ॥ (श्रीमद्भा० ३।१५।२७)

भगवद्दर्शनकी लालसासे अन्य दर्शनीय सामग्रीकी उपेक्षा करते हुए वैकुण्ठधामकी छः ड्योढ़ियाँ पार करके जब वे सातवींपर पहुँचे तो वहाँ उन्हें हाथमें गदा लिये दो समान आयुवाले देवश्रेष्ठ दिखलायी दिये जो बाजूबंद, कुण्डल और किरीट आदि अनेकों अमूल्य आभूषणोंसे अलंकृत थे।

वैकुण्ठलोकके स्तरभेदके समान मुक्तिके भी स्तर-भेद हैं। मृत्युके साथ ही भगवान्के परमधाममें प्रवेश किया जाता है अथवा मृत्युके बाद कई स्तरोंमें होते हुए भी वहाँ पहुँचा जाता है। यह दूसरे प्रकारकी गति भी परमा गति ही है। कारण, इस स्तरसे अधोगति नहीं होती, क्रमशः ऊर्ध्वगति ही होती है और अन्तमें परमपदकी प्राप्ति हो जाती है। तथापि यह परमा गति होनेपर भी है अपेक्षाकृत निम्न अधिकारीके लिये ही।

राजा वसुको भी वासनाक्षय न होनेके कारण सद्योमुक्ति नहीं प्राप्त हुई। उनके द्वारा प्राण-त्यागके समय रानी नारायणीका नामोच्चारण होनेसे उसके फलस्वरूप उनको कल्पपर्यन्त विष्णुलोकमें वास प्राप्त होकर जन्मान्तरमें वासना एवं तज्जनित पापक्षयके द्वारा परम ज्योतिमें लीन होनेका वर्णन उनकी क्रममुक्ति प्राप्त होनेकी सूचना देता है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

ब्रह्मराक्षसके रूपमें था और तुमको अपार कष्ट देना चाहता था। इतनेमें भगवान् विष्णुके पार्षद आ गये और उन्होंने मूसलोंसे मुझे मारा, जिससे मैं संक्षीण होकर तुम्हारे रोमकूपोंके मार्गसे निकलकर बाहर गिर पड़ा। महाभाग! इसके पश्चात् ब्रह्माका एक अहोरात्र—कल्पकी अवधि समाप्त होनेपर महाप्रलय हो गया। तदनन्तर सृष्टिके आरम्भ होनेपर इस कल्पमें तुम काश्मीरके राजा सुमनाके पुत्ररूपमें उत्पन्न हुए हो। इस जन्ममें भी मैं तुम्हारे शरीरमें रोमकूपोंके मार्गसे पुनः प्रविष्ट हो गया। तुमने इस जन्ममें भी प्रभूत दक्षिणावाले अनेक यज्ञोंका अनुष्ठान किया; किंतु ये सभी यज्ञजनित पुण्य मुझे तुम्हारे शरीरसे बाहर निकालनेमें असमर्थ रहे; क्योंकि इनमें भगवान् विष्णुके नामका उच्चारण नहीं हुआ था। अब जो तुमने इस पुण्डरीकाक्षपार-स्तोत्रका पाठरूप अनुष्ठान किया है, इसके प्रभावसे तुम्हारे शरीरसे मैं रोमकूपोंके मार्गसे बाहर आ गया हूँ। राजेन्द्र! मैं वही ब्रह्मराक्षस अब व्याध बनकर पुनः प्रकट हुआ हूँ। पुण्डरीकाक्ष भगवान् नारायणके इस स्तोत्रके सुननेके प्रभावसे पहले जो मेरी पापमयी मूर्ति थी, वह अब समाप्त हो गयी। मैं उससे अब मुक्त हो गया। राजन्! अब मेरी बुद्धिमें धर्मका उदय हो गया है।

यह प्रसङ्ग सुनकर महाराज वसुके मनमें आश्चर्यकी सीमा न रही। फिर तो बड़े आदरके साथ वे उस व्याधसे बात करने लगे।

राजा वसुने कहा—व्याध! जैसे तुम्हारी कृपासे आज मुझे अपने पूर्वजन्मकी बात याद आ गयी, वैसे ही तुम भी मेरे प्रभावसे अब व्याध न कहलाकर धर्मव्याधके नामसे प्रसिद्ध होओगे। जो पुरुष इस 'पुण्डरीकाक्षपार' नामक उत्तम स्तोत्रका श्रवण करेगा, उसे भी पुष्कर क्षेत्रमें विधिपूर्वक स्नान करनेका फल सुलभ होगा।

भगवान् वराह कहते हैं—जगद्धात्रि पृथ्वि! राजा वसु धर्मव्याधसे इस प्रकार कहकर एक परम उत्तम विमानपर आरूढ़ हुए और भगवान् नारायणके लोकमें जाकर उनकी अनन्त तेजोराशिमें विलीन हो गये।

[अध्याय ६]

रैभ्य-सनत्कुमार-संवाद, गयामें पिण्डदानकी महिमा एवं रैभ्य मुनिका ऊर्ध्वलोकमें गमन

पृथ्वीने पूछा—भगवन्! मुनिवर रैभ्यने राजा वसुके सिद्धि प्राप्त होनेकी बातको सुनकर क्या किया? इस विषयमें मुझे बड़ा कौतूहल हो रहा है। आप उसे शान्त करनेकी कृपा करें।

भगवान् वराहने कहा—पृथ्वि! तपोधन रैभ्यमुनिने जब राजा वसुके सिद्धि प्राप्त होनेकी बात सुनी, तो वे पवित्र पितृतीर्थ गया जा पहुँचे। वहाँ जाकर उन्होंने भक्तिपूर्वक पितरोंके लिये पिण्डदान किया। इस प्रकार पितरोंको तृप्त करके उन्होंने अत्यन्त कठिन तपस्या आरम्भ कर दी। परम मेधावी रैभ्यके इस प्रकार दुष्कर तपका आचरण करते समय एक महायोगी विमानपर आरूढ़ होकर उनके पास पधारे। उनका शरीर तेजसे देदीप्यमान था। उन महायोगीका वह परम उज्ज्वल विमान सूर्यके समान उद्भासित हो रहा था। त्रसरेणुके समान सूक्ष्म उस विमानपर विराजमान वह तेजोमय पुरुष भी आकारमें परमाणुके तुल्य प्रतीत होता था।

उस तेजोमय पुरुषने कहा—'सुव्रत! तुम किस प्रयोजनसे इतनी कठिन तपस्या कर रहे

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

हो?' इतना कहकर वह दिव्य पुरुष बढ़ने लगा और उसने अपने शरीरसे पृथ्वी एवं आकाशके मध्यभागको व्याप्त कर लिया। सूर्यके समान देदीप्यमान उसके विमानने भी सम्पूर्ण भूगोल और खगोलको एवं साथ-ही-साथ विष्णुलोकको भी व्याप्त कर लिया। तब रैभ्यने अत्यन्त आश्चर्ययुक्त होकर उस योगीसे पूछा—'योगीश्वर! आप कौन हैं? मुझे बतानेकी कृपा करें।'

उस तेजोमय पुरुषने कहा—रैभ्य! मैं ब्रह्माजीका मानस पुत्र सनत्कुमार हूँ। रुद्र मेरे ज्येष्ठ भ्राता हैं। मेरा जनलोकमें निवास है। तपोधन! तुम्हारे पास प्रेमके वशीभूत होकर मैं आया हूँ। वत्स! तुमने ब्रह्माजीकी सृष्टिका विस्तार किया है। तुम धन्य हो!

मुनिवर रैभ्यने पूछा—योगिराज! आपको मेरा नमस्कार है। यह सारा विश्व आपका ही रूप है। आप प्रसन्न हों और मुझपर दया करें। योगीश्वर! कहिये, मैं आपके लिये क्या करूँ? अभी आपने मुझे जो धन्य कहा है, इसका क्या रहस्य है?

सनत्कुमारजीने कहा—रैभ्य! तुमने गयातीर्थमें जाकर वेदमन्त्रोंका उच्चारण करते हुए विधिपूर्वक पिण्डदानके द्वारा पितरोंको तृप्त किया है, श्राद्धकर्मके अङ्गभूत व्रत, जप एवं हवनकी भी विधि तुम्हारे द्वारा सम्पन्न हुई है। अतएव तुम ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ तथा धन्यवादके पात्र हो। इस विषयमें एक आख्यान है, वह मुझसे सुनो। विशाल नामसे विख्यात एक राजा हो चुके हैं। उनके नगरका नाम भी विशाल ही था। वे राजा निःसंतान थे, इससे शत्रुओंको पराजित करनेवाले उन परम धैर्यशाली राजा विशालके मनमें पुत्र-प्राप्तिकी इच्छा हुई। अतः उन्होंने श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको बुलाकर उनसे पुत्र-प्राप्तिका उपाय पूछा। उन उदारचेता ब्राह्मणोंने कहा—'राजन्! तुम पुत्र-प्राप्तिके निमित्त गयामें जाकर पुष्कल अन्नदान करके पितरोंको तृप्त करो। ऐसा करनेसे तुम्हें अवश्य ही पुत्र प्राप्त होगा। वह महान् दानी एवं सम्पूर्ण भूमण्डलपर शासन करनेवाला होगा।'

ब्राह्मणोंके ऐसा कहनेपर विशाल-नरेशके अङ्ग-प्रत्यङ्ग हर्षसे खिल उठे। तदनन्तर सूर्य जब मघा नक्षत्रपर आये, उस समय प्रयत्नपूर्वक गयातीर्थमें जाकर उन नरेशने विधि-विधानके साथ भक्तिपूर्वक पितरोंके लिये पिण्डदान किया। सहसा उन्होंने आकाशमें श्वेत, पीत एवं कृष्ण वर्णके तीन श्रेष्ठ पुरुषोंको देखा। उनको देखकर राजाने पूछा—'आपलोग कौन हैं?'

श्वेत पुरुषने कहा—राजन्! मैं तुम्हारा पिता सित हूँ। मेरा नाम तो सित है ही, मेरे शरीरका वर्ण भी सित (श्वेत) है, साथ ही मेरे कर्म भी सित (उज्ज्वल) हैं। (मेरे साथ) ये जो लाल रंगके पुरुष दिखायी देते हैं, मेरे पिता हैं। इन्होंने बड़े निष्ठुर कर्म किये हैं। ये ब्रह्महत्यारे और पापाचारी रहे हैं और इनके बाद ये जो तीसरे सज्जन हैं, ये तुम्हारे प्रपितामह हैं। इनका नाम अधीश्वर है। ये कर्म और वर्णसे भी कृष्ण हैं। इन्होंने पूर्वजन्ममें अनेक वयोवृद्ध ऋषियोंका वध किया है। ये दोनों पिता और पुत्र अवीचि नामक नरकमें पड़े हुए हैं; अतः ये मेरे पिता और ये दूसरे इनके पिता जो दीर्घ कालतक काले मुखसे युक्त हो नरकमें रहे हैं और मैं, जिसने अपने शुद्ध कर्मके प्रभावसे इन्द्रका परम दुर्लभ सिंहासन प्राप्त किया था—तुझ मन्त्रज्ञ पुत्रके द्वारा गयामें पिण्डदान करनेसे—तीनों ही बलात् मुक्त हो गये। शत्रुदमन! पिण्डदानके समय 'मैं अपने पिता, पितामह और प्रपितामहको तृप्त करनेके लिये यह जल देता हूँ'—ऐसा कहकर जो तुमने जल दिया है, उसीके प्रभावसे हमलोग यहाँ एक साथ एकत्र होकर

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

तुम्हारे समक्ष वार्तालाप कर सके हैं। अब मैं इस गया-तीर्थके प्रभावसे पितृलोकमें जा रहा हूँ। इस तीर्थमें पिण्डदान करनेके माहात्म्यसे ही ये तुम्हारे पितामह और प्रपितामह, जो पापी होनेके कारण दुर्गतिको प्राप्त हो चुके थे एवं जिनके अङ्ग-प्रत्यङ्ग विकृत हो चुके थे, वे भी अब उत्तम लोकोंको प्राप्त हो रहे हैं। यह इस गयातीर्थका ही प्रताप है कि यहाँ पिण्डदान करनेके प्रभावसे पुत्र अपने ब्रह्मघाती पिताका भी पुनः उद्धार कर सकता है। वत्स! इसी कारण मैं इन दोनों—तुम्हारे पितामह और प्रपितामहको लेकर तुम्हें देखनेके लिये आ गया हूँ।

(सनत्कुमारजी कहते हैं—) महाभाग रैभ्य! यही कारण है कि मैंने तुमको धन्य कहा है। गयातीर्थमें एक बार जाना और पिण्डदान करना ही दुर्लभ है। फिर तुम तो प्रतिदिन यहाँ इस उत्तम कार्यका सम्पादन करते हो। मुनिवर! तुमने गदाधररूपमें विराजमान साक्षात् भगवान् नारायणका दर्शन कर लिया है। तुम्हारे इस पुण्यके विषयमें और अधिक क्या कहा जाय? द्विजवर! इस गयाक्षेत्रमें भगवान् गदाधर सदा साक्षात् विराजते हैं। इसी कारण सम्पूर्ण तीर्थोंमें यह विशेष प्रसिद्धिको प्राप्त हुआ है।

भगवान् वराह कहते हैं—पृथ्वि! ऐसा कहकर महायोगी सनत्कुमारजी वहीं अन्तर्धान हो गये। तब मुनिवर रैभ्यने भगवान् गदाधरकी स्तुति करनी प्रारम्भ कर दी।

विप्रवर रैभ्य बोले— देवता जिनका स्तवन करते रहते हैं, जो क्षमाके धाम हैं, जो क्षुधा-ग्रस्त आर्तजनोंके दुःखोंको दूर करनेवाले हैं, जो विशाल नामक दैत्यकी सेनाओंका मर्दन करनेवाले हैं तथा जो स्मरण करनेसे समस्त अशुभोंका विनाश कर देते हैं, उन मङ्गलमय भगवान् गदाधरको मैं प्रणाम करता हूँ। जो पूर्वजोंके भी पूर्वज, पुराणपुरुष, स्वर्गलोकमें पूजित एवं मनुष्योंके एकमात्र परम आश्रय हैं, जिन्होंने वामन-अवतार ग्रहण करके दैत्यराज बलिके चंगुलसे पृथ्वीका उद्धार किया है, उन महाबलशाली शुद्धस्वरूप भगवान् गदाधरको मैं एकान्तमें नमस्कार करता हूँ। जो परम शुद्ध स्वभाववाले एवं अनन्त वैभवसम्पन्न हैं, लक्ष्मीने जिनका स्वयं वरण किया है, जो अत्यन्त निर्मल एवं विशिष्ट विचारशील हैं तथा पवित्र अन्तःकरणवाले भूपाल जिनका स्तवन करते हैं, ऐसे भगवान् गदाधरको जो प्रणाम करता है, वह जगत्में सुखसे रहनेका अधिकारी होता है। देवता और दानव जिनके चरणकमलोंकी अर्चना करते हैं, जो हार, केयूर, बाजूबंद एवं किरीट धारण किये हुए हैं तथा समुद्रमें शयन करते हैं, उन चक्रधारी भगवान् गदाधरकी जो वन्दना करता है, वही जगत्में सुखपूर्वक रहनेका अधिकारी है। जो भगवान् अच्युत सत्ययुगमें श्वेत, त्रेतामें अरुण, द्वापरमें पीत-वर्णसे अनुरञ्जित श्याम तथा कलियुगमें भौंरेके समान कृष्णवर्णयुक्त विग्रह धारण करते हैं, उन भगवान् गदाधरको जो प्रणाम करता है, वह जगत्में सुखपूर्वक निवास करता है। जिनसे सृष्टिके बीजरूप चतुर्मुख ब्रह्माका प्राकट्य हुआ है तथा जो नारायण विष्णुरूप धारण करके जगत्का पालन और रुद्ररूपसे संहार करते हैं एवं इस प्रकार जो ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश—इन तीन मूर्तियोंमें विलसित होते हैं, उन भगवान् गदाधरकी जय हो। सत्त्व, रज और तम—इन तीन गुणोंका संयोग ही विश्वकी सृष्टिमें कारण बतलाया जाता है; किंतु इस प्रकार जो एक होकर भी इन तीन गुणोंके रूपमें अभिव्यक्त

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

होते हैं, वे भगवान् गदाधर धर्म एवं मोक्षकी कामनासे अधीर हुए मुझको धैर्य प्रदान करनेकी कृपा करें। जिस दयामय प्रभुने दुःखरूपी जल-जन्तुओं एवं मृत्युरूप ग्राहके भयंकर आक्रमणोंसे संसार-सागरमें थपेड़े खाकर डूबते हुए मुझ दीन-हीन प्राणीका विशाल जलपोत बनकर उद्धार कर दिया, उन भगवान् गदाधरको मैं प्रणाम करता हूँ। जो स्वयं महाकाशमें घटाकाशकी व्याप्तिकी भाँति अपने द्वारा अपनेमें ही तीन मूर्तियोंमें अभिव्यक्त होते हैं तथा अपनी मायाशक्तिका आश्रय लेकर इस ब्रह्माण्डकी सृष्टि करते हैं एवं उसीमें कमलासन ब्रह्माके रूपमें प्रकटित होकर तेजस् आदि तत्त्वोंका प्रादुर्भाव करते हैं, उन जगदाधार भगवान् गदाधरको मैं प्रणाम करता हूँ। जो मत्स्य-कच्छप आदि अवतार ग्रहण करके देवताओंकी रक्षा करते हैं, जिनकी जगत्में 'वृषाकपि' के नामसे प्रसिद्धि है, वे यज्ञवराहरूपी भगवान् गदाधर मुझे सद्गति प्रदान करें।*

भगवान् वराह कहते हैं—पृथ्वि! मुनिवर रैभ्य महान् बुद्धिमान् थे। जब उन्होंने इस प्रकार भक्तिपूर्वक श्रीहरिकी स्तुति की तो भगवान् गदाधर सहसा उनके सामने प्रकट हो गये। उनका श्रीविग्रह पीताम्बरसे शोभायमान था। वे गरुडपर स्थित थे तथा उनकी भुजाएँ शङ्ख, चक्र, गदा एवं पद्मसे अलंकृत थीं। वे भगवान् पुरुषोत्तम आकाशमें ही स्थित रहकर मेघके समान गम्भीर वाणीमें बोले—'द्विजवर रैभ्य! तुम्हारी भक्ति, स्तुति एवं तीर्थ-स्नानसे मैं संतुष्ट हो गया हूँ। अब तुम्हारी जो अभिलाषा हो, वह मुझसे कहो।'

रैभ्यने कहा—देवेश्वर! अब मुझे उस लोकमें निवास प्रदान कीजिये, जहाँ सनक-सनन्दन आदि मुनिजन रहते हैं। भगवन्! आपकी कृपासे मैं उसी लोकमें जाना चाहता हूँ।

श्रीभगवान् बोले—'विप्रश्रेष्ठ! बहुत ठीक, ऐसा ही होगा।' ऐसा कहकर भगवान् अन्तर्धान हो गये। फिर तो प्रभुके कृपाप्रसादसे उसी क्षण रैभ्यको दिव्य ज्ञान प्राप्त हो गया और वे परम सिद्ध सनकादि महर्षि जहाँ निवास करते हैं, उस लोकको चले गये।

भगवान् श्रीहरिका यह गदाधर-स्तोत्र रैभ्य मुनिके मुखसे उच्चरित हुआ है। जो मनुष्य गयातीर्थमें जाकर इसका पाठ करेगा, उसे पिण्डदानसे बढ़कर फलकी प्राप्ति होगी।

[अध्याय ७]

---

* गदाधरं विबुधजनैरभिष्टुतं धृतक्षमं क्षुधितजनार्तिनाशनम्। शिवं विशालासुरसैन्यमर्दनं नमाम्यहं हृतसकलाशुभं स्मृतौ॥
पुराणपूर्वं पुरुषं पुरुष्टुतं पुरातनं विमलमलं नृणां गतिम्। त्रिविक्रमं हृतधरणिं बलोर्जितं गदाधरं रहसि नमामि केशवम्॥
विशुद्धभावं विभवैरुपावृतं श्रिया वृतं विगतमलं विचक्षणम्। क्षितीश्वरैरपगतकिल्बिषैः स्तुतं गदाधरं प्रणमति यः सुखं वसेत्॥
सुरासुरैरर्चितपादपङ्कजं केयूरहाराङ्गदमौलिधारिणम्। अब्धौ शयानं च रथाङ्गपाणिनं गदाधरं प्रणमति यः सुखं वसेत्॥
सितं कृते त्रैतयुगेऽरुणं विभुं तथा तृतीये नीलसुवर्णमच्युतम्। कलौ युगेऽलिप्रतिमं महेश्वरं गदाधरं प्रणमति यः सुखं वसेत्॥
बीजोद्भवो यः सृजते चतुर्मुखं तथैव नारायणरूपतो जगत्। प्रपालयेद् रुद्रवपुस्तथान्तकृद्गदाधरो जयतु षडर्द्धमूर्तिमान्॥
सत्त्वं रजश्चैव तमो गुणास्त्रयस्त्वेतेषु विश्वस्य समुद्भवः किल। स चैक एव त्रिविधो गदाधरो दधातु धैर्यं मम धर्ममोक्षयोः॥
संसारतोयार्णवदुःखतन्तुभिर्वियोगनक्रक्रमणैः सुभीषणैः। मज्जन्तमुच्चैः सुतरां महाप्लवो गदाधरो मामुदधौ तु योऽतरत्॥
स्वयं त्रिमूर्तिः खमिवात्मनात्मनि स्वशक्तितश्चाण्डमिदं ससर्ज ह। तस्मिञ्जलोत्थासनमाप तैजसं ससर्ज यस्तं प्रणतोऽस्मि भूधरम्॥
मत्स्यादिनामानि जगत्सु चाश्नुते सुरादिसंरक्षणतो वृषाकपिः। मखस्वरूपेण स संततो विभुर्गदाधरो मे विदधातु सद्गतिम्॥
(अध्याय ७। ३१—४०)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भगवान्‌का मत्स्यावतार तथा उनकी देवताओंद्वारा स्तुति

पृथ्वीने पूछा—प्रभो! सत्ययुगके आरम्भमें विश्वात्मा भगवान् नारायणने कौन-सी लीला की? वह सब मैं भलीभाँति सुनना चाहता हूँ।

भगवान् वराह कहते हैं—पृथ्वि! सृष्टिके पूर्वकालमें एकमात्र नारायण ही थे। उनके अतिरिक्त दूसरा कुछ भी नहीं था। एकाकी होनेसे उनका रमण—आनन्द-विलास नहीं हो रहा था। वे प्रभु समस्त कर्मोंके सम्पादनमें स्वतन्त्र हैं। जब उनको दूसरेकी इच्छा हुई, तो उनसे अभावसंज्ञक ज्ञानमय संकल्पकी उत्पत्ति हुई। क्षणभरमें ही उनका वह सृष्टिरचनाका संकल्प सूर्यके समान उद्‌भासित हो उठा। उसके फिर दो भाग हुए, जिनमें पहली ब्रह्मवादियोंद्वारा चिन्तनीय ब्रह्मविद्या थी, जो उमा नामसे प्रसिद्ध हुईं। ये ही मनुष्योंमें सदा श्रद्धाके रूपमें निवास करती हैं। दूसरी ॐकारद्वारा वाच्य एकाक्षरी विद्या प्रकटित हुईं। तदनन्तर उसीने इस भूलोककी रचना की। भूलोककी रचना करनेके पश्चात् उसने भुवर्लोक एवं स्वर्लोकका निर्माण किया। तत्पश्चात् क्रमशः महर्लोक तथा जनलोककी सृष्टि करके वह प्रणवात्मिका विद्या अपने द्वारा रचित इस सृष्टिमें अन्तर्हित हो गयी और धागेमें पिरोये हुए मणियोंके समान वह सबमें ओतप्रोत हो गयी। इस प्रकार प्रणवसे जगत्‌की रचना तो हो गयी, किंतु यह नितान्त शून्य ही रहा। भगवान्‌की यह जो शिवमूर्ति है, वे स्वयं श्रीहरि ही हैं। इन लोकोंको शून्य देखकर उन परम प्रभुने एक परमोत्तम श्रीविग्रहमें अभिव्यक्त होनेकी इच्छा की और अपने मनोधाममें क्षोभ उत्पन्न करके अपने अभिलषित आकारमें अभिव्यक्त हो गये। इस प्रकार ब्रह्माण्डका आकार व्यक्त हुआ। फिर वह ब्रह्माण्ड दो भागोंमें विभक्त हुआ; इसमें जो नीचेका भाग था, वह भूलोक बना, ऊपरका खण्ड भुवर्लोक हुआ, जो मध्यवर्ती लोकोंके अन्तरालमें सूर्यके समान प्रकाशमान हो गया। पूर्वकल्पके समान महासिन्धुमें कमलकोशका उसी भाँति प्रादुर्भाव हो गया और देवाधिदेव नारायणने प्रजापति ब्रह्माके रूपमें प्रकटित होकर अकारसे लेकर हकारपर्यन्त समस्त स्वर एवं व्यञ्जन वर्णोंकी सृष्टि कर दी।

इस प्रकार अमूर्त सृष्टिकी रचना हो जानेपर श्रीभगवान्‌ने चारों वेदोंका गान प्रारम्भ किया। इस प्रकार लोकोंकी सृष्टि करनेके पश्चात् अपरिमेय शक्तिशाली प्रभुके मनमें जगत्‌के धारण-पोषणकी चिन्ता हुई और चिन्तन करते ही उनके नेत्रोंसे महान् तेज निकला। उनके दक्षिण नेत्रसे निकला हुआ तेज अग्निके समान उष्ण और वाम नेत्रसे प्रादुर्भूत तेज हिमके समान शीतल था। भगवान् श्रीहरिने उनको सूर्य और चन्द्रमाके रूपमें प्रतिष्ठित कर दिया। फिर उन विराट् पुरुषसे जगत्‌का प्राणरूप वायु प्रकट हुआ। ये ही वायुदेवता आज भी हम सबके हृदयमें प्राणरूपसे व्याप्त हैं। तत्पश्चात् उसी वायुसे अग्निका प्रादुर्भाव हुआ। अग्निसे जलतत्त्व उत्पन्न हुआ। जो वह अग्नितत्त्व उत्पन्न हुआ, वही परब्रह्म परमात्माका तेज है और वही मूर्त सृष्टिका परम कारण बना। विराट् पुरुषने इसी तेजसम्पन्न अपनी भुजाओंसे क्षत्रिय जातिकी, जाँघोंसे वैश्य जातिकी और पैरोंसे शूद्रजातिकी रचना की। फिर उन परमेश्वरने यक्षों और राक्षसोंका सृजन किया। तदनन्तर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र प्रभृति मानवोंसे भूर्लोकको तथा आकाशमें विचरण करनेवाले प्राणियोंसे भुवर्लोकको भर दिया। अपने पुण्योंके फलस्वरूप स्वर्गका अर्जन करनेवाले भूत-प्राणियोंसे स्वर्लोकको एवं सनकादि ऋषि-मुनियोंसे महर्लोकको परिपूरित कर दिया।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

विराट् परमात्माकी हिरण्यगर्भके रूपमें उपासना करनेवालोंसे उन्होंने जनलोकको भर दिया और तपोनिष्ठ देवताओंसे तपोलोकको पूर्ण कर दिया। सत्यलोकको उन देवताओंसे परिपूर्ण किया, जो मरणधर्मा नहीं थे।

इस प्रकार भूतभावन भगवान् श्रीहरिने सृष्टिकी रचना सम्पन्न कर दी। परमेश्वरके संकल्पसे इस जगत्‌की रचना होनेके कारण ही सृष्टिको कल्प कहा जाता है। फिर भगवान् नारायण रात्रिकल्पके आनेपर निद्रामग्न हो गये। उनके सो जानेपर ये तीनों लोक भी प्रलयको प्राप्त हो गये। जब रात्रि समाप्त हो गयी, तब कमलनयन भगवान् श्रीहरि जाग उठे और उन्होंने पुनः चारों वेदों तथा उनकी स्वरूपभूता मातृकाओंका चिन्तन किया, किंतु योगनिद्राजनित अज्ञानसे मोहित हुए देवदेवेश्वर श्रीहरिको लोकमर्यादाओंको स्थिर करनेके लिये वेद उपलब्ध नहीं हुए। उन्होंने देखा—उनके ही आत्मस्वरूप वेद जलमें डूबे हुए हैं। अब उन्हें वेदोंके उद्धारकी चिन्ता हुई; अतएव तत्काल मत्स्यके रूपमें अवतरित होकर सागरकी विशाल जलराशिको क्षुब्ध करते हुए उसमें प्रविष्ट हो गये।

मत्स्यमूर्ति श्रीहरि महासिन्धुके अगाध जलसमूहमें प्रवेश करते ही महान् पर्वताकार रूपमें प्रकाशित हो उठे। इस प्रकार उन देवश्रेष्ठके मत्स्यावतार ग्रहण करनेपर देवता उत्तम स्तोत्रोंसे उनकी स्तुति करने लगे—'मत्स्यरूप धारण करनेवाले भगवान् नारायण! वेदोंके अतिरिक्त अन्य शास्त्रोंके पारगामी पुरुषोंके लिये भी आप अगम्य हैं, यह सारा विश्व आपका ही अङ्ग है। आप अत्यन्त मधुर स्वरमें वेदोंका गान करते हैं, विद्या और अविद्या दोनों आपके रूप हैं, आपको हमारा बारंबार नमस्कार है। आपके अनेक रूप हैं, चन्द्र और सूर्य आपके सुन्दर नेत्र हैं। प्रलयकालीन समुद्र जब सम्पूर्ण विश्वको आप्लावित कर लेता है, उस समय भी आप स्थित रहते हैं। विष्णो! आपको प्रणाम है। हमलोग आपकी शरणमें आये हैं, आप इस मत्स्य-शरीरका त्याग कर हमारी रक्षा करनेकी कृपा करें। अनन्त रूप धारण करनेवाले प्रभो! सारा संसार आपसे ही व्याप्त है। आपके अतिरिक्त इस जगत्‌में कुछ है ही नहीं और न इस जगत्‌के अतिरिक्त आप अव्यक्तमूर्तिकी कोई दूसरी मूर्ति ही है। इसीलिये हमलोग आपकी शरणमें आये हैं। पुण्डरीकाक्ष! यह आकाश आप पुराणपुरुषका आत्मा है, चन्द्रमा आपके मन और अग्नि मुख हैं। देवाधिदेव शम्भो! यह सारा जगत् आपसे ही प्रकाशित है। यद्यपि हमलोग आपकी भक्तिसे रहित हैं, तो भी आप हमें क्षमा करनेकी कृपा करें। देवेश्वर! आप सम्पूर्ण जगत्‌के आश्रय हैं, आप सनातन पुरुषके मधुरभाषी सुन्दर स्वरयुक्त दिव्य रूपसे इस पर्वताकार विग्रहका कोई मेल ही नहीं है। अच्युत! आपके सूर्यसे भी अधिक तीव्र तेजसे हमलोग संतप्त हो रहे हैं, अतएव आप अपने इस रूपका संवरण कर लीजिये। भगवन्! हमलोग आपकी शरणमें आये हैं; क्योंकि आपको इस रूपसे सम्पूर्ण जगत्‌को व्याप्त करते देखकर हमारा मन भयभीत हो उठा है। आज आपको पूर्वरूपमें न पाकर आपसे हीन हुए हमलोगोंको ऐसा प्रतीत हो रहा है, जैसे हमारे शरीरोंमें आत्मा ही न रह गया हो।' देवताओंके इस प्रकार स्तुति करनेपर मत्स्यरूपी भगवान् नारायणने जलमें निमग्न हुए उपनिषदों और शास्त्रोंसहित वेदोंका उद्धार कर दिया। इसके पश्चात् उन्होंने अपने नारायण-रूपमें स्थित होकर देवताओंको सान्त्वना प्रदान की। भगवान् नारायण जबतक सगुण-साकार रूपमें स्थित रहते हैं, तभीतक इस

In Public Domain. Digitized by Sanyogita Shenda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

संसारकी सत्ता रहती है। उनके अपने निर्गुण-निराकार रूपमें स्थित हो जानेपर संसारका प्रलय हो जाता है और उनमें इच्छारूप विक्रिया उत्पन्न होनेपर जगत्की सृष्टि पुनः प्रारम्भ हो जाती है।

[अध्याय ९]

राजा दुर्जयके चरित्र-वर्णनके प्रसङ्गमें मुनिवर गौरमुखके आश्रमकी शोभाका वर्णन

सत्ययुगकी बात है। सुप्रतीक नामसे प्रसिद्ध एक महान् पराक्रमी राजा थे। उनकी दो रानियाँ थीं। वे दोनों परम मनोरम रानियाँ किसी बातमें एक-दूसरीसे कम न थीं। उनमें एकका नाम विद्युत्प्रभा और दूसरीका कान्तिमती था। दो रानियोंके होते हुए भी उन शक्तिशाली नरेशको किसी संतानकी प्राप्ति न हुई। तब राजा सुप्रतीक पर्वतोंमें श्रेष्ठ चित्रकूट पर्वतपर गये। वहाँ जाकर उन्होंने सर्वथा निष्पाप अत्रिनन्दन दुर्वासाकी विधिपूर्वक आराधना की। वरप्राप्तिकी इच्छा रखनेवाले राजा सुप्रतीकके बहुत समयतक यत्नपूर्वक सेवा करनेपर वे ऋषि प्रसन्न हो गये। राजाको वर देनेके लिये उद्यत होकर वे मुनिवर कुछ कह ही रहे थे, तबतक ऐरावत हाथीपर चढ़े हुए देवराज इन्द्र वहाँ पहुँच गये। वे चारों ओर देवसेनासे घिरे हुए थे। वे वहाँ आकर चुपचाप खड़े हो गये। महर्षि दुर्वासा देवराज इन्द्रके प्रति स्नेह रखते थे; किंतु इन्द्रको अपने प्रति प्रीतिका प्रदर्शन न करते देखकर वे क्रुद्ध हो उठे और उन अत्रिनन्दनने देवराज इन्द्रको अत्यन्त कठोर शाप दे दिया—'अरे मूर्ख देवराज! तुमने मेरा जो अपमान किया है, इसके फलस्वरूप तुम्हें अपने राज्यसे च्युत हो दूसरे लोकमें जाकर निवास करना होगा।' देवेन्द्रसे इस प्रकार कहकर उन क्रुद्ध मुनिने राजा सुप्रतीकसे कहा—'राजन्! तुम्हें एक अत्यन्त बलवान् पुत्र प्राप्त होगा। वह इन्द्रके समान रूपवान्, श्रीसम्पन्न, महाप्रतापी, विद्याके प्रभाव और तत्त्वको भलीभाँति जाननेवाला होगा। उसके कर्म क्रूर होंगे। वह सदैव शस्त्रोंसे सन्नद्ध रहेगा और वह परम शक्तिशाली बालक राजा दुर्जयके नामसे प्रसिद्ध होगा।'

इस प्रकार वर देकर मुनिवर दुर्वासा अन्यत्र चले गये। राजा सुप्रतीक भी अपने राज्यको वापस लौट आये। धर्मज्ञ राजाने अपनी रानी विद्युत्प्रभाके उदरमें गर्भाधान किया। रानीके समय आनेपर प्रसव हुआ। उस महाबली पुत्रकी दुर्जय नामसे प्रसिद्धि हुई। उसके जन्मके अवसरपर दुर्वासा मुनि पधारे और उन्होंने स्वयं उस बालकके जातकर्म आदि संस्कार किये। साथ ही उन महर्षिने अपने तपोबलसे उस बालकके स्वभावको भी सौम्य बना दिया तथा उसको वेदशास्त्रोंका पारगामी विद्वान्, धर्मात्मा एवं परम-पवित्र बना दिया।

राजा सुप्रतीककी जो दूसरी सौभाग्यवती पत्नी थी, जिसका नाम कान्तिमती था, उसके भी सुद्युम्न नामक एक पुत्र हुआ। वह भी वेद और वेदाङ्गका पूर्ण विद्वान् हुआ। भामिनि! महाराज सुप्रतीककी राजधानी वाराणसीमें थी। एक बार उनका पुत्र दुर्जय पासमें बैठा हुआ था। उस समय उसे परम योग्य देखकर तथा अपनी वृद्धावस्थापर दृष्टिपात करके राजा उसे ही राज्य सौंप देनेका विचार करने लगे। फिर भलीभाँति विचार करके उन धर्मात्मा नरेशने अपना राज्य राजकुमार दुर्जयको सौंप दिया और वे स्वयं चित्रकूट नामक

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भगवान् विष्णु

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भगवान् वराहद्वारा पृथ्वीका उद्धार

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भगवान् मत्स्य

Hinduism Discord Server https://discord.gg/thehindu | Public Domain | Digitized by Sarayu Trivedi | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

कूर्मावतार

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

नृसिंहावतार

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

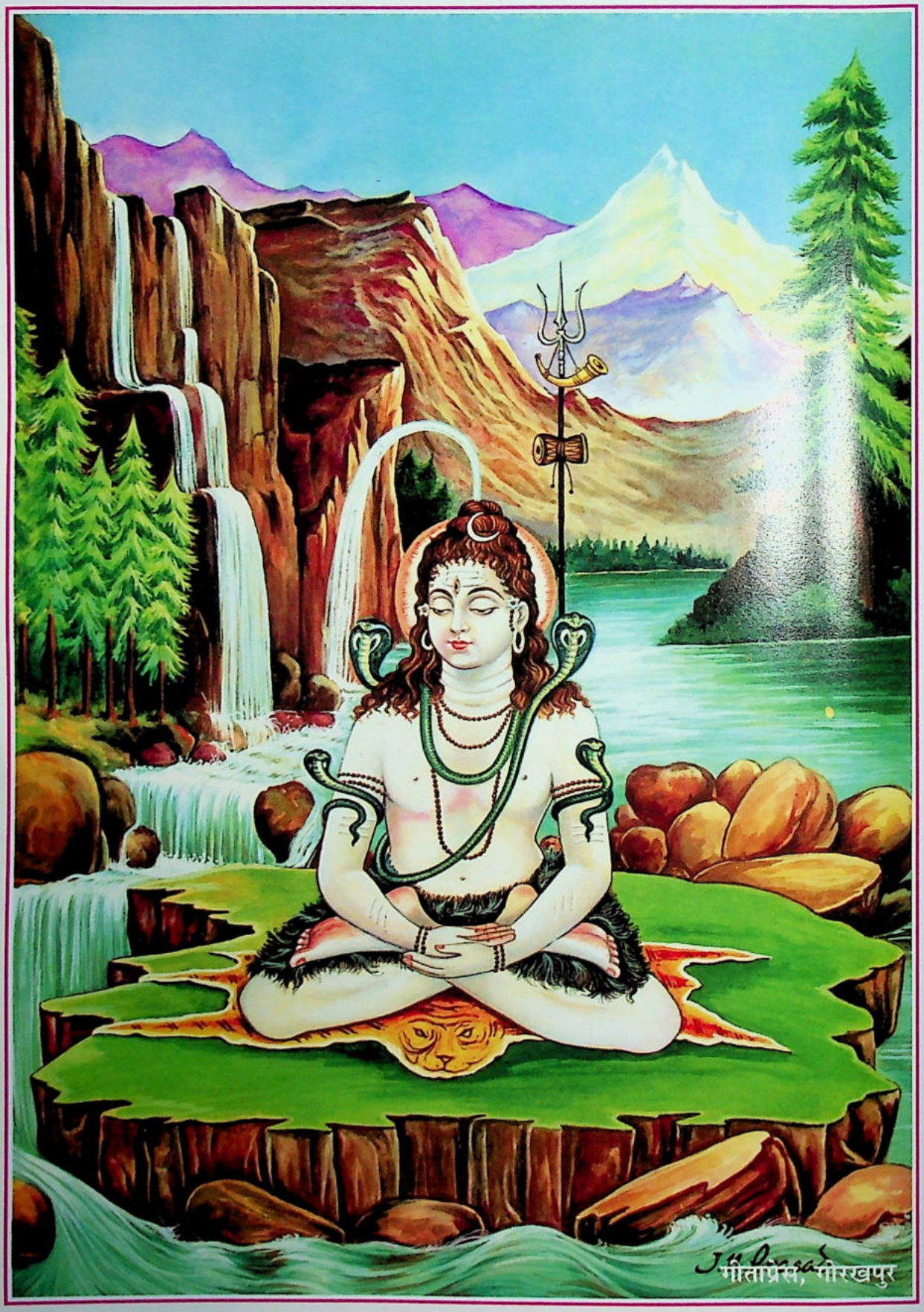

रुद्रावतार भगवान् शिव

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

महिषासुरमर्दिनी

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

युगलछबि

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

पर्वतपर चले गये।

इधर राजा दुर्जय भी राज्यके प्रबन्धमें लग गया। यद्यपि उसका राज्य विशाल था; फिर भी वह हाथी, घोड़े एवं रथ आदिसे युक्त चतुरङ्गिणी सेना सजाकर राज्य बढ़ानेकी चिन्तामें पड़ गया। राजा दुर्जय परम मेधावी था। उसने सम्यक् प्रकारसे विचार करके हाथी, घोड़े एवं रथपर बैठकर युद्ध करनेवाले वीरों तथा पैदल सैनिकोंसे अपनी सेना तैयार की और सिद्ध पुरुषों एवं महात्माजनोंद्वारा सेवित उत्तर दिशाके लिये प्रस्थान कर दिया। राजा दुर्जयने क्रमशः इसी प्रकार सम्पूर्ण भारतपर विजय प्राप्त करके किम्पुरुष नामक वर्षको भी जीत लिया। तदनन्तर उसने परवर्ती हरिवर्षमें भी अपनी विजय-पताका फहरा दी। फिर रम्यक, रोमावृत, कुरु, भद्राश्व और इलावृत नामसे प्रसिद्ध वर्षोंपर भी उसका शासन स्थापित हो गया। यह सारा स्थान सुमेरुपर्वतका मध्यवर्ती भाग है।

इस प्रकार जब राजा दुर्जयने सम्पूर्ण जम्बूद्वीपपर अपना अधिकार जमा लिया, तब वह देवताओंके सहित इन्द्रको भी जीतनेके लिये आगे बढ़ा। सुमेरुपर्वतपर जाकर उसने वहाँ अनेक देवता, गन्धर्व, दानव, गुह्यक, किंनर और दैत्योंको भी परास्त किया। तबतक ब्रह्मापुत्र नारदजीने दुर्जयकी विजयके विषयमें देवराज इन्द्रको सूचना दे दी। देवराज उसी क्षण लोकपालोंको साथ लेकर उसका वध करनेके लिये चल पड़े। किंतु जल्दी ही राजा दुर्जयके शस्त्रोंके सामने उन्होंने घुटने टेक दिये। तदनन्तर देवराज इन्द्र सुमेरुपर्वतको छोड़कर मर्त्यलोकमें आ बसे और पूर्वदिशामें वे लोकपालोंके साथ रहने लगे। राजा दुर्जयके चरित्रका विस्तारपूर्वक वर्णन आगे किया जायगा।

जब देवताओंने अपनी हार मान ली तो राजा दुर्जय वापस लौटा और लौटते समय गन्धमादन-पर्वतकी तलहटीमें उसने अपनी सेनाओंकी छावनी डाली। जब उसने छावनीकी सारी व्यवस्था कर ली, तब उसके पास दो तपस्वी आ पहुँचे। आते ही उन तपस्वियोंने दुर्जयसे कहा—'राजन्! तुमने सम्पूर्ण लोकपालोंका अधिकार छीन लिया है। अब उनके बिना लोकयात्रा चलनी सम्भव नहीं दीखती है, अतएव तुम ऐसी व्यवस्था करो, जिससे इस संसारको उत्तम सुखकी प्राप्ति हो।'

इस प्रकार तपस्वियोंके कहनेपर धर्मज्ञ राजा दुर्जयने उनसे कहा—'आप दोनों कौन हैं?' उन शत्रुदमन तपस्वियोंने कहा—'हम दोनों असुर हैं। हमारे नाम विद्युत और सुविद्युत हैं। महाराज दुर्जय! हम चाहते हैं कि अब तुम्हारे द्वारा सत्पुरुषोंके समाजमें सुसंस्कृत धर्म बना रहे; अतएव तुम हम दोनोंको लोकपालोंके स्थानपर नियुक्त कर दो। हम उनके सभी कार्य सम्पादन कर सकते हैं।' उनके ऐसा कहनेपर राजा दुर्जयने स्वर्गमें लोकपालोंके स्थानपर विद्युत और सुविद्युतकी तुरंत नियुक्ति कर दी। वे दोनों तपस्वी वहाँसे तत्काल अन्तर्धान हो गये।

एक बार राजा दुर्जय मन्दराचलपर्वतपर गया। वहाँ उसने कुबेरके अत्यन्त मनोरम वनको देखा। वह वन इतना सुन्दर था, मानो दूसरा नन्दनवन ही हो। राजा दुर्जय प्रसन्नतापूर्वक उस रमणीय विपिनमें घूमने लगा। इतनेमें एक चम्पकवृक्षके नीचे उसे दो सुन्दरी कन्याएँ दीख पड़ीं। देखनेमें उनका रूप अत्यन्त सुन्दर एवं अद्भुत था। उन कन्याओंको देखकर राजा दुर्जयका मन बड़े आश्चर्यमें पड़ गया। वह सोचने लगा—'ये सुन्दर नेत्रोंवाली कन्याएँ कौन हैं?' यों विचार करते हुए राजा दुर्जयको एक क्षण भी नहीं बीता होगा कि उसने देखा कि उस वनमें

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

दो तपस्वी भी विराजमान हैं। उन्हें देखकर दुर्जयके मनमें अपार हर्ष उमड़ आया। उसने तुरंत हाथीसे उतरकर उन तपस्वियोंको प्रणाम किया। तपस्वियोंने राजा दुर्जयको बैठनेके लिये कुशाओंद्वारा निर्मित एक सुन्दर आसन दिया। राजा दुर्जय उसपर बैठ गया। उसके बैठ जानेपर तपस्वियोंने उससे पूछा—'तुम कौन हो, तुम्हारा कहाँसे आगमन हुआ है, किसके पुत्र हो और यहाँ किस लिये आये हो?' इसपर राजा दुर्जयने हँसकर उन तपस्वियोंको अपना परिचय देते हुए कहा—'महानुभावो! सुप्रतीक नामसे प्रसिद्ध एक राजा हैं। मैं उनका पुत्र दुर्जय हूँ और भूमण्डलके सभी राजाओंको जीतनेकी इच्छासे यहाँ आया हुआ हूँ। कभी-कभी आप कृपा कर मुझे स्मरण अवश्य करें। तपोधनो! आप दोनों कौन हैं? मुझपर कृपा कर यह बतला दें।'

दोनों तपस्वी बोले—''राजन्! हमलोग हेतु और प्रहेतु नामके स्वायम्भुव मनुके पुत्र हैं। हम देवताओंको जीतकर सर्वथा नष्ट कर देनेके विचारसे सुमेरुपर्वतपर गये थे। उस समय हमारे पास बड़ी विशाल सेना थी, जिसमें हाथी, घोड़े एवं रथ भरे हुए थे। देवता भी सैकड़ों एवं हजारोंकी संख्यामें थे। उनके पास महान् सेना भी थी; किंतु असुरोंके प्रहारसे उनके सभी सैनिक अपने प्राणोंसे हाथ धो बैठे। यह स्थिति देखकर देवता—क्षीरसागरमें, जहाँ भगवान् श्रीहरि शयन करते हैं—पहुँचे और उनकी शरणमें गये। वहाँ देवगण भगवान्‌को प्रणाम कर अपनी आप-बीती बातें यों सुनाने लगे—'भगवन्! आप हम सभी देवताओंके स्वामी हैं। पराक्रमी असुरोंने हमारी सारी सेनाको परास्त कर दिया है। भयके कारण हमारे नेत्र कातर हो रहे हैं। अतः आप हमारी रक्षा करनेकी कृपा करें। केशव! पहले भी आपने देवासुर-संग्राममें क्रूरकर्मा कालनेमि एवं सहस्रभुजसे हमारी रक्षा की है। देवेश्वर! इस समय भी हमारे सामने वैसी ही परिस्थिति आ गयी है। हेतु और प्रहेतु नामके दो दानव देवताओंके लिये कण्टक बने हुए हैं। इनके सैनिकों तथा शस्त्रास्त्रोंकी संख्या असीम है। देवेश्वर! आपका सम्पूर्ण जगत्‌पर शासन है, अतः उन दोनों असुरोंको मारकर हम सभीकी रक्षा करनेकी कृपा करें।'

''इस प्रकार जब देवताओंने भगवान् नारायणसे प्रार्थना की, तब वे जगत्प्रभु श्रीहरि बोले—'उन असुरोंका संहार करनेके लिये मैं अवश्य आऊँगा।' भगवान् विष्णुके यह कहनेपर देवता मन-ही-मन भगवान् जनार्दनका स्मरण करते हुए सुमेरु-पर्वतपर गये। वहाँ उनके चिन्तन करते ही सुदर्शनचक्र एवं गदा धारण किये हुए भगवान् नारायण हमलोगोंकी सेनाका भेदन करते हुए उसमें प्रविष्ट हो गये। उन सर्वलोकेश्वरने अपने योगैश्वर्यका आश्रय लेकर उसी क्षण अपने एकसे—दस, सौ, फिर हजार, लाख तथा करोड़ों रूप बना लिये। उन देवेश्वरके आते ही सेनामें जो भी महान् पराक्रमी वीर हमारे बलके सहारे लड़ रहे थे, वे अचेत होकर पृथ्वीपर गिर पड़े। राजन्! अधिक क्या, उसी समय उनके प्राण-पखेरू उड़ गये। इस प्रकार विश्वरूप धारण करनेवाले भगवान् नारायणने अपनी योगमायासे हमारी सम्पूर्ण चतुरङ्गिणी सेनाका—जो हाथी, घोड़े, रथ एवं पैदल वीरों एवं ध्वजाओंसे भरी हुई थी, संहार कर डाला। बस, केवल हम दो दानवोंको बचे देखकर वे सुदर्शनचक्रधारी श्रीहरि अन्तर्धान हो गये। शार्ङ्ग धनुष धारण करनेवाले भगवान् श्रीहरिका ऐसा अद्भुत कर्म देखकर हम दोनोंने भी उन प्रभुकी आराधना करनेके लिये उनकी शरण ग्रहण कर ली। राजन्! राजा सुप्रतीक हमारे

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

मित्र थे और तुम उनके पुत्र हो। ये दोनों कन्याएँ हमारी पुत्री हैं। मुझ हेतृकी कन्याका नाम सुकेशी और इस प्रहेतृकी कन्याका नाम मिश्रकेशी है। इन्हें तुम अपनी अर्द्धाङ्गिनीके रूपमें स्वीकार करो।''

हेतृके इस प्रकार कहनेपर राजा दुर्जयने उन दोनों मङ्गलमयी कन्याओंके साथ विधिपूर्वक विवाह कर लिया। सहसा ऐसी दिव्य कन्याओंको प्राप्तकर दुर्जयके हर्षकी सीमा न रही। वह सैनिकोंके साथ अपनी राजधानीमें लौट आया। बहुत समयके बाद राजा दुर्जयके दो पुत्र हुए। सुकेशीसे जो बालक उत्पन्न हुआ, उसका नाम प्रभव पड़ा और मिश्रकेशीके पुत्रका नाम सुदर्शन रखा गया। राजा दुर्जय महान् वैभवशाली तो था ही, उसे परमश्रेष्ठ दो पुत्रोंकी प्राप्ति भी हो गयी। कुछ समयके पश्चात् वह राजा शिकार खेलनेके लिये जंगलमें गया। वहाँ जाकर उसने भयंकर जंगली जानवरोंको पकड़कर बाँधना शुरू कर दिया। इस प्रकार वनमें विचरण करते हुए राजा दुर्जयको जंगलमें कुटी बनाकर रहनेवाले एक पुण्यात्मा मुनि दिखायी पड़े। वे महाभाग मुनि तपस्या कर रहे थे। उनका नाम गौरमुख था। वे ऋषियोंके परिवारोंकी रक्षा तथा पापियोंके उद्धार-कार्यमें लगे रहते थे। उनके आश्रममें विशिष्ट गुणोंसे युक्त एक पवित्र सरोवर था। वहाँ एक ऐसा उत्तम वृक्ष भी था, जिसकी सुगन्धसे सारे वनका वायुमण्डल सुगन्धित हो उठता था। वे मुनि अपने आश्रममें स्थित होकर ऐसे जान पड़ते थे, मानो कोई मेघ उत्तम विमानपर आरूढ़ होकर आकाशसे पृथ्वीपर उतर आया हो। मुनिवर गौरमुखके देदीप्यमान मुखसे छिटकता हुआ प्रकाश आकाशको जगमगा देता था। वे पवित्र वस्त्रोंसे सुशोभित थे। उनके शिष्योंकी मण्डली उच्चस्वरसे सामवेदका गान कर रही थी। उनके आश्रममें मुनि-कन्याएँ तथा मुनि-पत्नियाँ भी अत्यन्त सात्त्विक वेष धारण किये हुए थीं। सुन्दर पुष्पोंसे लदे हुए अगणित वृक्ष उस आश्रमकी शोभा बढ़ा रहे थे। इस प्रकार उस आश्रममें मुनिवर गौरमुखकी यज्ञशाला अद्भुत शोभाको प्राप्त हो रही थी। [अध्याय १०]

राजा दुर्जयका चरित्र तथा नैमिषारण्यकी प्रसिद्धिका प्रसङ्ग

भगवान् वराह कहते हैं—पृथ्वि! उस समय मुनिवर गौरमुखके परम उत्तम आश्रमको देखकर राजा दुर्जयने सोचा—'इस परम मनोहर आश्रममें चलूँ और इसमें रहनेवाले अनुपम ऋषियोंके दर्शन करूँ।' यह विचार करके राजा दुर्जय आश्रमके भीतर चले गये। मुनिवर गौरमुख धर्मके साक्षात् स्वरूप थे। आश्रममें राजा दुर्जयके आनेपर मुनिका हृदय आनन्दसे भर उठा। उन्होंने राजाका भलीभाँति सम्मान किया। स्वागत-सत्कारके पश्चात् परस्पर कुछ वार्तालाप प्रारम्भ हुआ। मुनिवरने कहा—'महाराज! मैं यथाशक्ति अनुयायियोंसहित आपको भोजन-पान कराऊँगा। आप हाथी, घोड़े आदि वाहनोंको मुक्त कर दें और यहाँ पधारें।'

ऐसा कहकर मुनिवर गौरमुख मौन हो गये। मुनिके प्रति श्रद्धा होनेसे राजा दुर्जयके मनमें भी आतिथ्य स्वीकार करनेकी बात जँच गयी। अतः अनुचरोंके साथ वे वहीं रह गये। उनके पास पाँच अक्षौहिणी सेना थी। राजा दुर्जय सोचने लगे—'ये तपस्वी ऋषि मुझे यहाँ क्या भोजन देंगे?' इधर राजाको भोजनके लिये निमन्त्रित करनेके पश्चात् विप्रवर गौरमुख भी बड़ी चिन्तामें पड़ गये। वे सोचने लगे—'मैं अब राजाको क्या

1361 S. Varah Puran_Section_3_2_Front
In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

खिलाऊँ?' महर्षि गौरमुख निरन्तर भगवद्भावमें तल्लीन रहते थे। अतएव उनके मनमें चिन्ता उत्पन्न होनेपर उन्हें देवेश्वर जगत्प्रभु भगवान् नारायणकी याद आयी। मन-ही-मन उन्होंने भगवान् नारायणका स्मरण किया और गङ्गाके तटपर जाकर उन जगदीश्वर प्रभुकी स्तुति करने लगे।

पृथ्वीने पूछा—भगवन्! विप्रवर गौरमुखने भगवान् विष्णुकी किस प्रकार स्तुति की, इसको सुननेके लिये मुझे बड़ा कौतूहल हो रहा है।

भगवान् वराह बोले—पृथ्वि! गौरमुखने भगवान्की इस प्रकार प्रार्थना की—जो पीताम्बर धारण करते हैं, आदिरूप हैं तथा जलके रूपमें जो अभिव्यक्त होते हैं, उन सनातन भगवान् विष्णुको मेरा बारंबार नमस्कार है। जो घट-घट-वासी हैं, जलमें शयन करते हैं, पृथ्वी, तेज, वायु एवं आकाश आदि महाभूत जिनके स्वरूप हैं, उन भगवान् नारायणको मेरा बारंबार नमस्कार है। भगवन्! आप सम्पूर्ण प्राणियोंके आराध्य और सबके हृदयमें स्थित हैं, अन्तर्यामी परमात्माके रूपमें विराजमान हैं। आप ही ॐकार तथा वषट्कार हैं। प्रभो! आपकी सत्ता सर्वत्र विद्यमान है। आप समस्त देवताओंके आदिकारण हैं, पर आपका आदि कोई नहीं है। भगवन्! भूः, भुवः, स्वः, जन, मह, तप और सत्य—ये सभी लोक आपमें स्थित हैं। अतः चराचर जगत् आपमें ही आश्रय पाता है। आपसे ही सम्पूर्ण प्राणिसमुदाय, चारों वेदों तथा सभी शास्त्रोंकी उत्पत्ति हुई है। यज्ञ भी आपमें ही प्रतिष्ठित हैं। जनार्दन! पेड़-पौधे, वनौषधियाँ, पशु-पक्षी और सर्प—इन सबकी उत्पत्ति आपसे ही हुई है। देवेश्वर! यह दुर्जय नामका राजा मेरे यहाँ अतिथिरूपसे प्राप्त हुआ है। मैं इसका आतिथ्यसत्कार करना चाहता हूँ। भगवन्! आप देवताओंके भी आराध्य और जगत्के स्वामी हैं, मैं नितान्त निर्धन हूँ। फिर भी आपसे मेरी भक्ति और विनयपूर्ण प्रार्थना है कि आप मेरे यहाँ अन्न आदि भोज्य पदार्थोंका संचय कर दें। मैं अपने हाथसे जिस-जिस वस्तुका स्पर्श करूँ और आँखसे जिस-जिस पदार्थको देख लूँ, वह चाहे काठ अथवा तृण ही क्यों न हो, वह तत्काल चार प्रकारके सुपक्व अन्नके रूपमें परिणत हो जाय। परमेश्वर! आपको मेरा नमस्कार है। भगवन्! इसके अतिरिक्त यदि मैं किसी दूसरे पदार्थका भी मनमें चिन्तन करूँ तो वह सब-का-सब मेरे लिये सद्यः प्रस्तुत हो जाय।*

भगवान् वराह कहते हैं—पृथ्वि! इस प्रकार जब मुनिवर गौरमुखने जगत्प्रभु भगवान् श्रीहरिकी स्तुति की तो वे अत्यन्त प्रसन्न हो गये और उन महाभाग केशवने अपना श्रेष्ठ रूप गौरमुखको

* नमोऽस्तु विष्णवे नित्यं नमस्ते पीतवाससे। नमस्ते चाद्यरूपाय नमस्ते जलरूपिणे॥
नमस्ते सर्वसंस्थाय नमस्ते जलशायिने। नमस्ते क्षितिरूपाय नमस्ते तैजसात्मने॥
नमस्ते वायुरूपाय नमस्ते व्योमरूपिणे। त्वं देवः सर्वभूतानां प्रभुस्त्वमसि हृच्छयः॥
त्वमोंकारो वषट्कारः सर्वत्रैव च संस्थितः। त्वमादिः सर्वदेवानां तव चादिर्न विद्यते॥
त्वं भूस्त्वं च भुवः स्वस्त्वं जनस्त्वं च महः स्मृतः। त्वं तपस्त्वं च सत्यं च त्वयि देव चराचरम्॥
त्वत्तो भूतमिदं सर्वं विश्वं त्वत्तो ऋगादयः। त्वत्तः शास्त्राणि जातानि त्वत्तो यज्ञाः प्रतिष्ठिताः॥
त्वत्तो वृक्षा वीरुधश्च त्वत्तः सर्वा वनौषधिः। पशवः पक्षिणः सर्पास्त्वत्त एव जनार्दन॥
ममापि देवदेवेश राजा दुर्जयसंज्ञितः। आगतोऽभ्यागतस्तस्य चातिथ्यं कर्तुमुत्सहे॥
तस्य मे निर्धनस्याद्य देवदेव जगत्पते। भक्तिनम्रस्य देवेश कुरुष्वान्नादिसंचयम्॥
यं यं स्पृशामि हस्तेन यं च पश्यामि चक्षुषा। काष्ठं वा तृणकन्दं वा तत्तदन्नं चतुर्विधम्॥
तथा त्वन्यतमं वापि यद्ध्यातं मनसा मया। तत्सर्वं सिद्ध्यतां मह्यं नमस्ते परमेश्वर॥
(अध्याय ११। ११—२१)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

प्रत्यक्ष दिखलाया और कहा—'विप्रवर! जो चाहो, वर माँग लो।' यह सुनकर मुनिने ज्यों ही अपने नेत्र खोले, त्यों ही उनको भगवान् श्रीहरिके परम आश्चर्यमय रूपका दर्शन हुआ। उन्होंने देखा भगवान् जनार्दन अपने हाथोंमें गदा और शङ्ख लिये हुए हैं और उनका श्रीविग्रह पीताम्बरसे सुशोभित है। वे गरुडपर बैठे हुए हैं और तेजस्वी तो इतने हैं कि बारह सूर्योंका प्रकाश भी उनके सामने कुछ भी नहीं है। अधिक क्या, यदि आकाशमें एक हजार सूर्य एक साथ उदित हो जायँ तो कदाचित् उनका वह प्रकाश उन विश्वरूप परमात्माके प्रकाशके सदृश हो जाय! अनेक रूपोंमें विभक्त सम्पूर्ण जगत् उन श्रीहरिके श्रीविग्रहमें एकाकार रूपमें स्थित था। देवि! भगवान् श्रीहरिके ऐसे अद्भुत रूपको देखते ही मुनिवर गौरमुखके नेत्र आश्चर्यसे खिल उठे। मुनिने उनको सिर झुकाकर प्रणाम किया और हाथ जोड़कर कहने लगे—'भगवन्! अब मुझे आपसे किसी प्रकारके वरकी इच्छा शेष नहीं रह गयी है। मैं केवल यही चाहता हूँ कि इस समय राजा दुर्जयको जिस-किसी भी भाँति मेरे आश्रमपर अपने सैनिकों एवं वाहनोंके साथ भोजन प्राप्त हो जाय। कल तो वह अपने घर चला ही जायगा।'

इस प्रकार मुनिवर गौरमुखके प्रार्थना करनेपर देवेश्वर श्रीहरि द्रवित हो गये और चिन्तन करनेमात्रसे सिद्धि प्रदान करनेवाला एक महान् कान्तिमान् 'चिन्तामणि'रत्न उन्हें देकर वे अन्तर्धान हो गये। इधर गौरमुख भी अपने अनेक ऋषि-महर्षियोंसे सेवित पवित्र आश्रममें पधारे। वहाँ पहुँचकर मुनिने उस 'चिन्तामणि'के सम्मुख विशाल प्रासाद एवं हिमालयके शिखर तथा महान् मेघके समान ऊँचे एवं चन्द्र-किरणोंके सदृश चमकसे युक्त सैकड़ों तलोंके महलका चिन्तन किया। फिर तो एककी कौन कहे, हजारों एवं करोड़ोंकी संख्यामें वैसे विशाल भवन तैयार हो गये। कारण, गौरमुखको भगवान् श्रीहरिसे वर मिल चुका था। महलोंके आस-पास चहारदीवारियाँ बन गयीं। उनके बगलमें सटे ही उपवन उन महलोंकी शोभा बढ़ाने लगे। उन उद्यानोंमें कोकिलें तथा अनेक प्रकारके पक्षी भी आ बसे। चम्पा, अशोक, जायफल और नागकेसर आदि अनेक प्रकारके बहुत-से वृक्ष उन उद्यानोंमें सब ओर दृष्टिगत होने लगे। हाथियोंके लिये हथसार तथा घोड़ोंके लिये घुड़सारका निर्माण हो गया। इन सबका संचय हो जानेपर गौरमुखने सब प्रकारके भोज्य पदार्थोंका चिन्तन किया। फिर उस मणिने भक्ष्य, भोज्य, लेह्य एवं चोष्य प्रभृति अनेक प्रकारके अन्न तथा परोसनेके लिये बहुत-से स्वर्ण-पात्र भी प्रस्तुत कर दिये। ऐसी सूचना मुनिवर गौरमुखको मिल गयी। तब उन्होंने परम तेजस्वी राजा दुर्जयसे कहा—'महाराज! अब आप अपने सैनिकोंके साथ महलोंमें पधारें।' मुनिकी आज्ञा पाकर राजा दुर्जयने उस परम विशाल गृहमें प्रवेश किया, जो पर्वतके समान ऊँचा जान पड़ता था। राजाके भीतर चले जानेपर अन्य सेवकगण भी यथाशीघ्र अपने-अपने गृहोंमें प्रविष्ट हो गये।

तदनन्तर जब सब-के-सब महलमें चले गये, तब फिर मुनिवर गौरमुखने उस दिव्य चिन्तामणिको हाथमें लेकर राजा दुर्जयसे कहा—'राजन्! यदि अब आप स्नान-भोजन करना चाहते हों तो मैं दास-दासियोंको आपकी सेवामें भेज दूँ।' इस प्रकार कहकर द्विजवर गौरमुखने राजाके देखते-देखते ही भगवान् विष्णुसे प्राप्त 'चिन्तामणि'को एकान्त स्थानमें स्थापित किया। शुद्ध एवं प्रभापूर्ण उस चिन्तामणिके वहाँ रखते-न-रखते हजारों दिव्य रूपवाली स्त्रियाँ प्रकट हो गयीं। उन स्त्रियोंके

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

सभी अङ्ग बड़े सुन्दर, सुकुमार तथा अनुलेपनोंसे अलङ्कृत थे। उनके कपोल, केश और आँखें बड़ी सुन्दर थीं। वे सोनेके पात्रोंको लेकर चल पड़ीं। इसी प्रकार कार्य करनेमें कुशल अनेकों पुरुष भी एक साथ ही राजा दुर्जयकी सेवाके लिये अग्रसर हुए। अब तुरही आदि अनेक प्रकारके बाजे बजने लगे। जिस समय राजा दुर्जय स्नान करने लगे तो कुछ स्त्रियाँ इन्द्रके स्नानकालके समान ही उनके सामने भी नाचने और गाने लगीं। इस प्रकार दिव्य उपचारोंके साथ महाभाग दुर्जयका स्नानकार्य सम्पन्न हुआ।

अब राजा दुर्जय बड़े आश्चर्यमें पड़ गया। वह सोचने लगा—'अहो! यह मुनिकी तपस्याका प्रभाव है अथवा इस चिन्तामणिका?' फिर उसने स्नान किया, उत्तम वस्त्र पहने और भाँति-भाँतिके अन्नोंसे बने भोजनको ग्रहण किया। उस समय मुनिवर गौरमुखने जिस प्रकार राजा दुर्जयकी सेवा एवं सत्कार किया, वैसे ही वे राजाके सेवकोंकी सेवामें भी संलग्न रहे। राजा अपने सेवकों, सैनिकों और वाहनोंके साथ भोजनपर बैठा ही था कि इतनेमें भगवान् भास्कर अस्ताचलको पधारे। आकाश लाल हो गया। अब शरद् ऋतुके स्वच्छ चन्द्रमासे मण्डित रात्रि आयी। ऐसा जान पड़ता था, मानो सभी श्रेष्ठ गुणोंसे सम्पन्न रोहिणीनाथ उस रात्रिसे अनुराग कर रहे हों। उनके साथ ही हरित किरणोंसे युक्त शुक्र और बृहस्पति भी उदित हो गये। पर चन्द्रमाके साथ उनकी शोभा अधिक नहीं हो रही थी। क्योंकि प्राणियोंकी ऐसी धारणा है कि दूसरेके पक्षमें गया हुआ कोई भी व्यक्ति अपने भिन्न स्वभावके कारण शोभा नहीं पाता। चन्द्रमाकी चमकती हुई किरणें सबको प्रसन्न करनेमें पूर्ण समर्थ हैं; किंतु उनसे भी सभी प्रेम नहीं करते।

अबतक उन नरेशके सभी सेवक एवं वे स्वयं भी भोजन-वस्त्र और आभूषणोंसे सत्कृत हो चुके थे। अब उनके सोनेके लिये बहुत-से रत्नजटित पलंग भी भिन्न-भिन्न कक्षोंमें उपस्थित हो गये। उनपर सुन्दर गद्दे और चादरें भी बिछी थीं। अपने हाव-भावसे प्रसन्न करनेवाली मनोहारिणी दिव्य स्त्रियाँ भी वहाँ सपर्याके लिये तत्पर थीं। राजा दुर्जय उस महलमें गया। साथ ही अपने भृत्योंको भी जानेकी आज्ञा दी। जब सभी महलोंमें चले गये, तब वह प्रतापी राजा भी स्त्रियोंसे घिरा सुखपूर्वक शयन करनेवाले इन्द्रकी तरह सो गया।

इस प्रकार महात्मा गौरमुखके स्वागत-सत्कारसे प्रभावित, परम प्रसन्न राजा तथा उनके सभी सेवक सो गये। रात बीत जानेपर राजा दुर्जयने जगकर जब नेत्र खोले तो वे सुन्दर स्त्रियाँ, सभी बहुमूल्य महल तथा उत्तम-उत्तम पलंग सब-के-सब लुप्त हो गये थे। यह स्थिति देखकर दुर्जयको बड़ा आश्चर्य हुआ। मनमें चिन्ताके बादल उमड़ आये और दुःखकी लहरें उठने लगीं। यह मणि कैसे प्राप्त हो, इस प्रकारकी चिन्ताकी लहरियाँ उसके मनमें बार-बार उठने लगीं। अन्तमें उसने निश्चय किया कि इस गौरमुख ब्राह्मणकी यह मणि मैं हठपूर्वक छीन लूँ। फिर वहाँसे चलनेके लिये सबको आज्ञा दे दी। जब मुनिके आश्रमसे निकलकर वह थोड़ी दूर गया और उसके वाहन तथा सैनिक सभी बाहर चले आये, तब दुर्जयने विरोचन नामके अपने मन्त्रीको मुनिके पास भेजकर कहलवाया कि गौरमुखके पास जो मणि है, उसे वे मुझे दे दें। मन्त्रीने मुनिसे कहा—'रत्नोंके रखनेका उचित पात्र राजा ही होता है, इसलिये यह मणि आप राजा दुर्जयको दे दें।' मन्त्रीके ऐसा कहनेपर गौरमुखने क्रोधमें आकर उससे कहा—'मन्त्री! तुम उस दुराचारी राजा दुर्जयसे स्वयं मेरी बात

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

कह दो। साथ ही मेरा यह भी संदेश कहना—'अरे दुष्ट! तू अभी यहाँसे भाग जा, क्योंकि यह स्थान दुर्जय-जैसे दुष्टोंके रहने योग्य नहीं है।'

इस प्रकार द्विजवर गौरमुखके कहनेपर दुर्जयका मन्त्री विरोचन, जो दूतका काम कर रहा था, राजाके पास गया और ब्राह्मणकी कही हुई सारी बातें उसे अक्षरशः सुना दीं। गौरमुखके वचन सुनते ही दुर्जयकी क्रोधाग्नि भभक उठी। उसने उसी क्षण नील नामक मन्त्रीसे कहा—'तुम अभी जाओ और चाहे जैसे भी हो उस ब्राह्मणसे मणि छीनकर शीघ्र यहाँ आ जाओ।'

इसपर नील बहुत-से सैनिकोंको साथ लेकर गौरमुखके आश्रमकी ओर चल पड़ा। फिर वह रथसे नीचे उतरकर जमीनपर आया। तदनन्तर अग्निशालामें पहुँचकर उसने मणिको रखे हुए देखा। परम दारुण क्रूर-बुद्धि नीलके पृथ्वीपर उतरते ही उस मणिसे भी अस्त्र-शस्त्र लिये हुए अपरिमित शक्तिशाली असंख्य शूर-वीर निकल पड़े, जो रथ, ध्वजा और घोड़ोंसे सुसज्जित थे तथा ढाल, तलवार, धनुष और तरकस लिये हुए थे। (भगवान् वराह कहते हैं—) परम भाग्यवति पृथ्वि! उनमें पंद्रह तो प्रमुख वीर सेनापति थे, जिनके नाम इस प्रकार हैं—सुप्रभ, दीप्ततेजा, सुरश्मि, शुभदर्शन, सुकान्ति, सुन्दर, सुन्द, प्रद्युम्न, सुमन, शुभ, सुशील, सुखद, शम्भु, सुदान्त और सोम। इन वीर पुरुषोंने विरोचनको बहुत-सी सेनाके साथ डटा देखा। तब ये सभी शूर-वीर अनेक प्रकारके अस्त्र-शस्त्र लेकर बड़ी सावधानीसे युद्ध करने लगे। उनके धनुष सुवर्णके समान देदीप्यमान थे। उनके पङ्खधारी बाण शुद्ध सोनेसे बने हुए थे। अब वे परम प्रसिद्ध तथा अत्यन्त भयंकर तलवारों एवं त्रिशूलोंसे प्रहार करने लगे। उस युद्धमें विरोचनके रथ, हाथी, घोड़े और पैदल लड़नेवाले सैनिकोंके आगे मणिसे प्रकट हुए वीरोंके रथ, हाथी, घोड़े एवं पदाति सैनिक डट गये और उनमें भयंकर द्वन्द्वयुद्ध छिड़ गया। छल-बल आदि अनेक प्रकारके युद्धोंके बावजूद विरोचनके सैनिक भयसे कम्पित हो उठे और वे भाग चले। घोर रक्तप्रवाहसे मार्ग बड़े भयंकर हो गये। दुर्जयके मन्त्री विरोचनकी तो जीवन-लीला ही समाप्त हो गयी। उसके बहुतसे अनुयायी भी सैनिकोंसहित यमराजके लोकको प्रस्थान कर गये।

मन्त्री विरोचनके मर जानेपर अब स्वयं राजा दुर्जय चतुरङ्गिणी सेना लेकर युद्धक्षेत्रमें आया और मणिसे प्रकट हुए शूर-वीरोंके साथ उसका युद्ध प्रारम्भ हो गया। इस युद्धमें राजा दुर्जयकी सैन्यशक्तिका भयंकर विनाश हुआ। इधर हेतृ और प्रहेतृको खबर मिली कि मेरा जामाता दुर्जय संग्राममें लड़ रहा है तो वे दोनों असुर भी एक विशाल सेनाके साथ वहाँ आ गये। उस युद्धभूमिमें जो पंद्रह प्रमुख मायावी दैत्य आये थे, उनके नाम सुनो—प्रघस, विघस, संघ, अशनिप्रभ, विद्युत्प्रभ, सुघोष, भयंकर, उन्मत्ताक्ष, अग्निदत्त, अग्नितेज, बाहु, शक्र, प्रतर्दन, विरोध और भीमकर्मा विप्रचित्ति। इनके पास भी उत्तम अस्त्र-शस्त्रोंका संग्रह था। प्रत्येक वीरके साथ एक-एक अक्षौहिणी सेना थी। ये सभी दुष्ट दुर्जयकी ओरसे युद्धभूमिमें डटकर मणिसे प्रकट हुए वीरोंके साथ लड़नेके लिये उद्यत हो गये। सुप्रभने तीन बाणोंसे विघसको बींध डाला और सुरश्मिने दस बाणोंसे प्रघसको। उस मोर्चेपर सुदर्शनके पाँच बाणोंसे अशनिप्रभके अङ्ग छिद गये। इसी प्रकार सुकान्तिने विद्युत्प्रभको तथा सुन्दरने सुघोषको धराशायी कर डाला। सुन्दने अपने शीघ्रगामी पाँच बाणोंसे उन्मत्ताक्षपर प्रहार किया। साथ ही चमचमाते हुए

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

बाणोंसे शत्रुके धनुषके टुकड़े-टुकड़े कर दिये। इस प्रकार सुमनका अग्निदत्तसे, सुवेदका अग्नितेजसे, सुनलका बाहु एवं शक्रसे तथा सुवेदका प्रतर्दनसे युद्ध छिड़ गया।

यों अपने अस्त्र-शस्त्रोंकी कुशलता दिखाते हुए सैनिक आपसमें युद्ध करने लगे, पर अन्तमें मणिसे प्रकट हुए योद्धाओंके हाथ सभी दैत्य मार डाले गये। अब मुनिवर गौरमुख भी हाथमें कुशा आदि लिये वनसे आश्रममें पहुँचे। दुर्जय अब भी बहुतसे सैनिकोंके साथ खड़ा था। यह देखकर गौरमुख आश्रमके दरवाजेपर रुक गये और मन-ही-मन विचार करने लगे—'अहो, इस मणिके कारण ही यह सब कुछ हुआ और हो रहा है। अरे! यह भयंकर संग्राम इस मणिके लिये ही आरम्भ हुआ है।'

इस प्रकार सोचते-सोचते मुनिवर गौरमुखने देवाधिदेव भगवान् श्रीहरिका स्मरण किया। उनके स्मरण करते ही पीताम्बर धारण किये हुए भगवान् नारायण गरुडपर विराजमान हो मुनिके सामने प्रकट हो गये और बोले—'कहो! मैं तुम्हारे लिये क्या करूँ?' तब मुनिवर गौरमुखने हाथ जोड़कर पुरुषोत्तम भगवान् श्रीहरिसे कहा—'प्रभो! आप इस पापी दुर्जयको इसकी सेनाके सहित मार डालें।' मुनिके ऐसा कहते ही अग्निके समान प्रज्वलित भगवान्‌के सुदर्शनचक्रने सेनासहित दुर्जयको भस्म कर डाला। यह सब कार्य एक निमेषके भीतर—पलक मारते सम्पन्न हो गया। फिर भगवान्‌ने गौरमुखसे कहा—'मुने! इस वनमें दानवोंका परिवार एक निमेषमें ही नष्ट हो गया है। अतः इस स्थानकी 'नैमिषारण्य-क्षेत्र'के नामसे प्रसिद्धि होगी। इस तीर्थमें ब्राह्मणोंका समुचित निवास होगा। इस वनके भीतर मैं यज्ञपुरुषके रूपमें निवास करूँगा। ये पंद्रह दिव्य पुरुष, जो मणिसे प्रकट हुए हैं, सत्ययुगमें याज्य नामसे विख्यात राजा होंगे।'

इस प्रकार कहकर भगवान् श्रीहरि अन्तर्धान हो गये और मुनिवर गौरमुख भी अपने आश्रममें आनन्दपूर्वक निवास करने लगे।

[अध्याय ११]

राजा सुप्रतीककृत भगवान्‌की स्तुति तथा श्रीविग्रहमें लीन होना

भगवान् वराह कहते हैं—पृथ्वि! जब राजा सुप्रतीकने इतने बली पुरुषोंके चक्रकी आगमें भस्म होनेकी बात सुनी तो उनके सर्वाङ्गमें चिन्ता व्याप्त हो गयी और वे सोचमें पड़ गये। फिर सहसा उनके अन्तःकरणमें आध्यात्मिक ज्ञानका उदय हो गया। उन्होंने सोचा—'चित्रकूट पर्वतपर भगवान् विष्णु, जो राघवेन्द्र 'श्रीराम'नामसे कहे जाते हैं, अत्यन्त विख्यात हैं। अब मैं वहीं चलूँ और भगवान्‌के नामोंका उच्चारण करते हुए उनकी स्तुति करूँ।' मनमें ऐसा निश्चय कर राजा सुप्रतीक परम पवित्र चित्रकूट पर्वतपर पहुँचे और भगवान्‌की इस प्रकार स्तुति करने लग गये।

राजा सुप्रतीक बोले—जो राम नरनाथ, अच्युत, कवि, पुराण, देवताओंके शत्रु असुरोंका नाश करनेवाले, प्रभव, महेश्वर, प्रपन्नार्तिहर एवं श्रीधर नामसे सुप्रसिद्ध हैं, उन मङ्गलमय भगवान् श्रीहरिको मैं निरन्तर नमस्कार करता हूँ। प्रभो! पृथ्वीमें (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध—इन) पाँच प्रकारसे, जलमें (शब्द, स्पर्श रूप, रस—इन) चार प्रकारसे, अग्निमें (शब्द, स्पर्श और रूप—इन) तीन प्रकारसे, वायुमें (शब्द एवं स्पर्श—इन) दो प्रकारसे तथा आकाशमें केवल शब्दरूपसे

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

विराजनेवाले परम पुरुष एकमात्र आप ही हैं। सूर्य, चन्द्रमा और अग्नि तथा यह सारा संसार आपका ही रूप है—आपसे ही यह विश्व प्रकट होता तथा आपमें ही लीन हो जाता है—ऐसा शास्त्रोंका कथन है। आपका आश्रय पाकर विश्व आनन्दका अनुभव करता है। इसीलिये तो समस्त संसारमें आपकी 'राम'नामसे प्रतिष्ठा हो रही है। भगवन्! यह संसार-समुद्र भयंकर दुःखरूपी तरङ्गोंसे व्याप्त है। इस भयंकर समुद्रमें इन्द्रियाँ ही घड़ियाल और नाक आदि क्रूर जल-जन्तु हैं। पर जिस मनुष्यने आपके नामस्मरणरूपी नौकाका आश्रय ले लिया है, वह इसमें नहीं डूबता। अतएव संतलोग तपोवनमें आपके राम-नामका स्मरण करते हैं। प्रभो! वेदोंके नष्ट होनेपर आपने मत्स्यावतार धारण किया। विभो! प्रलयके अवसरपर आप अत्यन्त प्रचण्ड अग्निका रूप धारण कर लेते हैं, जिससे सारी दिशाएँ भस्ममय रूपसे रञ्जित हो जाती हैं। माधव! समुद्र-मन्थनके समय युग-युगमें आप ही स्वयं कच्छपके रूपसे पधारे थे। भगवन्! आप जनार्दन नामसे विख्यात हैं। जब आपकी तुलना करनेवाला दूसरा कोई कहीं भी नहीं मिला तो आपसे अधिककी बात ही क्या है। महात्मन्! आपसे यह सम्पूर्ण संसार, वेद एवं समस्त दिशाएँ ओत-प्रोत हैं। आप आदिपुरुष एवं परमधाम हैं। फिर आपके अतिरिक्त मैं दूसरे किसकी शरणमें जाऊँ। सर्वप्रथम केवल आप ही विराजमान थे। इसके बाद महत्तत्त्व, अहंतत्त्वमय जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन-बुद्धि एवं सभी गुण—इनका भी क्रमशः आविर्भाव हुआ। आपसे ही इन सबकी उत्पत्ति हुई है। मेरी समझसे आप सनातन पुरुष हैं। यह अखिल विश्व आपसे भलीभाँति विरचित एवं विस्तृत है। सम्पूर्ण संसारपर शासन करनेवाले प्रभो! विश्व आपकी मूर्ति है। आप हजार भुजाओंसे शोभा पाते हैं। ऐसे देवताओंके भी आराध्य आप प्रभुकी जय हो। परम उदार भगवन्! आपके 'राम'रूपको मेरा नमस्कार है।

राजा सुप्रतीकके स्तुति करनेपर प्रभु प्रसन्न हो गये। भगवान्‌ने अपने स्वरूपका इस प्रकार उन्हें दर्शन कराया और कहा—'सुप्रतीक! वर माँगो।' श्रीहरिकी अमृतमयी वाणी सुनकर एक बार राजाको बड़ा आश्चर्य हुआ। फिर उन देवाधिदेव प्रभुको प्रणाम कर वे बोले—'भगवन्! आपका जो यह सर्वोत्तम विग्रह है, इसमें मुझे स्थान मिल जाय—आप मुझे यह वर देनेकी कृपा करें।' इस प्रकारकी बातें समाप्त होते ही महाराज सुप्रतीककी चित्तवृत्ति भगवान् गदाधरकी दिव्यमूर्तिमें लग गयी। ध्यानस्थ होकर वे भगवान्‌के नामोंका उच्चारण करने लगे। फिर उसी क्षण अपने अनेक उत्तम कर्मोंके प्रभावसे वे पाञ्चभौतिक शरीर छोड़कर श्रीहरिके विग्रहमें लीन हो गये।

भगवान् वराह कहते हैं—पृथ्वि! तुम्हारे सामने मैंने इस समय जिसे प्रस्तुत किया है, वह यह वराहपुराण बहुत प्राचीन है। पूर्व सत्ययुगमें मैंने ब्रह्माजीको इसका उपदेश किया था। यह उसीका एक अंश है। कोई हजारों मुखोंसे भी इसे कहना चाहे तो नहीं कह सकता। कल्याणि! प्रसङ्ग छिड़ जानेपर पूर्णरूपसे जो कुछ स्मरणमें आ गया है, वही प्राचीन चरित्र तुम्हें सुनाया है। कुछ लोग इसकी समुद्रके बूँदोंसे उपमा देते हैं, पर यह ठीक नहीं है। स्वयम्भू ब्रह्माजी, सर्वतन्त्र-स्वतन्त्र भगवान् नारायण तथा मैं—सभी समस्त चरित्रका वर्णन करनेमें असमर्थ हैं। अतः उन परम प्रभु परमात्माके आदिस्वरूपका तुम्हें सदा स्मरण करना चाहिये। समुद्रके रेतोंकी तथा पृथ्वीके रजःकणोंकी तो गणना हो सकती है; किंतु परब्रह्म परमात्माकी

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

कितनी लीलाएँ हैं—इसकी संख्या असम्भव है। शुचिस्मिते! तुम्हें मैंने जो प्रसङ्ग सुनाया है, यह उन भगवान् नारायणके केवल एक अंशसे सम्बन्ध रखता है। यह लीला सत्ययुगमें हुई थी। अब तुम दूसरा कौन प्रसङ्ग सुनना चाहती हो, यह बतलाओ। [अध्याय १२]

पितरोंका परिचय, श्राद्धके समयका निरूपण तथा पितृगीत

पृथ्वीने पूछा—प्रभो! मुनिवर गौरमुखने भगवान् श्रीहरिके अद्भुत कर्मको देखकर फिर क्या किया?

भगवान् वराह कहते हैं—पृथ्वि! भगवान् श्रीहरिने निमेषमात्रमें ही वह सब अद्भुत कर्म कर दिखाया था। उसे देखकर मुनिश्रेष्ठ गौरमुखने भी नैमिषारण्यक्षेत्रमें जाकर जगदीश्वर श्रीहरिकी आराधना आरम्भ कर दी। उस क्षेत्रमें प्रभास नामसे प्रसिद्ध एक तीर्थ है। वह परम दुर्लभ तीर्थ चन्द्रमासे सम्बन्धित है। तीर्थके विशेषज्ञोंका कथन है कि वहाँके स्वामी भगवान् श्रीहरि दैत्योंका संहार करनेवाले 'दैत्यसूदन' नामसे सदा विराजते हैं। मुनिकी चित्तवृत्ति उन प्रभुकी आराधनामें स्थिर हो गयी। अभी वे उन भगवान् नारायणकी उपासना कर ही रहे थे—इतनेमें परम योगी मार्कण्डेयजी वहाँ आ गये। उन्हें अतिथिके रूपमें प्राप्तकर गौरमुखने दूरसे ही बड़े हर्षके साथ भक्तिपूर्वक उनकी पाद्य एवं अर्घ्य आदिसे पूजा आरम्भ कर दी। उन प्रतापी मुनिको कुशके आसनपर विराजित कर गौरमुखने सविनय पूछा—'महाव्रती मुनिश्रेष्ठ! मुझे पितरों एवं श्राद्धतत्त्वका उपदेश करें' गौरमुखके यों पूछनेपर महान् तपस्वी द्विजवर मार्कण्डेयजी बड़े मीठे स्वरमें उनसे कहने लगे।

मार्कण्डेयजी बोले—मुने! भगवान् नारायण समस्त देवताओंके आदि प्रवर्तक एवं गुरु हैं। उन्हींसे ब्रह्मा प्रकट हुए हैं और उन ब्रह्माजीने फिर सात मुनियोंकी सृष्टि की है। मुनियोंकी रचना करके ब्रह्माजीने उनसे कहा—'तुम मेरी उपासना करो।' सुनते हैं, उन लोगोंने स्वयं अपनी ही पूजा कर ली। अपने पुत्रोंद्वारा इस प्रकार कर्म-विकृति देखकर ब्रह्माजीने उन्हें शाप दे दिया—'तुमलोगोंने (ज्ञानाभिमानसे) मेरी जगह अपनी पूजा कर विपरीत आचरण किया है। अतः तुम्हारा ज्ञान नष्ट हो जायगा।'

इस प्रकार शाप-ग्रस्त हो जानेपर उन सभी ब्रह्मपुत्रोंने अपने वंशके प्रवर्तक पुत्रोंको उत्पन्न किया और फिर स्वयं स्वर्गलोक चले गये। उन ब्रह्मवादी मुनियोंके परलोकवासी होनेपर उनके पुत्रोंने विधिपूर्वक श्राद्ध करके उन्हें तृप्त किया। उन पितरोंकी 'वैमानिक' संज्ञा है। वे सभी ब्रह्माजीके मनसे प्रकट हुए हैं। पुत्र मन्त्रका उच्चारण करके पिण्डदान करता है—यह देखते हुए वे वहाँ निवास करते हैं।

गौरमुखने पूछा—ब्रह्मन्! जितने पितर हैं और उनके श्राद्धका जो समय है, वह मैं जानना चाहता हूँ तथा उस लोकमें रहनेवाले पितरोंके गण कितने हैं, यह सब भी मुझे बतानेकी कृपा करें।

मार्कण्डेयजी कहने लगे—द्विजवर! देवताओंके लिये सोम-रसकी वृद्धि करनेवाले कुछ स्वर्गनिवासी पितर मरीचि आदि नामोंसे विख्यात हैं। उन श्रेष्ठ पितरोंमें चारको मूर्त (मूर्तिमान्) और तीनको अमूर्त (बिना मूर्तिका) कहा गया है। इस प्रकार उनकी संख्या सात है। उनके रहनेवाले लोकको तथा उनके स्वभावको बताता हूँ, सुनो। सन्तानक नामक लोकोंमें 'भास्वर' नामक पितृगण निवास करते हैं, जो देवताओंके उपास्य हैं। ये सभी ब्रह्मवादी हैं। ब्रह्मलोकसे अलग होकर ये नित्य-

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

लोकोंमें निवास करते हैं। सौ युग व्यतीत हो जानेपर इनका पुनः प्रादुर्भाव होता है। उस समय अपनी पूर्वस्थितिका स्मरण होनेपर सर्वोत्तम योगका चिन्तन करके परम पवित्र योग-सम्बन्धी अनिवृत्ति-लक्षण मोक्षको वे प्राप्त कर लेंगे। ये सभी पितर श्राद्धमें योगियोंके योगद्वारा तृप्त किये जानेपर योगी पुरुषोंके हृदयोंमें पुनः योगकी वृद्धि करते हैं। क्योंकि भगवद्भक्तके भक्तियोगसे इन्हें बड़ा संतोष होता है। अतएव योगिवर! भगवान्‌को अपना सर्वस्व अर्पण करनेवाले योगी पुरुषको श्राद्धकी वस्तुएँ देनी चाहिये।

सोम-रस पीनेवाले सोमप पितरोंका यह प्रधान प्रथम सर्ग है। ये पितर उत्तम वर्णवाले ब्राह्मण हैं। इन सबका एक-एक शरीर है। ये स्वर्गलोकमें रहते हैं। भूलोकके निवासी इनकी पूजा करते हैं। कल्पपर्यन्तजीवी मरीचि आदि पितर ब्रह्माजीके पुत्र हैं। वे अपने परिवारोंके साथ मरुतोंकी उपासना करते हैं—मरुद्गण उनके उपास्य हैं। सनक आदि तपस्वी 'वैराज' नामक पितृगण उन मरुद्गणोंके भी पूज्य हैं। वैराजसंज्ञक पितरोंके गणकी संख्या सात कही जाती है। यह पितरोंकी संतानका परिचय हुआ।

भिन्न-भिन्न वर्णवाले सभी लोग उन पितरोंकी पूजा कर सकते हैं—यह नियम है। ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य—इन तीनों वर्णोंसे अनुमति पाकर द्विजेतर भी उक्त सभी पितरोंकी पूजा कर सकता है। उसके पितर इन पितृगणोंसे भिन्न हैं। ब्रह्मन्! पितरोंमें भी मुक्त और चेतनक—दो प्रकारके पितर नहीं देखे जाते हैं। विशिष्ट शास्त्रोंको देखने, पुराणोंका अवलोकन करने तथा ऋषियोंके बनाये हुए शास्त्रोंका अध्ययन करनेसे अपने पूज्य पितरोंका परिचय प्राप्त कर लेना चाहिये।

सृष्टि रचनेके समय ही फिर ब्रह्माजीको स्मृति प्राप्त हुई। तब उन्हें पूर्व पुत्रोंका स्मरण हुआ। वे पुत्र तो ज्ञानके प्रभावसे परम पदको प्राप्त हो गये हैं—यह बात उन्हें विदित हो गयी। वसु आदिके कश्यप आदि, ब्राह्मणादि वर्णोंके वसु आदि और गन्धर्व-प्रभृति पितर हैं—यह बात साधारणरूपसे समझ लेनी चाहिये। इसमें कोई अन्यथा विचार नहीं है। मुनिवर! यह पितरोंकी सृष्टिका प्रसङ्ग है। प्रकरणवश तुम्हारे सामने इसका वर्णन कर दिया। वैसे यदि करोड़ वर्षोंतक इसे कहा जाय, तो भी इसके विस्तृत प्रसङ्गका अन्त नहीं दीखता।

द्विजवर! अब मैं श्राद्धके लिये उचित कालका विवेचन करता हूँ, सुनो। श्राद्धकर्ता जिस समय श्राद्धयोग्य पदार्थ या किसी विशिष्ट ब्राह्मणको घरमें आया जाने अथवा उत्तरायण या दक्षिणायनका आरम्भ, व्यतीपात योग हो, उस समय काम्य श्राद्धका अनुष्ठान करे। विषुव योगमें*, सूर्य और चन्द्रमाके ग्रहणके समय, सूर्यके राश्यन्तर-प्रवेशमें, नक्षत्र अथवा ग्रहोंद्वारा पीडित होनेपर, बुरे स्वप्न दीखने तथा घरमें नवीन अन्न आनेपर काम्य-श्राद्ध करना चाहिये। जो अमावास्या अनुराधा, विशाखा एवं स्वाती नक्षत्रसे युक्त हो, उसमें श्राद्ध करनेसे पितृगण आठ वर्षोंतक तृप्त रहते हैं। इसी प्रकार जो अमावास्या पुष्य, पुनर्वसु या आर्द्रा नक्षत्रसे युक्त हो, उसमें पूजित होनेसे पितृगण बारह वर्षोंतक तृप्त रहते हैं। जो पुरुष देवताओं एवं पितृगणको तृप्त करना चाहते हैं, उनके लिये धनिष्ठा, पूर्वाभाद्रपद अथवा शतभिषासे युक्त अमावास्या अत्यन्त दुर्लभ है। ब्राह्मणश्रेष्ठ! जब

* वर्षके जिस अहोरात्रमें सूर्यके विषुवरेखापर चले जानेपर दिन-रातका मान बराबर हो जाता है, उस समय विषुव योगकी प्राप्ति या संक्रान्ति होती है।

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

अमावास्या इन उपर्युक्त नौ नक्षत्रोंसे युक्त होती है, उस समय किया हुआ श्राद्ध पितृगणको अक्षय तृप्तिकारक होता है। वैशाखमासके शुक्ल पक्षकी तृतीया, कार्तिकके शुक्ल पक्षकी नवमी, भाद्रपदके कृष्ण पक्षकी त्रयोदशी, माघमासकी अमावास्या, चन्द्रमा अथवा सूर्यके ग्रहणके समय तथा चारों अष्टकाओंमें* अथवा उत्तरायण या दक्षिणायनके आरम्भके समय जो मनुष्य एकाग्रचित्तसे पितरोंको तिलमिश्रित जल भी दान कर देता है, वह मानो सहस्र वर्षोंके लिये श्राद्ध कर देता है। यह परम रहस्य स्वयं पितृगणोंका बतलाया हुआ है। कदाचित् माघकी अमावास्याका यदि शतभिषा नक्षत्रसे योग हो जाय तो पितृगणकी तृप्तिके लिये यह परम उत्कृष्ट काल होता है। द्विजवर! अल्प पुण्यवान् पुरुषोंको ऐसा समय नहीं मिलता और यदि उस दिन धनिष्ठा नक्षत्रका योग हो जाय तो उस समय अपने कुलमें उत्पन्न पुरुषद्वारा दिये हुए अन्न एवं जलसे पितृगण दस हजार वर्षके लिये तृप्त हो जाते हैं तथा यदि माघी अमावास्याके साथ पूर्वाभाद्रपद नक्षत्रका योग हो और उस अवसरपर पितरोंके लिये श्राद्ध किया जाय तो इस कर्मसे पितृगण अत्यन्त तृप्त होकर पूरे युगतक सुखपूर्वक शयन करते हैं। गङ्गा, शतद्रु, विपाशा, सरस्वती और नैमिषारण्यमें स्थित गोमती नदीमें स्नानकर पितरोंका आदरपूर्वक तर्पण करनेसे मनुष्य अपने समस्त पापोंको नष्ट कर देता है। पितृगण सर्वदा यह गान करते हैं कि वर्षाकालमें (भाद्रपद शुक्ल त्रयोदशीके) मघानक्षत्रमें तृप्त होकर फिर माघकी अमावास्याको अपने पुत्र-पौत्रादिद्वारा दी गयी पुण्यतीर्थोंकी जलाञ्जलिसे हम कब तृप्त होंगे। विशुद्ध चित्त, शुद्ध धन, प्रशस्त काल, उपर्युक्त विधि, योग्य पात्र और परम भक्ति—ये सब मनुष्यको मनोवाञ्छित फल प्रदान करते हैं।

पितृगीत

विप्रवर! इस प्रसङ्गमें पितरोंद्वारा गाये हुए कुछ श्लोकोंका श्रवण करो। उन्हें सुनकर तुमको आदरपूर्वक वैसा ही आचरण करना चाहिये। पितृगण कहते हैं—कुलमें क्या कोई ऐसा बुद्धिमान् धन्य मनुष्य जन्म लेगा जो वित्तलोलुपताको छोड़कर हमारे निमित्त पिण्डदान करेगा। सम्पत्ति होनेपर जो हमारे उद्देश्यसे ब्राह्मणोंको रत्न, वस्त्र, यान एवं सम्पूर्ण भोग-सामग्रियोंका दान करेगा अथवा केवल अन्न-वस्त्रमात्र वैभव होनेपर श्राद्धकालमें भक्तिविनम्र-चित्तसे श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको यथाशक्ति भोजन ही करायेगा या अन्न देनेमें भी असमर्थ होनेपर ब्राह्मणश्रेष्ठोंको वन्य फल-मूल, जंगली शाक और थोड़ी-सी दक्षिणा ही देगा, यदि इसमें भी असमर्थ रहा तो किसी भी द्विजश्रेष्ठको प्रणाम करके एक मुट्ठी काला तिल ही देगा अथवा हमारे उद्देश्यसे पृथ्वीपर भक्ति एवं नम्रतापूर्वक सात-आठ तिलोंसे युक्त जलाञ्जलि ही देगा, यदि इसका भी अभाव होगा तो कहीं-न-कहींसे एक दिनका चारा लाकर प्रीति और श्रद्धापूर्वक हमारे उद्देश्यसे गौको खिलायेगा तथा इन सभी वस्तुओंका अभाव होनेपर वनमें जाकर अपने कक्षमूल (बगल)-को दिखाता हुआ सूर्य आदि दिक्पालोंसे उच्चस्वरसे यह कहेगा—

न मेऽस्ति वित्तं न धनं न चान्य-
च्छ्राद्धस्य योग्यं स्वपितृन्नतोऽस्मि।
तृप्यन्तु भक्त्या पितरो मयैतौ
भुजौ ततौ वर्त्मनि मारुतस्य॥

(१३।५८)

१. प्रत्येक मासकी सप्तमी, अष्टमी एवं नवमी तिथियोंके समूहकी तथा पौष-माघ एवं फाल्गुनके कृष्ण पक्षकी अष्टमी तिथियोंकी 'अष्टका' संज्ञा है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

'मेरे पास श्राद्धकर्मके योग्य न धन-सम्पत्ति है और न कोई अन्य सामग्री, अतः मैं अपने पितरोंको प्रणाम करता हूँ। वे मेरी भक्तिसे ही तृप्ति-लाभ करें। मैंने अपनी दोनों बाँहें आकाशमें उठा रखी हैं।'

द्विजोत्तम! धनके होने अथवा न होनेकी अवस्थामें पितरोंने इस प्रकारकी विधियाँ बतलायी हैं। जो पुरुष इसके अनुसार आचरण करता है, उसके द्वारा श्राद्ध समुचित रूपसे ही सम्पन्न माना जाता है। [अध्याय १३]

श्राद्ध-कल्प

मार्कण्डेयजी कहते हैं—विप्रवर! प्राचीन समयमें यह प्रसङ्ग ब्रह्माजीके पुत्र सनन्दनने, जो सनकजीके छोटे भाई एवं परम बुद्धिमान् हैं, मुझसे कहा था। अब ब्रह्माजीद्वारा बतलायी वह बात सुनो। त्रिणाचिकेत[1], त्रिमधु[2], त्रिसुपर्ण[3], छहों वेदाङ्गोंके जाननेवाले, यज्ञानुष्ठानमें तत्पर, भानजे, दौहित्र, श्वशुर, जामाता, मामा, तपस्वी ब्राह्मण, पञ्चाग्नि तपनेवाले, शिष्य, सम्बन्धी तथा अपने माता एवं पिताके प्रेमी—इन ब्राह्मणोंको श्राद्धकर्ममें नियुक्त करना चाहिये। मित्रघाती, स्वभावसे ही विकृत नखवाला, काले दाँतवाला, कन्यागामी, आग लगानेवाला, सोमरस बेचनेवाला, जनसमाजमें निन्दित, चोर, चुगलखोर, ग्रामपुरोहित, वेतन लेकर पढ़ने तथा पढ़ानेवाला, पुनर्विवाहिता स्त्रीका पति, माता-पिताका परित्याग करनेवाला, हीन वर्णकी संतानका पालन-पोषण करनेवाला, शूद्रा स्त्रीका पति तथा मन्दिरमें पूजा करके जीविका चलानेवाला—ऐसे ब्राह्मण श्राद्धके अवसरपर निमन्त्रण देने योग्य नहीं हैं।

ब्राह्मणको निमन्त्रित करनेकी विधि

विचारशील पुरुषको चाहिये कि एक दिन पूर्व ही संयमी श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको निमन्त्रण दे दे। पर श्राद्धके दिन कोई अनिमन्त्रित तपस्वी ब्राह्मण घरपर पधारें तो उन्हें भी भोजन कराना चाहिये। श्राद्धकर्ता घरपर आये हुए ब्राह्मणोंका चरण धोये, फिर अपना हाथ धोकर उन्हें आचमन कराये। तत्पश्चात् उन्हें आसनोंपर बैठाये एवं भोजन कराये।

ब्राह्मणोंकी संख्या आदि

पितरोंके निमित्त अयुग्म अर्थात् एक, तीन इत्यादि तथा देवताओंके निमित्त युग्म अर्थात् दो, चार—इस क्रमसे ब्राह्मण-भोजनकी व्यवस्था करे। अथवा देवताओं एवं पितरों—दोनोंके निमित्त एक-एक ब्राह्मणको भोजन करानेका भी विधान है। नानाका श्राद्ध वैश्वदेवके साथ होना चाहिये। पितृपक्ष और मातामहपक्ष—दोनोंके लिये एक ही वैश्वदेव-श्राद्ध करे। देवताओंके निमित्त ब्राह्मणोंको पूर्वमुख बैठाकर भोजन कराना चाहिये तथा पितृपक्ष एवं मातामहपक्षके ब्राह्मणोंको उत्तरमुख बिठाकर भोजन कराये। द्विजवर! कुछ आचार्य कहते हैं, पितृपक्ष और मातामह—इन दोनोंके श्राद्ध अलग-अलग होने चाहिये। अन्य कुछ महर्षियोंका कथन है—दोनोंका श्राद्ध एक साथ एक ही पाकमें होना समुचित है।

श्राद्धका प्रकार

बुद्धिमान् पुरुष श्राद्धमें आसनके लिये सर्वप्रथम कुशा दे। फिर देवताओंका आवाहन करे। तदनन्तर अर्घ्य आदिसे विधिपूर्वक उनकी पूजा करे।

१.द्वितीय कठके अन्तर्गत 'अयं वाव यः पवते' इत्यादि तीन अनुवाकोंको पढ़नेवाला या उसका अनुष्ठान करनेवाला।
२.'मधुवाताः' इत्यादि ऋचाका अध्ययन और मधु-व्रतका आचरण करनेवाला।
३.'ब्रह्म मेतु मां' इत्यादि तीन अनुवाकोंका अध्ययन और तत्सम्बन्धी व्रत करनेवाला।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

ब्राह्मणोंकी आज्ञासे जल एवं यवसे देवताओंको अर्घ्य देना चाहिये। फिर श्राद्धविधिको जाननेवाला श्राद्धकर्ता विधिपूर्वक उत्तम चन्दन, धूप और दीप उन विश्वेदेव आदि देवताओंको अर्पण करे। पितरोंके निमित्त इन सभी उपचारोंका अपसव्य[1]-भावसे निवेदन करे। फिर ब्राह्मणकी अनुमतिसे दो भाग किये हुए कुश पितरोंके लिये दे। विवेकी पुरुषको चाहिये, मन्त्रका उच्चारण करके पितरोंका आवाहन करे। अपसव्य होकर तिल और जलसे अर्घ्य देना उचित है।

श्राद्ध करते समय अतिथिके आ जानेपर कर्तव्यका विधान

मार्कण्डेयजी कहते हैं—द्विजवर! श्राद्ध करते समय यदि कोई भोजन करनेकी इच्छासे भूखा पथिक अतिथिरूपमें आ जाय तो ब्राह्मणोंसे आज्ञा लेकर उसे भी यथेच्छ भोजन कराना चाहिये। अनेक अज्ञातस्वरूप योगिगण मनुष्योंका उपकार करनेके लिये नाना रूप धारणकर इस धराधामपर विचरण करते रहते हैं। इसलिये विज्ञ पुरुष श्राद्धके समय आये हुए अतिथिका सत्कार अवश्य करे। विप्रवर! यदि उस समय वह अतिथि सम्मानित नहीं हुआ तो श्राद्ध करनेसे प्राप्त होनेवाले फलको नष्ट कर देता है।

श्राद्धके समय हवन करनेकी विधि

(मार्कण्डेयजी कहते हैं)—पुरुषप्रवर! श्राद्धके अवसरपर ब्राह्मणको भोजन करानेके पहले उनसे आज्ञा पाकर शाक और लवणहीन अन्नसे अग्निमें तीन बार हवन करना चाहिये। उनमें **'अग्नये कव्यवाहनाय स्वाहा'** इस मन्त्रसे पहली आहुति, **'सोमाय पितृमते स्वाहा'**—इससे दूसरी एवं **'वैवस्वताय स्वाहा'** कहकर तीसरी आहुति देनेका समुचित विधान है। तत्पश्चात् हवन करनेसे बचे हुए अन्नको थोड़ा-थोड़ा सभी ब्राह्मणोंके पात्रोंमें दे।

श्राद्धमें भोजन करानेका नियम

भोजनके लिये उपस्थित अन्न अत्यन्त मधुर, भोजनकर्ताकी इच्छाके अनुसार तथा अच्छी प्रकार सिद्ध किया हुआ हो। पात्रोंमें भोजन रखकर श्राद्धकर्ता अत्यन्त सुन्दर एवं मधुर वचन कहे—'महानुभावो! अब आप लोग अपनी इच्छाके अनुसार भोजन करें।' ब्राह्मणोंको भी तद्गतचित्त और मौन होकर प्रसन्नमुखसे सुखपूर्वक भोजन करना चाहिये। यजमानको क्रोध तथा उतावलेपनको छोड़कर भक्तिपूर्वक भोजन परोसते रहना चाहिये।

अभिश्रवण (वैदिक श्राद्धमन्त्रका पाठ)

श्राद्धमें ब्राह्मणोंके भोजन करते समय रक्षोघ्न मन्त्र[2]का पाठ करके भूमिपर तिल बिखेर दे तथा अपने पितृरूपमें उन द्विजश्रेष्ठोंका ही चिन्तन करे। साथ ही यह भी भावना करे—'इन ब्राह्मणोंके शरीरमें स्थित मेरे पिता, पितामह और प्रपितामह आदि आज भोजनसे तृप्त हो जायँ।' भूमिपर पिण्ड देते समय प्रार्थना करे—'मेरे पिता, पितामह और प्रपितामह इस पिण्डदानसे तृप्ति-लाभ करें। होमद्वारा सबल होकर मेरे पिता, पितामह और प्रपितामह आज तृप्ति-लाभ करें।' सबके बाद फिर प्रार्थना करनी चाहिये—'मेरे पिता, पितामह और प्रपितामह—ये महानुभाव मैंने भक्तिपूर्वक उनके लिये जो कुछ किया या कहा है—उससे तृप्त होनेकी कृपा करें। मातामह, प्रमातामह, वृद्धप्रमातामह और विश्वेदेव तृप्त हो जायँ एवं

१. यज्ञोपवीतको दायें कंधेपर रखना।

२. रक्षोघ्न मन्त्र—यज्ञेश्वरो यज्ञसमस्तनेता भोक्ताऽव्ययात्मा हरिरीश्वरोऽत्र।
तत्संनिधानादपयान्तु सद्यो रक्षांस्यशेषाण्यसुराश्च सर्वे॥ (अ० १४। ३२)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

समस्त राक्षसगण नष्ट हों। यहाँ सम्पूर्ण हव्य-कव्यके भोक्ता यज्ञेश्वर भगवान् श्रीहरि विराजमान हैं। अतः उनकी संनिधिके कारण समस्त राक्षस और असुरगण यहाँसे तुरंत भाग जायँ।'

अन्न आदिके विकिरणका नियम

जब निमन्त्रित ब्राह्मण भोजनसे तृप्त हो जायँ, तो भूमिपर थोड़ा-सा अन्न डाल देना चाहिये। आचमनके लिये उन्हें एक-एक बार शुद्ध जल देना आवश्यक है। तदनन्तर भलीभाँति तृप्त हुए ब्राह्मणोंसे आज्ञा लेकर भूमिपर सभी उपस्थित अन्नोंसे पिण्डदान करनेका विधान है।

पिण्डदानका नियम

श्राद्धकालमें भलीभाँति सावधान होकर तिलके साथ उन्हें पिण्ड अर्पण करे। पितृतीर्थसे तिलयुक्त जलाञ्जलि दे तथा मातामह आदिके लिये भी पितृतीर्थसे ही पिण्डदान करना चाहिये। फिर ब्राह्मणोंके उच्छिष्टके निकट ही दक्षिण दिशामें अग्रभाग करके बिछाये हुए कुशाओंपर पहले अपने पिताके लिये पुष्प और धूप आदिसे पूजित पिण्ड दान करे। फिर पितामह और प्रपितामहके लिये एक-एक पिण्ड अर्पण करना चाहिये। तदनन्तर **'लेपभागभुजस्तृप्यन्ताम्'**—ऐसा उच्चारण करते हुए लेपभागभोजी (पिण्डसे बचे अन्न पानेवाले) पितरोंके निमित्त कुशाके मूलसे अपने हाथमें लगे अन्नको गिरावे। विवेकी पुरुषको चाहिये कि इसी प्रकार गन्ध और मालादियुक्त पिण्डोंसे मातामह आदिका पूजन करके फिर द्विजश्रेष्ठोंको आचमन करावे। द्विजवर! पितरोंका चिन्तन करते हुए भक्तिके साथ पहले पिता प्रभृतिको पिण्ड देना आवश्यक है। फिर स्वस्ति-वाचन करनेवाले ब्राह्मणोंको अपनी शक्तिके अनुसार दक्षिणा देनेके पश्चात् विश्वेदेवके निमित्त प्रार्थनाके मन्त्रोंका पाठ होना चाहिये। जो विश्वेदेव यहाँ पधारे हैं, वे प्रसन्न हो जायँ—यों श्राद्धकर्ता प्रार्थना करे। वहाँ उपस्थित ब्राह्मण उसका अनुमोदन कर दें। फिर आशीर्वादके लिये प्रार्थना करना समुचित है। महामते! पहले पितृपक्षके ब्राह्मणोंका विसर्जन करे। तत्पश्चात् देवपक्षके ब्राह्मण बिदा किये जायँ। विश्वेदेवगणके सहित मातामह आदिमें भी ब्राह्मण-भोजन, दान और विसर्जन आदिकी यही विधि बतलायी गयी है। पितृ और मातामह—दोनों ही पक्षोंके श्राद्धोंमें पाद-शौच आदि सभी कर्म पहले देवपक्षके ब्राह्मणोंका करे। परंतु बिदा पहले पितृपक्षीय अथवा मातृपक्षीय ब्राह्मणोंको ही करे। मातामह आदि तीन पितरोंके श्राद्धमें ज्ञानी ब्राह्मण प्रथम स्थान पानेका अधिकारी है। ब्राह्मणोंको प्रीतिवचन और सम्मानपूर्वक बिदा करे। उनके जानेके समय द्वारतक पीछे-पीछे जाय। जब वे आज्ञा दें, तब लौट आवे।

श्राद्धके अन्तमें बलिवैश्वदेवका विधान

श्राद्ध करनेके पश्चात् वैश्वदेव नामक नित्य-क्रिया करनी चाहिये। इस प्रकार सबका सत्कार करके अपने घरके बड़े लोगों तथा बन्धु-बान्धवों एवं सेवकोंसहित स्वयं भोजन करना चाहिये। विवेकी पुरुषका कर्तव्य है कि इसी प्रकार पिता, पितामह, प्रपितामह तथा मातामह, प्रमातामह एवं वृद्धप्रमातामहका श्राद्ध सम्पन्न करे। श्राद्धद्वारा अत्यन्त तृप्त होकर ये पितर सम्पूर्ण मनोरथ पूर्ण कर देते हैं। काला तिल, कुतप मुहूर्त* और दौहित्र—ये तीन श्राद्धमें परम पवित्र माने जाते हैं। चाँदीका दान तथा उसका दर्शन भी श्रेष्ठ है। श्राद्धकर्ताके लिये क्रोध करना, उतावलापना तथा उस दिन कहीं जाना मना है। ये तीनों बातें श्राद्धमें भोजन करनेवालेके लिये भी वर्ज्य हैं। द्विजवर! विधिपूर्वक श्राद्ध करनेवाले पुरुषोंसे विश्वेदेवगण, पितृगण, मातामह एवं कुटुम्बीजन सभी संतुष्ट रहते हैं। द्विजवर! पितृगणोंका आधार

१. दिनके ८वें मुहूर्तको 'कुतप' कहते हैं, यह प्रायः साढ़े बारह बजेके आस-पास आता है।

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

चन्द्रमा है और चन्द्रमाका आधार योग है। अतः श्राद्धमें योगिजनको नियुक्त करना अति उत्तम है। विप्रवर! श्राद्धभोजी एक सहस्र ब्राह्मणोंके सम्मुख यदि एक भी योगी उपस्थित हो जाय तो वह यजमानके सहित उन सबका उद्धार कर देता है। सामान्यरूपसे सभी पुराणोंमें इस पितृक्रियाका वर्णन किया गया है। इस क्रमसे कर्मकाण्ड होना चाहिये।

यह जानकर भी मनुष्य संसारके बन्धनसे छूट जाता है। गौरमुख! श्रेष्ठ व्रतवाले बहुतसे ऋषि श्राद्धका आश्रय लेकर मुक्त हो चुके हैं। अतएव तुम भी इसके अनुष्ठानमें यथाशीघ्र तत्पर हो जाओ।

द्विजवर! तुमने भक्तिपूर्वक इस प्रसङ्गको पूछा है, अतः तुम्हारे सामने मैं इसका वर्णन कर चुका। जो पितृयज्ञ करके भगवान् श्रीहरिका ध्यान करता है, उससे बढ़कर कोई कार्य नहीं है और उस यज्ञसे बढ़कर दूसरा कोई पितृतन्त्र भी नहीं है—इसमें कोई संदेह नहीं। [अध्याय १४]

गौरमुखके द्वारा दस अवतारोंका स्तवन तथा उनका ब्रह्ममें लीन होना

पृथ्वीने पूछा—भगवन्! मुनिवर गौरमुखने मार्कण्डेयजीके मुखसे श्राद्धसम्बन्धी ऐसी विधि सुनकर फिर क्या किया?

भगवान् वराह बोले—वसुंधरे! मार्कण्डेयजीकी बुद्धि अपरिमित थी। उनके द्वारा इस प्रकार पितृकल्प सुनते ही मुनिवरकी कृपासे गौरमुखको सौ जन्मोंकी बातें याद आ गयीं।

पृथ्वीने पूछा—भगवन्! गौरमुख पूर्वजन्ममें कौन थे, उनका क्या नाम था, बातें याद आनेकी शक्ति उनमें कैसे आयी और उन महाभागने उन्हें जानकर फिर क्या किया?

भगवान् वराह कहते हैं—वसुंधरे! ये गौरमुख पूर्वके एक-दूसरे कल्पमें स्वयं भृगु मुनि थे। श्रीब्रह्माजीने अपने पुत्रोंको जो यह शाप दिया था कि पुत्रोंद्वारा ही उपदेश प्राप्त करके तुमलोग सद्गति प्राप्त करोगे। इसीलिये श्रीमार्कण्डेयजीने भी इन्हें ज्ञान प्रदान किया। मुनिवर मार्कण्डेयजी भी उन्हींके वंशमें उत्पन्न हुए थे। श्रेष्ठ अङ्गोंसे शोभा पानेवाली पृथ्वी! इस प्रकार उपदिष्ट होनेपर उन्हें सम्पूर्ण जन्मोंकी बातें याद हो आयीं। फिर पूर्वजन्मकी बातको स्मरण करके उन्होंने जो कुछ किया है, वह संक्षेपमें कहता हूँ, सुनो। उस समय गौरमुख पूर्व-कथनानुसार पितरोंके लिये बारह वर्षोंतक श्राद्ध करते रहे। तत्पश्चात् श्रीहरिकी आराधनाके लिये वे उनकी इस प्रकार स्तुति करने लगे। तीनों लोकोंमें प्रसिद्ध जो प्रभासतीर्थ है, वहीं जाकर गौरमुखने दैत्यदलन परमप्रभुकी स्तुति आरम्भ कर दी।

दशावतारस्तोत्र

गौरमुख बोले—जो शत्रुओंका दर्प दूर करनेवाले, ब्रह्मवेत्ताओंमें श्रेष्ठ, सूर्य, चन्द्रमा, अश्विनीकुमाररूपमें प्रतिष्ठित, युगमें स्थित, परमपुराण, आदिपुरुष, सदा विराजमान तथा देवाधिदेव भगवान् नारायण नामसे विख्यात हैं, उन मङ्गलमय श्रीहरिकी अब मैं स्तुति करता हूँ। प्राचीन समयमें जब वेद नष्ट हो चुके थे, उस अवसरपर इस विशाल वसुंधराका भरण-पोषण करनेवाले जिन आदिपुरुषने पर्वतके समान विशाल मत्स्यका शरीर धारण किया था तथा जिनके पुच्छके अग्रभागसे चमचमाती हुई तेज-छटा विकीर्ण हो रही थी, उन शत्रुसूदन भगवान् श्रीहरिकी मैं स्तुति करता हूँ। समुद्र-मन्थनके निमित्त सबका हित करनेके विचारसे कच्छपका रूप धारणकर जिन्होंने महान् पर्वत मन्दराचलको आश्रय दिया था, वे दैत्योंके संहार करनेवाले पुराण-पुरुष देवेश्वर भगवान् श्रीहरि मेरी सभी प्रकार रक्षा करें। जिन महापुरुषने महावराहका रूप धारणकर रसातलमें प्रवेश किया और वहाँसे पृथ्वीको ले आये तथा देवताओं एवं सिद्धोंने

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

जिनकी 'यज्ञपुरुष' संज्ञा दी है,वे असुरसंहर्ता, सनातन श्रीहरि मेरी रक्षा करें। जो प्रत्येक युगमें भयंकर नृसिंहरूपसे विराजते हैं, जिनका मुख अत्यन्त भयावह है, कान्ति सुवर्णके समान है तथा जिनका दैत्योंका दलन करना स्वाभाविक गुण है, वे योगिराज जगत्के परम आश्रय भगवान् श्रीहरि हमारी रक्षा करें। जिनका कोई माप नहीं है, फिर भी बलिका यज्ञ नष्ट करनेके लिये जिन योगात्माने योगके बलसे दण्ड और मृगचर्मसे सुशोभित वामन-रूपसे बढ़ते हुए त्रिलोकीतक नाप ली, वे परम प्रभु हमारी रक्षा करें। जिन्होंने परमपराक्रमी परशुरामजीका रूप धारण करके इक्कीस बार सम्पूर्ण भूमण्डलपर विजय प्राप्त की और उसे कश्यपजीको सौंप दिया तथा जो सज्जनोंके रक्षक एवं असुरोंके संहारक हैं, वे हिरण्यगर्भ भगवान् श्रीहरि हमारी रक्षा करें। हिरण्यगर्भ जिनकी संज्ञा है, सर्वसाधारण जन जिन्हें देख नहीं सकते तथा जो राम आदि रूपोंसे चार प्रकारके शरीर धारण कर चुके हैं एवं अनेक प्रकारके रूपोंसे राक्षसोंका विनाश करते हैं, वे आदिपुरुष भगवान् श्रीहरि हमारी रक्षा करें। चाणूर और कंस नामधारी दानव दर्पसे भर गये थे। उनके भयसे देवताओंके हृदयमें आतङ्क छा गया था। अतः उन्हें निर्भय करनेके लिये जो प्रत्येक युग एवं कल्पमें वसुदेवके पुत्र श्रीकृष्णरूपसे विराजते हैं, वे प्रभु हमारी रक्षा करें। जो सनातन, ब्रह्ममय एवं महान् पुरुष होकर भी वर्णकी व्यवस्था करनेके लिये प्रत्येक युगमें कल्किके नामसे विख्यात हैं, देवता, सिद्ध और दैत्योंकी आँखें जिनके रूपको देख नहीं सकतीं एवं जो विज्ञानमार्गका त्याग करके यम-नियम आदिके प्रवर्तक बुद्धरूपसे सुपूजित होते हैं और मत्स्य आदि अनेक रूपोंमें विचरते हैं, वे भगवान् श्रीहरि हमारी रक्षा करें। भगवन्! आप पुरुषोत्तम हैं तथा समस्त कारणोंके भी कारण हैं। आपको मेरा अनेकशः प्रणाम है। प्रभो! अब आप मुझे मुक्ति-पद प्रदान करनेकी कृपा कीजिये।*

इस प्रकार महर्षि गौरमुखके द्वारा भक्तिभावसे संस्तुत एवं नमस्कृत होते-होते चक्र एवं गदाधारी श्रीहरि स्वयं उनके सामने प्रत्यक्षरूपसे प्रकट हो गये। उस समय गौरमुखने देखा कि प्रभुके विग्रहसे दिव्य विज्ञान भी प्रकट हो रहा है। उसे पाकर मुनिकी अन्तरात्मा पूर्ण शान्त हो गयी। गौरमुखके शरीरसे विज्ञानात्मा निकली और श्रीहरिको पाकर उनके मुक्तिसंज्ञक सनातन श्रीविग्रहमें सदाके लिये शान्त हो गयी। [अध्याय १५]

---

* स्तोष्ये महेन्द्रं रिपुदर्पहं शिवं नारायणं ब्रह्मविदां वरिष्ठम्। आदित्यचन्द्राश्वियुगस्थमाद्यं पुरातनं दैत्यहरं सदा हरिम्॥
चकार मात्स्यं वपुरात्मनो यः पुरातनं वेदविनाशकाले। महामहीभृद्वपुरग्रपुच्छच्छटाहवार्च्चिः सुरशत्रुहाद्यः॥
तथाब्धिमन्थानकृते गिरीन्द्रं दधार यः कौर्मवपुः पुराणम्। हितेच्छयाप्तः पुरुषः पुराणः प्रपातु मां दैत्यहरः सुरेशः॥
महावराहः सततं पृथिव्यास्तलात्तलं प्राविशद् यो महात्मा। यज्ञाङ्गसंज्ञः सुरसिद्धसङ्घैः स पातु मां दैत्यहरः पुराणः॥
नृसिंहरूपी च बभूव योऽसौ युगे युगे योगिवरोऽथ भीमः। करालवक्त्रः कनकाग्रवर्चा वराशयोऽस्मानसुरान्तकोऽव्यात्॥
बलेर्मखध्वंसकृदप्रमेयो योगात्मको योगवपुःस्वरूपः। स दण्डकाष्ठाजिनलक्षणः क्षितिं योऽसौ महान् क्रान्तवान् नः पुनातु॥
त्रिःसप्तकृत्वो जगतीं जिगाय कृत्वा ददौ कश्यपाय प्रचण्डः। स जामदग्न्योऽभिजनस्य गोप्ता हिरण्यगर्भोऽसुरहा प्रपातु॥
चतुष्प्रकारं च वपुर्य आद्यं हैरण्यगर्भप्रतिमानलक्ष्यम्। रामादिरूपैर्बहुरूपभेदं चकार सोऽस्मानसुरान्तकोऽव्यात्॥
चाणूरकंसासुरदर्पभीतेर्भीतामराणामभयाय वेदः। युगे युगे वासुदेवो बभूव कल्पे भवत्यद्भुतरूपकारी॥
युगे युगे कल्किनाम्ना महात्मा वर्णस्थितिं कर्तुमनेकरूपः। सनातनो ब्रह्ममयः पुरातनो गूढाशयोऽस्मानसुरान्तकोऽव्यात्॥
न यस्य रूपं सुरसिद्धदैत्याः पश्यन्ति विज्ञानगतिं विहाय। अतो यमेनापि समर्चयन्ति मत्स्यादिरूपाणि चराणि सोऽव्यात्॥
नमो नमस्ते पुरुषोत्तमाय पुनश्च भूयोऽपि नमो नमस्ते। नमो नमः कारणकारणाय नयस्व मां मुक्तिपदं नमस्ते॥
(अध्याय १५। ९—२०)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

महातपाका उपाख्यान

पृथ्वीने पूछा—भगवन्! मणिसे जो प्रधान पुरुष निकले थे तथा जिन्हें भगवान् श्रीहरिने वर दिया था—'तुम सभी त्रेतायुगमें राजा बनोगे', उनकी उत्पत्ति कैसे हुई? उनके नाम क्या हुए तथा उन्होंने कौन-कौनसे काम किये? आप मुझे यह प्रसङ्ग बतानेकी कृपा करें।

भगवान् वराह कहते हैं—प्राणियोंको प्रश्रय देनेवाली पृथ्वी देवि! मणिसे प्रकट जो सुप्रभ नामका प्रधान पुरुष था, वह त्रेतायुगमें एक महान् उदार राजा हुआ। उसके प्रादुर्भावका प्रसङ्ग सुनो। प्रथम सत्ययुगमें महाबाहु नामसे एक प्रसिद्ध राजा हो चुके हैं। वे ही पुनः त्रेतायुगमें राजा श्रुतकीर्ति हुए। उस समय त्रिलोकीमें महान् पराक्रमियोंमें उनकी गणना थी। मणिसे उत्पन्न हुआ सुप्रभ उन्हींके घर पुत्ररूपसे उत्पन्न हुआ। उस समय प्रजापाल नामसे जगत्में उसकी ख्याति हुई। एक दिनकी बात है—राजा प्रजापाल शिकारके लिये किसी ऐसे सघन वनमें गया, जहाँ बहुत-से हिंस्र जन्तु निवास करते थे। वहाँ उसे एक सुन्दर आश्रम दिखायी पड़ा, जहाँ परम धार्मिक महातपा ऋषि निवास करते थे। वे निराहार रहकर सदा परब्रह्म परमात्माका ध्यान करते थे। तप करना ही उनका मुख्य काम था। वहाँ जाकर राजाको आश्रममें प्रवेश करनेकी इच्छा हुई, अतः वह आश्रमके भीतर गया। जंगली वृक्षोंसे उस आश्रमके प्रवेश-मार्गकी बड़ी आकर्षक शोभा हो रही थी। सघन लताएँ गृहके रूपमें परिणत होकर ऐसी चमक रही थीं, मानो चन्द्रमा चाँदनी बिखेरता हो। वहाँ भ्रमरोंको बिना प्रयास ही परितृप्ति प्राप्त होती थी। लाल कमलकी पंखुड़ियोंके समान कोमल नखवाली वराङ्गनाएँ वहाँ यत्र-तत्र सुन्दर राग आलाप रही थीं, मानो इन्द्रकी अप्सराएँ स्वर्गलोक छोड़कर पृथ्वीपर आ गयी हों। वहीं पासमें ही अनेक प्रकारके मत्त पक्षी आनन्दमें भरकर चीं-चीं-चूँ-चूँ शब्द कर रहे थे तथा भौंरे भी गूँज रहे थे। भाँति-भाँतिके प्रामाणिक (आकार-प्रकारवाले) कदम्ब, नीप, अर्जुन और साखू नामके वृक्ष शाखाओं तथा सामयिक सुन्दर फूलोंसे सम्पन्न होकर उस आश्रमकी शोभा बढ़ाते थे। आश्रमके ऊपर बैठे हुए पक्षियोंकी मधुर ध्वनिसे उसकी शोभा अनुपम हो रही थी। वहाँ रहकर सुचारु रूपसे काम करनेवाले सज्जन पुरुष धैर्यपूर्वक अपने कार्यमें तत्पर थे। प्रायः सर्वत्र यज्ञकुण्डोंसे यज्ञके धुएँ उठ रहे थे। हवन करनेसे आगकी प्रचण्ड लपटें निकल रही थीं तथा गृहस्थ ब्राह्मणोंद्वारा यज्ञ आरम्भ था। अतः ऐसा जान पड़ता था, मानो पापरूपी हाथीको शान्त करनेके विचारसे अत्यन्त तीखे दाँतवाले मतवाले सिंह ही यहाँ आ गये हों।

इस प्रकार सर्वत्र दृष्टि डालते हुए राजा प्रजापालने अनेक उपायोंका आश्रय लेकर उस उत्तम आश्रमके भीतर प्रवेश किया। वहाँ चले जानेपर सामने अत्यन्त तेजस्वी मुनिवर महातपा दिखायी पड़े। उस समय पुण्यात्माओं एवं ब्रह्मवेत्ताओंमें शिरोमणि वे ऋषि कुशाके आसनपर बैठे थे। उनका तेज ऐसा था, मानो अनन्त सूर्योंने एक रूप धारण कर लिया हो। महातपाका दर्शन पाकर प्रजापालको मृगकी बात ही भूल गयी। ऋषिके सत्सङ्गसे उसके विचार शुद्ध हो गये थे। धर्मके प्रति उसकी दृढ़ एवं अद्भुत आस्था हो गयी। ऐसे पवित्र अन्तःकरणवाले राजा प्रजापालको देखकर महातपामुनिने उसका आसन एवं पाद्य आदिसे आतिथ्य-सत्कार किया और उस नरेशने भी मुनिको प्रणाम किया। वसुधे! साथ ही मुनिसे

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

उसने यह पवित्र प्रश्न किया—'भगवन्! दुःखरूपी संसार-सागरमें डूबते हुए मनुष्योंके मनमें यदि दुस्तर संसारके तरने (विजय पाने)-की इच्छा हो तो उन्हें जो कार्य करना उचित हो, वह आप मुझ शरणागतको बतानेकी कृपा करें।'

महातपाजी बोले—राजन्! संसाररूपी समुद्रमें डूबनेवाले मनुष्योंके लिये कर्तव्य यह है कि वे पूजा, होम, दान, ध्यान एवं अनेक यज्ञ आदि उपकरणरूपी दृढ़ नौकाका आश्रय लें। नाव बनानेमें कीलोंकी आवश्यकता होती है। ये उपर्युक्त पूजा आदि, जिनसे मोक्ष मिलना निर्विवाद है, कीलोंका काम देती हैं। देवसमाजसे बड़ी रस्सियोंकी आवश्यकता पूरी हो जाती है। अतः अब तुम प्राण आदिके सहयोगसे त्रिलोकेश्वररूपी नौका तैयार कर लो। भगवान् नारायण ही त्रिलोकेश्वर हैं। उनकी कृपासे नरकमें नहीं जाना पड़ता। राजन्! जो बड़भागीजन उन देवेश्वरको भक्तिपूर्वक प्रणाम करते हैं, उनकी चिन्ताएँ शान्त हो जाती हैं और वे उनके उस परम पदको पा लेते हैं, जो कभी नष्ट नहीं होता।

राजा प्रजापालने पूछा—भगवन्! आप सम्पूर्ण धर्मोंको भलीभाँति जानते हैं। मोक्षकी इच्छा करनेवाले पुरुषको सनातन श्रीहरिकी विभूतियोंका किस प्रकार चिन्तन करना चाहिये? इसे बतानेकी कृपा करें।

मुनिवर महातपाने कहा—राजन्! तुम बड़े विज्ञ पुरुष हो। सम्पूर्ण योगियोंके स्वामी श्रीविष्णु स्त्रियों एवं पुरुषोंपर जिस प्रकार प्रसन्न होते हैं, उसे सुनो। पितरोंके सहित सभी देवता तथा ब्राह्मणके भीतर विचरनेवाले ब्रह्मा प्रभृति—ये सब-के-सब श्रीविष्णुसे ही उत्पन्न हुए हैं—ऐसी वेदकी श्रुति प्रसिद्ध है। अग्नि, अश्विनीकुमार, गौरी, गजानन, शेषनाग, कार्तिकेय, आदित्यगण, दुर्गासहित चौंसठ मातृकाएँ, दस दिशाएँ, कुबेर, वायु, यम, रुद्र, चन्द्रमा और पितृगण—इन सबकी उत्पत्तिमें जगत्प्रभु श्रीहरिकी ही प्रधानता है। हिरण्यगर्भ श्रीहरिके श्रीविग्रहमें इनका स्थान बना रहता है और वहींसे निकलकर ये चारों ओर पृथक्-पृथक् परिलक्षित होते हैं, पर अहंता (मैं हूँ)-का अभिमान उनका साथ नहीं छोड़ता। [अध्याय १७-१८]

प्रतिपदा तिथि एवं अग्निकी महिमाका वर्णन

महातपा बोले—राजन्! प्रसङ्गवश भगवान् विष्णुकी विभूतिका वर्णन कर दिया। अब तिथियोंका माहात्म्य कहता हूँ, सुनो। जब ब्रह्माके क्रोधसे अग्निका प्राकट्य हुआ तो उन्होंने ब्रह्माजीसे कहा—'विभो! मेरे लिये तिथि निश्चय करनेकी कृपा कीजिये, जिसमें पूजित होकर सम्पूर्ण जगत्के समक्ष मैं प्रतिष्ठा प्राप्त कर सकूँ।'

ब्रह्माजी बोले—परम श्रेष्ठ अग्निदेव! देवताओं, यक्षों और गन्धर्वोंके भी पूर्व तुम सर्वप्रथम प्रतिपदाको उत्पन्न हुए हो और तुम्हारे पश्चात् इन सबका यहाँ प्राकट्य हुआ है। अतः प्रतिपद् नामकी यह तिथि तुम्हारे लिये विहित होगी। इस तिथिमें प्रजापतिकी मूर्तिभूत हविष्यसे जो तुममें हवन करेंगे, उन्हें सम्पूर्ण देवताओं और पितरोंकी प्रसन्नता प्राप्त होगी। चार प्रकारके प्राणी—अण्डज, पिण्डज, स्वेदज, उद्भिज्ज तथा देवता, दानव, मानव, पशु एवं गन्धर्व—ये सभी तुममें हवन करनेपर तृप्त हो सकते हैं। तुम्हारे प्रति श्रद्धा रखनेवाला जो पुरुष प्रतिपदा तिथिके दिन उपवास करेगा अथवा केवल दूधके आहारपर ही रहेगा, उसके महान् फलका वर्णन सुनो—'छब्बीस चतुर्युगीतक वह स्वर्गलोकमें सम्मानपूर्वक

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

पूजित होगा। इस जन्ममें वह पुरुष प्रतापी, धनवान् एवं सुन्दर रूपवाला राजा होता है और मरनेपर स्वर्गमें उसे परम प्रतिष्ठा प्राप्त होती है।'

इस प्रकार ब्रह्माजीके बतानेपर अग्निदेव मौन हो गये और उनकी आज्ञाके अनुसार दिये हुए लोक (अग्निलोक)-को पधारे। जो मनुष्य प्रतिदिन प्रातःकाल उठकर अग्निके जन्मसे सम्बन्धित इस प्रसङ्गको सुनेगा, वह सम्पूर्ण पापोंसे छूट जायगा—इसमें कोई संशय नहीं।

[अध्याय १९]

अश्विनीकुमारोंकी उत्पत्तिका प्रसङ्ग और उनके द्वारा भगवत्स्तुति

राजा प्रजापालने पूछा—ब्रह्मन्! इस प्रकार महात्मा अग्निदेवका जन्म तो हो गया; किंतु विराट् पुरुषके प्राण-अपानरूप अश्विनीकुमारोंकी उत्पत्ति कैसे हुई?

मुनिवर महातपाने कहा—राजन्! मरीचि मुनि ब्रह्माजीके पुत्र हैं। स्वयं ब्रह्माजीने ही (अपने पुत्रोंके रूपमें) चौदह स्वरूप धारण किये थे। उनमें मरीचि सबसे बड़े थे। उन मरीचिके पुत्र महान् तेजस्वी कश्यप मुनि हुए। ये प्रजापतियोंमें सबसे अधिक श्रीसम्पन्न थे; क्योंकि ये देवताओंके पिता थे। राजन्! बारहों आदित्य उन्हींके पुत्र हैं। ये बारह आदित्य भगवान् नारायणके ही तेजोरूप हैं—ऐसा कहा गया है। इस प्रकार ये बारह आदित्य बारह मासके प्रतीक हैं और संवत्सर भगवान् श्रीहरिका रूप है। द्वादश आदित्योंमें मार्तण्ड महान् प्रतापशाली हैं। देवशिल्पी विश्वकर्माने अपनी परम तेजोमयी कन्या संज्ञाका विवाह मार्तण्डसे कर दिया। उससे इनकी दो संतानें उत्पन्न हुईं, जिनमें पुत्रका नाम यम और कन्याका नाम यमुना हुआ। संज्ञासे सूर्यका तेज सहा नहीं जा रहा था, अतः उसने मनके समान गतिवाली वडबा (घोड़ी)-का रूप धारण किया और अपनी छायाको सूर्यके घरमें स्थापितकर उत्तर-कुरुमें चली गयी। अब उसकी प्रतिच्छाया वहाँ रहने लगी और सूर्यदेवकी उससे भी दो संतानें हुईं, जिनमें पुत्र शनि नामसे विख्यात हुआ और कन्या तपती नामसे प्रसिद्ध हुई। जब छाया संतानोंके प्रति विषमताका व्यवहार करने लगी तो सूर्यदेवकी आँखें क्रोधसे लाल हो उठीं। उन्होंने छायासे कहा—'भामिनि! तुम्हारा अपनी इन संतानोंके प्रति विषमताका व्यवहार करना उचित नहीं है।' सूर्यके ऐसा कहनेपर भी जब छायाके विचारमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ तो एक दिन अत्यन्त दुःखित होकर यमराजने अपने पितासे कहा—'तात! यह हमलोगोंकी माता नहीं है; क्योंकि अपनी दोनों संतानों—शनि और तपतीसे तो यह प्यार करती है और हमलोगोंके प्रति शत्रुता रखती है। यह विमाताके समान हमलोगोंसे विषमतापूर्ण व्यवहार करती है।'

उस समय यमकी ऐसी बात सुनकर छाया क्रोधसे भर उठी और उसने यमको शाप दे दिया—'तुम शीघ्र ही प्रेतोंके राजा होओगे।' जब छायाके ऐसे कटु वचन सूर्यने सुने तो पुत्रके कल्याणकी कामनासे वे बोल उठे—'बेटा! चिन्ताकी कोई बात नहीं—तुम वहाँ मनुष्योंके धर्म और पापका निर्णय करोगे और लोकपालके रूपमें स्वर्गमें भी तुम्हारी प्रतिष्ठा होगी।' उस अवसरपर छायाके प्रति क्रोध हो जानेके कारण सूर्यका चित्त चञ्चल हो उठा था। अतः उन्होंने बदलेमें शनिको शाप दे डाला—'पुत्र! माताके दोषसे तुम्हारी दृष्टिमें भी क्रूरता भरी रहेगी।'

ऐसा कहकर भगवान् सूर्य उठे और संज्ञाको

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

ढूँढ़नेके लिये चल पड़े। उन्होंने देखा, उत्तर-कुरुदेशमें संज्ञा घोड़ीका वेष बनाकर विचर रही है। तत्पश्चात् वे भी अश्वका रूप धारण करके वहाँ पहुँच गये। वहाँ जाकर उन्होंने अपनी आत्मरूपा संज्ञासे सृष्टिरचनाके उद्देश्यसे समागम किया। जब प्रचण्ड तेजसे उद्दीप्त सूर्यने वडबारूपिणी संज्ञामें गर्भाधान किया तो उनका तेज अत्यन्त प्रज्वलित हो दो भागोंमें विभक्त होकर गिर पड़ा। आत्मविजयी प्राण और अपान पहलेसे ही संज्ञाकी योनिमें अव्यक्तरूपसे स्थित थे। सूर्यदेवके तेजके सम्बन्धसे वे दोनों मूर्तिमान् हो गये। इस प्रकार घोड़ीका रूप धारण करनेवाली विश्वकर्माकी पुत्री संज्ञासे इन दोनों पुरुषरत्नोंका जन्म हुआ। इसी कारण ये दोनों देवता सूर्यपुत्र अश्विनीकुमारोंके नामसे प्रसिद्ध हुए। सूर्य स्वयं प्रजापति कश्यपके पुत्र हैं और विश्वकर्माकी पुत्री संज्ञा उनकी पराशक्ति है। संज्ञाके शरीरमें ये दोनों पहले अमूर्त थे। अब सूर्यका अंश मिल जानेसे मूर्तिमान् हो गये। उत्पन्न होनेके बाद वे दोनों अश्विनीकुमार सूर्यके निकट गये और उन्होंने अपने मनकी अभिलाषा व्यक्त की—'भगवन्! हम दोनोंके लिये आपकी क्या आज्ञा है?'

सूर्यने कहा—पुत्रो! तुम दोनों देवश्रेष्ठ प्रजापति भगवान् नारायणकी भक्तिपूर्वक आराधना करो। वे देवाधिदेव तुम्हें अवश्य वर प्रदान करेंगे।

इस प्रकार भगवान् सूर्यके कहनेपर अश्विनीकुमार-अत्यन्त कठिन तप करनेमें तत्पर हो गये। वे चित्तको समाहितकर 'ब्रह्मपार' नामक स्तोत्रका निरन्तर जप करने लगे। बहुत समयतक तपस्या करनेपर नारायणस्वरूप ब्रह्मा उनसे संतुष्ट हो गये और बड़े प्रेमसे उन्हें वर दे दिया।

राजा प्रजापालने कहा—ब्रह्मन्! अश्विनी-कुमारोंने अव्यक्तजन्मा भगवान् श्रीहरिकी जिस स्तोत्र द्वारा आराधना की थी, उसे मैं सुनना चाहता हूँ। आप उसे बतानेकी कृपा करें।

मुनिवर महातपा कहते हैं—राजन्! अश्विनी-कुमारोंने जिस प्रकार अव्यक्तजन्मा ब्रह्माजीकी स्तुति की और जिस स्तोत्रके परिणामस्वरूप उन्हें ऐसा फल प्राप्त हुआ, वह मुझसे सुनो। वह स्तुति इस प्रकार है—'भगवन्! आप निष्क्रिय, निष्प्रपञ्च और निराश्रय हैं। आपको किसीकी अपेक्षा एवं अवलम्ब नहीं है। आप गुणातीत, स्वप्रकाश, सर्वाधार, ममताशून्य और किसी दूसरे आलम्बकी अपेक्षासे रहित हैं। ऐसे ॐकारस्वरूप आप प्रभुको मेरा नमस्कार है। भगवन्! आप ब्रह्मा, महाब्रह्मा, ब्राह्मणोंके प्रेमी तथा पुरुष, महापुरुष एवं पुरुषोत्तम हैं। महादेव! देवोत्तम, स्थाणु—ये आपकी संज्ञाएँ हैं। सबका पालन करना आपका स्वभाव है। भूत, महाभूत, भूताधिपति; यज्ञ, महायज्ञ, यज्ञाधिपति; गुह्य, महागुह्य, गुह्याधिपति तथा सौम्य, महासौम्य और सौम्याधिपति—ये सभी शब्द आपमें ही सार्थक होते हैं। पक्षी, महापक्षी और पक्षिपति; दैत्य, महादैत्य एवं दैत्यपति तथा विष्णु, महाविष्णु और विष्णुपति—ये सभी आपके नाम हैं। आप प्रजाओंके एकमात्र अधिपति हैं। ऐसे परमेश्वर भगवान् नारायणको हमारा नमस्कार है।'

इस प्रकार अश्विनीकुमारोंके स्तुति करनेपर प्रजापति ब्रह्मा संतुष्ट हो गये। उन्होंने अत्यन्त प्रेमके साथ कहा—'वर माँगो। तुम लोगोंको मैं अभी वह वर देता हूँ, जो देवताओंके लिये भी परम दुर्लभ है तथा जिसके प्रभावसे तीनों लोकोंमें सुखपूर्वक विचरण कर सकोगे।'

अश्विनीकुमार बोले—भगवन्! हमें यज्ञोंमें देवभाग देनेकी कृपा करें। प्रजापते! हम चाहते हैं कि देवताओंके समान सदा सोमपान करनेका अधिकार हमें प्राप्त हो। इसके अतिरिक्त देवताओंके रूपमें हमलोगोंकी शाश्वत प्रतिष्ठा हो।

ब्रह्माजीने कहा—रूप, कान्ति, अनुपम आयुर्वेदशास्त्रका ज्ञान तथा सोमरस पीनेका

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

अधिकार—ये सब तुम्हें सभी लोकोंमें सुलभ होंगे।

मुनिवर महातपा कहते हैं—राजन्! ब्रह्माजीने अश्विनीकुमारोंको ये सब वरदान द्वितीया तिथिको दिये थे, इसलिये यह परम श्रेष्ठ तिथि उनकी मानी गयी है। सुन्दर रूपकी अभिलाषा रखनेवाले मनुष्यको इस तिथिमें व्रत करना चाहिये। यह व्रत एक वर्षमें पूरा होता है। इसमें सदा पवित्र रहकर पुष्पोंका आहार करनेकी विधि है। इससे व्रतीको सुन्दरता प्राप्त होती है। साथ ही अश्विनीकुमारोंके जो गुण कहे गये हैं, वे भी उसे सुलभ हो जाते हैं। अश्विनीकुमारोंके जन्मके इस उत्तम प्रसङ्गको सदा श्रवण करनेवाला मनुष्य पुत्रवान् होता है तथा वह सभी पापोंसे मुक्त भी हो जाता है। [अध्याय २०]

गौरीकी उत्पत्तिका प्रसङ्ग, द्वितीया तिथि एवं रुद्रद्वारा जलमें तपस्या, दक्षके यज्ञमें रुद्र और विष्णुका संघर्ष

राजा प्रजापालने पूछा—महाप्राज्ञ! परम पुरुष परमात्माकी शक्तिरूपा गौरीने, जिनका सभी देव-दानव स्तवन करते रहते हैं, किस वरदानके प्रभावसे सगुण विग्रह धारण किया?

मुनिवर महातपाने कहा—जब अनेक रूपोंवाले रुद्रकी उत्पत्ति हो गयी तो उनके पिता प्रजापति ब्रह्माने स्वयं भगवान् नारायणके श्रीविग्रहसे प्रकटित हुई परममङ्गलमयी गौरीको भार्यारूपमें वरण करनेके लिये दे दिया। इन गौरीदेवीको 'भारती' भी कहा जाता है। परम सुन्दरी गौरीको पाकर रुद्रकी प्रसन्नताकी सीमा न रही। तदनन्तर ब्रह्माजीने कहा—'रुद्र! तुम तपके प्रभावसे प्रजाओंकी सृष्टि करो।' इसपर रुद्र मौन हो गये। फिर ब्रह्माने जब बार-बार प्रेरणा की तो रुद्रने उत्तर दिया—'इस कार्यमें मैं असमर्थ हूँ।' इसपर ब्रह्माजीने कहा—'तब तुम तपरूपी धनका संचय करो। क्योंकि कोई भी तपोहीन पुरुष प्रजाओंकी सृष्टि नहीं कर सकता।' यह सुनकर परम शक्तिशाली रुद्र जलमें निमग्न हो गये।

जब देवाधिदेव रुद्र जलमें प्रविष्ट हो गये तो ब्रह्माजीने उस परम सुन्दरी कन्या गौरीको पुनः अपने शरीरके भीतर अन्तर्हित कर लिया। तत्पश्चात् उनके मनमें पुनः सृष्टिका संकल्प होनेपर सात मानस पुत्रोंकी उत्पत्ति हुई। प्रजापति दक्ष भी उनके साथ प्रकट हुए। इसके बाद प्रजाओंकी सृष्टि सम्यक् प्रकारसे बढ़ने लगी। इन्द्रसहित समस्त देवता, आठ वसु, रुद्र, आदित्य और मरुद्गण—ये सभी प्रजापति दक्षकी कन्याओंके वंशज विख्यात हुए। इन गौरीके विषयमें पहले भी कहा जा चुका है। कालान्तरमें ब्रह्माजीने उन्हें दक्षप्रजापतिको पुत्रीके रूपमें प्रदान किया। ब्रह्माजीने पूर्व कालमें इन्हीं गौरीका विवाह महात्मा रुद्रके साथ किया था। नृपवर! भगवान् श्रीहरिके विग्रहसे प्रकट हुई वही गौरी दक्षकी पुत्री होकर 'दाक्षायणी' कहलायीं। दक्षप्रजापतिने जब अपनी कन्याओंसे उत्पन्न हुए दौहित्रों—देवताओंके समाजको देखा तो उनका अन्तःकरण प्रसन्नतासे भर उठा। साथ ही अपने कुलकी समृद्धि-कामनासे प्रजापति ब्रह्माको प्रसन्न करनेके लिये उन्होंने यज्ञ आरम्भ कर दिया।

उस यज्ञमें मरीचि आदि सभी ब्रह्माके पुत्र अपने-अपने विभागमें व्यवस्थित होकर ऋत्विजोंका कार्य करने लगे। स्वयं मुनिवर मरीचि ब्रह्मा बने। दूसरे ब्रह्मपुत्र अन्य-अन्य स्थानोंपर नियुक्त हुए। अत्रि ऋषिको यज्ञमें अन्य स्थान प्राप्त हुआ। अङ्गिरा मुनि इस यज्ञमें आग्नीध्र बने, पुलस्त्य होता हुए

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

और पुलह उद्गाता। उस यज्ञमें महान् तपस्वी क्रतु प्रस्तोता बने। प्रचेतामुनि प्रतिहर्ताका स्थान सुशोभित कर रहे थे। महर्षि वसिष्ठ उस यज्ञमें सुब्रह्मण्य-पदपर अधिष्ठित थे। चारों सनत्कुमार यज्ञके सभासद थे।

इस प्रकार ब्रह्माजीसे सभी लोकोंकी सृष्टि हुई है। अतएव वे सभीके द्वारा यजन करने योग्य हैं। इसी कारण यज्ञके आराध्य ब्रह्माजी स्वयं उस यज्ञमें उपस्थित थे। पितृगण भी प्रत्यक्ष रूप धारण करके वहाँ पधारे थे। उन लोगोंकी प्रसन्नतासे जगत्में प्रसन्नता छा जाती है। वहाँ अपना भाग चाहनेवाले सभी देवता, आदित्य, वसुगण, विश्वेदेव, पितर, गन्धर्व और मरुद्गण—सबको निर्दिष्ट यथोचित भाग प्राप्त हो गये। ठीक उसी समय वे रुद्र, जो बहुत पहले ब्रह्माजीके कोपसे प्रकट हुए थे और जिन्होंने अगाध जलमें मग्न होकर तप आरम्भ कर दिया था—पुनः जलसे बाहर निकल पड़े। उस समय उनका श्रीविग्रह ऐसा उद्दीप्त हो रहा था, मानो हजारों सूर्य प्रकाशित हो उठे हों। वे भगवान् रुद्र सम्पूर्ण ज्ञानके निधान हैं। समस्त देवता उनके अङ्गभूत हैं। वे परम विशुद्ध प्रभु तपोबलके प्रभावसे सारे सृष्टि-प्रपञ्चको प्रत्यक्ष देखनेकी सामर्थ्यसे युक्त थे।

नरश्रेष्ठ! तत्काल ही उनसे पाँच दिव्य सर्ग उत्पन्न हुए। इसके अतिरिक्त चार भौम सर्गोंकी भी उनसे उत्पत्ति हुई, जिनमें मरणधर्मा जीव भी थे। राजन्! अब तुम इस रुद्र-सृष्टिका प्रसङ्ग सुनो। जब एकादश रुद्रोंके अधिपति भगवान् महारुद्र दस हजार वर्षोंतक तप करके उस अगाध जलके ऊपर आये तो उन्होंने देखा—वन-उपवनोंसे युक्त सस्यश्यामला पृथ्वी परम रमणीय प्रतीत हो रही है। उसपर मनुष्यों और पशुओंकी भरमार हो रही है। उन्हें दक्षप्रजापतिके भवनमें गूँजते हुए ऋत्विजोंके शब्द भी सुनायी पड़े। साथ ही यज्ञशालामें याज्ञिक पुरुषोंके द्वारा उच्चस्वरसे किया जाता हुआ वेदगान भी सुनायी पड़ा। तत्पश्चात् उन महान् तेजस्वी एवं सर्वज्ञ परम प्रभु रुद्रके मनमें अपार क्रोध उमड़ पड़ा। वे कहने लगे—'अरे! ब्रह्माजीने सर्वप्रथम अपनी सम्पूर्ण अन्तःशक्तिका प्रयोग करके मेरी सृष्टि की और मुझसे कहा कि तुम प्रजाओंकी सृष्टि करो। फिर वह सृष्टि-कार्य दूसरे किस व्यक्तिने सम्पन्न कर दिया?' ऐसा कहकर परम प्रभु भगवान् रुद्र क्रोधित होकर बड़े जोरसे गरज उठे। उस समय उनके कानोंसे तीव्र ज्वालाएँ निकल पड़ीं। उन ज्वालाओंसे भूत, वेताल, अग्निमय प्रेत एवं पूतनाएँ करोड़ोंकी संख्यामें प्रकट हो गयीं। वे सभी अपने-अपने हाथोंमें अनेक प्रकारके आयुध लिये हुए थे। जब उन भूतगणोंने भगवान् रुद्रकी ओर दृष्टि डाली तो स्वयं उन परमेश्वरने एक अत्यन्त सुन्दर रथकी भी रचना कर ली। उस रथमें दो सुन्दर मृग अश्वोंके स्थानपर कल्पित हुए थे। तीनों तत्त्व ही रथके तीन दण्डोंका काम कर रहे थे। धर्मराज उस रथके अक्षदण्ड बने तथा पवन उसकी घरघराहट थे। दिन-रात—ये दो उस रथकी पताकाएँ थीं। धर्म और अधर्म उसके ध्वजदण्ड थे। उस वेदविद्यामय रथपर सारथिका कार्य स्वयं ब्रह्माजी कर रहे थे। गायत्री ही धनुष हुई और प्रणवने धनुषकी डोरीका स्थान ग्रहण किया। राजन्! उन देवेश्वरके लिये सातों स्वर सात बाण बन गये थे। इस प्रकार युद्धसामग्री एकत्रित करके परम प्रतापी रुद्र क्रोधयुक्त हो दक्षका यज्ञ विध्वंस करनेके लिये चल पड़े। जब भगवान् शंकर वहाँ पहुँचे तो ऋत्विजोंके मन्त्र विस्मृत हो गये। यज्ञके विपरीत इस अशुभ लक्षणको देखकर उन सभी ऋत्विजोंने कहा—

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

'देवतागण! आप लोग शीघ्र सावधान हो जायँ। आप सभीके सामने कोई महान् भय उपस्थित होनेवाला है। सम्भवतः ब्रह्माद्वारा निर्मित कोई बलवान् असुर यहाँ आ रहा है। मालूम होता है कि इस परम दुर्लभ यज्ञमें भाग पानेके लिये उसके मनमें विशेष इच्छा जाग्रत् हो गयी है।' इसपर देवतागण अपने मातामह दक्षप्रजापतिसे बोले—'तात! इस अवसरपर हमलोगोंको क्या करना चाहिये? आप जो उचित हो, वह बतानेकी कृपा करें।'

दक्षप्रजापतिने कहा—आप सभी लोग तुरंत शस्त्र उठा लें और युद्ध प्रारम्भ कर दें।

उनके ऐसा कहते ही अनेक प्रकारके आयुध धारण करनेवाले देवताओं एवं रुद्रके अनुचरोंमें घोर संग्राम छिड़ गया। उस युद्धमें वेताल, भूत, कूष्माण्ड, पूतनाएँ और अनेक ग्रह आयुध हाथमें लेकर लोकपालोंके साथ भिड़ गये। रुद्रके अनुचर भूतगण आकाशमें जाकर भयंकर बाण, तलवार और फरसे चलाने लगे। उस समरभूमिमें उन भयंकर भूतोंके पास उल्काएँ, अस्थिसमूह तथा बाण प्रचुरमात्रामें थे। युद्धभूमिमें रुद्रदेवके देखते-देखते वे क्रोधपूर्वक देवताओंपर प्रचण्ड प्रहार करने लगे। तदनन्तर संग्रामका रूप अत्यन्त भयावह हो गया। रुद्रने भगदेवताके दोनों नेत्र एक ही बाणसे छेद दिये। उनके बाणोंसे भग नेत्रहीन हो गये। यह देखकर तेजस्वी पूषाको क्रोध आ गया और वे रुद्रसे जा भिड़े। उस महान् युद्धमें पूषाने बाणोंका जाल-सा बिछा दिया। यह देखकर शत्रुहन्ता रुद्रने पूषाके सभी दाँत तोड़ डाले। रुद्रद्वारा पूषाका दन्तभङ्ग देखकर देवसेनामें सब ओर भगदड़ मच गयी। फिर तो ग्यारहों रुद्र वहाँ आ गये। तदनन्तर आदित्योंमें सबसे कनिष्ठ परम प्रतापी भगवान् विष्णु सहसा वहाँ आ पहुँचे। उन्होंने देवसेनाको इस प्रकार हतोत्साहित हो दिशा-विदिशाओंमें भागते देखकर कहा—'वीरो! पुरुषार्थका परित्याग करके तुमलोग कहाँ भागे जा रहे हो? तुम वीरोचित दर्प, महिमा, दृढ़निश्चय, कुलमर्यादा और ऐश्वर्यभाव—इतनी जल्दी कैसे भुला बैठे? तुम्हारे भीतर ब्रह्माके सभी गुण विराजमान हैं। तुम्हें दीर्घायु भी प्राप्त हो चुकी है। अतएव भूमिपर गिरकर उन पद्मयोनि प्रजापतिको साष्टाङ्ग प्रणाम करो। यह प्रयास कभी व्यर्थ नहीं जायगा और युद्धके लिये सन्नद्ध हो जाओ।'

उस समय भगवान् जनार्दनके श्रीअङ्गोंमें पीताम्बर सुशोभित हो रहा था। उनके हाथोंमें शङ्ख, चक्र एवं गदा विद्यमान थे। देवताओंसे ऐसा कहकर भगवान् श्रीहरि गरुडपर आरूढ़ हो गये। फिर तो भगवान् रुद्रसे उनका रोमाञ्चकारी युद्ध छिड़ गया। रुद्रने पाशुपतास्त्रसे विष्णुको और विष्णुने कुपित होकर रुद्रपर नारायणास्त्रका प्रयोग किया। उनके द्वारा प्रयुक्त नारायणास्त्र और पाशुपतास्त्र—दोनों आकाशमें परस्पर टकराने लगे। एक हजार दिव्य वर्षोंतक उनका यह भीषण युद्ध चलता रहा। उस संग्राममें एकके मस्तकपर मुकुट सुशोभित हो रहा था तो दूसरेका सिर जटाजालसे भूषित था। एक शङ्ख बजा रहे थे तो दूसरेके हाथमें मङ्गलमय डमरूका वादन हो रहा था। एक तलवार लिये हुए थे तो दूसरे दण्ड। एकका सर्वाङ्ग कण्ठहारमें संलग्न कौस्तुभमणिसे उद्भासित हो रहा था तो दूसरेके श्रीअङ्ग भस्मद्वारा भूषित हो रहे थे। एक पीताम्बर धारण किये हुए थे, तो दूसरे सर्पकी मेखला। ऐसे ही उनके रौद्रास्त्र और नारायणास्त्रमें भी परस्पर होड़ मची हुई थी। उन हरि और हर—दोनोंमें बलकी एक-से-एक अधिकता प्रतीत होती थी।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

यह देखकर पितामह ब्रह्माजीने उनसे अनुरोध किया—'आप दोनों उत्तम व्रतोंके पालन करनेवाले हैं; अतएव अपने-अपने स्वभावके अनुसार अस्त्रोंको शान्त कर दें।'

ब्रह्माजीके इस प्रकार कहनेपर विष्णु और शिव—दोनों शान्त हो गये। तत्पश्चात् ब्रह्माजीने उन दोनोंसे कहा—'आप दोनों महानुभाव हरि और हरके नामसे जगत्में प्रतिष्ठा प्राप्त करेंगे। यद्यपि दक्षका यह यज्ञ विध्वंस हो चुका है, फिर भी यह सम्पूर्णताको प्राप्त होगा। दक्षकी इन देव-संतानोंसे संसार भी यशस्वी होगा।'

लोकपितामह ब्रह्माजी विष्णु और रुद्रसे कहकर वहाँ उपस्थित देवमण्डलीसे इस प्रकार बोले—'देवताओ! आपलोग इस यज्ञमें भगवान् रुद्रको भाग अवश्य दें; क्योंकि वेदकी ऐसी आज्ञा है कि यज्ञमें रुद्रका भाग परम प्रशस्त है। इन रुद्रदेवका तुम सभी स्तवन करो। जिनके प्रहारसे भग देवताके नेत्र नष्ट हुए हैं तथा जिन्होंने पूषाके दाँत तोड़ डाले हैं, उन भगवान् रुद्रकी इस लीलासे सम्बद्ध नामोंसे स्तुति करनी चाहिये। इसमें विलम्ब करना ठीक नहीं है। इसके फलस्वरूप ये प्रसन्न होकर तुमलोगोंके लिये वरदाता हो जायँगे।'

जब ब्रह्माजीने देवताओंसे इस प्रकार कहा तो वे आत्मयोनि ब्रह्माजीको प्रणाम करके परम अनुरागपूर्वक परमात्मा भगवान् शिवकी स्तुति करने लगे।

देवगण बोले—'भगवन्! आप विषम नेत्रोंवाले त्र्यम्बकको मेरा निरन्तर नमस्कार है। आपके सहस्र (अनन्त) नेत्र हैं तथा आप हाथमें त्रिशूल धारण करते हैं। आपको बार-बार नमस्कार है। खट्वाङ्ग और दण्ड धारण करनेवाले आप प्रभुको मेरा बारंबार नमस्कार है। भगवन्! आपका रूप अग्निकी प्रचण्ड ज्वालाओं एवं करोड़ों सूर्योंके समान कान्तिमान् है। प्रभो! आपका दर्शन प्राप्त न होनेसे हमलोग जड़ विज्ञानका आश्रय लेकर पशुत्वको प्राप्त हो गये थे। त्रिशूलपाणे! तीन नेत्र आपकी शोभा बढ़ाते हैं। आर्तजनोंका दुःख दूर करना आपका स्वभाव है। आप विकृत मुख एवं आकृति बनाये रहते हैं। सम्पूर्ण देवता आपके शासनवर्ती हैं। आप परम शुद्धस्वरूप, सबके स्रष्टा तथा रुद्र एवं अच्युत नामसे प्रसिद्ध हैं। आप हमपर प्रसन्न हों। इन पूषाके दाँत आपके हाथोंसे भग्न हुए हैं। आपका रूप भयावह है। बृहत्काय वासुकिनागको धारण करनेसे आपका कण्ठदेश अत्यन्त मनोरम प्रतीत हो रहा है। अच्युत! आप विशाल शरीरवाले हैं। हम देवताओंपर अनुग्रह करनेके लिये आपने जो कालकूट विषका पान किया था, उसीसे आपका कण्ठ-भाग नील वर्णका हो गया है। सर्वलोकमहेश्वर! विश्वमूर्ते! आप हमपर प्रसन्न होनेकी कृपा करें। भगके नेत्रको नष्ट करनेमें पटु देवेश्वर! आप इस यज्ञका प्रधान भाग स्वीकार करनेकी कृपा कीजिये। नीलकण्ठ! आप सभी गुणोंसे सम्पन्न हैं। प्रभो! आप प्रसन्न हों और हमारी रक्षा करें। भगवन्! आपका स्वतःसिद्ध स्वरूप गौरवर्णसे शोभा पाता है। कपाली, त्रिपुरारि और उमापति—ये आपके ही नाम हैं। पद्मयोनि ब्रह्मासे प्रकट होनेवाले भगवन्! आप सभी भयोंसे हमारी रक्षा करें। देवेश्वर! आपके श्रीविग्रहके अन्तर्गत हम अनेक सर्ग एवं अङ्गोंसहित सम्पूर्ण वेद, विद्याओं, उपनिषदों तथा सभी अग्नियोंको भी देख रहे हैं। परम प्रभो! भव, शर्व, महादेव, पिनाकी, हर और रुद्र—ये सभी आपके ही नाम हैं। विश्वेश्वर!

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

हम आपको प्रणाम करते हैं। आप हम सबकी रक्षा कीजिये।'*

इस प्रकार देवताओंके स्तुति करनेपर देवाधिदेव भगवान् रुद्र प्रसन्न होकर उनके प्रति बोले—

भगवान् रुद्रने कहा—देवताओ! भगको नेत्र तथा पूषाको दाँत पुनः प्राप्त हो जायँ। दक्षका यज्ञ पूर्ण हो जाय। देवताओ! तुमलोगोंमें पशुत्व आ गया था, उसे भी मैं दूर कर दूँगा। मेरे दर्शनके प्रभावसे देवता उस पशुत्वसे मुक्त होकर शीघ्र ही पशुपतित्वको प्राप्त होंगे। मैं आदि सनातनकालसे सम्पूर्ण विद्याओंका अधीश्वर हूँ, पशुओं (बद्धजीवों)-में मैं उनके अधीश्वररूपमें था, अतः लोकमें मेरा नाम पशुपति होगा। जो मेरी उपासना करेंगे, वे पाशुपतदीक्षासे युक्त होंगे।

भगवान् रुद्रके ऐसा कहनेपर लोकपितामह ब्रह्माजी अत्यन्त स्नेहपूर्वक हँसते हुए उनसे बोले—'रुद्रदेव! आप निश्चय ही जगत्में पशुपति नामसे प्रसिद्ध होंगे। साथ ही यह दक्ष भी आपके सम्बन्धसे शुद्ध होकर संसारमें ख्याति प्राप्त करेगा। सम्पूर्ण संसारद्वारा इसका सम्मान होगा।

परम मेधावी ब्रह्माजी रुद्रसे ऐसा कहकर दक्षसे बोले—'वत्स! मैंने गौरीको तुम्हें पहलेसे सौंप रखा है। उसे तुम इन रुद्रको दे दो।' परम सुन्दरी गौरीने दक्षके घरमें कन्यारूपसे जन्म ग्रहण किया था। ब्रह्माजीके कहनेपर उन्होंने महाभाग रुद्रके साथ उनका विवाह कर दिया। दक्षकन्या गौरीका रुद्रके पाणिग्रहण कर लेनेपर दक्षका सम्मान उत्तरोत्तर बढ़ता गया। जब ब्रह्माजीने रुद्रको निवासके लिये कैलासपर्वत प्रदान किया, तब रुद्र अपने गणोंके साथ कैलासपर्वतपर चले गये। ब्रह्माजी भी दक्षप्रजापतिको साथ लेकर अपनी पुरीमें पधारे। [अध्याय २१]

तृतीया तिथिकी महिमाके प्रसङ्गमें हिमालयकी पुत्रीरूपमें गौरीकी उत्पत्तिका वर्णन और भगवान् शंकरके साथ उनके विवाहकी कथा

मुनिवर महातपा कहते हैं—राजन्! जब भगवान् रुद्र कैलासपर निवास करने लगे तो कुछ समय बाद अपने पिता दक्षसे प्राणपति महादेवके साथ वैरका प्रसङ्ग गौरीको स्मरण हो आया। अब सहसा उनके मनमें रोषका भाव उत्पन्न हो गया। वे सोचने लगीं—'मेरे पिता दक्षने इन देवाधिदेवको यज्ञमें भाग न देकर कितना बड़ा अपराध किया था, जिसके फलस्वरूप मेरे पिताका यज्ञके निमित्त बनाया हुआ नगर तथा उनके यज्ञका भी विध्वंस करना पड़ा। अतएव शिवके अपराधी पितासे उत्पन्न शरीरका मुझे त्याग कर देना चाहिये और तपस्याद्वारा इन महेश्वरकी आराधना कर

* नमो विषमनेत्राय नमस्ते त्र्यम्बकाय च॥
नमः सहस्रनेत्राय नमस्ते शूलपाणये। नमः खट्वाङ्गहस्ताय नमस्ते दण्डधारिणे॥
त्वं देव हुतभुग्ज्वालाकोटिभानुसमप्रभः। अदर्शने वयं देव मूढविज्ञानतोऽधुना॥
नमस्त्रिनेत्रार्तिहराय शम्भो त्रिशूलपाणे विकृतास्यरूप। समस्तदेवेश्वर शुद्धभाव प्रसीद रुद्राच्युत सर्वभाव॥
पूष्णोऽस्य दन्तान्तक भीमरूप प्रलम्बभोगीन्द्र मनोज्ञकण्ठ। विशालदेहाच्युत नीलकण्ठ प्रसीद विश्वेश्वर विश्वमूर्ते॥
भगाक्षिसंस्फोटनदक्षकर्मन् गृहाण भागं मखतः प्रधानम्। प्रसीद देवेश्वर नीलकण्ठ प्रपाहि नः सर्वगुणोपपन्न॥
सिताङ्गरागाप्रतिपन्नमूर्ते कपालधारिंस्त्रिपुरघ्न देव। प्रसीद नः सर्वभयेषु चैवमुमापते पुष्करनालजन्म॥
पश्यामि ते देहगतान् सुरेश सर्गाद्यनेकान् वेदवराननन्त। साङ्गान् सविद्यान् सपदक्रमांश्च सर्वानलांश्च त्वयि देवदेव॥
भव शर्व महादेव पिनाकिन् रुद्र ते हर। नताः स्म सर्वे विश्वेश त्राहि नः परमेश्वर॥
(अध्याय २१। ६९—७७)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

दूसरा जन्म ग्रहण कर इनकी अर्धाङ्गिनी बनकर मुझे इन्हें प्राप्त करना चाहिये। पिता दक्षमें तो बान्धवोचित प्रेमका लेश भी नहीं रह गया है। अतएव अब उनके घर मेरा जाना भी नहीं हो सकता।'

इस प्रकार भलीभाँति विचार करके परम सुन्दरी गौरी तप करनेके उद्देश्यसे गिरिराज हिमालयपर चली गयीं। दीर्घकालतक तपस्या करके उन्होंने अपने शरीरको सुखा डाला। फिर योगाग्निके द्वारा अपने शरीरको दग्धकर वे पर्वतराज हिमालयकी पुत्रीके रूपमें प्रकट हुईं और उमा तथा महाकाली आदि उनके नाम हुए। हिमवान्‌के घरमें परम सुन्दररूपसे सुशोभित होकर वे अवतीर्ण हुईं कि फिर 'भगवान् रुद्र ही मुझे पतिरूपसे प्राप्त हों।' इस संकल्पसे त्रिलोचन भगवान् शंकरका स्मरण करते हुए उन्होंने पुनः कठोर तपस्या आरम्भ कर दी। इस प्रकार जब गिरिराज हिमालयपर दीर्घकालतक तपद्वारा उन्होंने आराधना की तब ब्राह्मणका वेष धारण करके भगवान् शिव वहाँ पधारे। उस समय उनका वृद्ध शरीर था और सभी अङ्ग शिथिल हो रहे थे। साथ ही वे पग-पगपर गिरते-पड़ते चल रहे थे। बड़ी कठिनाईसे वे पार्वतीके पास पहुँचकर बोले—'भद्रे! मैं अत्यन्त भूखा ब्राह्मण हूँ, मुझे कुछ खाने योग्य पदार्थ दो।'

उनके इस प्रकार कहनेपर परम कल्याणमयी शैलेन्द्रनन्दिनी उमाने उन ब्राह्मणसे कहा—'विप्रवर! मैं आपको भोजनार्थ फल आदि पदार्थ दे रही हूँ। आप यथाशीघ्र स्नानकर इच्छानुसार उन्हें ग्रहण करें।' उनके यों कहनेपर वे ब्राह्मणदेवता पासमें ही बहती हुई गङ्गाके जलमें स्नान करनेके लिये उतरे। उन ब्राह्मण-वेषधारी शिवने स्नान करते समय ही स्वयं मायास्वरूप एक भयंकर मकरका रूप धारण कर उन ब्राह्मणका (अपना) पैर पकड़ लिया। फिर पार्वतीको यह सब लीला दिखाते हुए कहने लगे—'दौड़ो-दौड़ो, मैं भारी विपत्तिमें पड़ गया हूँ। इस मकरसे तुम मेरे प्राणोंकी रक्षा करो और जबतक इसके द्वारा मैं नष्ट-भ्रष्ट नहीं कर दिया जाता, तभीतक तुम मुझे बचा लो।'

ब्राह्मणके ऐसा कहनेपर पार्वतीने सोचा—'गिरिराज हिमालय तो मेरे पिता हैं। उनका मैं पितृभावसे स्पर्श करती हूँ और भगवान् शंकरका पति-भावसे! पर मैं तपस्विनी कैसे इन ब्राह्मणदेवताको स्पर्श करूँ? परंतु इस समय जलमें ग्राहद्वारा पकड़े जानेपर भी यदि मैं इन्हें बाहर नहीं खींचती तो निःसंदेह मुझे ब्रह्महत्याका दोष लगेगा। दूसरी बात यह है कि अन्य धर्मजनित त्रुटियों या प्रत्यवायोंका प्रायश्चित्तद्वारा शोधन भी सम्भव है; किंतु इस ब्रह्महत्यादोषका तो शोधक कोई प्रायश्चित्त भी नहीं दीखता।' इस प्रकार मन-ही-मन कह वे तुरंत दौड़कर वहाँ पहुँच गयीं और हाथसे पकड़कर ब्राह्मणको जलसे बाहर खींचने लगीं। इतनेमें वे देखती क्या हैं कि जिन भूतभावन शंकरकी आराधनाके लिये वे तपस्या कर रही थीं, स्वयं वे शंकर ही उनके हाथमें आ गये हैं। इस प्रकार उन्हें देखकर वे लज्जित हो गयीं और पूर्वसमयका त्याग उन्हें स्मरण हो आया। अत्यन्त लज्जाके कारण उन परम सुन्दरी उमाके मुखसे भगवान् शंकरके प्रति कोई वचन नहीं निकल रहा था। वे बिल्कुल मौन हो गयीं। इसपर भगवान् रुद्र मुसकराते हुए कहने लगे—'भद्रे! तुम मेरा हाथ पकड़ चुकी हो, फिर मेरा त्याग करना तुम्हारे लिये उपयुक्त नहीं है। कल्याणि! तुम यदि मेरा पाणिग्रहण निष्फल कर दोगी तो मुझे अब अपने भोजनके लिये ब्रह्मपुत्री सरस्वतीसे कहना पड़ेगा।'

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

'यह उपहासकी परम्परा आगे न बढ़े'—ऐसा सोचकर कुछ लज्जित-सी हुई पार्वती कहने लगीं—'देवाधिदेव! महेश्वर! आप तीनों लोकोंके स्वामी हैं। आपको पानेके लिये मेरा यह प्रयत्न है। पूर्वजन्ममें भी आप ही मेरे पतिदेव थे। इस जन्ममें भी आप ही मेरे पति होंगे, कोई दूसरा नहीं। किंतु अभी मेरे संरक्षक पिता पर्वतराज हिमालय हैं, अब मैं उनके पास जाती हूँ। उन्हें जताकर आप विधिपूर्वक मेरा पाणिग्रहण करें।'

इस प्रकार कहकर परम सुन्दरी भगवती उमा अपने पिता हिमालयके पास गयीं और हाथ जोड़कर उनसे कहा—'पिताजी! मुझे अनेक लक्षणोंसे प्रतीत होता है कि पूर्वजन्ममें भगवान् रुद्र ही मेरे पति रहे हैं। उन्होंने ही दक्षके यज्ञका विध्वंस किया था। वे ही संसारके संरक्षक रुद्र ब्राह्मणका वेष धारण कर तपोवनमें मेरे पास आये और मुझसे भोजनकी याचना की। 'आप स्नान कर आइये'—मेरी इस प्रेरणापर वे वृद्ध ब्राह्मणका वेष बनाये हुए गङ्गामें गये। फिर वहाँ मकरद्वारा ग्रस्त हो जानेपर उन्होंने मुझे सहायताके लिये पुकारा। परंतु पिताजी! मुझे ब्रह्महत्या न लग जाय, इस भयसे मैंने अपने हाथसे उन्हें पकड़ लिया। मेरे पकड़ते ही वे अपने वास्तविक रूपमें प्रकट हो गये और कहने लगे—'देवि! यह तो पाणिग्रहण है। तपोधने! इसमें तुम्हें अन्यथा विचार नहीं करना चाहिये।' उनके ऐसा कहनेपर उनसे स्वीकृति लेकर मैं आपसे पूछने आयी हूँ। अतः इस अवसरपर मेरा जो कर्तव्य हो, उसे आप शीघ्र बतानेकी कृपा कीजिये।'

पार्वतीकी ऐसी बात सुनकर हिमालय बड़े प्रसन्न हुए और अपनी पुत्रीसे कहने लगे—'सुमुखि! मैं आज संसारमें अत्यन्त धन्य हूँ, जो स्वयं भगवान् शंकर मेरे जामाता होनेवाले हैं। तुम्हारे द्वारा मैं सचमुच संततिवान् बन गया। पुत्रि! तुमने मुझको देवताओंका सिरमौर बना दिया है; पर क्षणभर रुकना। मेरे आनेतक थोड़ी प्रतीक्षा करना।'

इस प्रकार कहकर पर्वतराज हिमालय सम्पूर्ण देवताओंके पितामह ब्रह्माजीके पास गये। वहाँ उनका दर्शनकर गिरिराजने नम्रतापूर्वक कहा—'भगवन्! उमा मेरी पुत्री है। आज मैं उसे भगवान् रुद्रको देना चाहता हूँ।' इसपर श्रीब्रह्माजीने भी उन्हें 'दे दो' कहकर अनुमति दे दी।

ब्रह्माजीके ऐसा कहनेपर पर्वतराज हिमालय अपने घरपर गये और तुरंत ही तुम्बुरु, नारद, हाहा और हूहूको बुलाया। फिर किन्नरों, असुरों और राक्षसोंको भी सूचना दी। अनेक पर्वत, नदियाँ, वृक्ष, ओषधिवर्ग तथा छोटे-बड़े अन्य पाषाण भी मूर्ति धारणकर भगवान् शंकरके साथ होनेवाले पार्वतीके विवाहको देखनेके लिये वहाँ आये। उस विवाहमें पृथ्वी ही वेदी बनी और सातों समुद्र ही कलश। सूर्य एवं चन्द्रमा उस शुभ अवसरपर दीपकका कार्य कर रहे थे तथा नदियाँ जल ढोने-परसनेका काम कर रही थीं। जब इस प्रकार सारी व्यवस्था हो गयी, तब गिरिराज हिमालयने मन्दराचलको भगवान् शंकरके पास भेजा। भगवान् शंकरकी स्वीकृतिसे मन्दराचल तत्काल वापस आ गये। फिर तो भगवान् शंकरने विधिपूर्वक उमाका पाणिग्रहण किया। उस विवाहके उत्सवपर पर्वत और नारद—ये दोनों गान कर रहे थे। सिद्धोंने नाचनेका काम पूरा किया था। वनस्पतियाँ अनेक प्रकारके पुष्पोंकी वर्षा कर रही थीं तथा सुन्दर रूपवती अप्सराएँ उच्च स्वरसे गा-गाकर नृत्य करनेमें संलग्न थीं। उस विवाह-महोत्सवमें लोकपितामह चतुर्मुख ब्रह्माजी स्वयं ब्रह्माके स्थानपर विराजमान थे। उन्होंने प्रसन्न

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

होकर उमासे कहा—'पुत्रि! संसारमें तुम-जैसी पत्नी और शंकर-सरीखे पति सबको सुलभ हों।' भगवान् शंकर और भगवती उमा—दोनों एक साथ बैठे थे। उनसे इस प्रकार कहकर ब्रह्माजी अपने धामको लौट आये।

भगवान् वराह कहते हैं—पृथ्वि! रुद्रका प्राकट्य, गौरीका जन्म तथा विवाह—यह सारा प्रसङ्ग राजा प्रजापालके पूछनेपर परम तपस्वी महातपा ऋषिने उन्हें जैसे सुनाया था, वह सम्पूर्ण वृत्तान्त मैंने तुम्हें बता दिया। देवी गौरीके जन्म, विवाहादि—सभी कार्य तृतीया तिथिको ही सम्पन्न हुए थे, अतएव तृतीया उनकी तिथि मानी जाती है। उस तिथिको नमक खाना सर्वथा निषिद्ध है। जो स्त्री उस दिन उपवास करती है, उसे अचल सौभाग्यकी प्राप्ति होती है। दुर्भाग्यग्रस्त स्त्री या पुरुष तृतीया तिथिको लवणके परित्यागपूर्वक इस प्रसङ्गका श्रवण करे तो उसको सौभाग्य, धन-सम्पत्ति और मनोवाञ्छित पदार्थोंकी प्राप्ति होती है, उसे जगत्में उत्तम स्वास्थ्य, कान्ति और पुष्टिका भी लाभ होता है। [अध्याय २२]

गणेशजीकी उत्पत्तिका प्रसङ्ग और चतुर्थी तिथिका माहात्म्य

राजा प्रजापालने पूछा— महामुने! गणपतिका जन्म कैसे हुआ, उन्होंने सगुणरूप कैसे धारण किया? यह संशय मेरे हृदयके लिये कष्टप्रद बन गया है। अतः आप इसे दूर करनेकी कृपा कीजिये।

महातपा बोले—पूर्व समयकी बात है—सम्पूर्ण देवता और तपको ही धन माननेवाले ऋषिगण कार्य आरम्भ करते थे और उसमें उन्हें निश्चय ही सिद्धि प्राप्त हो जाती थी। फिर ऐसी स्थिति आ गयी कि अच्छे मार्गपर चलनेवाले लोग विघ्नका सामना करते हुए किसी प्रकार कार्यमें सफलता पाने लगे, पर निकृष्ट कार्यशील व्यक्तिकी कार्य-सिद्धिमें कोई विघ्न नहीं आता। तब पितरोंसहित सम्पूर्ण देवताओंके मनमें यह चिन्ता उत्पन्न हुई कि विघ्न तो असत् कार्योंमें होना चाहिये। अतः इस विषयपर वे परस्पर विचार करने लगे। इस प्रकार मन्त्रणा करते-करते उन देवताओंके मनमें भगवान् शंकरके पास चलकर इस गुत्थीको सुलझानेकी इच्छा हुई। अतएव कैलास पहुँचकर उन्होंने परम गुरु शंकरको प्रणामकर विनयपूर्वक इस प्रकार प्रार्थना की।

देवता बोले—देवाधिदेव! महादेव! शूलपाणि! त्रिलोचन! भगवन्! हम देवताओंसे भिन्न असुरोंके कार्यमें ही विघ्न उपस्थित करना आपके लिये उचित है, हमारे कार्योंमें नहीं। देवताओंके इस प्रकार कहनेपर भगवान् शंकर अत्यन्त प्रसन्न हुए और वे निर्निमेष दृष्टिसे भगवती उमाको देखने लगे। देवता भी वहीं थे। पार्वतीकी ओर देखते हुए वे मन-ही-मन सोचने लगे—'अरे, इस आकाशका कोई स्वरूप क्यों नहीं दीखता? पृथ्वी, जल, तेज और वायुकी मूर्ति तो चक्षुगोचर होती है; किंतु आकाशकी मूर्ति क्यों नहीं दीखती?' ऐसा सोचकर ज्ञानशक्तिके भण्डार परम पुरुष भगवान् रुद्र हँस पड़े। आकाशकी मूर्ति न देखकर शम्भुने जो हँस दिया, इसका अभिप्राय था—'बहुत पहले ब्रह्माजीके मुखसे वे सुन चुके थे कि शरीरधारी व्यक्तियोंकी ही मूर्ति होती है। आकाशके शरीरधारी न होनेके कारण इसकी मूर्ति असम्भव है। फिर तो उन परब्रह्म रुद्रके द्वारा पृथ्वी, जल, तेज और वायु—इन चारोंके सहयोगसे यह एक अद्भुत कार्य सम्भव हो गया। अभी हँसी बंद भी नहीं हुई थी, इतनेमें एक परम तेजस्वी कुमार प्रकट हो गया। उसका

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

मुख तेजसे चमक रहा था। उस तेजसे दिशाएँ चमकने लगीं। भगवान् शिवके सभी गुण उसमें संनिहित थे। ऐसा जान पड़ता था, मानो साक्षात् दूसरे रुद्र ही हों। वह कुमार एक महान् आत्मा था। वह प्रकट होकर अपनी सस्मित दृष्टि, अद्भुत कान्ति, दीप्त मूर्ति तथा रूपके कारण देवताओंके मनको मोहित कर रहा था। उसका रूप बड़ा ही आकर्षक था। भगवती उमा उसे निर्निमेष दृष्टिसे देखने लगीं। यह अद्भुत कार्य देखकर तथा 'स्त्रीका स्वभाव चञ्चल होता है, सम्भवतः उमाकी आँखें भी इस अनुपम सुन्दर बालकपर मुग्ध हो गयी हैं' यह मानकर भगवान् रुद्रके मनमें क्रोधका आविर्भाव हो गया। अतः उन परम प्रभुने गणेशजीको शाप दे दिया—'कुमार! तुम्हारा मुख हाथीके मुख-जैसा और पेट लम्बा होगा। सर्प ही तुम्हारे यज्ञोपवीतका काम देंगे—यह नितान्त सत्य है।'

इस प्रकार गणेशजीको शाप देनेपर भी भगवान् शंकरका रोष शान्त नहीं हुआ। उनका शरीर क्रोधसे काँप रहा था। वे उठकर खड़े हो गये। त्रिशूलधारी रुद्रका शरीर जैसे-जैसे हिलता, वैसे-वैसे उनके श्रीविग्रहके रोमकूपोंसे तेजोमय जल निकलकर बाहर गिरने लगा। उससे दूसरे अनेक विनायक उत्पन्न हो गये। उन सभीके मुख हाथीके मुख-जैसे थे तथा उनके शरीरकी आभा काले खैर-वृक्ष या अञ्जनके समान थी। वे हाथोंमें अनेक प्रकारके अस्त्र-शस्त्र लिये हुए थे। अब देवता व्यग्र मनसे सोचने लगे—'अरे, यह क्या हो गया? एक ही बालक ऐसा अतुलित महान् कार्य कर रहा है। हम देवताओंकी अभिलाषा अनायास ही पूरी हो गयी। पर इसके चारों ओर ये वैसे ही गण कहाँसे आ पहुँचे?'

उस समय उन विनायकोंके कारण देवताओंकी चिन्ता अत्यधिक बढ़ गयी। पृथ्वीमें क्षोभ उत्पन्न हो गया। तब चार मुखोंसे शोभा पानेवाले ब्रह्माजी अनुपम विमानपर विराजमान होकर आकाशमें आये और यों कहा—'देवताओ! तुम लोग धन्य हो। यों तुम सभी तीन नेत्रवाले अद्भुत रूपधारी भगवान् रुद्रके कृपापात्र हो। साथ ही तुमने असुरोंके कार्यमें विघ्न उत्पन्न करनेवाले गणेशजीको प्रणाम करनेका सौभाग्य प्राप्त किया है।' उनसे इस प्रकार कहनेके पश्चात् ब्रह्माजीने भगवान् रुद्रसे कहा—'विभो! आपके मुखसे प्रकट हुआ जो यह बालक है, इसे ही आप इन विनायकोंका स्वामी बना दें। ये शेष दूसरे विनायक इनके अनुगामी—अनुचर बनकर रहें। प्रभो! साथ ही मेरी प्रार्थना है कि आपके वरप्रभावसे आकाशको भी शरीरधारी बनकर पृथ्वी आदि चारों महाभूतोंमें रहनेका सुअवसर मिल जाय। इससे एक ही आकाश अनेक प्रकारसे व्यवस्थित हो सकता है।'

इस प्रकार भगवान् रुद्र और ब्रह्माजी बातें कर ही रहे थे कि विनायक वहाँसे चले गये। फिर पितामहने शम्भुसे कहा—'देव! आपके हाथमें अनेक समुचित अस्त्र हैं। आप ये अस्त्र तथा वर अब इस बालकको प्रदान करें, यह मेरी प्रार्थना है।' ऐसा कहकर ब्रह्माजी वहाँसे चले गये। तब भगवान् शंकरने अपने सुपुत्र गणेशजीसे कहा—'पुत्र! विनायक, विघ्नहर, गजास्य और भवपुत्र—इन नामोंसे तुम प्रसिद्ध होगे। क्रूर-दृष्टिवाले ये विनायक बड़े उग्र स्वभावके हैं। पर ये सब तुम्हारी सेवा करेंगे। प्रकृष्ट यज्ञ, दान आदि शुभ कर्मके प्रभावसे शक्तिशाली बनकर ये कार्योंमें सिद्धि प्रदान करेंगे। देवताओं, यज्ञों तथा अन्य कार्योंमें भी सबसे श्रेष्ठ स्थान तुम्हें प्राप्त होगा। सर्वप्रथम पूजा पानेका अधिकार तुम्हारा है। यदि ऐसा न हुआ तो तुम्हारे द्वारा उस कार्यकी सफलता बाधित होगी।'

महाराज! जब ये बातें समाप्त हो गयीं तो

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भगवान् शंकरने देवताओंके साथ जलपूर्ण सुवर्ण-कलशोंके विभिन्न तीर्थोंके जलसे उन गणेशजीका अभिषेक किया। राजन्! इस प्रकार जलसे अभिषिक्त होकर विनायकोंके स्वामी भगवान् गणेशकी अद्भुत शोभा होने लगी। उन्हें अभिषिक्त देखकर सभी देवता भगवान् शंकरके सामने ही उनकी इस प्रकार स्तुति करने लगे।

देवता बोले—गजानन! आप गणोंके स्वामी हैं। आपका एक नाम विनायक है। आप प्रचण्ड पराक्रमी हैं। आपको हमारा निरन्तर नमस्कार है। भगवन्! विघ्न दूर करना आपका स्वभाव है। आप सर्पकी मेखला पहनते हैं। भगवान् शंकरके मुखसे आपका प्रादुर्भाव हुआ है। लम्बे पेटसे आपकी आकृति उद्भासित होती है। हम सम्पूर्ण देवता आपको प्रणाम करते हैं। आप हमारे सभी विघ्न सदाके लिये शान्त कर दें।*

राजन्! जब इस प्रकार भगवान् रुद्रने महान् पुरुष श्रीगणेशजीका अभिषेक कर दिया और देवताओंद्वारा उनकी स्तुति सम्पन्न हो गयी, तब वे भगवती पार्वतीके पुत्रके रूपमें शोभा पाने लगे। गणाध्यक्ष गणेशजीकी (जन्म एवं अभिषेक आदि) सारी क्रियाएँ चतुर्थी तिथिके दिन ही सम्पन्न हुई थीं। अतएव तभीसे यह तिथि समस्त तिथियोंमें परम श्रेष्ठ स्थानको प्राप्त हुई। राजन्! जो भाग्यशाली मानव इस तिथिको तिलोंका आहारकर भक्तिपूर्वक गणपतिकी आराधना करता है, उसपर वे अत्यन्त शीघ्र प्रसन्न हो जाते हैं—इसमें कोई संशय नहीं है। महाराज! जो व्यक्ति इस स्तोत्रका पठन अथवा श्रवण करता है, उसके पास विघ्न कभी नहीं फटकते और न उसके पास लेशमात्र पाप ही शेष रह जाता है।

[अध्याय २३]

सर्पोंकी उत्पत्तिका प्रसङ्ग और पञ्चमी तिथिकी महिमा

पृथ्वीने पूछा—मेरा उद्धार करनेवाले भगवन्! आपके श्रीविग्रहका स्पर्श पाकर महान् विक्रमशाली सर्प कैसे मूर्तिमान् बन गये तथा उन्हें आपने क्यों बनाया?

भगवान् वराह बोले—वसुंधरे! गणपतिके जन्मका वृत्तान्त सुननेके पश्चात् राजा प्रजापालने यही प्रसङ्ग बड़ी मीठी वाणीमें उत्तमव्रती महातपासे पूछा था।

राजा प्रजापालने पूछा—भगवन्! कश्यपजीके वंशसे सम्बन्धित नाग तो बड़े ही दुष्ट प्रकृतिके थे। फिर उन्हें विशाल शरीर धारण करनेका अवसर कैसे मिल गया? यह प्रसङ्ग आप मुझे बतानेकी कृपा कीजिये।

मुनिवर महातपाजी कहते हैं—राजन्! मरीचि ब्रह्माजीके प्रथम मानस पुत्र थे। उनके पुत्र कश्यपजी हुए। मन्द मुसकानवाली दक्षकी पुत्री कद्रू उनकी भार्या हुई। उससे कश्यपजीके अनन्त, वासुकि, महाबली कम्बल, कर्कोटक, पद्म, महापद्म, शङ्ख, कुलिक और पापराजिल आदि नामोंसे विख्यात अनेक पुत्र हुए। राजेन्द्र! ये प्रधान सर्प कश्यपजीके पुत्र हैं। बादमें इन सर्पोंकी संतानोंसे यह सारा संसार ही भर गया। वे बड़े कुटिल और नीच कर्ममें रत थे। उनके मुँहमें अत्यन्त तीखा विष भरा था। वे मनुष्योंको अपनी दृष्टिमात्रसे

* नमस्ते गजवक्त्राय नमस्ते गणनायक। विनायक नमस्तेऽस्तु नमस्ते चण्डविक्रम॥
नमोऽस्तु ते विघ्नहर्त्रे नमस्ते सर्पमेखल। नमस्ते रुद्रवक्त्रोत्थ प्रलम्बजठराश्रित॥
सर्वदेवनमस्कारादविघ्नं कुरु सर्वदा। (अध्याय २३। ३३-३४)

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

या काटकर भी भस्म कर सकते थे। राजन्! उनका दंश शब्दकी ही तरह तीव्रगामी था। उससे भी मनुष्योंकी मृत्यु हो जाती। इस प्रकार प्रजाका प्रतिदिन दारुण संहार होने लगा। यों अपना भीषण संहार देखकर प्रजावर्ग एकत्र होकर सबको शरण देनेमें समर्थ परम प्रभु भगवान् ब्रह्माजीकी शरणमें गये। राजन्! इसी उद्देश्यको सामने रखकर प्रजाओंने कमलपर प्रकट होनेवाले ब्रह्माजीसे कहा—'भगवन्! आपमें असीम शक्ति है। इन तीखे दाँतोंवाले सर्पोंसे आप हमारी रक्षा करें। इनकी दृष्टि पड़ते ही मनुष्य तथा पशुसमूह भस्म हो जाते हैं—यह प्रतिदिनकी बात हो गयी है। भगवन्! इन सर्पोंद्वारा आपकी सृष्टिका संहार हो रहा है। महामते! आप इसकी जानकारी प्राप्तकर ऐसा प्रयत्न करें कि यह दुःखद परिस्थिति शीघ्र दूर हो जाय।'

ब्रह्माजी बोले—प्रजापालो! तुम भयसे घबड़ा गये हो। मैं तुम्हारी रक्षा अवश्य करूँगा। पर अब तुम सभी अपने-अपने स्थानपर चलो।

अव्यक्तमूर्ति ब्रह्माजीके इस प्रकार कहनेपर वे प्रजाएँ वापस आ गयीं। उस समय ब्रह्माजीके मनमें असीम क्रोध उत्पन्न हो गया। उन्होंने वासुकि प्रभृति प्रमुख सर्पोंको बुलाया और उन्हें शाप दे दिया।

ब्रह्माजीने कहा—नागो! तुम मेरे द्वारा उत्पन्न किये हुए मनुष्योंकी मृत्युके कारण बन गये हो। अतः आगे स्वायम्भुव मन्वन्तरमें तुम्हारा अपनी ही माताके शापद्वारा घोर संहार होगा, इसमें कोई संदेह नहीं है।

जब ब्रह्माजीने इस प्रकार उन श्रेष्ठ सर्पोंसे कहा तब सर्पोंके शरीरमें भयसे कँपकँपी मच गयी। वे उन प्रभुके पैरोंपर गिर पड़े और ये वचन कहे।

नाग बोले—भगवन्! आपने ही तो कुटिल जातिमें हमारा जन्म दिया है। विष उगलना, दुष्टता करना, किसी वस्तुको देखकर उसे नष्ट कर देना—यह हमारा अमिट स्वभाव आपके द्वारा ही निर्मित है। अब आप ही उसे शान्त करनेकी कृपा करें।

ब्रह्माजीने कहा—मैं मानता हूँ, तुम्हें मैंने उत्पन्न किया है और तुममें कुटिलता भी भर दी है, पर इसका अभिप्राय यह नहीं है कि तुम निर्दय होकर नित्य मनुष्योंको खाया करो।

सर्पोंने कहा—भगवन्! आप हमें अलग-अलग रहनेके लिये कोई सुनिश्चित स्थानकी व्यवस्था कर दीजिये और हमारे द्वारा डँसे जानेकी स्थिति एवं नियम भी बता दें।

राजन्! नागोंकी यह बात सुनकर ब्रह्माजीने कहा—सर्पो! तुमलोग मनुष्योंके साथ भी रह सको—इसके लिये मैं स्थानका निर्णय कर देता हूँ। तुम सबलोग मनको एकाग्रकर मेरी आज्ञा सुनो—'सुतल, वितल और पाताल—ये तीन लोक कहे गये हैं। तुम्हें रहनेकी इच्छा हो तो वहीं निवास करो। वहाँ मेरी आज्ञा तथा व्यवस्थासे अनेक प्रकारके भोग तुम्हें भोगनेके लिये प्राप्त होंगे। रातके सातवें पहरतक तुम्हें वहाँ रहना है। फिर वैवस्वत मन्वन्तरके आरम्भमें कश्यपजीके यहाँ तुम्हारा जन्म होगा। देवतालोग तुम्हारे बन्धु-बान्धव होंगे। बुद्धिमान् गरुडसे तुम्हारा भाईपनेका सम्बन्ध होगा। उस समय कारणवश तुम्हारी सारी संतान (जनमेजयके यज्ञमें) अग्निके द्वारा जलकर स्वाहा हो जायगी। इसमें निश्चय ही तुम्हारा कोई दोष न होगा। जो सर्प अत्यन्त दुष्ट और उच्छृङ्खल होंगे, उन्हींकी उस शापसे जीवनलीला समाप्त होगी। जो ऐसे न होंगे, वे जीवित रहेंगे। हाँ, अपकार करनेपर या जिनका काल ही आ गया

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

हो, उन मनुष्योंको समयानुसार निगलने या काटनेके लिये तुम स्वतन्त्र हो। गरुडसम्बन्धी मन्त्र, औषध और बद्ध गारुडमण्डलद्वारा दाँत कुण्ठित करनेकी कलाएँ जिन्हें ज्ञात होंगी, उनसे निश्चय ही तुम्हें डरकर रहना चाहिये, अन्यथा तुम लोगोंका विनाश निश्चित है।'

ब्रह्माजीके ऐसा कहनेपर वे सम्पूर्ण सर्प पृथ्वीके नीचे पाताललोकमें चले गये। इस प्रकार ब्रह्माजीसे शाप एवं वरदान पाकर वे पातालमें आनन्दपूर्वक निवास करने लगे। ये सारी बातें उन नाग महानुभावोंके साथ पञ्चमी तिथिके दिन ही घटित हुई थीं। अतः यह तिथि धन्य, प्रिय, पवित्र और सम्पूर्ण पापोंका संहारक सिद्ध हो गयी। इस तिथिमें जो खट्टे पदार्थके भोजनका परित्याग करेगा और दूधसे नागोंको स्नान करायेगा, सर्प उसके मित्र बन जायँगे। [अध्याय २४]

षष्ठी तिथिकी महिमाके प्रसङ्गमें स्वामी कार्तिकेयके जन्मकी कथा

राजा प्रजापालने कहा— द्विजवर! मेरा एक प्रश्न यह भी है कि अहंकारसे कार्तिकेयकी उत्पत्ति कैसे हुई? महामते! आप मेरे संदेहको दूर करनेकी कृपा कीजिये।

मुनिवर महातपा बोले— राजन्! सम्पूर्ण तत्त्वोंमें जिन्हें प्रधान स्थान प्राप्त है, उन्हें परम पुरुष परमात्मा कहा जाता है। सबके आरम्भमें उन्हींसे अव्यक्ततत्त्वकी उत्पत्ति हुई। ये तत्त्व तीन प्रकारके हैं। परम पुरुष और अव्यक्तके योगसे महत्तत्त्वका प्रादुर्भाव हुआ। इसी महत्तत्त्वको अहंकार भी कहते हैं। इनमें जो पुंस्तत्त्व है, वह भगवान् विष्णु अथवा शिव नामसे प्रसिद्ध है। अव्यक्तप्रकृति भगवती उमादेवी या कमलनयना लक्ष्मी हैं। उन्हीं भगवान् शंकर और उमाके संयोगसे अहंकारकी उत्पत्ति हुई। वे ही सेनापति कार्तिकेय हैं। महामते राजन्! मैं अब उन कार्तिकेयकी उत्पत्तिका प्रसङ्ग कहता हूँ, तुम उसे सुनो।

सर्वप्रथम एकमात्र भगवान् नारायण ही विराजमान थे, फिर उनसे ब्रह्माजीकी उत्पत्ति हुई। तत्पश्चात् स्वायम्भुव मनु तथा मरीचि और सूर्य आदि प्रकट हुए। फिर इन देवताओं, दानवों, गन्धर्वों, मनुष्यों, पशुओं और पक्षियोंकी सृष्टि हुई। यही सम्पूर्ण प्राणियोंकी सृष्टि कही गयी है। सृष्टिका विस्तार हो जानेपर देवताओं और दानवोंमें एक-दूसरेको परास्त करनेकी इच्छासे सदा युद्ध होने लगा; क्योंकि उन दोनों दलोंमें अपार बल था और उनमें सदा वैरकी भावना बनी रहती थी। दैत्योंके सेनाध्यक्ष बड़े बलवान् थे, जिन्हें युद्धमें कोई हरा नहीं सकता था। उनके नाम इस प्रकार हैं—हिरण्यकशिपु, हिरण्याक्ष, महासुर विप्रचित्ति, विचित्र, भीमाक्ष और क्रौञ्च। इन सभी वीरोंके बलकी सीमा न थी। उस घोर संग्रामके अवसरपर देवसेनामें उपस्थित देवता दानवोंके तीक्ष्ण बाणोंसे प्रतिदिन हार रहे थे। उनकी पराजय देखकर बृहस्पतिजीने कहा—'देवताओ! तुम्हारी सेनामें कोई सेनाध्यक्ष नहीं है। केवल एक इन्द्रसे इस सेनाकी रक्षा हो सके—यह नितान्त असम्भव है। अतः तुमलोग अपने लिये किसी सेनाध्यक्षका अन्वेषण करो। अब इसमें देर करना ठीक नहीं है।'

बृहस्पतिजीके ऐसा कहनेपर देवता ब्रह्माजीके पास गये। उन्होंने व्याकुल होकर उनसे कहा—'भगवन्! हमें आप कोई सेनाध्यक्ष देनेकी कृपा करें।' इसपर ब्रह्माजीने ध्यान लगाकर देखा—'इन देवताओंके लिये मुझे क्या करना चाहिये?' इतनेमें उनका ध्यान भगवान् शंकरकी ओर गया और फिर सभी देवता, गन्धर्व, ऋषि, सिद्ध एवं

Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

चारण ब्रह्माजीको आगे करके कैलास पर्वतको चले। वहाँ पशुपति भगवान् शंकरका दर्शनकर अनेक प्रकारके स्तोत्रोंद्वारा सभीने उनकी स्तुति आरम्भ कर दी।

देवता बोले—महेश्वर! हम समस्त देवता आपकी शरणमें आये हैं। भूतभावन! आप त्रिनेत्र, भगवान् शंकर, उमापति, विश्वपति, मरुत्पति और जगत्पति नामसे विख्यात हैं! आपको हमारा प्रणाम है। प्रभो! आप हमारी रक्षा करें। भगवन्! आपके जटापुञ्जके अग्रभागपर बैठे हुए चन्द्रमाकी किरणोंके प्रकाशसे तीनों जगत् स्वच्छ हो रहे हैं! आप ही अच्युत, त्रिशूलपाणि और पुरुषोत्तम कहलाते हैं। दैत्योंद्वारा उत्पन्न भय हमारे ऊपर आ गया है। आप उससे हमारी रक्षा करनेकी कृपा कीजिये। श्रेष्ठ देवताओंमें भी परम श्रेष्ठ प्रभो! आदिदेव, पुरुषोत्तम, हर, भव, महेश, त्रिपुरान्तक, विभु, भगदेवताके नेत्र हरनेवाले, दैत्यरिपु, पुरातन और वृषभध्वज—इस प्रकार आपके अनन्त नाम हैं। भगवन्! हमारी रक्षामें आप ही सक्षम हैं। गिरिजापति प्रभो! पर्वतपत्नी मैनाके आप वात्सल्य-भाजन हैं! देवेश्वर! अच्युत, गणेश, भूतेश, शिव, अक्षय, अयन और दैत्यवरान्तक आपकी संज्ञाएँ हैं। भगवन्! आप हमारी रक्षा करें। पृथ्वी आदि पाँच तत्त्वोंमें आप प्रतिष्ठित हैं। आपके प्रधान गुण भी पाँच हैं। विशेषता यह है कि आप आकाशमें तो केवल ध्वनिरूपसे लीन रहते हैं, अग्निमें शब्द एवं रूप—इन दो गुणोंसे, वायुमें तीन रूपोंसे, जलमें शब्द, स्पर्श, रूप, रस—इन चार रूपोंसे और पृथ्वीमें गन्धसहित पाँच रूपोंसे विराजते हैं। भगवन्! अग्नि आपका स्वरूप है। वृक्ष, पत्थर और तिल आदिमें आप साररूपसे स्थित हैं। भगवन्! आप महान् शक्तिशाली पुरुष हैं। इस समय दैत्योंद्वारा हमें अत्यन्त दुःख भोगना पड़ रहा है। अतः आप हमारी रक्षा करें। त्रिलोचन! जिस समय यह सारा विश्व सृष्टिशून्य था तथा ये सूर्य, चन्द्रमा, इन्द्र आदि भी नहीं थे, उस समय त्रिनेत्र! सभी प्रमाणोंसे परे, समस्त बाधाओंसे वर्जित केवल आपकी ही सत्ता विराजित थी। भगवन्! आप कपालकी माला पहनते हैं। द्वितीयाके चन्द्रमा आपके मस्तककी शोभा बढ़ाते हैं। श्मशानभूमिमें आप निवास करते हैं। भस्मसे आपकी अनुपम शोभा होती है। आप शेषनागका यज्ञोपवीत पहनते हैं। देवेश्वर! मृत्युञ्जय! आप अपनी तीव्र बुद्धिके सहारे हमारी रक्षा करें। भगवन्! आप पुरुष हैं और ये श्रीगिरिजा अर्द्ध-देहरूपमें आपकी शक्ति हैं। आपमें ही यह जगत् स्थित है। आहवनीय आदि अग्नियोंने आपके तीनों नेत्रोंमें स्थान पाया है। समस्त सागर तथा पर्वतोंसे निकलकर समुद्रतक जानेवाली नदियाँ आपकी जटाएँ हैं। आप विशुद्ध ज्ञानघन हैं। जिनकी दृष्टि दूषित है, वे ही आपको भौतिकरूपमें देखते हैं। जगत्के उत्पत्तिकर्ता भगवान् नारायण तथा चार मुखोंसे शोभा पानेवाले ब्रह्मा भी आप ही हैं। सत्त्व आदि तीनों गुणों, आहवनीय, आवसथ्य आदि तीनों अग्नियों तथा कृत-त्रेता आदि युगोंके भेदसे आप त्रिमूर्ति बन जाते हैं। प्रभो! ये प्रधान देवता आपकी सहायता चाहते हैं। ये आपको अपना तोषक एवं रक्षक कहते हैं। क्योंकि रुद्र! विश्वका भरण-पोषण करना आपका स्वभाव है। अतः भस्मको भूषणरूपमें धारण करनेवाले प्रभो! आप हमारी रक्षा करें।

मुनिवर महातपा कहते हैं— राजन्! देवताओंके इस प्रकार स्तुति करनेपर पशुपति भगवान् शंकर स्थिर होकर बोले—'देवताओ! आपका क्या कार्य है? शीघ्र बतलाएँ।'

देवगण बोले—देवेश! दानवोंके वधके लिये

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

आप हमें एक सेनापति प्रदान करनेकी कृपा कीजिये। ब्रह्माजीकी अध्यक्षतामें रहनेवाले हम सभी देवताओंका इस समय इसीमें कल्याण है।

भगवान् रुद्रने कहा—देवगण! आपलोग स्वस्थ एवं निश्चिन्त हो जायँ। अभी थोड़ी देरमें मैं आपलोगोंको सेनापति देता हूँ।

राजन्! यों कहकर भगवान् रुद्रने देवताओंको जानेकी आज्ञा दे दी और पुत्रोत्पत्तिके निमित्त अपने विग्रहमें रहनेवाली शक्तिको प्रेरित किया। उनके द्वारा शक्तिके क्षुब्ध होते ही एक कुमार प्रकट हो गया। उसकी प्रभा ऐसी थी, मानो तपता हुआ सूर्य ही हो। वह अपनी जन्मजात शक्तिको इस प्रकार प्रकाशित कर रहा था, मानो वह शक्ति ज्ञानमय बनकर एकमात्र उसीके पास पुञ्जीभूत हो गयी है। राजेन्द्र! उस कुमारकी उत्पत्तिसे सम्बन्धित अनेक प्रकारकी कथाएँ हैं। बहुत-से मन्वन्तरों तथा कल्पोंमें देवताओंके सेनापति होनेके विविध प्रसङ्ग हैं। भगवान् शंकरके शरीरमें अहंकाररूपसे जिन देवताओंकी प्रसिद्धि थी, वे सभी देवता प्रयोजनवश देवसेनापति बनकर शोभा पाने लगे। उस कुमारके उत्पन्न हो जानेपर स्वयं ब्रह्माजी देवताओंके साथ आये और उन देवाधिदेव भगवान् शंकरकी पूजा की। समस्त देवताओं, ऋषियों, सिद्धों और भगवान् शंकरने उस सेनापति होनेवाले बालकको पाल-पोसकर बड़ा किया। तब उस बालकने देवताओंसे कहा—'आपलोग मुझे दो सहायक तथा कुछ खिलौने दें।' उस समय भगवान् रुद्रने उस बालककी बात सुनकर यह वचन कहा—'पुत्र! तुम्हें खेलनेके लिये कुक्कुट तथा सेवा-सहयोगके लिये शाख एवं विशाख नामवाले दो अनुचर देता हूँ। कुमार! तुम भूत, ग्रह एवं विनायकोंके नेता बनो और देवताओंकी सेनाके सेनापति हो जाओ।' राजन्! भगवान् शंकरके ऐसा कहनेपर सभी देवगण प्रसन्न हो अभिलषित वाक्योंका उच्चारण करके सेनाध्यक्ष भगवान् स्कन्दकी स्तुति करने लगे।

देवगण बोले—प्रभो! आप भगवान् शंकरके सुपुत्र हैं। आप हमारी सेनाकी अध्यक्षता स्वीकार करनेकी कृपा करें। आप षण्मुख, स्कन्द, विश्वेश, कुक्कुटध्वज, पावकि, शत्रुओंको कम्पित करनेवाले, कुमारेश, बालग्रहानुग, शत्रुओंको परास्त करनेवाले, क्रौञ्चविध्वंसक (क्रौञ्चनामक पर्वतको, जो आसाममें स्थित है, विदीर्ण करनेवाले), कृत्तिकानन्दन, शिवकुमार, भूतों तथा ग्रहोंके स्वामी, अग्निनन्दन तथा भूतभावन भगवान् शंकरकी संतान हैं। त्रिलोचन! आपको हमारा नमस्कार है।

राजन्! देवताओंके इस प्रकार प्रार्थना करनेपर रुद्रकुमार भगवान् स्कन्दकी आकृति तेजीसे बढ़ने लगी। फिर तो वे बारह आदित्योंके समान तेजस्वी एवं पराक्रमी हो गये और उनके तेजसे तीनों लोकोंमें ताप छा गया।

राजा प्रजापालने पूछा—गुरो! आपने स्कन्दको कृत्तिका-पुत्र कैसे कहा है? अथवा वे कुमार, पावकि और षण्मातृनन्दन क्यों कहे जाते हैं? इसका कारण मुझे बतानेकी कृपा करें।

मुनिवर महातपा कहते हैं—राजन्! मन्वन्तरके प्रारम्भमें कार्तिकेयकी जिस प्रकार उत्पत्ति हुई थी, वह प्रसङ्ग मैंने बताया है। देवतालोग तो भूत और भविष्यकी बातें भी जानते हैं। अतएव उनके द्वारा इन गुणद्योतक नामोंका उच्चारण हुआ है। अग्निके पुत्र होनेसे इनका नाम 'पावकि' हुआ है। यद्यपि इनकी माता गौरी हैं, किंतु जन्ममें कृत्तिकादि छः माताओंने इन्हें दुग्ध-पान कराकर पाला था, अतः ये 'कार्तिकेय' कहलाये। महाराज! तुम्हारे प्रश्नका इस प्रकार समाधान हो गया।

CC-0. In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

आत्मविद्यारूपी अमृतका यह विषय अत्यन्त गुह्य है। भगवान् शंकरके अहंकारका यह मूर्तरूप है। सम्पूर्ण पापोंके प्रशमन करनेवाले स्वयं भगवान् शंकर ही स्कन्दरूपमें प्रकट हुए थे।

पितामह ब्रह्माजीने इनके अभिषेकके समय इन्हें षष्ठी तिथि प्रदान की थी। अतः जो व्यक्ति इस तिथिमें संयमपूर्वक केवल फलके आहारपर रहकर इनकी पूजा करता है, उसे यदि पुत्र न हो तो पुत्रकी प्राप्ति अथवा निर्धन हो तो धनकी प्राप्ति हो जाती है। इतना ही नहीं, मनुष्य मनसे भी जिन-जिन वस्तुओंकी इच्छा करेगा, वह उसे सुलभ हो जायगी। जो पुरुष स्वामी कार्तिकेयके उपर्युक्त गुणनामपूर्ण स्तोत्रका पाठ करता है, उसके घरमें बच्चोंका सदा कल्याण होता है और वे नीरोग रहते हैं।

[अध्याय २५]

सप्तमी तिथिकी महिमाके प्रसङ्गमें आदित्योंकी उत्पत्तिकी कथा

राजा प्रजापालने पूछा—ब्राह्मणश्रेष्ठ! दिव्य ज्योतिःपुञ्जका शरीर-धारण बड़े आश्चर्यकी बात है। कृपया मुझ शरणागतकी इस शङ्काका आप निराकरण करें।

मुनिवर महातपाजी कहने लगे—राजन्! विज्ञानात्मा, सनातन ज्ञानशक्तिको जब किसी दूसरी शक्तिकी अपेक्षा हुई तो उसके शरीरसे एक प्रकाशमान तेज निकल पड़ा, जो सूर्य कहलाया। यह उन महान् पुरुषका ही एक दूसरा रूप है। फिर उस मूर्तिमें सम्पूर्ण तेज स्थान पा गये। तब उससे तीनों लोकोंमें प्रकाश फैल गया। उस तेजमें अखिल महर्षियोंसहित सम्पूर्ण देवता और सिद्ध अधिष्ठित हैं। इसीलिये उन प्रभुको स्वयम्भू कहा जाता है। उन्हींसे सूर्यका प्राकट्य हुआ। वे ही स्वयं सूर्यरूपसे लक्षित हैं। उस विग्रहमें तुरंत तेजोंका समावेश हो गया। अतः वे परम तेजस्वी शरीरवाले बन गये। वेदवादी मुनिगण इसी तेजको सूर्य आदि नामोंसे व्यवहृत करते हैं। जब वे आकाशमें ऊपर उठकर सभी लोकोंको प्रकाशित करने लगे, तब उनका अनुगुण नाम 'भास्कर' पड़ गया। इसी प्रकार चारों ओर प्रकाश फैलानेके कारण इनकी 'प्रभाकर' नामसे भी प्रसिद्धि हुई। दिवा और दिवस—ये दोनों शब्द एक ही अर्थके बोधक हैं। इनके द्वारा दिवसका निर्माण हुआ, अतः ये दिवाकर कहलाये। सम्पूर्ण संसारके आदिमें ये विराजते थे, अतः इन्हें आदित्य कहते हैं। फिर इन्हीं भगवान् सूर्यके तेजसे भिन्न-भिन्न बारह आदित्य उत्पन्न हुए। वैसे प्रधानतया एक ही रूपमें ये जगत्में घूमते रहते हैं। जब इनके शरीरमें स्थान पाये हुए देवताओंने देखा कि ये ही परब्रह्म परमेश्वर जगत्में व्याप्त होकर तेज फैला रहे हैं, तब वे श्रीविग्रहसे बाहर निकल आये और भगवान्की इस प्रकार स्तुति करने लगे।

देवता बोले—भगवन्! आपसे जगत्की सृष्टि होती है। आपके द्वारा ही इस विश्वका पालन और संहार होता है। आप आकाशमें ऊँचे जाकर निरन्तर विश्वमें चक्कर लगाते हैं। ऐसे प्रभुकी हम सदा उपासना करते हैं। जगत्की रचना हो जानेपर प्रतापी सूर्यका रूप धारणकर आप सर्वत्र तेज भर देते हैं। जिसे सात घोड़े खींचते हैं, जिसकी कालरूपी धुरी है और जो बड़े वेगसे चलता है, ऐसा रथ आपकी सवारी है। प्रभो! आप प्रभाकर और रवि कहलाते हैं। चर और अचर—सम्पूर्ण संसारकी आत्मा आप ही हैं। सिद्ध पुरुष कहते हैं कि ब्रह्मा, वरुण, यम, भूत और भविष्य—सब कुछ आप ही हैं। भगवन्! वेद

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth S. Varah Puran_Section_4_2_Back

आपकी मूर्ति हैं। अन्धकार दूर करना आपका स्वभाव है। आप वेदान्त आदि शास्त्रोंकी सहायतासे ही जाने जाते हैं। यज्ञोंमें विष्णुके रूपसे आपके ही निमित्त हवन होता है। हम सभी देवता आपकी शरणमें आये हैं। आप प्रसन्न होकर सदा हमारी रक्षा करें। देवेश्वर! अब हमलोगोंके द्वारा भक्तिपूर्वक की हुई आपकी स्तुति सम्पन्न हो गयी। प्रभो! विशेष आग्रह है कि आप हमारी रक्षाका प्रबन्ध करें।

इस प्रकार देवताओंके स्तुति करनेपर भगवान् सूर्यने तेजोमयी मूर्तिको सौम्य बना लिया और उनके सामने शीघ्र ही साधारण प्रकाश फैलाने लगे। (उस अवसरपर देवताओंने कहा—) 'भगवन्! इस सम्पूर्ण देवगणमें बेचैनी उत्पन्न हो गयी थी। अब आपकी कृपासे सभी शान्तिका अनुभव कर रहे हैं।' (महातपा मुनि कहते हैं—राजन्!) सप्तमी तिथिके दिन भगवान् सूर्यका प्राकट्य हुआ था, अतः इस तिथिको उपवास करके जो पुरुष भक्तिपूर्वक सूर्यकी पूजा करता है, भास्कररूपधारी प्रभु उसकी इच्छाके अनुसार फल प्रदान कर देते हैं। राजन्! सूर्यसे सम्बन्धित यह कथा बहुत पुरानी है, जिसे तुम सुन चुके। अब आदि मन्वन्तरमें हुई (मातृकाओंकी उत्पत्तिसम्बन्धी) एक अन्य आख्यान कहता हूँ, उसे सुनो।' [अध्याय २६]

अष्टमी तिथिकी महिमाके प्रसङ्गमें मातृकाओंकी उत्पत्तिकी कथा

मुनिवर महातपा कहते हैं—राजन्! पूर्व समयकी बात है, भूमण्डलपर एक महान् पराक्रमी राक्षस था, जिसकी अन्धक नामसे ख्याति थी। ब्रह्माजीके द्वारा वर प्राप्तकर उसका अहंकार चरम सीमापर पहुँच गया था। सभी देवता उसके अधीन हो गये थे। उसकी सेवा असह्य होनेके कारण देवताओंने सुमेरु पर्वत छोड़ दिया और उस दानवके भयसे दुःखी होकर वे ब्रह्माजीकी शरणमें गये। उस समय वहाँ आये हुए प्रधान देवताओंसे पितामहने कहा—'सुरगणो! कहो, तुम्हारे आनेका क्या प्रयोजन है? तुम क्या चाहते हो?'

देवताओंने कहा—जगत्पते! आप चतुर्मुख एवं जगत्-पितामह हैं। भगवन्! आपको हमारा नमस्कार है। अन्धकासुरके द्वारा हम सभी देवता महान् दुःखी हैं। आप हम सबकी रक्षा करें।

ब्रह्माजी बोले—श्रेष्ठ देवताओ! अन्धकासुरसे रक्षा करना मेरे वशकी बात नहीं है। हाँ, महाभाग शंकरजी अवश्य सर्वसमर्थ हैं। हम सभी उनकी ही शरणमें चलें; क्योंकि मैंने ही उसे वर दिया था कि तुम्हें कोई भी मार न सकेगा और तुम्हारा शरीर भी पृथ्वीका स्पर्श नहीं करेगा। फिर भी उस परम पराक्रमी असुरको शत्रुओंके संहार करनेवाले भगवान् शंकर मार सकते हैं; अतः हम सबलोग उन्हीं कैलासवासी प्रभुके पास चलें।

राजन्! इस प्रकार कहकर ब्रह्माजी सभी देवताओंके साथ भगवान् शंकरके पास गये। उन्हें देखकर भगवान् शंकरने प्रत्युत्थानादिद्वारा स्वागत-कर उनसे कहा—'आप सभी देवता किस कारणसे यहाँ पधारे हैं? आप शीघ्र आज्ञा दें, जिससे मैं आपलोगोंका कार्य तुरंत सम्पन्न कर दूँ।'

इसपर देवताओंने कहा—'भगवन्! दुष्टचित्त, महाबली अन्धकासुरसे आप हमारी रक्षा करें' अभी वे ऐसा कह ही रहे थे कि विशाल सेना लिये अन्धकासुर वहीं आ धमका। उस समय वह दानव पूरे साधनोंके साथ आया था। उसकी इच्छा थी कि वह युद्धमें चतुरङ्गिणी सेनाके सहारे शंकरजीको मारकर उनकी पत्नी पार्वतीका अपहरण कर ले। उसे सहसा इस प्रकार प्रहारके लिये

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

उद्यत देखकर रुद्र भी युद्धके लिये उद्यत हो गये। सभी देवता भी उनका साथ देनेको तैयार हुए। फिर उन प्रभुने वासुकि, तक्षक और धनञ्जयको स्मरण किया और उन्हें क्रमसे अपना कङ्कण और करधनी बनाया। इतनेमें नील नामसे प्रसिद्ध एक प्रधान दैत्य हाथीका रूप धारणकर भगवान् शंकरके पास आया। नन्दी उसकी माया जान गये और वीरभद्रको बतलाया। बस! क्या था, वीरभद्रने भी सिंहका रूप धारणकर उसे तत्काल मार डाला। उस हाथीका चर्म अञ्जनके समान काला था। वीरभद्रने उसकी चमड़ी उधेड़कर उसे भगवान् शंकरको समर्पित कर दिया। तब रुद्रने उसे वस्त्रके स्थानपर पहन लिया। तभीसे वे गजाजिनधारी हुए। इस प्रकार गजचर्म पहनकर उन्होंने श्वेत सर्पका भूषण भी धारण कर लिया। फिर हाथमें त्रिशूल लेकर अपने गणोंके साथ उन्होंने अन्धकासुरपर धावा बोल दिया। अब देवता एवं दानवोंमें भीषण संग्राम प्रारम्भ हो गया। उस अवसरपर इन्द्र आदि सभी लोकपाल, सेनापति स्कन्द एवं अन्य सभी देवता भी समराङ्गणमें उतर आये। यह स्थिति देखकर नारदजी तुरंत भगवान् नारायणके पास गये और बोले—'भगवन्! कैलासपर देवताओंका दानवोंके साथ घोर युद्ध हो रहा है।'

यह सुनना था कि भगवान् जनार्दन भी हाथमें चक्र लेकर गरुडपर बैठे और युद्ध-स्थलमें पहुँचकर दानवोंके साथ युद्ध करने लगे। उनके वहाँ आ जानेपर देवताओंका उत्साह कुछ बढ़ा अवश्य, किंतु उस समरमें उनका मन एक प्रकारसे म्लान हो चुका था, अतः वे सभी भाग चले। जब देवताओंकी शक्ति समाप्त हो गयी तो स्वयं भगवान् रुद्र अन्धकासुरके सामने गये। उसके साथ उनका रोमाञ्चकारी युद्ध आरम्भ हो गया। उस समय उन प्रभुने उस दानवपर त्रिशूलसे भीषण प्रहार किया। फिर तो घायल हो जानेपर अन्धकासुरके शरीरसे जो रक्त जमीनपर गिरा, उससे उसी क्षण दूसरे असंख्य अन्धकासुर उत्पन्न हो गये। युद्धभूमिमें ऐसा अत्यन्त आश्चर्यपूर्ण दृश्य देखकर परम प्रभु भगवान् रुद्रने प्रधान अन्धकासुरको त्रिशूलके अग्रभागसे बींध दिया और उसे लिये हुए नाचने लगे। शेष मायामय अन्धकासुरोंको भगवान् विष्णुने अपने चक्रसे काट डाला। शूल-प्रोत प्रधान अन्धकासुरके शरीरसे रक्तकी धाराएँ अब भी निरन्तर प्रवाहित हो रही थीं; अतः रुद्रके मनमें भीषण क्रोधाग्नि भड़क उठी, जिससे उनके मुखसे अग्निकी ज्वाला बाहर निकलने लगी। उस ज्वालाने एक देवीका रूप धारण कर लिया, जिसे लोग योगेश्वरी कहने लगे।

इसी प्रकार भगवान् विष्णुने भी अपने रूपके सदृश (ज्वालाद्वारा) अन्य शक्तिका निर्माण किया। ऐसे ही ब्रह्मा, कार्तिकेय, इन्द्र, यम, वराह, महादेव, विष्णु और नारायण—इनके प्रभावसे आठ मातृकाएँ प्रकट हो गयीं। जब श्रीहरिने पृथ्वीका उद्धार करनेके लिये वराहका रूप धारण किया था, उस समय जिन्हें अपनाया वे वाराही हैं। इस प्रकार ब्राह्मी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, यमी, योगेश्वरी, माहेश्वरी और माहेन्द्री—ये आठ मातृकाएँ हैं। क्षेत्रज्ञ श्रीहरिने जिनका जिस कारणसे निर्माण हुआ था, उसपर विचार करके उनका वही नाम रख दिया। ऐसे ही काम, क्रोध, लोभ, मद, मोह, मात्सर्य, पैशुन्य और असूया —इनकी आठ शक्तियाँ मातृका नामसे प्रसिद्ध हुईं। काम 'योगेश्वरी', क्रोध 'माहेश्वरी', लोभ 'वैष्णवी', मद 'ब्रह्माणी', मोह 'कौमारी', मात्सर्य 'इन्द्राणी', पैशुन्य 'यमदण्डधरा' और असूया 'वाराही' नामसे कही गयी हैं—ऐसा जानना चाहिये। ये कामादिगण

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भी भगवान् नारायणके शरीर कहे जाते हैं। उन प्रभुने जैसी मूर्ति धारण की, उनका वैसा नाम तुम्हें बता दिया।

तदनन्तर इन मातृ-देवियोंके प्रयाससे अन्धकासुरकी रक्तधाराका प्रवाह सूख गया। उसकी आसुरी माया समाप्त हो गयी। फिर अन्धकासुर भी सिद्ध हो गया। राजन्! मैंने तुमसे यह आत्मविद्यामृत-तत्त्वका वर्णन किया है। मातृकाओंकी उत्पत्तिका यह कल्याणकारी प्रसङ्ग जो सदा सुनता है, ये माताएँ उसकी प्रतिदिन सभी प्रकार रक्षा करती हैं। राजेन्द्र! जो मुखसे इन मातृकाओंके जन्मचरित्रका पाठ करता है, वह इस लोकमें सर्वथा धन्यवादका पात्र माना जाता है। अन्तमें उसको भगवान् शिवके लोककी प्राप्ति सुलभ हो जाती है। महाभाग ब्रह्माने उन मातृकाओंके लिये उत्तम अष्टमी तिथि प्रदान की है। मनुष्यको चाहिये कि इस तिथिमें बिल्वके आहारपर रहकर भक्तिपूर्वक सदा इनकी पूजा करे। इससे परम संतुष्ट होकर ये मातृकाएँ उसको कल्याण एवं आरोग्य प्रदान करती हैं। [अध्याय २७]

नवमी तिथिकी महिमाके प्रसङ्गमें दुर्गादेवीकी उत्पत्ति-कथा

राजा प्रजापालने पूछा—मुने! सृष्टिके आदिमें सूक्ष्म रूपमें स्थित निर्गुणा एवं अव्यक्त-ब्रह्मस्वरूपा कल्याणी भगवती महामाया, दुर्गा भगवती सगुण स्वरूप धारणकर पृथक् रूपमें कैसे प्रकट हुईं?

महातपाजी कहते हैं—राजन्! प्राचीन समयकी बात है। वरुणके अंशसे उत्पन्न सिन्धुद्वीप नामका एक प्रबल प्रतापी नरेश था। वह इन्द्रको मारनेवाले पुत्रकी कामनासे जंगलमें जाकर तप करने लगा। सुव्रत! इस प्रकार एक ही आसनसे भीषण तप करते हुए उसने अपने शरीरको सुखा दिया।

राजा प्रजापालने पूछा—द्विजवर! उसका इन्द्रने कौन-सा अपकार किया था, जिससे वह उनके मारनेवाले पुत्रकी इच्छासे तपमें लग गया?

महातपाजी बोले—राजन्! सिन्धुद्वीप पिछले जन्ममें विश्वकर्माका पुत्र नमुचि नामक दैत्य था, जो वीरोंमें प्रधान था। वह सम्पूर्ण शस्त्रोंद्वारा अवध्य था। अतः इन्द्रद्वारा जलके फेनसे उसकी मृत्यु हुई थी (युद्धके अन्तमें इन्द्रने उसे जलके फेनसे मारा था)। वही पुनः ब्रह्माजीके वंशमें सिन्धुद्वीपके नामसे उत्पन्न हुआ। इन्द्रके उसी वैरको स्मरणकर वह अत्यन्त कठिन तपस्या करनेके लिये बैठ गया था।

इस प्रकार बहुत समय बीत जानेपर पवित्र नदी वेत्रवती (मध्यप्रदेशकी बेतवा नदी)-ने अत्यन्त सुन्दर मानुषी स्त्रीका रूप धारणकर एवं अनेक अलंकारोंसे सज-धजकर सिन्धुद्वीप जहाँ बैठकर महान् तप कर रहा था, वहाँ पहुँची। उस सुन्दरी स्त्रीको देखकर राजाका मन क्षुब्ध हो उठा, अतः उसने पूछा—'सुन्दर कटिभागवाली भामिनि! तुम कौन हो? सब सच्ची बात बतानेकी कृपा करो।'

नदीने उत्तर दिया—मेरा नाम वेत्रवती है। मेरे मनमें आपको प्राप्त करनेकी इच्छा हो गयी है। अतः मैं यहाँ आ गयी हूँ। महाराज! इस बातपर तथा मेरे भावोंका विचारकर आप मुझ दासीको स्वीकार करनेकी कृपा करें।

राजन्! वेत्रवतीके इस प्रकार कहनेपर राजा सिन्धुद्वीपने भी उसे स्वीकार कर लिया। समय पाकर शीघ्र ही उससे पुत्रकी उत्पत्ति हुई। उस बालकमें बारह सूर्यों-जैसा तेज था। वेत्रवतीके उदरसे जन्म होनेके कारण वह वेत्रासुरके नामसे प्रसिद्ध हुआ। उसमें पर्याप्त बल था। उसके तेजकी

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi
In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth

सीमा न थी। धीरे-धीरे वह प्राग्ज्योतिषपुर (कामरूप—आसाम)-का नरेश बन गया और युवा होनेपर तो उसके बल-विक्रम बहुत बढ़ गये। उसने अब महायोगशक्तिद्वारा सात द्वीपोंवाली इस सम्पूर्ण पृथ्वीको जीत लिया। बादमें कालकेयोंको जीतनेके लिये उसने मेरु-पर्वतपर चढ़ाई की। जब वह असुर इन्द्रके पास गया तो वे भयसे वहाँसे भाग चले। अग्निने तो उसे देखते ही अपना स्थान छोड़ दिया। ऐसे ही यम, निर्ऋति और वरुण—ये सब-के-सब उसके आनेपर अपने स्थानसे हटते गये। अन्तमें इन्द्र-प्रभृतिको साथ लेकर वरुणदेवता वायुदेवताके संनिकट गये। फिर पवनदेव भी इन्द्र आदि समस्त देवताओंके सहित धनाध्यक्ष कुबेरके पास पहुँचे। शंकरजी कुबेरके मित्र हैं; अतः धनाध्यक्ष कुबेर देवताओंको साथ लेकर शंकरजीके पास पधारे। राजन्! इतनेमें बलाभिमानी वेत्रासुर भी गदा लिये हुए कैलासपर जा पहुँचा। इधर भगवान् शिव उसे अवध्य समझकर देवताओंके साथ ब्रह्मलोक पहुँचे थे। वहाँ पुण्यकर्म करनेवाले बहुत-से देवता और सिद्धोंका समाज उनकी स्तुति कर रहा था। उस समय जगत्की रचना करनेमें कुशल ब्रह्माजी भगवान् विष्णुके चरणसे प्रकट हुई गङ्गाके पावन जलमें प्रविष्ट होकर क्षेत्रज्ञ परमात्माकी माया गायत्रीका नियमपूर्वक जप कर रहे थे। अब देवता बड़े जोरसे चिल्लाकर कहने लगे—'प्रजाओंकी रक्षा करनेवाले भगवन्! हमें बचाइये। वेत्रासुरसे हम समस्त देवता और ऋषि अत्यन्त भयभीत हो गये हैं। आप हमारी रक्षा करें! रक्षा करें!'

देवताओंके इस प्रकार पुकार मचानेपर ब्रह्माजीकी दृष्टि वहाँ आये हुए उन देवताओंकी ओर गयी। वे सोचने लगे—'अहो! भगवान् नारायणकी माया बड़ी विचित्र है। इस विश्वका कोई भी स्थान उससे रिक्त नहीं है। असुरों और राक्षसोंसे भला मेरा क्या सम्बन्ध?' वे इस प्रकार अभी चिन्तन कर ही रहे थे कि तबतक वहाँ एक अयोनिजा कन्या प्रकट हो गयी। उसका शरीर श्वेतवस्त्रोंसे सुशोभित हो रहा था। उसके गलेमें माला तथा मस्तकपर किरीट उद्भासित हो रहा था। उसकी कान्ति अत्यन्त उज्ज्वल थी तथा उसकी आठ भुजाएँ थीं, जिनमें क्रमसे शङ्ख, चक्र, गदा, पाश (शक्ति), तलवार, घण्टा और धनुष—ये दिव्य आयुध सुशोभित हो रहे थे। वह देवी तूणीर आदि अन्य सभी युद्धोपकरणोंसे भी सुसज्जित होकर जलसे बाहर निकल पड़ी। वह महायोगेश्वरी परब्रह्म परमात्माकी शक्ति सिंहपर समासीन थी। अब सहसा वह अनेक रूप धारणकर सभी असुरोंके साथ युद्ध करने लगी। उस देवीमें अपार शक्ति थी। उसके पास बहुत-से दिव्य अस्त्र थे। इस प्रकार देवताओंके वर्षसे यह युद्ध एक हजार वर्षोंतक चलता रहा और अन्तमें इस संग्राममें देवीद्वारा भयंकर वेत्रासुर मार डाला गया। अब देवताओंकी सेनामें बड़े जोरसे आनन्दकी ध्वनि होने लगी। उस दैत्यकी मृत्यु हो जानेपर सभी देवता युद्धभूमिमें ही—'भगवती! आपकी जय हो! जय हो!' कहकर स्तुति-प्रणाम करने लगे। साथ ही भगवान् शंकरने उनकी इस प्रकार स्तुति की—

भगवान् शंकर बोले—महामाये! महाप्रभे! गायत्री देवि! आपकी जय हो! महाभागे! आपके सौभाग्य, बल, आनन्द—सभी असीम हैं। दिव्य गन्ध एवं अनुलेपन आपके श्रीअङ्गोंकी शोभा बढ़ाते हैं। परमानन्दमयी देवि! दिव्य मालाएँ एवं गन्ध आपके श्रीविग्रहकी छवि बढ़ाती हैं। महेश्वरि! आप वेदोंकी माता हैं। आप ही वर्णोंकी मातृका हैं। आप तीनों लोकोंमें व्याप्त हैं। तीनों अग्नियोंमें

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

जो शक्ति है, वह आपका ही तेज है। त्रिशूल धारण करनेवाली देवि! आपको मेरा नमस्कार है। देवि! आप त्रिनेत्रा, भीमवक्त्रा और भयानका आदि अर्थानुरूप नामोंसे व्यवहृत होती हैं। आप ही गायत्री और सरस्वती हैं। आपके लिये हमारा नमस्कार है। अम्बिके! आपकी आँखें कमलके समान हैं। आप महामाया हैं। आपसे अमृतकी वृष्टि होती रहती है। सर्वगे! आप सम्पूर्ण प्राणियोंकी अधिष्ठात्री हैं। स्वाहा और स्वधा आपकी ही प्रतिकृतियाँ हैं; अतः आपको मेरा नमस्कार है। महान् दैत्योंका दलन करनेवाली देवि! आप सभी प्रकारसे परिपूर्ण हैं। आपके मुखकी आभा पूर्ण चन्द्रके समान है। आपके शरीरसे महान् तेज छिटक रहा है। आपसे ही यह सारा विश्व प्रकट होता है। आप महाविद्या और महावेद्या हैं। आनन्दमयी देवि! विशिष्ट बुद्धिका आपसे ही उदय होता है। आप समयानुसार लघु एवं बृहत् शरीर भी धारण कर लेती हैं। महामाये! आप नीति, सरस्वती, पृथ्वी एवं अक्षरस्वरूपा हैं। देवि! आप श्री, धी तथा ॐकारस्वरूपा हैं। परमेश्वरि! तत्त्वमें विराजमान होकर आप अखिल प्राणियोंका हित करती हैं। आपको मेरा बार-बार नमस्कार है।

राजन्! इस प्रकार परम शक्तिशाली भगवान् शंकरने उन देवीकी स्तुति की और देवतालोग भी बड़े उच्च-स्वरसे उन परमेश्वरीकी जयध्वनि करने लगे। अबतक ब्रह्माजी जलमें जप ही कर रहे थे। अब जब (जयध्वनि उन्हें श्रवणगोचर हुई तो) वे जलसे बाहर निकले और देखा, परम कुशल देवी सम्पूर्ण कार्य सम्पन्न करके सामने विराजमान हैं। अब उन्होंने यह तो भलीभाँति जान लिया कि देवताओंका कार्य सिद्ध हो गया, परंतु भविष्यके कार्यको परिलक्ष्यकर उन्होंने ये वचन कहे—

ब्रह्माजी बोले—देवताओ! अनुपम अङ्गोंसे शोभा पानेवाली ये देवी अब हिमालय पर्वतपर पधारें और आपलोग भी अब तुरंत वहाँ चलकर आनन्दसे रहें। नवमी तिथिके दिन इन देवीकी सदा स्थिरचित्त एवं ध्यान-समाधिद्वारा आराधना करनी चाहिये। ऐसा करनेसे ये सम्पूर्ण प्राणियोंको वर देंगी, इसमें लेशमात्र संदेह नहीं। इस (नवमी) तिथिको जो पुरुष अथवा स्त्री पक्वान्न प्रसादरूपसे भोजन करेंगे, उनके सभी मनोरथ सिद्ध हो जायँगे।

राजन्! फिर ब्रह्माने भगवान् शंकरसे कहा—'देव! स्वयं आपद्वारा कहे गये इस स्तोत्रका जो पुरुष प्रातःकाल नित्य पाठ करेगा, उसे आप भी इस देवीके समान ही वर प्रदान करें और सम्पूर्ण संकटोंसे उसका उद्धार कर दें—यह प्रार्थना है।'

इस प्रकार भगवान् शंकरसे कहकर उन्होंने पुनः देवीसे कहा—'देवि! आपके द्वारा यहाँ कार्य सम्पन्न हुआ। किंतु अभी हमारा एक दूसरा बहुत बड़ा कार्य शेष है। वह यह कि आगे महिषासुर नामका एक राक्षस उत्पन्न होगा, जिसका विनाश भी आपके ही द्वारा सम्भव है।'

राजन्! इस प्रकार कहकर ब्रह्माजी तथा सम्पूर्ण देवता देवीको हिमालय पर्वतपर प्रतिष्ठित-कर यथास्थान प्रस्थित हो गये। हिमवान् पर्वतपर आनन्दसे विराजनेके कारण उनका नाम 'नन्दादेवी' हुआ। जो व्यक्ति भगवतीके इस प्रकट होनेकी कथाको स्वयं पढ़ेगा अथवा सुनेगा, वह सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त होकर कैवल्य-मोक्षका अधिकारी होगा।

[अध्याय २८]

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

दशमी तिथिके माहात्म्यके प्रसङ्गमें दिशाओंकी उत्पत्तिकी कथा

मुनिवर महातपा कहते हैं—राजन्! अब जिस प्रकार भगवान् श्रीहरिके कानोंसे दिशाएँ उत्पन्न हुईं, वह कथा मैं कहता हूँ, तुम उसे ध्यानपूर्वक सुनो। आदिसर्गके आरम्भमें ब्रह्माजीको सृष्टि करते हुए यह चिन्ता हुई कि 'मेरी उत्पन्न प्रजाका आधार क्या होगा?' अतः उन्होंने संकल्प किया कि 'अब आभ्यन्तर-स्थान उत्पन्न हों।' उनके इस प्रकार विचार करते ही उन परम प्रभुके कानोंसे दस तेजस्वी कन्याओंका प्रादुर्भाव हुआ। राजन्! उनमें वे पूर्वा, दक्षिणा, पश्चिमा, उत्तरा, ऊर्ध्वा और अधरा—ये छः कन्याएँ तो मुख्य मानी गयीं। साथ ही उन कन्याओंके मध्यमें और चार कन्याएँ, जो परम सुन्दर रूपवाली गम्भीर भावोंवाली तथा महा-भाग्यशालिनी थीं, उत्पन्न हुईं। उस समय उन सभी कन्याओंने बड़ी नम्रताके साथ शुद्धस्वरूप ब्रह्माजीसे प्रार्थना की—'देवेश्वर! आप प्रजाके पालक हैं। हमें स्थान देनेकी कृपा कीजिये। स्थान ऐसा चाहिये, जहाँ हम सभी अपने पतियोंके साथ सुखपूर्वक निवास कर सकें। अव्यक्तजन्मा प्रभो! हमें आप महान् भाग्यशाली पति प्रदान करनेकी कृपा करें।'

ब्रह्माजी बोले—कमनीय कटिभागसे शोभा पानेवाली दिशाओ! यह ब्रह्माण्ड सौ करोड़का विस्तारवाला है। इसके अन्तर्गत तुम संतुष्ट होकर यथेष्ट स्थानोंपर निवास करो। मैं शीघ्र ही तुम्हारे अनुरूप सुन्दर एवं नवयुवक पतियोंका भी निर्माण करके देता हूँ। तदनन्तर इच्छानुसार तुम सभी अपने-अपने स्थानपर चली जाओ।

राजन्! जब ब्रह्माजीने इस प्रकार कहा तो वे सभी कन्याएँ इच्छित स्थानोंको चल पड़ीं। फिर उन प्रभुने उसी क्षण महान् पराक्रमी लोकपालोंकी रचनाकर एक बार उन कन्याओंको पुनः अपने पास वापस बुलाया। उनके आ जानेपर लोकपितामह ब्रह्माजीने उन कन्याओंका उन लोकपालोंके साथ विवाह कर दिया। उत्तम व्रतका पालन करनेवाले राजन्! उस अवसरपर उन परम प्रभुने पूर्वा नामवाली कन्याका विवाह इन्द्रके साथ, आग्नेयीदिक्का अग्निदेवके साथ, दक्षिणाका यमके साथ, नैर्ऋत्रीका निर्ऋतिके साथ, पश्चिमाका वरुणके साथ, वायव्यीदिक्का वायुके साथ, उत्तराका कुबेरके साथ तथा ईशानीदिक्का भगवान् शंकरके साथ विवाहका प्रबन्ध कर दिया। ऊर्ध्व दिशाके अधिष्ठाता वे स्वयं बने और अधोलोककी अध्यक्षता उन्होंने शेषनागको दी। इस प्रकार उन दिशाओंको पति प्रदान करनेके बाद ब्रह्माजीने उनके लिये दशमी तिथि निर्धारित कर दी। वही तिथि उन्हें अत्यन्त प्रिय बन गयी। राजन्! जो उत्तम व्रतका पालक पुरुष दशमी तिथिके दिन केवल दही खाकर व्रत करता है, उसके पापका नाश करनेके लिये वे देवियाँ सदा तत्पर रहती हैं। जो मनुष्य मनको वशमें करके दिशाओंके जन्मादिसे सम्बन्ध रखनेवाले इस प्रसङ्गको सुनता है, वह इस लोकमें प्रतिष्ठा पाता है और अन्तमें ब्रह्माजीका लोक प्राप्त करता है, इसमें कोई संशय नहीं। [अध्याय २९]

एकादशी तिथिके माहात्म्यके प्रसङ्गमें कुबेरकी उत्पत्ति-कथा

मुनिवर महातपा कहते हैं—राजन्! अब एक दूसरी कथा कहता हूँ। इसमें धनके स्वामी कुबेरकी उत्पत्तिका वर्णन है। यह प्रसङ्ग पापका नाश करनेवाला है। पहले कुबेरजी वायुके रूपमें अमूर्त ही थे। पश्चात् वे मूर्तिमान् बनकर उपस्थित हुए। परब्रह्म परमात्माका जो शरीर है, उसीके अन्तर्गत

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

वह वायु विराजता था। आवश्यकताके अनुसार वह क्षेत्रदेवता बनकर बाहर निकला। उसकी उत्पत्तिकी कथा मैं तुम्हें संक्षेपमें बता चुका हूँ। महाभाग! तुम बड़े पवित्रात्मा पुरुष हो, अतः वही प्रसङ्ग पुनः कुछ विस्तारसे कहता हूँ, सुनो।

एक समयकी बात है—ब्रह्माजीके मनमें सृष्टि रचनेकी इच्छा हुई। तब उनके मुखसे वायु निकला। वह बड़े वेगसे स्थूल बनकर बह चला और उससे धूलकी प्रचण्ड वर्षा होने लगी। फिर ब्रह्माजीने उसे रोका और साथ ही कहा—'वायो! तुम शरीर धारण करो और शान्त हो जाओ।' उनके ऐसा कहनेपर वायु मूर्तिमान् बनकर कुबेरके रूपमें उनके सामने उपस्थित हुए। तब ब्रह्माजीने कहा—'सम्पूर्ण देवताओंके पास जो धन है, वह केवल फलमात्र है। उन सबकी रक्षाका भार तुम्हारे ऊपर है। इस रक्षा-कार्यके कारण जगत्में 'धनपति' नामसे तुम्हारी प्रसिद्धि होगी।' फिर अत्यन्त संतुष्ट होकर ब्रह्माजीने उन्हें एकादशीका अधिष्ठाता बना दिया। राजन्! उस तिथिके अवसरपर जो व्यक्ति बिना अग्निमें पकाये स्वयं पके हुए फल आदिके आहारपर रहकर नियमके साथ व्रत करता रहता है, उसपर कुबेर अत्यन्त प्रसन्न होते हैं और वे उसकी सारी कामनाएँ पूर्ण कर देते हैं।

धनाध्यक्ष कुबेरके मूर्तिमान् बननेकी यह कथा सम्पूर्ण पापोंका नाश करनेवाली है। जो व्यक्ति भक्तिपूर्वक इसका श्रवण अथवा पठन करता है, उसके सारे मनोरथ पूर्ण हो जाते हैं। अन्तमें वह स्वर्गलोकको प्राप्त करता है।

[अध्याय ३०]

द्वादशी तिथिकी महिमाके प्रसङ्गमें उसके अधिष्ठाता श्रीभगवान् विष्णुकी उत्पत्ति-कथा

मुनिवर महातपा कहते हैं—राजन्! यह जो मनुका नाम और मनुत्व (मन्त्र) पढ़ा जाता है तथा उसमें जो मन्त्र-शक्ति है (वह चाहे वैदिक या तान्त्रिक कुछ भी हो) प्रयोजनवश स्वरूपतः मूर्तिमान् विष्णु ही है। राजन्! भगवान् नारायण सर्वश्रेष्ठ परम पुरुष हैं। उन परम प्रभुके मनमें सृष्टि-विषयक संकल्प उत्पन्न हुआ। उन्होंने सोचा— 'मैंने जगत्की रचना तो कर दी, फिर पालन भी तो मुझे ही करना है। यह सारा कर्म प्रपञ्च है। सम्यक्-रूपसे स्वरूप धारण किये बिना यह कार्य सम्पन्न नहीं हो सकता है। अतः एक ऐसी सगुण मूर्तिका निर्माण करूँ, जिससे इस जगत्की रक्षा हो सके।'

राजन्! परब्रह्म परमात्माका संकल्प सत्य होकर रहता है। वे प्रभु इस प्रकार विचार कर ही रहे थे, इतनेमें एक प्राक्तनी विशिष्ट स्वरूप-धारिणी सृष्टि उनके सामने प्रकट हो गयी। इसमें स्वयं पुराणपुरुष भगवान् नारायण ही प्रकट हो गये और उन्होंने लोकत्रयको अपने वैष्णव शरीरमें प्रविष्ट होते देखा। फिर वह प्रभुके शरीरसे बाहर आया। उस अवसरपर उन्हें अपने प्राचीन वरदानकी बात याद आयी, जो भगवान्ने संतुष्ट होकर वाणी आदिको दिया था। यह बहुत पुराना प्रसङ्ग है। भगवान् नारायणने वर देते हुए कहा था—'तुम्हें सभी वस्तुएँ विदित होंगी। तुम सबके कर्ता होओगे। सम्पूर्ण प्राणिवर्ग तुम्हें नमस्कार करेगा। तुम्हारे द्वारा तीनों लोकोंकी रक्षा होगी। अतः तुम 'विष्णु' नाम धारण करो। तुम सनातन पुरुष हो। देवताओं और ब्राह्मणोंकी सम्यक् प्रकारसे सदा रक्षा करना तुम्हारा कर्तव्य है। देव! तुम्हें सर्वज्ञता प्राप्त हो जाय—इसमें

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

कोई अन्यथा विचार नहीं है।'

इस प्रकार वर देकर भगवान् नारायण अपने प्राकृत रूपमें स्थित हो गये। फिर अब विष्णुको भी पहलेकी बात ध्यानमें आ गयी। सोचा—'अरे! मैं तो वही शक्तिसम्पन्न पुरुष हूँ।' तब उन महान् तपस्वी प्रभुने ऐश्वर्यके प्रभावसे योगनिद्राका स्मरण किया। वे देवी आ गयीं। स्त्री-पुरुषके संयोगसे उत्पन्न होनेवाली प्रजाओंका भार उनपर सौंप दिया। 'मैं उन परम प्रभु भगवान् नारायणका ही तो रूप हूँ'—ऐसा विचारकर वे फिर सो गये। सो जानेपर उनकी नाभिसे एक बड़ा-सा कमल निकला। सात द्वीपोंवाली पृथ्वी, समुद्र और वन—ये सब-के-सब उस कमलपर विराजमान थे। उस कमलके रूपका विस्तार आकाशसे पातालतक फैला था। उसकी कर्णिकापर सुमेरु-पर्वत सुशोभित हो रहा था। सबके बीचमें ब्रह्माजी थे। अपने ऐसे वैराज रूपको प्रत्यक्ष देखकर परम पुरुष परमात्माको बड़ा हर्ष हुआ। फिर उनके भीतर जो पवनदेव थे, उन्होंने व्यवहारके लिये वायुका सृजन किया। साथ ही कहा—'तुम अज्ञानपर विजय करनेवाले ज्ञानस्वरूप इस शङ्खका रूप धारण करो।' फिर श्रीहरिसे कहा—'अज्ञानका नाश करनेके लिये तुम्हारे हाथमें यह तलवार सदा शोभा पाती रहे। अच्युत! भयंकर काल-चक्रको काटनेके लिये यह चक्र धारण कर लो। केशव! पापराशि नष्ट हो जाय, एतदर्थ यह गदा धारण करना आवश्यक है। समस्त भूतोंको उत्पन्न करनेवाली यह वैजयन्ती माला तुम्हारे कण्ठमें सदा सुशोभित होती रहे। चन्द्रमा और सूर्य—ये दोनों श्रीवत्स और कौस्तुभके स्थानपर शोभा पायें। पवन चलनेमें सबसे पराक्रमी कहा गया है। वह तुम्हारे लिये गरुड बन जाय। तीनों लोकोंमें विचरनेवाली देवी लक्ष्मी सदा आपकी आश्रिता रहें। आपकी तिथि द्वादशी हो और आप अपने अभीष्टरूपसे विराजें। इस द्वादशी तिथिके दिन स्त्री अथवा पुरुष—जो कोई भी आपके प्रति श्रद्धा रखते हुए घृतके आहारपर रहे, वह स्वर्गमें स्थान पानेका अधिकारी हो जाय।'

(मुनिवर महातपा कहते हैं— राजन्!) वही परम पुरुष भगवान् नारायण 'विष्णु' इस नामसे विख्यात हुए। देवता और दानव—ये सब उन्हींकी मूर्तियाँ हैं। स्वयं वे ही अपने-आप विभिन्न रूप धारण करते हैं। उनके द्वारा किसीका संहार होता है तो किसीकी रक्षा होती है। उन्हें 'वेदान्तपुरुष' कहा जाता है। वे ही प्रभु प्रत्येक युगमें सब जगह विचरते हैं। जो उन्हें मनुष्य मानता है, उसे बुद्धिहीन समझना चाहिये। पापोंका नाश करनेवाला यह प्रसङ्ग वैष्णव-सर्ग कहलाता है। जो इसका पठन करता है, वह स्वर्गलोकमें जाकर परम पूज्य बन जाता है। [अध्याय ३१]

त्रयोदशी तिथि एवं धर्मकी उत्पत्तिका वर्णन

महातपाजी कहते हैं— राजन्! धर्म बड़े आदरके पात्र हैं। नरेन्द्र! उनकी उत्पत्ति, महिमा और तिथिका प्रसङ्ग कहता हूँ, सुनो। जिन्हें परब्रह्म परमात्मा कहते हैं तथा जिन शुद्धस्वरूप प्रभुकी सत्ता सदा बनी रहती है, पहले केवल वे ही थे। उनके मनमें प्रजाओंकी रचना करनेका विचार उत्पन्न हुआ। फिर उन प्रजाओंकी रक्षाका उपाय सोचने लगे। वे इस चिन्तामें लगे ही थे कि इतनेमें उनके दक्षिण अङ्गसे एक पुरुष प्रकट हो गया। उसके कानोंमें श्वेत कुण्डल, गलेमें श्वेत माला थी और वह सफेद रङ्गका अनुलेपन लगाये हुए था। उसके चार पैर थे तथा उसकी आकृति

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

बैलकी थी। फिर उस पुरुषको देखकर परम प्रभुने कहा—'साधो! तुम इन प्रजाओंकी रक्षा करो। मेरे द्वारा तुम जगत्में प्रधान बना दिये जाते हो।'

भगवान् नारायणकी आज्ञासे वह पुरुष वैसा ही हो गया। सत्ययुगमें उसके सत्य, शौच, तप और दान—ये चार पैर थे, त्रेतामें तीन तथा द्वापरमें दो। कलियुगमें वह दानरूपी एक पैरसे ही प्रजाओंका पालन करने लगा। ब्राह्मणोंके लिये उसने अध्ययन-अध्यापन एवं यजन-याजनादि छः रूप बनाये। क्षत्रियोंके लिये दान, यजन एवं अध्ययन—इन तीन रूपोंसे, वैश्योंके लिये दो रूपोंसे तथा शूद्रोंके लिये केवल एक सेवारूपसे ही सम्पन्न होकर वह सर्वत्र विराजने लगा। यह शक्तिशाली पुरुष सम्पूर्ण द्वीपों तथा तलातलोंमें व्याप्त हो गया। प्रकारान्तरसे द्रव्य, गुण, क्रिया और जाति—ये चार इसके पैर कहे गये हैं। वेदमें कहा गया है—संहिता, पद और क्रम—ये तीन उसके सींग हैं। आदि और अन्तमें स्थान पाये हुए दो सिरोंसे वह शोभा पाता है। उसके सात हाथ हैं। उदात्त, अनुदात्त और स्वरित—इन तीन स्वरोंसे वह सदा बद्ध रहता है। इस प्रकारसे वह धर्म व्यवस्थित हुआ।

राजन्! कुछ समयके बाद उस धर्मको विचित्र कर्म करनेवाले चन्द्रमाके कारण महान् दुःख हुआ। बृहस्पति चन्द्रमाके भाई हैं। चन्द्रमाके मनमें बृहस्पतिकी स्त्री ताराको ग्रहण करनेकी इच्छा जग उठी। इस निन्दित कर्मसे धर्मका मन उद्विग्न हो गया। अतः वह वहाँसे चला और एक गहन वनमें पहुँचकर वहीं रहने लगा। धर्मके वनमें चले जानेपर सम्पूर्ण देवता तथा दानवोंके सैनिक धर्महीन हो गये। फिर देवता दानवोंको मारनेके लिये घूमने लगे तथा वैसे ही दानवोंका भी देवताओंके घरपर चक्कर लगाना आरम्भ हो गया। राजन्! उस समय धर्मके न रहनेसे सभी मर्यादाएँ छिन्न-भिन्न हो गयीं। महाभाग! चन्द्रमाके दोषसे देवता और दानव—सभी परस्पर द्वेषके भाजन बन गये। उन्होंने अनेक प्रकारके आयुधोंको हाथमें ले लिया और वे परस्पर युद्ध करने लगे। उस संग्रामका कारण केवल स्त्री थी। नारदजी बड़े विनोदी हैं। दानवोंके साथ लड़ते हुए क्रोधी देवताओंको देखकर वे तुरंत अपने पिता ब्रह्माजीके पास गये और इसकी सूचना दी। ब्रह्माजी सम्पूर्ण प्राणियोंके पितामह हैं। अतः हंसपर आरूढ़ हो युद्धस्थलमें जाकर उन्होंने सबको मना किया। फिर उन्होंने उनसे पूछा—'इस समय तुमलोगोंका यह युद्ध किसलिये हो रहा है?' तब उन सबने उत्तर दिया—'भगवन्! यह चन्द्रमा ही सभी अनर्थोंका कारण है। यह अपनी बुद्धिसे इस लड़केको अपना बताता है। इस दूषित कर्मसे दुःखी होनेके कारण धर्म गहन वनमें जाकर निवास कर रहे हैं।' तब ब्रह्माजीने उसी क्षण देवताओं और दानवोंको साथ लिया तथा वनकी ओर चल पड़े। वहाँ जाकर देखा कि धर्म वृषभका वेष बनाकर चार पैरोंसे विराजमान हैं। चन्द्रमाके समान सफेद उनके सींग हैं और वे इधर-उधर विचर रहे हैं। फिर ब्रह्माजीने उपस्थित देवताओंसे कहा—

ब्रह्माजी बोले—'देवताओ! यह मेरा प्रथम पुत्र है। इस महामुनिको लोग धर्म कहते हैं। भाईकी भार्यासे अवैध राग करनेवाले चन्द्रमाके व्यवहारसे इसे अत्यन्त व्यथा हो रही है। अतः तुम सभी देवता और दानव अब इसे संतुष्ट करनेका प्रयत्न करो, जिसके फलस्वरूप पुनः सम्पूर्ण सुरों एवं असुरोंकी सम स्थिति हो जाय।' राजन्! उस समय ब्रह्माजीके वचनसे देवताओं और दानवोंको धर्मकी बातें विदित हो गयीं। उन्हें बड़ा हर्ष हुआ। अतएव सबलोग चन्द्रमाके समान स्वच्छ वर्णवाले धर्मकी स्तुति करनेमें तत्पर हो गये।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

देवताओंने कहा— जगत्‌की रक्षा करनेवाले महाभाग! तुम्हारा वर्ण चन्द्रमाके समान उज्ज्वल है। तुम्हें बार-बार नमस्कार है। देवरूप धारण करनेवाले प्रभो! तुम्हारी कृपासे स्वर्गका मार्ग दीख जाता है। तुम कर्ममार्गके स्वरूप हो तथा सब जगह विराजते हो। तुम्हें बार-बार नमस्कार है। पृथ्वीके पालक तथा तीनों लोकोंके रक्षक एकमात्र तुम्हीं हो। जनलोक, तपोलोक तथा सत्यलोक सभी तुमसे सुरक्षित रहते हैं। स्थावर एवं जङ्गम—कोई भी प्राणी ऐसा नहीं है, जो तुम्हारे बिना स्थित रह सके। तुम्हारे अभावमें तो यह जगत् तुरंत ही नष्ट हो सकता है। तुम सम्पूर्ण प्राणियोंकी आत्मा हो। सज्जन पुरुषोंके हृदयमें सत्त्वस्वरूप धारणकर तुम शोभा पाते हो। राजस पुरुषोंमें राजस और तामस पुरुषोंमें तामसरूप तुम्हारा ही है। तुम्हारे चार चरण हैं। चारों वेद तुम्हारे सींग हैं। तीन नेत्र तुम्हारी शोभा बढ़ाते हैं। हाथोंकी संख्या सात है। तुम तीन बन्धवाले हो। ऐसे वृषभरूपी प्रभो! तुम्हें नमस्कार है।* देव! तुम्हारी अनुपस्थितिमें हम विपथगामी एवं मूर्ख बन गये हैं। तुम हमारे परम आश्रय हो। अतः हमें सन्मार्ग बतानेकी कृपा करो।

जब इस प्रकार देवताओंने स्तुति की तो प्रजापालक धर्म, जो वृषभके रूपसे पधारे थे, संतुष्ट हो गये। उनका मन प्रसन्न हो गया। फिर तो उनके शान्तस्वरूप नेत्रने ही उन्हें सन्मार्ग बता दिया। उनकी केवल दृष्टि पड़नेसे ही वे देवता धार्मिक नेत्रसे देखने लगे। एक क्षणमें ही उनका अज्ञान नष्ट हो गया। वे सम्यक् प्रकारसे सद्धर्म-सम्पन्न हो गये। असुरोंकी स्थिति भी वैसी ही हो गयी। तब ब्रह्माजीने धर्मसे कहा—'धर्म! आजसे तुम्हारे लिये त्रयोदशी तिथि निश्चित कर देता हूँ। जो पुरुष इस तिथिके दिन उपवास करके तुम्हारी पूजा करेगा, वह पापी होनेपर भी पापमुक्त हो जायगा। धर्म! तुममें प्रभूत सामर्थ्य है। तुम इस अरण्यमें बहुत समयतक निवास कर चुके हो, इसलिये यह वन 'धर्मारण्य' नामसे विख्यात होगा। प्रभो! चार, तीन, दो और एक चरणसे युक्त होकर तुम कृत, त्रेता आदि युगमें जिस प्रकार लक्षित होते हो, उसी प्रकार पृथ्वी और आकाशमें रहकर विश्वको अपना घर मानते हुए उसकी रक्षा करो।'

राजन्! इतनी बातें कहकर लोकपितामह ब्रह्माजी देवताओं और दानवोंके देखते-देखते अन्तर्धान हो गये। देवताओंका शोक दूर हो गया। वे वृषभका वेष धारण करनेवाले धर्मके साथ अपने लोकको चले गये। जो पुरुष त्रयोदशीके दिन श्राद्ध करते समय धर्मकी उत्पत्तिका यह प्रसङ्ग पितरोंको सुनायेगा एवं भक्तिके साथ दूधसे तर्पण करेगा, वह स्वर्गमें जाकर देवताओंके साथ सुखपूर्वक निवास करनेका अधिकारी होगा।

[अध्याय ३२]

चतुर्दशी तिथिके माहात्म्यके प्रसङ्गमें रुद्रकी उत्पत्तिका वर्णन

महातपा मुनि कहते हैं— राजन्! इसके अतिरिक्त सृष्टिके आरम्भमें रुद्रके उत्पन्न होनेकी एक कथा और है। अब वह प्रसङ्ग कहता हूँ, यत्नपूर्वक सुनो—

जब तपोरूप धर्ममय वृक्ष नष्टप्राय हो गया था, उस समय प्रचण्ड तेजस्वी ब्रह्माजी क्षमारूपी अस्त्र धारण किये प्रकट हुए। उन परम प्रतापी प्रभुके आनेका प्रयोजन था परम ज्ञान और

* 'चत्वारि शृङ्गा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अस्य। त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्यान् आ विवेश।' (ऋग्वेद ४।५८।३) इस वेदमन्त्रमें भी यही भाव व्यक्त हुआ है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

तत्त्वको जानकर प्रजाओंकी रक्षा करना। सृष्टि करनेकी इच्छावाले उन महाप्रभुने चाहा—'प्रजाएँ उत्पन्न हों और इच्छानुसार जगत्की वृद्धि हो।' किंतु इसमें प्रतिबन्ध पड़ गया। अतः क्रोधसे उनका मन क्षुब्ध हो उठा। फिर वे समाधिस्थ हो गये। अब उनके सामने एक ऐसा श्रेष्ठ पुरुष प्रकट हुआ, जिसका अन्तःकरण अत्यन्त पवित्र था। उसके रजोगुण और तमोगुण सर्वथा नष्ट हो चुके थे। उसकी कीर्ति अचल थी। उस पुरुषमें वर देनेकी पूर्ण शक्ति थी एवं अपार बल था। उसके शरीरकी कान्ति काले और लाल रंगसे सम्पन्न थी तथा नेत्र पीले रंगके थे। वह उत्पन्न होते ही रोने लगा। तब ब्रह्माजीने कहा—'**त्वं मा रुद**'—तुम रोओ मत। इस कारण उस पुराणपुरुषका नाम रुद्र हो गया। पुनः ब्रह्माजी बोले—'तुम एक महान् पुरुष हो! तुममें सब कुछ करनेकी शक्ति है। तुम मेरी ऐसी सृष्टिका विस्तार करो, जिसका रूप तुम्हारे ही अनुरूप हो।'

ब्रह्माजीके इतना कहते ही वे तप करनेके विचारसे जलके भीतर चले गये। फिर उन देवेश्वर रुद्रके जलमें चले जानेपर ब्रह्माजीने दक्षप्रजापतिकी सृष्टि की। ब्रह्माजीके अन्य मानस पुत्रोंने भी प्रजाओंका सृजन किया। सृष्टि पर्याप्त रूपसे फैल गयी। फिर देवेश्वरकी अध्यक्षतामें दक्षप्रजापतिका ब्रह्मयज्ञ आरम्भ हो गया।

राजन्! इतनेमें रुद्रदेव, जो तप करनेके लिये जलके भीतर गये थे, संसार और सुरगणकी सृष्टि करनेके विचारसे जलसे बाहर निकले। उन्होंने सुना—'यज्ञ हो रहा है और उसमें देवता, सिद्ध एवं यक्ष आये हुए हैं।' फिर तो उन्हें क्रोध हो आया। अतः सोचा और कहा—'अरे, तेजस्विनी अपनी कन्या तथा मेरा तिरस्कार करके मूर्खता-वश इसने किस प्रकार जगत्की सृष्टि कर ली? हा, हा—इसे ऐसा नहीं करना चाहिये' यों कहते-कहते रोषसे उनका शरीर चतुर्दिक् उद्दीप्त हो उठा। साथ ही उनके मुँहसे ज्वालाएँ निकलने लगीं। वे ही अनेक भूत, पिशाच, वेताल एवं योगियोंके झुंड बनकर विचरने लगीं। जब समस्त आकाश, पृथ्वी, सारी दिशाएँ तथा लोक आदि उन भूतोंसे भर गये तो उन रुद्रने सर्वज्ञताके प्रभावसे चौबीस हाथ लम्बा एक धनुष बनाया। तेहरी बटी रस्सीसे उसकी प्रत्यञ्चा बनायी और क्रोधके कारण दो दिव्य तरकस तथा बाणोंको ले लिया और उससे उन्होंने पूषाके दाँत तोड़ डाले, भग नामक मुनिकी आँखें निकाल लीं और क्रतु देवताके अण्डकोष काटकर गिरा दिये। बाणविद्ध होकर क्रतु देवता यज्ञवाट्से (यज्ञशालासे) भाग चले। वायुने उनका मार्ग रोक दिया। यज्ञ नष्ट-भ्रष्ट हो गया। देवता यज्ञके पशु-से बन गये। तब सबने भगवान् रुद्रकी शरण ली। ब्रह्माजीने वहाँ पहुँचकर रुद्रको गलेसे लगाया। वहाँ वे देवता भी उन्हें दिखायी पड़े, जिनका रुद्रने अपकार किया था और जो भक्तिके साथ उनकी शरणमें पहुँचे थे। बातें विदित हो जानेपर देवाधिदेव ब्रह्माजी रुद्रकी ओर देखते हुए बोले—'तात! अब क्रोध करना ठीक नहीं है; क्योंकि क्रतु—यज्ञदेवता तो यहाँसे भाग गये हैं।' ब्रह्माजीकी यह बात सुनकर रुद्र क्रोधसे भर गये और कहने लगे—'देवेश्वर! आपने सर्वप्रथम मुझे बनाया है; किंतु ये लोग इस यज्ञमें मुझे भाग नहीं दे रहे हैं; इसीलिये मैंने इन्हें विकृत कर दिया तथा इनका ज्ञान हर लिया है।'

ब्रह्माजीने कहा—'देवताओ! तुमलोग तथा समस्त असुर ज्ञान प्राप्त करनेके लिये उच्च स्वरसे स्तोत्रोंको पढ़कर इन महाभाग शम्भुकी ऐसी आराधना करो, जिसके फलस्वरूप

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi
In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanda Peeth

भगवान् रुद्र प्रसन्न हो जायँ। इनकी प्रसन्नता-मात्रसे सर्वज्ञता सुलभ हो जाती है।' ब्रह्माजीके ऐसा कहनेपर वे देवता भगवान् रुद्रकी स्तुति करने लगे।

देवगण बोले—महात्मन्! आप देवताओंके अधिष्ठाता, तीन नेत्रवाले, जटा-मुकुटसे सुशोभित तथा महान् सर्पका यज्ञोपवीत पहनते हैं। आपके नेत्रोंका रंग कुछ पीला और लाल है। भूत और वेताल सदा आपकी सेवामें संलग्न रहते हैं। ऐसे आप प्रभुको हमारा नमस्कार है। भगके नेत्रको बींधनेवाले भगवन्! आपके मुखसे भयंकर अट्टहास होता है। कपर्दी और स्थाणु आपके नाम हैं। पूषाके दाँत तोड़नेवाले भगवन्! आपको हमारा नमस्कार है। महाभूतोंके संरक्षक प्रभो! आपको हम नमस्कार करते हैं। प्रभो! भविष्यमें वृषभ या धर्म आपकी ध्वजाका चिह्न होगा और त्रिपुरका आप विनाश करेंगे। साथ ही आप अन्धकासुरका भी हनन करेंगे। भगवन्! आपका कैलासपर सुन्दर निवास-स्थान है। आप हाथीका चर्म वस्त्ररूपसे धारण करते हैं। आपके सिरका ऊपर उठा हुआ केश सबको भयभीत कर देता है अतः आपका 'भैरव' नाम है। प्रभो! आपको हमारा बारंबार नमस्कार है। देवेश्वर! आपके तीसरे नेत्रसे आगकी भयंकर ज्वाला निकलती रहती है। आपने चन्द्रमाको मुकुट बना रखा है। आगे आप कपाल धारण करनेका नियम पालन करेंगे। ऐसे आप सर्वसमर्थ प्रभुको हमारा नमस्कार है। प्रभो! आपके द्वारा 'दारुवन'का विध्वंस होगा। नीले कण्ठ एवं तीखे त्रिशूलसे शोभा पानेवाले भगवन्! आपने महान् सर्पको कङ्कण बना रखा है, ऐसे तिग्म त्रिशूली (तेज त्रिशूलवाले) आप देवेश्वरको नमस्कार है। यज्ञमूर्ते! आप हाथमें प्रचण्ड दण्ड धारण करते हैं। आपके मुखमें वडवानलका निवास है। वेदान्तके द्वारा आपका रहस्य जाना जा सकता है। ऐसे आप प्रभुको बारंबार नमस्कार है। शम्भो! आपने दक्षके यज्ञका विध्वंस किया है। शिव! जगत् आपसे भय मानता है। भगवन्! आप विश्वके शासक हैं। विश्वके उत्पादक तथा कपर्दी नामके जटाजूटको धारण करनेवाले महादेव! आपको नमस्कार है।

इस प्रकार देवताओंद्वारा स्तुति किये जानेपर प्रचण्ड धनुषधारी सनातन शम्भु बोले—'सुरगणो! मैं देवताओंका अधिष्ठाता हूँ। मेरे लिये जो भी काम हो, वह बताओ।'

देवताओंने कहा—प्रभो! आप यदि प्रसन्न हैं तो हमें वेदों एवं शास्त्रोंका सम्यक् प्रकारसे ज्ञान यथाशीघ्र प्रदान करनेकी कृपा करें। साथ ही रहस्यसहित यज्ञोंकी विधि भी हमें ज्ञात हो जाय।

महादेवजी बोले—देवताओ! आप सब-के-सब एक ही साथ पशुका रूप धारण कर लें और मैं सबका स्वामी बन जाता हूँ, तब आप सभी अज्ञानसे मुक्ति पा जायँगे। फिर देवताओंने भगवान् शम्भुसे कहा—'बहुत ठीक, ऐसा ही होगा। अब आप सर्वथा पशुपति हो गये।' उस समय ब्रह्माजीका अन्तःकरण प्रसन्नतासे भर गया। अतः उन्होंने उन पशु-पतिसे कहा—'देवेश! आपके लिये चतुर्दशी तिथि निश्चित है—इसमें कोई संशय नहीं। जो द्विज उस चतुर्दशी तिथिके दिन श्रद्धापूर्वक आपकी उपासना करें, गेहूँसे तैयार किये पक्वान्न-द्वारा अन्य ब्राह्मणोंको भोजन करायें, उनपर आप परम संतुष्ट हों और उन्हें उत्तम स्थानका अधिकारी बना दें।'

इस प्रकार अव्यक्तजन्मा ब्रह्माजीके कहनेपर

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भगवान् रुद्रने पूषाके दाँत तथा भगके नेत्र पूर्ववत् कर दिये। फिर सभीको यज्ञकी समाप्तिका फल भी प्रदान किया तथा देवताओंके अन्त:करणमें परम विशुद्ध सम्पूर्ण ज्ञान भर दिया। इस प्रकार परब्रह्म परमात्माने पूर्वकालमें रुद्रको प्रकट किया था। इसी कार्यका सम्पादन करनेसे वे देवताओंके अधिष्ठाता कहलाते हैं।

जो मनुष्य प्रात:काल उठकर प्रतिदिन इस कथाका श्रवण करता है, वह सम्पूर्ण पापोंसे छूटकर भगवान् रुद्रके लोकको प्राप्त करता है। [अध्याय ३३]

अमावास्या तिथिकी महिमाके प्रसङ्गमें पितरोंकी उत्पत्तिका कथन

महातपाजी कहते हैं—राजन्! अब मैं पितरोंकी उत्पत्तिका प्रसङ्ग कहता हूँ, तुम उसे सुनो। पूर्व समयकी बात है—प्रजापति ब्रह्माजी अनेक प्रकारकी प्रजाओंका सृजन करनेके विचारसे मनको एकाग्र करके बैठ गये। फिर उनके मनसे तन्मात्राएँ* बाहर निकलीं। उन्होंने उन सबको प्रधानता दी और 'इनको किन रूपोंसे सुशोभित करें'—यों विचारने लगे। कारण, वे सभी ब्रह्माजीके शरीरमें पहलेसे ही थीं और वहींसे पुन: ये धूम्रवर्णवाली तन्मात्राएँ प्रकट हुई थीं। फिर वे चमककर देवताओंसे कहने लगीं—'हम सोमरस पीना चाहती हैं।' साथ ही उनके मनमें ऊपरके लोकमें जानेकी इच्छा हुई। उन सबोंने सोचा—'हम आकाशमें आसन जमाकर वहीं तपस्या करें।' ऊपर जानेके लिये वे मुख उठाकर तिरछे मार्गका अवलम्बन करना ही चाहती थीं, इतनेमें उन्हें देखकर ब्रह्माजीने कहा—'समस्त गृहाश्रमियोंका कल्याण करनेके लिये आपलोग पितर होकर रहें।' ये जो ऊपर मुख करके जाना चाहते हैं, इनका नाम 'नान्दीमुख' होगा। इस प्रकार कहकर ब्रह्माजीने उनके मार्गका भी निरूपण कर दिया। राजन्! उस समय ब्रह्माजीने उन पितरोंके लिये मार्ग सूर्यका दक्षिणायनकाल बता दिया। इस प्रकार प्रजाकी सृष्टि कर वे जब मौन हो गये, तब पितरोंने उनसे कहा—'भगवन्! हमें जीविका देनेकी कृपा कीजिये, जिससे सुख प्राप्त कर सकें।'

ब्रह्माजी बोले—तुम्हारे लिये अमावास्याकी तिथि ही दिन हो। उस तिथिमें मनुष्य जल,तिल और कुशसे तुम्हारा तर्पण करेंगे। इससे तुम परम तृप्त हो जाओगे। इसमें कुछ भी संदेह नहीं है। उस अमावास्या तिथिमें तिल देनेका विधान है। पितरोंके प्रति श्रद्धा रखनेवाला जो पुरुष तुम्हारी उपासना करेगा, उसपर अत्यन्त संतुष्ट होकर यथाशीघ्र वर देना तुम्हारा परम कर्तव्य है। [अध्याय ३४]

पूर्णिमा तिथिकी महिमाके प्रसङ्गमें उसके स्वामी चन्द्रमाकी उत्पत्तिका वर्णन

महातपाजी कहते हैं—राजन्! यशस्वी अत्रि मुनि ब्रह्माजीके मानस पुत्र हैं। उन्हींके यहाँ पुत्ररूपसे चन्द्रमाका प्राकट्य हुआ था। दक्षप्रजापतिने उन्हें अपना जामाता बना लिया। दक्षकी जो सत्ताईस दाक्षायणी कन्याएँ कही गयी हैं, वे सभी परम माननीया कन्याएँ चन्द्रमाकी पत्नी हुईं। उन कन्याओंमें रोहिणी सबसे श्रेष्ठ थीं। सुनते हैं, चन्द्रमा अकेली उस रोहिणीसे ही अधिक प्रेम करते थे, दूसरी अन्य कन्याओंसे नहीं। तब अन्य सभी कन्याएँ पिता दक्षके पास आयीं और

* पञ्चज्ञानेन्द्रियोंके विषय शब्द-स्पर्शादि ही तन्मात्राएँ हैं। (इनका प्रयोग संस्कृतमें क्लीब एवं पुंलिङ्गमें दृष्ट है।)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

उन्होंने चन्द्रमाके विषम व्यवहारका वृत्तान्त सुनाया। दक्ष भी चन्द्रमाके समीप आये और ऐसा न करनेके लिये बार-बार समझाया; किंतु चन्द्रमाने उनकी समतावाली बातपर विशेष ध्यान नहीं दिया। तब दक्षने चन्द्रमाको शाप दे दिया—'तुम (धीरे-धीरे क्षीण होकर) अस्त हो जाओ।'

इस प्रकार दक्षके कहनेपर उनके शापसे चन्द्रमाको क्षय (रोग) हो गया और अन्तमें वे अमावास्याको सर्वथा अस्त हो गये। उनके अभावमें देवता, मनुष्य, पशु, वृक्ष और विशेषतः ओषधियाँ—प्रायः सब-के-सब नष्ट-से हो गये। जब ओषधियोंका अत्यन्त अभाव हो गया, तो मुख्य देवताओंकी आतुरता बढ़ गयी। वे कहने लगे—'चन्द्रमा वृक्षोंकी जड़में स्थित हो गया।'* अब वे चिन्तातुर देवता भगवान् विष्णुकी शरण गये। श्रीहरिने उनसे पूछा—'आप बतलायें, एतदर्थ मैं क्या करूँ?' तब देवताओंने उनसे कहा—'भगवन्! दक्षने चन्द्रमाको शाप दे दिया है, जिससे वे तिरोहित हो गये हैं।'

उस समय उन प्रभुने देवताओंसे कहा—'सुरगणो! तुमलोग गर्जनेवाले समुद्रमें चारों ओर ओषधियाँ डाल दो और बड़ी सावधानीसे उसका मन्थन आरम्भ कर दो।' देवताओंसे ऐसा कहकर स्वयं भगवान् श्रीहरिने फिर महाभाग शंकर एवं ब्रह्माजीको स्मरण किया, साथ ही रस्सीकी जगह प्रयुक्त होनेके लिये वासुकिनागको आज्ञा दी। फिर तो वे सभी एकत्र होकर समुद्रका मन्थन करने लगे। राजन्! जब समुद्र भलीभाँति मथा गया तो चन्द्रमा पुनः प्रकट हो गये। जिन परम पुरुष परमात्माका क्षेत्रज्ञ नाम है, उन्हें ही प्राणियोंका जीवात्मा चन्द्रमा समझना चाहिये। अब परोक्ष मूर्तिके अतिरिक्त वे सुन्दर सोमका स्वरूप धारण करके पृथक् रूपसे भी प्रकाशित होने लगे। सभी देवता, मानव, वृक्ष और ओषधियाँ इन्हीं सोलह कलावाले परम प्रभुका आश्रय पाकर जीवन धारण करनेमें समर्थ हैं। उस समय सोमको उन्हीं प्रभुका स्वरूप समझकर रुद्रने उनकी द्वितीया तिथिकी (अमृता) कलाको अपने मस्तकपर धारण कर लिया। जल उन्हीं (शिव—परमात्मा)-का स्वरूप है। इसीसे उन्हें विश्वमूर्ति कहा गया है। चन्द्रमापर प्रसन्न होकर ब्रह्माजीने इन्हें पूर्णमासी तिथि प्रदान की। राजन्! इस तिथिमें उपवास रहकर चन्द्रमाकी उपासना एवं ध्यान करना चाहिये। व्रतीको अन्नका आहार करना चाहिये। इस व्रतके फलस्वरूप चन्द्रमा उसे ज्ञान, कान्ति, पुष्टि, धन, धान्य और मोक्ष सुलभ कर देते हैं। [विशेष द्रष्टव्य—अग्नि-नारदादि पुराणों, 'नारदसंहिता', 'रत्नमाला' एवं मुहूर्तचिन्ता-मणि आदि ज्योतिषग्रन्थोंमें—**तिथीशा वह्निकौ गौरी गणेशोऽहिर्गुहो रविः। शिवो दुर्गान्तको विश्वे हरिः कामः शिवः शशी॥** (मुहू० चि० १।३) आदिसे क्रमशः कहीं अग्नि, ब्रह्मा, पार्वती, गणेश, नाग, गुह, सूर्य, शिव, दुर्गा, यम, विश्वदेवता, विष्णु, काम, शिव और चन्द्रमाको प्रतिपदादि तिथियोंका स्वामी बतलाया गया है और कहीं ठीक यह वराहपुराणवाला ही क्रम है। पर इसमें सुन्दर कथाओंद्वारा ज्योतिषके रहस्यको स्पष्टकर विशेष सिद्धि-प्राप्तिके सरल साधन निर्दिष्ट हुए हैं। इससे पाठक-पाठिकाओंको अवश्य लाभ उठाना चाहिये।] [अध्याय ३५]

* यह वैदिक मान्यता है, चन्द्रमा अमावास्याको ओषधि, तृण एवं वीरुधोंमें वास करता है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

प्राचीन इतिहासका वर्णन

महातपा कहते हैं—राजन्! त्रेतायुगके आदिमें जो वीर मणिसे उत्पन्न हुए थे तथा जिनमेंसे एक तुम भी हो, अब उनका वृत्तान्त बताता हूँ, सुनो। नरेन्द्र! सत्ययुगमें जिसका नाम सुप्रभ था, वह तुम ही हो। यहाँ 'प्रजापाल'के नामसे भी तुम्हारी प्रसिद्धि हुई है। राजन्! शेष महाबली नरेश त्रेतायुगमें होंगे। जो दीप्ततेजा था, उसका नाम शान्त कहा गया है। सुरश्मि महाबली राजा शशकर्णके नामसे ख्याति प्राप्त करेगा। शुभदर्शन ही पाञ्चाल राजा होगा—इसमें संदेह नहीं है। सुशान्ति अङ्गवंशमें जन्म लेकर सुन्दर नामसे विख्यात होगा। सुन्द ही (सत्ययुगके अन्तमें) मुचुकुन्द हुआ। इसी प्रकार सुद्युम्न तुरु नामसे, सुमना सोमदत्त नामसे तथा शुभ संवरण नामसे विख्यात हुए। सुशील वसुदान हुआ और सुखद असुपति नामक राजा हुआ। शम्भु सेनापतिके नामसे प्रसिद्ध हुआ। कान्त दशरथके नामसे विख्यात राजा हुए और सोमकी राजा जनक नामसे प्रसिद्धि हुई। राजन्! ये सभी नरेश त्रेतायुगमें हुए थे। वे इस भूमण्डलके राज्य-सुखको भोगकर अनेक प्रकारके यज्ञोंद्वारा भगवान्‌की आराधना करके निःसंदेह स्वर्गको प्राप्त करेंगे।

भगवान् वराह कहते हैं—वसुंधरे! यह उत्तम 'ब्रह्मविद्यामृत' नामक आख्यान है। इसे सुनकर राजर्षि प्रजापालको अत्यन्त आनन्द हुआ और वे अन्तमें तपस्या करनेके लिये वनमें चले गये। इस प्रकार तप एवं ब्रह्मका चिन्तन करते हुए उन्होंने पाञ्चभौतिक शरीरका परित्याग कर दिया और अन्तमें ब्रह्ममें ही लीन हो गये। राजा प्रजापालने यह तपस्या वृन्दावनमें की थी। वहाँ तपस्या करते हुए उन्होंने भगवान् गोविन्दकी इस प्रकार स्तुति की थी।

राजा प्रजापालने कहा—जो सम्पूर्ण जगत्‌के रूपमें विराजमान हैं, गोपेन्द्र एवं उपेन्द्र—जिनके नाम हैं, जिनकी किसीसे तुलना नहीं की जा सकती, जो एकमात्र संसार-चक्रको चलानेमें कुशल हैं तथा पृथ्वी जिनके आश्रयपर टिकी है, उन देवेश्वर भगवान् गोविन्दको मैं नमस्कार करता हूँ। श्रीकृष्ण! आप गौओंके रक्षक हैं। जो दुःखरूपी सैकड़ों लहरोंके उठनेसे भयंकर बन गया है तथा जिसमें वृद्धावस्थारूपी जलकी भँवरियाँ उठ रही हैं एवं जो पातालतक गहरा है, ऐसे संसार-समुद्रमें मैं गोते खाता हूँ। ऐसी स्थितिमें मुझे सुख देनेमें समर्थ एकमात्र आप अप्रमेयस्वरूप प्रभु ही हैं। विभो! आपको मेरा नमस्कार है। भगवन्! आधि-व्याधियों तथा ग्रहोंके द्वारा मैं बार-बार इधर-उधर घसीटा जा रहा हूँ। उपेन्द्र! आप सम्पूर्ण प्राणियोंके बन्धु हैं। जनार्दन! दुःखी एवं व्याकुल व्यक्तिपर कृपा करना आपका स्वाभाविक गुण है। अतः महाभाग! आपको मेरा नमस्कार है। सुरेश! सर्वज्ञोंमें आपका सबसे श्रेष्ठ स्थान है। यह अखिल विश्व आपके प्रयत्नसे ही विस्तृत है। प्रभो! आपकी छत्र-छायामें गोप आनन्द करते हैं। चक्रधर प्रभो! मैं संसारसे भयभीत हो गया हूँ। अतः मेरी रक्षा करनेकी कृपा कीजिये। अच्युत! आप परम देवता हैं। सुरसमाजमें आपकी प्रधानता है। आप पुराणपुरुष हैं। चन्द्रमामें प्रकाश आपका ही तेज है। अग्नि आपका मुख है। गोपेन्द्र! मैं संसारमें भटक रहा हूँ। मेरी रक्षा आप करें। सुरेश! भला इस सुख-दुःख आदि द्वन्द्वमय संसारमें रहनेवाला कौन ऐसा प्राणी है, जो आपकी मायाको पार कर सके। गोपेन्द्र! आप अगोत्र, अस्पर्श, अरूप, अगन्ध, अनिर्देश्य और अज हैं। जो विद्वान् व्यक्ति ऐसे आप पूजनीय

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi
In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanda Peeth

पुरुषकी उपासना करते हैं, उन्हें मुक्तिका पात्र माना जाता है। आपकी न कोई मूर्ति है और न कोई कर्म। आप परम कल्याणमय हैं। आप शङ्ख, चक्र एवं कमल धारण करते हैं—यह पुराणोंका कथन या सारी स्तुति औपचारिकमात्र है। मैं आपको निरन्तर नमस्कार करता हूँ। आप वामनका अवतार धारण करके तीनों लोकोंपर विजय पा चुके हैं। आप कृष्णादि चतुर्व्यूहसे शोभा पाते हैं। शम्भु, विभु, भूतपति और सुरेश—ये सब आपके ही नाम हैं। ऐसे अनन्त एवं विष्णुनामधारी आप प्रभुको मैं प्रणाम करता हूँ। भगवन्! आप स्थावर-जङ्गम अखिल जगत्की सृष्टि, पालन और संहार करते हैं। प्रभो! मैं मुक्ति चाहता हूँ। अतः आप अभी मुझे उस स्थानपर ले चलें, जहाँ गये हुए योगी पुरुष पुनः वापस नहीं आते। विश्वमूर्ते! गोविन्द! आपकी जय हो! सर्वज्ञ, अप्रमेय एवं विश्वेश्वर! आपकी जय हो, जय हो!

भगवान् वराह कहते हैं—वसुंधरे! उस समय राजा प्रजापालने इस प्रकार भगवान् गोविन्दकी स्तुति की और अपने शरीरको उनमें लीन कर दिया और वे शाश्वत धामको पधार गये।

[अध्याय ३६]

आरुणि और व्याधका प्रसङ्ग, नारायण-मन्त्र-श्रवणसे बाघका शापसे उद्धार

पृथ्वीने पूछा—भगवन्! आप सम्पूर्ण प्राणियोंका सृजन करते हैं। प्रभो! मैं आपकी उपासनाकी विधि जानना चाहती हूँ—अर्थात् श्रद्धालु स्त्रियाँ अथवा पुरुष आपकी उपासना किस प्रकार करते हैं? विभो! आप मुझे यह सब बतानेकी कृपा कीजिये।

भगवान् वराह कहते हैं—देवि! मैं भावसे ही वशीभूत होता हूँ। मैं न तो प्रचुर धनोंसे सुलभ हूँ और न जपादि अन्य उपासनासे ही। साथ ही भक्त लोग मुझे तपद्वारा भी प्राप्त करते हैं—एतदर्थ मैं तुमसे कुछ साधनोंका निर्देश करता हूँ। जो मनुष्य मन, वाणी और कर्मसे मुझमें अपना चित्त लगाये रहता है, उसके लिये अनेक प्रकारके (तपोरूप) व्रत हैं। उन्हें मैं बताता हूँ, सुनो। अहिंसा, सत्यभाषण, चोरी न करना और ब्रह्मचर्यका पालन करना—ये मानसिक व्रत कहे जाते हैं।[१] दिनमें एक समय भोजन करना अथवा केवल एक बार रातमें भोजन करना पुरुषोंके लिये शारीरक व्रत (या तप) हैं। इसमें कोई अन्यथा विचार नहीं करना चाहिये। वेद पढ़ना, भगवान् विष्णुके नाम-यशका कीर्तन करना, सत्य बोलना, किसीकी चुगली न करना, हितकारी मधुर बात कहना, सबका हित सोचना, धर्मपर आस्था रखना और धर्मयुक्त बातें बोलना—ये वाणीके उत्तम व्रत हैं।

वसुंधरे! इस विषयमें एक प्रसङ्ग सुना जाता है—पूर्वकल्पमें आरुणि नामसे विख्यात एक महान् तपस्वी ब्राह्मण-पुत्र थे। वे ब्राह्मणश्रेष्ठ किसी उद्देश्यसे तप करनेके लिये वनमें गये और वहाँ वे उपवासपूर्वक तपस्या करने लगे। उन ब्राह्मणने देविका नदी[२]के सुन्दर तटपर अपने रहनेका आश्रम बनाया था। एक बार किसी दिन वे ब्राह्मण देवता स्नान-पूजा करनेके विचारसे उस नदीके तटपर गये। स्नान करके वे जब जप कर

१. तुलनीय गीता १७। १४

२. इस नामकी कई नदियाँ हैं, पर यहाँ यह पंजाबकी देग नदी है; 'महाभारत' तथा 'स्कन्दपुराण'में इसका बहुधा उल्लेख है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

रहे थे तो उन्होंने सामनेसे आते हुए एक भयंकर व्याधको देखा, जो हाथमें बड़ा-सा धनुष लिये हुए था। उसकी आँखें बड़ी क्रूर थीं। वह उन ब्राह्मणके वल्कल वस्त्र छीनने और उन्हें मारनेके विचारसे आया था। उस ब्रह्मघातीको देखकर आरुणिके मनमें घबड़ाहट उत्पन्न हो गयी और वे भयसे थरथर काँपने लगे। किंतु ब्राह्मणके अन्त:शरीरमें भगवान् नारायणको देखकर वह व्याध डर-सा गया। उसने उसी क्षण धनुष और बाण हाथसे गिरा दिये और कहा।

व्याधने कहा—ब्रह्मन्! मैं आपको मारनेके विचारसे ही यहाँ आया था; किंतु आपको देखते ही पता नहीं मेरी वह क्रूर-बुद्धि अब कहाँ चली गयी। विप्रवर! मेरा जीवन सदा पाप करनेमें ही बीता है। अबतक मेरे द्वारा हजारों ब्राह्मण मृत्युके मुखमें प्रविष्ट हो गये। प्राय: दस हजार साध्वी स्त्रियोंका भी मैंने अन्त कर डाला है। अहो, ब्राह्मणकी हत्या करनेवाला मैं पापी पता नहीं, किस गतिको प्राप्त करूँगा? महाभाग! अब आपके पास रहकर मैं भी तप करना चाहता हूँ। आप कृपया उपदेश देकर मेरा उद्धार करें।

व्याधके इस प्रकार कहनेपर उसे ब्रह्मघाती एवं महान् पापी समझकर द्विजश्रेष्ठ आरुणिने उसे कोई उत्तर नहीं दिया; परंतु हृदयमें धर्मकी अभिलाषा जग जानेके कारण ब्राह्मणके कुछ न कहनेपर भी वह व्याध वहीं ठहर गया। ब्राह्मण भी नदीमें स्नानकर वृक्षके नीचे बैठे हुए तप करते रहे। इस प्रकार अब उन दोनोंका नियमित धार्मिक कार्यक्रम चलने लगा। इसी प्रकार कुछ दिन बीत गये। एक दिनकी बात है—आरुणि स्नान करने नदीके जलमें भीतर गये थे। इधर कोई भूखसे व्याकुल बाघ तबतक उन शान्तस्वरूप मुनिको मारनेके लिये आ पहुँचा। पर इसी बीच व्याधने बाघको मार डाला। मरनेपर उस बाघके शरीरसे एक पुरुष निकला। बात ऐसी थी—जिस समय आरुणि जलमें थे और बाघ उनपर झपटा, उस समय घबड़ाहटके कारण मुनिके मुँहसे सहसा '**ॐ नमो नारायणाय**' यह मन्त्र निकल गया। बाघके प्राण तबतक उसके कण्ठमें ही थे और उसने यह मन्त्र सुन लिया। प्राण निकलते समय केवल इस मन्त्रको सुनलेनेसे वह एक दिव्य पुरुषके रूपमें परिणत हो गया। तब उसने कहा—'द्विजवर! जहाँ भगवान् विष्णु विराजमान हैं, मैं वहीं जा रहा हूँ। आपकी कृपासे मेरे सारे पाप धुल गये। अब मैं शुद्ध एवं कृतार्थ हो गया।'

इस प्रकार उस पुरुषके कहनेपर विप्रवर आरुणिने उससे पूछा—'नरश्रेष्ठ! तुम कौन हो?' राजेन्द्र! तब पूर्वजन्ममें जो बात बीती थी, उसे बतलाते हुए वह कहने लगा—'इसके पहले जन्ममें मैं 'दीर्घबाहु' नामसे प्रसिद्ध एक राजा था। समस्त वेद, सम्पूर्ण धर्मशास्त्र मुझे सम्यक् प्रकारसे अभ्यस्त थे। अन्य शास्त्र भी मुझसे अपरिचित नहीं थे। पर अन्य ब्राह्मणोंसे मेरा कोई प्रयोजन न था। मैं प्राय: ब्राह्मणोंका अपमान भी कर देता था। मेरे इस व्यवहारसे सभी ब्राह्मण क्रुद्ध हो गये और उन्होंने मुझे भीषण शाप दे दिया—'तू अत्यन्त निर्दयी बाघ होगा; क्योंकि तेरे द्वारा ब्राह्मणोंका भीषण अनादर हो रहा है। तुझे किसी बातका स्मरण भी न रहेगा। अरे प्रचण्ड मूर्ख! मृत्युके समय भगवान् नारायणका नाम तेरे कानोंमें पड़ेगा।'

विप्रवर! वे सभी ब्राह्मण वेदके पारगामी विद्वान् थे। उनका भीषण शाप मुझे लग गया। मुने! जब ब्राह्मणोंने शाप दिया तो मैं उनके पैरोंपर गिर पड़ा तथा उनसे कृपापूर्वक क्षमाकी भीख माँगी। मुझपर उनकी कृपादृष्टि हो गयी।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

अतएव उन्होंने मेरे उद्धारकी भी बात बता दी और कहा—'राजन्! प्रत्येक छठे दिन मध्याह्नकालमें तुझे जो कोई मिले, उसे तू खा जाना—वह तेरा आहार होगा। जब तुझे बाण लगेगा और उसके आघातसे तेरे प्राण कण्ठमें आ जायँ, उस समय किसी ब्राह्मणके मुखसे जब '**ॐ नमो नारायणाय**' यह मन्त्र तेरे कानोंमें पड़ेगा, तब तुझे स्वर्गकी प्राप्ति हो जायगी—इसमें कोई संशय नहीं।' मुने! मैंने दूसरेके मुखसे भगवान् विष्णुका यह नाम सुना है। परिणामस्वरूप मुझ ब्रह्मद्वेषीको भी भगवान् नारायणका दर्शन सुलभ हो गया। फिर जो ब्राह्मणोंका सम्मानपूर्वक अपने मुँहसे '**ॐ हरये नमः**' इस मन्त्रका उच्चारण करते हुए प्राणोंका त्याग करता है तो वह परमपवित्र पुरुष जीतेजी ही मुक्त है। मैं भुजा उठाकर बार-बार कहता हूँ—यह सत्य है, सत्य है और निश्चय ही सत्य है। ब्राह्मण चलते-फिरते देवता हैं। भगवान् पुरुषोत्तम कूटस्थ पुरुष हैं।'

ऐसा कहकर शुद्ध अन्तःकरणवाला वह बाघ (दिव्य पुरुष) स्वर्ग चला गया और ब्राह्मण आरुणि भी बाघके पंजेसे छूटकर व्याधसे कहने लगे—आज बाघ मुझे खानेके लिये उद्यत हो गया था। ऐसे अवसरपर तुमने मेरी रक्षा की है। अतएव उत्तम व्रतका पालन करनेवाले वत्स! मैं तुमपर संतुष्ट हूँ, तुम वर माँगो।

व्याधने कहा—ब्राह्मणदेवता! मेरे लिये यही वर पर्याप्त है, जो आप प्रेमपूर्वक मुझसे बातें कर रहे हैं। भला, आप ही बताइये—इससे अधिक वरसे मुझे करना ही क्या है?

आरुणिने कहा—व्याध! तुम्हारी तपस्या करनेकी इच्छा थी, अतएव तुमने मुझसे प्रार्थना की थी। किंतु अनघ! उस समय तुममें अनेक प्रकारके पाप थे। तुम्हारा रूप बड़ा भयंकर था। परंतु अब तुम्हारा अन्तःकरण परम पवित्र हो गया है; क्योंकि देविका नदीमें स्नान करने, मेरे दर्शन करने तथा चिरकालतक भगवान् विष्णुके नाम सुननेसे तुम्हारे पाप नष्ट हो गये हैं—इसमें कोई संशय नहीं। साधो! अब मेरा एक वर स्वीकार कर लो, वह यह कि तुम अब यहीं रहकर तपस्या करो। तुम इसके लिये बहुत पहलेसे इच्छुक भी थे।

व्याध बोला—ऋषे! आपने जिन परम प्रभु भगवान् नारायण और विष्णुकी चर्चा की है, उन्हें मानव कैसे प्राप्त कर सकते हैं? यह बतानेकी कृपा करें—यही मेरा अभीष्ट वर है।

ऋषिने कहा—व्याध! कोई भी पुरुष सनातन श्रीहरिके उद्देश्यसे जिस किसी व्रतको भक्तिपूर्वक करनेमें संलग्न हो जाय तो वह उन्हें प्राप्त कर लेता है। पुत्र! तुम ऐसा जानकर भगवान् नारायणका यह व्रत करो। (व्रतका रूप यह है—) कभी भी गणान्न—ब्राह्मणसंघके लिये निर्मित* अन्न नहीं खाना चाहिये और झूठ भी नहीं बोलना चाहिये। व्याध! मैंने तुमसे जो इस उत्तम व्रतकी बात बतायी है, यह बिलकुल सत्य है। अब तुम तपस्वी बनकर जबतक इच्छा हो, यहाँ रहो।

भगवान् वराह कहते हैं—वसुंधरे! आरुणिको यह निश्चय हो गया कि यह व्याध मोक्ष पानेके लिये अत्यन्त चिन्तित है। अतः उन वरदाता ब्राह्मणने उसे इच्छित वर दे दिया। फिर एक दिन वे वहाँसे उठकर सहसा कहीं चले गये।

[अध्याय ३७]

---

* यहाँ मूलमें—'गणान्न' शब्द है। मनु ४। १०९ तथा ११९ में भी यह शब्द आया है। वहाँ सभी व्याख्याता इसका प्रायः 'शतब्राह्मणसंघान्नम्'—यही अर्थ करते हैं। मोनियर विलियमके संस्कृत-अँग्रेजी-कोशमें यही भाव और अधिक स्पष्ट है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

सत्यतपाका प्राचीन प्रसङ्ग

भगवान् वराह कहते हैं—पृथ्वि! अब वह व्याध साधुओंके मार्गका अवलम्बनकर मन-ही-मन गुरुका ध्यान करते हुए निराहार रहकर तपस्या करने लगा। भिक्षा लेनेका समय आनेपर वह वृक्षसे गिरे सूखे पत्ते खा लिया करता था। एक दिनकी बात है, उसे भूख लगी तो किसी वृक्षके नीचे गया। भूखके कारण पेड़के पाससे उसे सूखे पत्ते उठाकर खानेकी इच्छा हुई। पर वैसा करते ही आकाशवाणी हुई—'अरे, ये शाखोटके निकृष्ट पत्ते हैं, इन्हें मत खाओ।' यह शब्द पर्याप्त उच्च स्वरसे हुआ था। अतः वह व्याध उसे छोड़कर हट गया। अब वह किसी दूसरे वृक्षका पत्ता उठाकर लेने लगा। अब पुनः वहाँ भी वैसी ही ध्वनि हुई। इस प्रकारकी आपत्ति मानकर व्याधने उस दिन कुछ भी न खाया और निराहार रहकर बड़ी सावधानीके साथ गुरुदेव आरुणिको स्मरण करते हुए वह तप करनेमें तत्पर रहा।

इस प्रकार वह तप कर ही रहा था कि इतनेमें महर्षि दुर्वासा उस व्याधके पास पधारे। उन ऋषिने देखा—व्याधके प्राणमात्र शरीरमें हैं, पर तपस्याके तेजसे यह ऐसा चमक रहा है, मानो घी डालनेसे अग्नि प्रदीप्त हो रही हो। उस व्याधने उन मुनिवर दुर्वासाजीको सिर झुकाकर प्रणाम किया और बोला—'भगवन्! आपके दर्शनसे मैं कृतार्थ हो गया। आज श्राद्धका दिन है। आप अतिथि देवता मेरे पास पधारे हैं। सूखे पत्ते आदिसे श्राद्ध करके आप द्विजवरको मैं तृप्त करना चाहता हूँ।' इधर इसमें कितनी पवित्र भावनाएँ हैं, इन्द्रियाँ कितनी वशमें हो गयी हैं तथा इसने तपसे कितना बल प्राप्त कर लिया है—यह जाननेके लिये वे मुनि भी उद्यत थे ही। अतः उन्होंने उच्च स्वरसे व्याधसे कहा—'ठीक है, तुम अपने पास आये मुझ अतिथिको यव, गेहूँ एवं धान्यसे भलीभाँति सिद्ध किया हुआ अन्न दो। मैं भूखसे अत्यन्त पीडित हो रहा हूँ।' दुर्वासाजीके ऐसा कहनेपर व्याध बड़ी चिन्तामें पड़ गया। वह सोचने लगा—'यह सब सामग्री कहाँसे मिलेगी।' वह इस प्रकार सोच ही रहा था इतनेमें एक सोनेका पवित्र पात्र आकाशसे गिरा। वह पात्र सिद्ध अन्नोंसे पूर्ण था। व्याधने उसे हाथमें उठा लिया और उसे लेकर वह डरता हुआ दुर्वासा मुनिसे कहने लगा—'ब्रह्मन्! आप परम ब्रह्मज्ञ पुरुष हैं। जबतक मैं भिक्षा लाने जाता हूँ, तबतक आप यहीं रहनेकी कृपा करें। मुझपर किसी प्रकार आपकी इतनी कृपा अवश्य होनी चाहिये।'

इस प्रकार कहकर वह साधु व्याध भिक्षा माँगनेके लिये जैसे ही आगे बढ़ा—इतनेमें उसे बहुत-से उपवन एवं अहीरकी बस्तियोंसे युक्त एक नगर दिखायी पड़ा। वहाँ पहुँचनेपर वृक्षोंमेंसे दूसरे अनेक पुरुष सुवर्णपात्र लिये निकल पड़े और विविध दिव्यान्नोंसे उसकी थालीको भर दिया। व्याध उसे लेकर अपनेको कृतार्थ-सा मानता हुआ अपने स्थानपर लौट आया। वहाँ आकर उसने जापकोंमें श्रेष्ठ महर्षि दुर्वासाको बैठे देखा। मुनिको देखकर उसने प्रसन्नतापूर्वक भिक्षाको एक पवित्र स्थानपर रख दिया और उन्हें प्रणाम कर कहा—'ब्रह्मन्! यदि आपकी मुझपर दया है तो कृपा करें, यह आसन लें और पैर धोकर पवित्र आसनपर बैठ जायँ।' व्याधके ऐसा कहनेपर उसके पवित्र तपोबलकी परीक्षा करनेके विचारसे महर्षिने कहा—'व्याध! मैं नदी जानेमें असमर्थ हूँ। मेरे पास जलपात्र भी नहीं है; फिर मेरा पैर कैसे धुल सकता है?' मुनिके ऐसा कहनेपर

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth

व्याध सोचने लगा—'क्या अब करूँ? मुनिजीका मेरे यहाँ भोजन कैसे हो सकेगा?' फिर उस चतुर व्याधने मन-ही-मन अपने गुरु आरुणिको स्मरण किया। साथ ही उस सुन्दर बुद्धिवाले व्याधने उस देविका नदीकी भी स्तुतिपूर्वक शरण ली।

व्याध बोला—नदियोंमें श्रेष्ठ देविके! मैं व्याध हूँ। मैंने सदा पाप-ही-पाप किये हैं। ब्राह्मण-हत्या-जैसा महापाप भी कर चुका हूँ। देवि! फिर भी मैं आपको स्मरण कर आपकी शरण आया हूँ। आप मेरी रक्षा करें। देवता, मन्त्र और पूजनका विधान—यह सब मैं कुछ भी नहीं जानता। देवि! आप नदियोंमें प्रधान हैं। केवल गुरुके उत्तम चरणोंका ध्यान करनेसे मेरा सदा कल्याण होता आया है। अब आप मुझ पापीपर कृपा करें। आपगे! दुर्वासा ऋषि अपना पैर धो सकें, इस निमित्तसे आप उनके संनिकट पधारनेकी कृपा कीजिये।

इस प्रकार व्याधके प्रार्थना करनेपर पापनाशिनी देविका नदी वहीं पहुँच गयीं, जहाँ उत्तम व्रतका पालन करनेवाले दुर्वासा मुनि विराजमान थे। यह देखकर मुनिको बड़ा आश्चर्य हुआ। वे विस्मयविमुग्ध रह गये। साथ ही उन विद्वान् मुनिवर दुर्वासाके मनमें बड़ी प्रसन्नता हुई। उन्होंने हाथ-पैर धोकर उसके श्रद्धापूर्वक दिये हुए अन्नको खाया तथा आचमन किया। उस समय व्याधके शरीरमें केवल हड्डी ही शेष रह गयी थी। भूखके कारण वह अत्यन्त दुर्बल हो गया था। दुर्वासा ऋषिने उससे कहा—'अङ्गोंसहित वेद तथा रहस्यके साथ पद एवं क्रम, ब्रह्म-विद्या और पुराण—सभी तुम्हें प्रत्यक्ष हो जायँ।' इस प्रकारका वर देकर दुर्वासाजीने उसका नवीन नामकरण किया। उन्होंने कहा—'तुम अब ऋषियोंमें अग्रगण्य सत्यतपा नामक ऋषि होओगे।'*

मुनिवर दुर्वासाजीने जब इस प्रकार व्याधको वर दिया तो उसने मुनिसे कहा—'ब्रह्मन्! मैं व्याध होकर वेदोंका अध्ययन कैसे कर सकूँगा।'

ऋषि बोले—साधु व्याध! निराहार रहकर तपस्या करनेसे अब तुम्हारे पहलेके शरीरके संस्कार समाप्त हो गये हैं। तुम्हारा यह तपोमय शरीर उससे सर्वथा भिन्न है—इसमें कोई संशय नहीं। पूर्वकालीन अज्ञान भी शेष नहीं रह गया है। इस समय तुम्हारे अन्तःकरणमें शुद्धरूप अविनाशी परमात्मा निवास कर रहे हैं। अतः तुम परम पवित्र शरीरवाले बन गये हो—यह मैं तुमसे बिलकुल सच्ची बात बता रहा हूँ। मुने! इस कारण तुम्हें वेद और शास्त्र भलीभाँति प्रतिभासित—ज्ञात होंगे। [अध्याय ३८]

मत्स्यद्वादशीव्रतका विधान तथा फल-कथन

सत्यतपाने कहा—भगवन्! आप ब्रह्म-ज्ञानियोंके शिरोमणि हैं। आपने जो दो शरीरोंकी बात कही है, यह शरीरभेद कैसे है? आप यह मुझे बतलानेकी कृपा कीजिये।

दुर्वासाजी बोले—दो ही नहीं, किंतु शरीरके तीन भेद हैं—ऐसा कहना चाहिये। प्राणियोंको ये शरीर इसलिये मिलते हैं कि उनको पाकर वह पूर्वकृत भोग भोगे। तुम्हारी पूर्वकी अवस्था भले

* इसी पुराणमें आगे चलकर ९८वें अध्यायमें भगवान्ने बतलाया है कि वस्तुतः ये सत्यतपा इस जन्ममें भी वाल्मीकिके समान ब्राह्मण ही थे। केवल व्याधोंके संसर्गमें रहकर वे व्याध-से बन गये थे। फिर ऋषियोंके सत्सङ्गसे विशेषकर दुर्वासाके उपदेशसे वे ब्राह्मण हो गये—

स हि सत्यतपाः पूर्वं भृगुवंशोद्भवो द्विजः। दस्युसंसर्गसम्भूतो दस्युवत् समजायत॥
ततः कालेन महता ऋषिसङ्गात्पुनर्द्विजः। बभौ दुर्वाससा सम्यग्बोधितश्च विशेषतः॥

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

ही पापपूर्ण थी, क्योंकि उस समय तुममें ज्ञानका नितान्त अभाव था। पर वही तुम अब उत्तम व्रतका पालन करनेके कारण दूसरी अवस्थामें आ गये हो—ऐसा समझना चाहिये। ब्रह्मवेत्ता 'विद्वानोंने बताया है कि एक तीसरा भी शरीर है, जिसे इन्द्रियाँ अपना विषय नहीं बना सकतीं तथा जो धर्म और अधर्मको भोगनेके लिये मिलता है। इस प्रकार इसके तीन भेद हैं। धर्म एवं अधर्मके भोग तथा सांसारिक पदार्थोंके भोगका साधन होनेसे भी शरीरके तीन भेद सिद्ध होते हैं। पूर्व समयमें तुम्हारे द्वारा जो प्राणियोंका वध हुआ करता था, उससे वैसे तुम्हारे संस्कार भी बन गये थे। इसीलिये तुम्हें पापमय शरीरवाला कहा जाता था। लोग तुमको पापी कहते थे। किंतु अब निरन्तर तप और दया करनेके कारण तुम्हारी प्रवृत्ति परम पवित्र बन गयी है। इस समय तुम्हें यह धर्ममय दूसरा शरीर सुलभ हो गया है। इस शरीरसे वेदों और पुराणोंकी जानकारी प्राप्त करनेके तुम पूर्ण अधिकारी हो—इसमें कोई संशय नहीं। जैसे जबतक बालककी अवस्था आठ वर्षतककी रहती है, तबतक उसकी मानसिक वृत्तिमें कुछ और ही भाव भरे रहते हैं। वही जब आठ वर्षकी सीमा पार कर जाता है, तो उसकी चेष्टा दूसरी ही बन जाती है। अतः ब्रह्मका विवेचन करनेवाले महापुरुषोंने बताया है कि इसी प्रकार एक ही शरीर अवस्थाओंके भेदसे तीन भेदवाला कहा गया है। भेद केवल नाममें है—जैसे मिट्टी और घड़ा। इन वर्णोंके क्रमसे कर्मकाण्डके भी चार भेद बतलाये गये हैं।'

सत्यतपाने कहा—मुनिवरजी! आपने जिन परब्रह्म परमात्माकी बात कही है, उनके रूपको तो महात्मा एवं योगी पुरुष भी जाननेमें असमर्थ हैं। क्योंकि उन प्रभुमें नाम, गोत्र और आकारका अभाव है। जब उन परब्रह्म परमात्माकी कोई संज्ञा ही नहीं है तो वे जाने भी कैसे जा सकते हैं। गुरो! आप उनकी कोई ऐसी संज्ञा बतानेकी कृपा कीजिये, जिससे मैं उन्हें जान सकूँ। जिनका नाम वेदों एवं शास्त्रोंमें पढ़ा जाता है, क्या वे ही तो ये परब्रह्म परमात्मा नहीं हैं। उन्हें तो वेदोंमें पुरुष, पुण्डरीकाक्ष तथा स्वयं भगवान् नारायण एवं श्रीहरि कहा गया है। मुनिवर! उन्हें पानेके साधन अनेक प्रकारके यज्ञ तथा उचित प्रचुर दान हैं। वे भगवान् इन उपर्युक्त साधनों तथा श्रद्धा, भक्ति एवं तप द्वारा प्राप्त होते हैं। अथवा भगवन्! प्रचुर सम्पत्तिसे तथा बहुत-से अन्य श्रेष्ठ सत्कर्मोंके प्रभावसे वेदके पारगामी विद्वान् तथा पुण्यात्मा पुरुष उन्हें पा सकते हैं। पर मैं एक निर्धन व्यक्ति उन्हें पा सकूँ—आप वैसा उपाय मुझे बतानेकी कृपा कीजिये। विप्रवर! धनके अभावमें दान देना सम्भव नहीं है। धन रहते हुए भी यदि परिवारमें अधिक आसक्ति है, तो उसके मनमें दान करनेकी रुचि नहीं होती। मेरा अनुमान है कि उससे तो भगवान् नारायण सर्वथा दूर ही रहते हैं। क्योंकि वे सनातन श्रीहरि अत्यन्त प्रयासद्वारा ही प्राप्त हो सकते हैं। इसलिये दयापूर्वक आप मुझे कोई ऐसा सुगम साधन बतानेकी कृपा कीजिये, जिससे सर्वसाधारण व्यक्ति भी उन्हें सुगमतासे प्राप्त कर सके।

दुर्वासाजी बोले—साधो! मैं तुम्हें एक अत्यन्त गोपनीय व्रत बताता हूँ। भगवान् नारायण ही इसके प्रवर्तक हैं। पूर्व समयमें जब पृथ्वी पातालमें डूबी या धँसी जा रही थी तो उसने इस व्रतको किया था। उस समय जलके बहुत बढ़ जानेसे पृथ्वीका पार्थिव अंश प्रायः जलद्वारा नष्ट कर दिया गया था। इस प्रकार जब सर्वत्र जल-ही-जल रह गया तो पृथ्वी रसातलमें चली गयी। वहाँ जाकर प्राणीवर्गको धारण करनेवाले पृथ्वी-देवीने, जो सर्वव्यापी परम प्रभु भगवान् नारायण हैं,

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

उनकी व्रत एवं उपवासद्वारा आराधना की थी। उसने अनेक प्रकारके नियमोंका पालन करते हुए यह व्रत किया था। बहुत समयतक व्रत करनेपर जिनकी ध्वजापर गरुडका चित्र अङ्कित है, वे भगवान् श्रीहरि उसपर प्रसन्न हो गये। तब उन सनातन प्रभुकी कृपाके फलस्वरूप यह पृथ्वी पातालसे ऊपर लायी गयी और समतलरूपमें सुशोभित हुई।

सत्यतपाने पूछा—मुनिवर! पृथ्वीने जो व्रत-उपवास किये थे, वे कौन-से व्रत तथा कितने नियम थे? यह मुझे बतानेकी कृपा कीजिये।

दुर्वासाजी कहते हैं—जब मार्गशीर्ष मासकी दशमी तिथि आ जाय, तब बुद्धिमान् पुरुष नियमपूर्वक रहकर भगवान् श्रीहरिकी पूजा करे। उस समय विधिपूर्वक हवनका कार्य भी सम्पन्न करना चाहिये तथा पवित्र वस्त्र धारण करना चाहिये। प्रसन्न मनसे रहकर व्रती पुरुष भलीभाँति सिद्ध किया हुआ यव आदि हविष्यान्न भोजन करे। फिर कम-से-कम पाँच पग दूर जाकर अपने पैर धोये। पुनः प्रातःकाल उठकर शौचके बाद आठ अंगुलकी लम्बी दतुअनसे मुखको शुद्ध करना चाहिये। दन्तधावनका काष्ठ किसी दूधवाले वृक्षका होना आवश्यक है। इसके बाद विधिपूर्वक आचमन करना चाहिये। शरीरके नौ द्वार हैं, उन सभी द्वारोंको स्पर्श कर फिर भगवान् जनार्दनका ध्यान करे। ध्यानका प्रकार यह है—'भगवान् श्रीहरि सर्वत्र विराजमान हैं। उनकी भुजाओंमें शङ्ख, चक्र, गदा एवं पद्म सुशोभित हो रहे हैं। वे पीताम्बर धारण किये हैं तथा उनके मुँहपर मंद मुसकान विराजित है। वे सभी शुभ लक्षणोंसे सुशोभित हैं।' इस प्रकार उनका ध्यान कर पुनः भगवान् जनार्दनको स्मरण करते हुए हाथमें जल ले और उन प्रभुके लिये एक अञ्जलि अर्घ्य दे। महामुने! अर्घ्य देते समय निम्नलिखित मन्त्र पढ़ना चाहिये[१]—'कमलके समान नेत्रसे शोभा पानेवाले भगवान् अच्युत! आज एकादशी तिथि है। अतः मैं निराहार रहकर दूसरे दिन भोजन करूँगा। आप ही मेरे शरण हैं।'

इस प्रकार कहकर दिनमें नियमपूर्वक उपवास करे। रात्रिके समय देवाधिदेव भगवान् नारायणके समीप बैठकर '**ॐ नमो नारायणाय**' इस मन्त्रका जप करे। प्रायः एक सहस्र जप कर व्रतीको सो जाना चाहिये। फिर प्रातःकाल होनेपर व्रती पुरुष समुद्रतक जानेवाली नदी अथवा दूसरी भी किसी नदी या तालाबपर जाकर अथवा घरपर संयमपूर्वक रहकर हाथमें पवित्र मिट्टी लेकर यह मन्त्र पढ़े—'देवि! समस्त प्राणियोंका धारण और पोषण सदा तुमपर ही अवलम्बित है। सुव्रते! यदि यह सत्य है तो इसके फलस्वरूप मेरे सम्पूर्ण पापोंको तुम दूर करनेकी कृपा करो। कश्यपतनये! पूरे ब्रह्माण्डके भीतर रहनेवाले जितने तीर्थ हैं, वे सभी तुमसे स्पृष्ट हैं। उन सबको तुमने ही अपनी पीठपर स्थान दिया है। भगवती पृथ्वि! इसी भावसे भरकर मैं तुमसे यह मृत्तिका ले आज अपने ऊपर धारण करता हूँ।'[२]

फिर जलके देवता वरुणसे प्रार्थना करे—'महाभाग वरुण! आपमें सभी रस सदा स्थान पाये हुए हैं। उनसे इस मृत्तिकाको गीला करके मुझे यथाशीघ्र पवित्र करनेकी कृपा करें।'[३]

---

१. एकादश्यां निराहारः स्थित्वा चैवापरेऽहनि। भोक्ष्यामि पुण्डरीकाक्ष शरणं मे भवाच्युत॥ (३९। ३२)

२. धारणं पोषणं त्वत्तो भूतानां देवि सर्वदा।
तेन सत्येन मे पापं यावन्मोचय सुव्रते। ब्रह्माण्डोदरतीर्थानि त्वयास्पृष्टानि काश्यपि॥
तेनेमां मृत्तिकां त्वत्तो गृह्य स्थास्येऽद्य मेदिनि। (३९। ३५, ३७)

३. त्वयि सर्वे रसा नित्याः स्थिता वरुण सर्वदा॥
तैरियं मृत्तिका प्लाव्य पूतां कुरु च मां चिरम्॥ (३९। ३७-३८)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

बुद्धिमान् पुरुष इस प्रकारका विधान सम्पन्नकर मिट्टी और जल हाथमें ले अपने सिरपर आलेपन करे। साथ ही शेष बची हुई मृत्तिकाको तीन बार समस्त अङ्गोंमें लगाये। फिर उपर्युक्त वारुणमन्त्र पढ़कर विधिपूर्वक स्नान करे। स्नान करनेके पश्चात् संध्या-तर्पण आदि नित्य-नियम सम्पन्नकर देवालयमें जाय। वहाँ लक्ष्मीसहित भगवान् नारायणकी षोडशोपचारकी विधिसे सर्वाङ्ग-पूजा करे।

पूजाका प्रकार यह है—'भगवान् केशवको नमस्कार' ऐसा कहकर भगवान्के दोनों चरणोंकी पूजा करे और 'दामोदरको नमस्कार' यह कहकर उनके कटिभागकी पूजा करे। 'भगवान् नृसिंहको नमस्कार' ऐसा कहकर उनके दोनों ऊरुओंकी तथा 'श्रीवत्सका चिह्न धारण करनेवाले प्रभुको नमस्कार' कहकर उनके वक्षःस्थलकी पूजा करनी चाहिये। 'कौस्तुभमणिधारी भगवान्को नमस्कार' कहकर उनके कमरकी पूजा करे तथा 'लक्ष्मीपतिको नमस्कार' कहकर उनके हृदय-देशकी पूजा करे। 'तीनों लोकोंपर विजय पानेवाले प्रभुको नमस्कार' कहकर उनकी दोनों भुजाओंका तथा 'सर्वात्मा श्रीहरिको नमस्कार' कहकर उनके सिरका पूजन करे। 'रथका चक्र धारण करनेवाले भगवान्को नमस्कार' कहकर चक्रकी पूजा करे तथा 'कल्याणकारी प्रभुको प्रणाम' कहकर शङ्खकी पूजा करे। 'गम्भीरस्वरूप श्रीहरिको नमस्कार' कहकर उनकी गदाका तथा 'शान्तिस्वरूप भगवान्को प्रणाम है'—यह कहकर पद्मकी पूजा करनी चाहिये।

भगवान् नारायण सम्पूर्ण देवताओंके स्वामी हैं। उक्त प्रकारसे उनकी अर्चना करनेके उपरान्त ज्ञानी पुरुष फिर उनके सामने जलपूर्ण चार कलश स्थापित करे। उन कलशोंको मालाओंसे अलंकृतकर उनपर तिलसे भरे पात्र रखे। इन चार कलशोंको चार समुद्र मानकर उनके मध्यभागमें एक मङ्गलमय पीठ या चौकी स्थापित करनी चाहिये, जिसके मध्यमें वस्त्र बिछा हो। फिर एक सोने, चाँदी, ताँबा अथवा लकड़ीके पात्रमें या कुछ न मिल सके तो पलाशके पत्तेमें ही जल रखकर उसपर सभी अवयवोंसे अङ्कित तथा आभूषणोंसे अलंकृत भगवान् जनार्दनकी मत्स्याकार सुवर्ण-प्रतिमा स्थापित करनी चाहिये। फिर उस भगवत्प्रतिमाकी अनेक प्रकारके गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, वस्त्र एवं नैवेद्य आदिके द्वारा विधिपूर्वक षोडशोपचारसे पूजा करनी चाहिये। पूजाके उपरान्त यों प्रार्थना करनी चाहिये—'भगवन्! जिस प्रकार पातालमें प्रविष्ट हुए वेदोंका आपने उद्धार किया था, केशव! आप वैसे ही मेरा भी उद्धार करनेकी कृपा कीजिये।'

इस प्रकार पूजा सम्पन्न हो जानेके पश्चात् प्रार्थना करके रातमें भगवत्प्रतिमाके सामने जागरण करना चाहिये। पुनः प्रातःकाल होनेपर उपर्युक्त स्थापित किये हुए चारों कलशोंको चार ब्राह्मणोंको अर्पण कर दे। पूर्वका कलश ऋग्वेदके ज्ञाता ब्राह्मणको दे। दक्षिणका कलश सामवेदी ब्राह्मणको देना चाहिये। यजुर्वेदके ज्ञाता ब्राह्मणको पश्चिमका कलश देना चाहिये। उत्तरका कलश अपनी इच्छाके अनुसार जिस किसी ब्राह्मणको दे सकते हैं, ऐसी विधि है। कलश वितरण करनेके पश्चात् इस प्रकार प्रार्थना करे—'पूर्वकी ओरसे मेरी ऋग्वेद, दक्षिणकी ओरसे सामवेद, पश्चिमकी ओरसे यजुर्वेद तथा उत्तरकी ओरसे अथर्ववेद रक्षा करें। व्रतके अन्तमें भगवान् मत्स्यकी सुवर्णनिर्मित प्रतिमा आचार्यको समर्पण करनेकी विधि है। जो पुरुष इस विधिके अनुसार वस्त्र, गन्ध, पुष्प, धूप आदि उपचारोंसे भगवान्की भलीभाँति पूजा करता है, जिसके मुखसे भगवन्नामरूपी मन्त्र उच्चरित होते रहते हैं, जिसे

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

उन मन्त्रोंका गुणानुपूर्वी अभिप्राय भी अवगत होता रहता है तथा जिसने दानका विधान भी सम्पन्न कर दिया है, उसे करोड़गुना अधिक फल मिलता है। साथ ही जिसने गुरुको अर्पण तो कर दिया, परंतु आसक्ति एवं मोहके वश हो जानेसे उसके मनमें अश्रद्धा उत्पन्न हो गयी तो ऐसे व्रती पुरुषके फलमें न्यूनता भी आती है। विद्वान् लोग कहते हैं कि विधिका प्रकार बतानेवाला आप्तपुरुष ही गुरुके पदका अधिकारी है।'

इस प्रकार द्वादशीके दिन विधिसहित दान करके पुनः भगवान् विष्णुका पूजन करना चाहिये। अपनी शक्तिके अनुसार ब्राह्मणोंको भोजन कराये और उन्हें उत्तम दक्षिणा दे। भोज्य पदार्थ उत्तम अन्नसे निर्मित होना चाहिये। इसके बाद मनुष्य स्वयं भोजन करे—ऐसा विधान है। फिर संयतेन्द्रिय एवं मौन हो बच्चोंको साथ लेकर भोजन करे। इस व्रतको सर्वप्रथम पृथ्वीने किया था। जो मनुष्य उक्त विधानसे यह व्रत करता है, परम बुद्धिमान् सत्यतपा! उसका पवित्र फल बताता हूँ, सुनो। उत्तम व्रतका पालन करनेवाले महाभाग! यदि मुझे अनेक हजार मुख मिल जायँ तथा ब्रह्माकी आयु-जैसी लंबी आयु सुलभ हो जाय तो सम्भव है कि इस धर्मका फल किसी प्रकार बतला सकूँ। ब्रह्मन्! फिर भी कुछ परिचय प्राप्त हो जाय—इस उद्देश्यसे कहता हूँ, सुनो—मुने! तैंतालीस लाख, बीस हजार वर्षोंकी एक चतुर्युगी होती है। ऐसे एकहत्तर युगोंका एक मन्वन्तर होता है। चौदह मन्वन्तरोंका ब्रह्माका एक दिन और इतनी ही संख्याकी रात होती है। इस प्रकार तीस दिनोंका एक मास और बारह महीनोंका उनका एक वर्ष कहा गया है। ऐसे सौ वर्षोंकी ब्रह्माकी आयु मानी गयी है—इसमें कोई संशयकी बात नहीं। जो पुरुष उक्त विधानके अनुसार इस द्वादशी-व्रतको करता है, वह ब्रह्माजीके लोकमें पहुँच जाता है और वह वहाँ तबतक रहता है, जबतक ब्रह्माकी आयु समाप्त नहीं हो जाती। जब ब्रह्मा अपने शरीरका संवरण करने लगते हैं तो उसी क्षण उनके विग्रहमें वह भी समा जाता है। पुनः ब्राह्मी-सृष्टि आरम्भ होनेपर वह एक महान् दिव्य पुरुष होता है। तपस्वी अथवा राजाका पद उसे प्राप्त होता है। सकाम अथवा निष्काम किसी भी भावसे जो इस व्रतका अनुष्ठान करता है, उसके इस लोकमें किये गये कठिन-से-कठिन जितने पाप हैं, वे सभी उसी क्षण नष्ट हो जाते हैं। इस लोकमें जो दरिद्र है अथवा अपने राज्यसे च्युत हो गया है, वह विधानके साथ इस व्रतके करनेसे अवश्य ही राजा बन सकता है। यदि कोई सौभाग्यवती स्त्री है और उसे संतान नहीं होती हो तो वह इस कथित विधानसे यह व्रत करे। फलस्वरूप वह स्त्री परम धार्मिक पुत्र प्राप्त कर सकती है। यदि दूसरेका सम्मान करनेवाले किसी व्यक्तिका अगम्या स्त्रीके साथ सम्बन्ध हो गया हो तो वह उक्त विधिके अनुसार प्रायश्चित्तरूपमें यह व्रत करे तो वह भी उस पापसे मुक्त हो सकता है। जिसने बहुत वर्षोंसे ब्रह्म-सम्बन्धी क्रियाका त्याग कर दिया है, वह यदि एक बार भी भक्तिपूर्वक इस व्रतका अनुष्ठान करे तो वह वैदिकसंस्कारसे सम्पन्न हो सकता है। महामुने! इसके विषयमें अब अधिक कहनेसे क्या प्रयोजन! इसकी तुलना करनेवाला अन्य कोई भी व्रत नहीं है। ब्रह्मन्! अप्राप्य वस्तुको प्राप्य बनानेकी जिसमें सामर्थ्य है, वैसी इस मत्स्य-द्वादशीव्रतको निरन्तर करे। जिस समय पृथ्वी पातालमें जलमग्न थी, उस समय उक्त विधानके अनुसार स्वयं उसने इस व्रतका अनुष्ठान किया था। तात! इस विषयमें

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

और कुछ विचार करना अनावश्यक है। जिसने दीक्षा नहीं ली है और जो नास्तिक है, उसे यह विधान बताना अवाञ्छनीय है। जो देवता अथवा ब्राह्मणसे द्वेष करता है, उसको इसे कभी नहीं सुनाना चाहिये। पापोंको तुरंत प्रशमन करनेवाला यह व्रत गुरुमें श्रद्धा रखनेवाले व्यक्तिको बताना चाहिये। जो मनुष्य यह व्रत करता है, वह इस जन्ममें धन, धान्य और सौभाग्य प्राप्त करता है। उसे अनेक प्रकारकी श्रेष्ठ स्त्रियाँ प्राप्त होती हैं। यह उत्तम प्रसङ्ग द्वादशीकल्प कहलाता है। जो इसे भक्तिपूर्वक सुनाता है अथवा स्वयं पढ़ता-सुनता है, वह सम्पूर्ण पापोंसे छूट जाता है। [अध्याय ३९]

कूर्म-द्वादशीव्रत

दुर्वासाजी कहते हैं—मुने! [जिस प्रकार मार्गशीर्षका यह मत्स्य-द्वादशीव्रत है,] प्रायः ऐसा ही पौषमासका कूर्म-द्वादशीव्रत है। इसी मासमें देवताओंने समुद्रका मन्थनकर अमृत प्राप्त किया था। उस समय भक्तोंको अभिलषित पदार्थ देनेमें कुशल स्वयं भगवान् नारायण कच्छप-रूपसे अवतरित हुए थे। उस दिन यही महान् पवित्र तिथि थी। अतः पौषमासके शुक्लपक्षकी यह दशमी—इन कूर्मरूप धारण करनेवाले परम प्रभु परमात्माकी तिथि है। व्रतीको चाहिये कि पूर्वकथनानुसार दशमी तिथिके दिन स्नान आदि सम्पूर्ण क्रियाएँ सम्पन्नकर एकादशी तिथिमें भक्तिके साथ भगवान् श्रीजनार्दनकी आराधना करे। मुनिवर! पूजाके मन्त्र अलग-अलग हैं। उन मन्त्रोंसे भगवान् श्रीहरिका पूजन होना आवश्यक है। '**ॐ कूर्माय नमः**', '**ॐ नारायणाय नमः**', '**ॐ सङ्कर्षणाय नमः**', '**ॐ विशोकाय नमः**', '**ॐ भवाय नमः**', '**ॐ सुबाहवे नमः**' तथा '**ॐ विशालाय नमः**।' इन वाक्योंका उच्चारणकर क्रमशः भगवान् श्रीहरिके चरण, कटिभाग, उदर, वक्षःस्थल, कण्ठ, भुजाएँ एवं सिरकी भलीभाँति (पूर्वोक्त प्रकारसे भी) पूजा करनी चाहिये। फिर 'भगवन्! आपके लिये नमस्कार है'—ऐसा कहना चाहिये। पुनः नाम-मन्त्रका उच्चारणकर सुन्दर चन्दन, पुष्प, धूप, फल और नैवेद्य आदि अद्भुत उपचारोंसे परम प्रभु भगवान् श्रीहरिकी पूजा करे। फिर सामने एक कलश रखकर उसपर अपनी शक्तिके अनुसार भगवान् कूर्मकी सुवर्णमयी प्रतिमा स्थापित करे। साथमें मन्दराचलकी भी प्रतिमा रखे। कलश माला और स्वच्छ वस्त्रसे सुसज्जित एवं अलंकृत हो। कलशके भीतर रत्न डाले तथा ऊपर घृतसे भरा हुआ ताँबेका एक पात्र रखकर उसीमें प्रतिमाका अभिधारण करे। फिर ब्राह्मणकी पूजाकर उसे दान कर दे। उस समय मनमें संकल्प करे—'मैं कल अपनी शक्तिके अनुरूप दक्षिणा आदिसे ब्राह्मणोंकी पूजा करूँगा। इससे कूर्म-रूपमें प्रकट होनेवाले देवाधिदेव भगवान् नारायणको मैं प्रसन्न करना चाहता हूँ।' इसके पश्चात् अपने सेवकवर्गके साथ बैठकर भोजन करे।

विप्र! इस प्रकार कार्यसम्पन्न करनेपर व्रतकर्ताके पाप नष्ट हो जाते हैं। इसमें कुछ अन्यथा विचार नहीं करना चाहिये। वह पुरुष संसार-चक्रका त्यागकर भगवान् श्रीहरिके सनातन-लोकको चला जाता है। उसके पाप तत्काल विलीन हो जाते हैं और वह शोभा तथा लक्ष्मीसम्पन्न होकर सत्यधर्मका भाजन बन जाता है। भक्तिके साथ व्रत करनेवाले उस पुरुषके अनेक जन्मोंसे—सञ्चित पाप दूर भाग जाते हैं। पहले जो मत्स्य-द्वादशीका फल बताया गया है, इसके उपासकको भी वही फल प्राप्त होता है, तथा भगवान् श्रीनारायण उसपर शीघ्र ही प्रसन्न होते हैं। [अध्याय ४०]

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

वराह-द्वादशीव्रत

दुर्वासाजी कहते हैं—व्याध! तुम एक महान् भक्तशील धार्मिक पुरुष हो! जिस प्रकार मार्गशीर्षमें भगवान् नारायणने मत्स्यका रूप तथा पौषमासमें कच्छपका रूप धारण किया था, वैसे ही माघ-मासके शुक्लपक्षमें द्वादशीके दिन पृथ्वीका उद्धार करनेके लिये वे प्रभु वराहके रूपसे प्रकट हुए हैं। अतः इस तिथिके अवसरपर भी पहले कही हुई विधिके अनुसार संकल्प एवं स्थापन आदि करके विद्वान् पुरुष उनकी पूजा करे। उन अविनाशी प्रभुकी चन्दन, धूप एवं नैवेद्य आदिसे अर्चना होनी चाहिये। पूजनके उपरान्त उनके सामने जलसे भरा एक कलश रखे। फिर '**ॐ वराहाय नमः**'से दोनों पैरोंकी, '**ॐ माधवाय नमः**'से कटिकी, '**ॐ क्षेत्रज्ञाय नमः**'से उदरकी, '**ॐ विश्वरूपाय नमः**'से हृदयकी, '**ॐ सर्वज्ञाय नमः**'से कण्ठकी, '**ॐ प्रजानां पतये नमः**'से सिरकी, '**ॐ प्रद्युम्नाय नमः**'से दोनों भुजाओंकी, '**ॐ दिव्यास्त्राय नमः**'से चक्रकी तथा '**ॐ अमृतोद्भवाय नमः**'से शङ्खकी अर्चना करनी चाहिये। इस प्रकार पूजाकर विवेकी पुरुष वराह भगवान्‌की प्रतिमाको कलशपर स्थापित करे। अपने वैभवके अनुसार सोने, चाँदी अथवा ताँबेका पात्र निर्माण कराकर उसपर प्रतिमा स्थापित करे। यदि शक्ति हो तो चतुर पुरुष भगवान् वराहकी स्वर्णमयी ऐसी प्रतिमा बनवाये, जिसमें उन प्रभुके दाढ़पर पर्वत, वन और वृक्षोंके सहित पृथ्वी विराज रही हो। फिर इस प्रकार भावना करनी चाहिये—'जो भगवती लक्ष्मीके प्राणपति हैं, जिन्होंने मधुनामक दैत्यको मारा है, अखिलबीज जिनमें सुरक्षित रहते हैं तथा जो रत्नोंके भाजन हैं, वे ही परम प्रभु साकार होनेके विचारसे वराहरूप धारणकर यहाँ स्थित हैं।' फिर उन्हें कलशपर विराजमान कर दे।

मुने! वह कलश दो सफेद वस्त्रोंसे आच्छादित होना चाहिये। उसपर ताँबेका एक पात्र रहना आवश्यक है। मूर्ति स्थापितकर चन्दन, फूल और नैवेद्य प्रभृति अनेक पवित्र उपचारोंसे अर्चना करे और फूलोंके द्वारा मण्डल बना ले। रातमें स्वयं जगे और दूसरोंको जगनेकी प्रेरणा करे। पण्डित पुरुषका कर्तव्य है—'इस शुभ समयमें भगवान् श्रीहरि वराहरूपसे अवतरित हुए हैं'—इस विचारसे दूसरेके द्वारा भी पूजा एवं पद्य-गान कराये। इस प्रकार पूजा समाप्तकर प्रातःकाल सूर्यके उदय हो जानेपर शौचादिसे निवृत्त हो स्नान करे। तत्पश्चात् भगवान्‌की पुनः पूजा करके वह प्रतिमा ब्राह्मणको अर्पण कर दे। ग्रहीता ब्राह्मण वेद एवं वेदाङ्गका विद्वान्, साधु-स्वभाववाला, बुद्धिमान्, भगवान् विष्णुका भक्त, शान्त चित्तवाला, श्रोत्रिय तथा परिवारवाला होना चाहिये।

इस प्रकार वराहरूपी भगवान्‌की प्रतिमा कलशके सहित दान करनेका जो फल प्राप्त होता है, वह तुम्हें बताता हूँ, सुनो—इस जन्ममें तो उसे सुन्दर भाग्य, लक्ष्मी, कान्ति और सन्तोषकी प्राप्ति होती है और यदि दरिद्र हो तो वह शीघ्र ही धनवान् हो जाता है। सन्तानहीनको पुत्रकी प्राप्ति हो जाती है। दरिद्रता तुरंत भाग जाती है। बिना बुलाये स्वयं लक्ष्मी घरमें आ जाती हैं। वह पुरुष इस लोकमें सौभाग्यसम्पन्न तो रहता ही है, अब उसके परलोककी बात भी कहता हूँ, सुनो। इस सम्बन्धमें यहाँ एक पुरानी ऐतिहासिक घटनाका उल्लेख मिलता है।

पहले प्रतिष्ठानपुर (पैठण)-में वीरधन्वा नामसे प्रसिद्ध एक राजा हो चुके हैं। एक समयकी बात है—शत्रुओंको तपानेवाला, वह राजा शिकार

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

खेलनेके अभिप्रायसे वनमें गया। उसी वनमें संवर्त ऋषिका भी आश्रम था। राजाने मृगोंको मारनेके साथ ही अनजाने मृगका रूप बनाये हुए पचास ब्राह्मणपुत्रोंका भी वध कर दिया। वे सभी परस्पर भाई थे तथा वेदके अध्ययनमें उन ब्राह्मणोंकी बड़ी तत्परता थी। किंतु उस समय वे मृगका स्वाँग बनाये हुए थे।

सत्यतपाने पूछा—ब्रह्मन्! वे ब्राह्मण मृगका रूप धारण करके वनमें क्यों रहते थे? इस विषयमें मुझे बड़ा आश्चर्य हो रहा है। मैं आपके शरणागत हूँ। मुझपर प्रसन्न होकर इसका कारण बतानेकी कृपा करें।

दुर्वासाजी कहते हैं—महाराज! किसी समयकी बात है—वे सभी ब्राह्मण वनमें गये। वहाँ उन्होंने हिरनके पाँच बच्चोंको देखा। वे बच्चे अभी-अभी पैदा हुए थे। उन बच्चोंकी माता वहाँ नहीं थी। उन ब्राह्मणोंने एक-एक बच्चेको हाथोंमें ले लिया और गुफामें चले गये। वहीं उन बच्चोंकी चेतना समाप्त हो गयी। तब उन सभी ब्राह्मणोंके मनमें महान् दुःख हुआ। अतः वे अपने पिता संवर्तके पास चले गये। वहाँ जाकर उन लोगोंने मृगहिंसा-सम्बन्धी यह सच्ची घटना कहना आरम्भ कर दी।

ऋषिकुमार बोले—मुने! तुरंत उत्पन्न हुए पाँच मृग हमारे द्वारा मर गये हैं। हमलोग यह काण्ड नहीं चाहते थे। फिर भी घटना घट गयी, अतः हमें प्रायश्चित्त बतानेकी कृपा कीजिये।

संवर्त ऋषिने कहा—प्रिय पुत्रो! मेरे पितामें हिंसाकी वृत्ति थी और उनसे बढ़कर मैं हिंसासे प्रेम रखता था। फिर तुमलोग मेरे पुत्र होकर पाप कर्मसे अछूते रह जाओ—यह असम्भव है। किंतु इससे छूटनेका उपाय यह है कि अब तुमलोग संयमशील बनकर मृगोंका चर्म अपने ऊपर डाल लो और पाँच वर्षोंतक वनमें विचरो। ऐसा करनेसे तुम्हारी शुद्धि हो जायगी।

इस प्रकार संवर्त मुनिके कहनेपर उनके पुत्रोंने अपने पूरे शरीरपर मृगचर्म डाल लिया और शान्तभावसे वनमें जाकर परब्रह्म परमात्माके नामका जप करने लगे। उन्हें ऐसा करते हुए पाँच वर्ष व्यतीत हो गये। उसी समय राजा वीरधन्वा वहाँ आया, जहाँ मृगचर्म लपेटे हुए वे ब्राह्मण वृक्षके नीचे सावधानीके साथ बैठे थे। जपमें उनकी वृत्ति एकाग्र थी। उन्हें देखकर राजा वीरधन्वाने समझा कि ये मृग हैं। अतः उन सभी ब्रह्मवादी ब्राह्मणोंपर बाण चला दिया और वे सब-के-सब एक साथ ही प्राणोंसे हाथ धो बैठे। जब उत्तम व्रतका आचरण करनेवाले उन मृत ब्राह्मणोंपर राजा वीरधन्वाकी दृष्टि पड़ी, तो वे भयसे काँप उठे। अब वे देवरातनामक मुनिके आश्रममें गये और उनसे पूछा—'मुनिवरजी! मुझे ब्रह्महत्या लग गयी है, इसके निवारणार्थ मुझे क्या करना चाहिये?' उस समय वीरधन्वाने आदिसे अन्ततककी सभी बातें मुनिसे बता दीं और वे फिर अत्यन्त शोकसे व्याकुल होकर जोर-जोरसे रोने लगे। यों उन्हें रोते देखकर ऋषिने कहा—'राजन्! डरो मत, मैं तुम्हारा पाप दूर कर दूँगा। जिस समय पृथ्वी सुतलनामक पातालमें डूब रही थी, तो देवाधिदेव भगवान् विष्णुने स्वयं वराहका रूप धारणकर उसका उद्धार किया था। राजेन्द्र! वैसे ही ब्रह्महत्याके पापमें डूबते हुए तुम्हारा भी वे प्रभु उद्धार कर दें।' इस प्रकार देवरात ऋषिके कहनेपर राजा वीरधन्वा शान्त एवं प्रसन्न हो गये और उन्होंने मुनिसे पूछा—'महानुभाव! किस प्रकार भगवान् श्रीहरि मुझपर प्रसन्न हो सकते हैं, जिससे मेरे सब पातक नष्ट होंगे?'

दुर्वासाजी बोले—मुनिवर! जब इस प्रकार

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth

वीरधन्वाने देवरात ऋषिसे पूछा तो उन्होंने उस राजाको यह व्रत बतला दिया और नरेशने इस व्रतका अनुष्ठान किया। इसके प्रभावसे राजा वीरधन्वा ब्रह्महत्याके पापसे मुक्त होकर अपार भोगोंको भोगनेके पश्चात् सुवर्णके सुन्दर विमानपर चढ़कर स्वर्ग चला गया। वहाँ इन्द्र उठकर उसके स्वागतके लिये अर्घ्य लिये हुए आगे बढ़े। इन्द्रको आते देखकर भगवान् श्रीहरिके पार्षदोंने उनसे कहा—'देवराज! आप इधर न देखें। कारण, आपकी तपस्या इनसे न्यून है। इसी प्रकार एक-एक करके सभी लोकपाल आये और तपहीन होनेके कारण भगवान् विष्णुके सेवकोंने उनमेंसे किसीको भी स्वागतका अवसर नहीं दिया; क्योंकि राजा वीरधन्वाके तेजप्रतापके सामने वे फीके पड़ रहे थे। महामुने! इस प्रकार वह राजा सत्यलोकतक पहुँच गया। वहाँ पहुँचनेपर जन्म-मरणकी शृङ्खला समाप्त हो जाती है। वह सत्यलोक न तो अग्निसे भस्म होता है और न जलमें लीन ही होता है। आज भी महाराज वीरधन्वा देवताओंद्वारा प्रशंसित होते हुए वहीं विराजमान हैं। यज्ञस्वरूप धारण करनेवाले भगवान् श्रीहरिके प्रसन्न हो जानेपर कौन-सा ऐसा आश्चर्यकारी कर्म है, जो सम्पन्न न हो सके। उनके प्रसन्न होनेपर इस जन्ममें भी आयु, आरोग्य और सौभाग्य सुलभ हो सकते हैं। इस एक-एक द्वादशीव्रतमें ऐसी शक्ति है कि विधिके साथ उनका आचरण करनेसे मानव उत्तम सौभाग्य पानेका अधिकारी हो जाता है। फिर जो सभी व्रतोंको सम्पन्न करे, उसके लिये तो कहना ही क्या है। उसे तो भगवान् नारायण स्वयं अपना स्थान देनेको तत्पर हो जाते हैं। भगवान् नारायणकी एक-से-एक श्रेष्ठ चार मूर्तियाँ हैं,इसमें कोई संशयकी बात नहीं है। जैसे उनका जलशायी नारायणरूप है, वैसे ही उन प्रभुने मत्स्यका रूप धारण कर वेदोंका उद्धार किया। फिर उसी प्रकार कूर्मरूपसे क्षीरसागरको मन्दराचलके सहारे मथनेकी योजना बनायी। मन्दराचलको पीठपर धारण किया था। यह उनकी दूसरी मूर्ति है। पुनः पृथ्वी रसातलमें चली गयी थी। वैसे ही उसे ऊपर लानेके लिये उन परम प्रभुने वराहका रूप धारण किया था। यह उन भगवान् नारायणकी तीसरी मूर्ति है। (चौथी सम्मूर्ति भगवान् नृसिंहकी है, जो आगे कही जायगी।)' [अध्याय ४१]

नृसिंह-द्वादशीव्रत

दुर्वासाजी कहते हैं—मुनिवर! पहले कहे हुए व्रतकी भाँति फाल्गुनमासके शुक्ल पक्षमें नृसिंह-द्वादशीव्रत होता है। विद्वान् पुरुष उस दिन उपवास करके विधिके साथ भगवान् श्रीहरिकी आराधना करे। '**ॐ नरसिंहाय नमः**' कहकर भगवान् नृसिंहके चरणोंकी, '**ॐ गोविन्दाय नमः**'से ऊरुओंकी, '**ॐ विश्वभुजे नमः**'से कटिप्रदेशकी, '**ॐ अनिरुद्धाय नमः**'से वक्षःस्थलकी,'**ॐ शितिकण्ठाय नमः**'से कण्ठकी, '**ॐ पिङ्गकेशाय नमः**' कहकर शिरोदेशकी, '**ॐ असुरध्वंसनाय नमः**'से चक्रकी तथा '**ॐ तोयात्मने नमः**' कहकर शङ्खकी चन्दन, फूल एवं फल आदिके द्वारा सम्यक् प्रकारसे पूजा करनी चाहिये। तत्पश्चात् भगवान्के सामने दो सफेद वस्त्रोंसे सम्पन्न एक कलश रखनेका विधान है। उस कलशपर एक ताँबेका पात्र अथवा अपने वित्तके अनुसार काष्ठ या बाँसका पात्र रखकर उसके ऊपर भगवान् नृसिंहकी स्वर्णमयी मूर्ति पधरानी चाहिये। घड़ेमें रत्न डालकर द्वादशीके दिन पूजा करनेके उपरान्त भगवान्की वह प्रतिमा वेदके विशेषज्ञ ब्राह्मणको अर्पण कर दे।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

महामुने! इस प्रकारका व्रत करनेपर एक राजाको जो फल मिला था, उसे मैं कहता हूँ, सुनो—किम्पुरुष वर्षमें भारत नामसे विख्यात एक धार्मिक राजा रहते थे। उन्हें एक पुत्र हुआ, जिसका नाम वत्स था। किसी युद्धमें शत्रुओंसे हारकर वह केवल अपनी स्त्रीके साथ पैदल ही वसिष्ठजीके आश्रमपर गया और वहीं रहने लगा। इस प्रकार वहाँ उनके आश्रमपर रहते कुछ दिन बीत गये। एक दिन मुनिने उससे पूछा—'राजन्! तुम किस प्रयोजनसे इस महान् आश्रममें निवास कर रहे हो?'

राजा वत्सने कहा—भगवन्! शत्रुओंने मुझे परास्तकर मेरा राज्य तथा खजाना छीन लिया है। अतः असहाय होकर मैं आपकी शरणमें आया हूँ। आप अपने उपदेश-प्रदानद्वारा मेरे चित्तको शान्त करनेकी कृपा कीजिये।

दुर्वासाजी कहते हैं—मुने! राजा वत्सके इस प्रकार कहनेपर वसिष्ठजीने उसे विधिपूर्वक इस द्वादशीको ही करनेका उपदेश दिया तथा उस राजाने भी सब कुछ वैसा ही किया। व्रत पूर्ण होनेपर भगवान् नृसिंह उस राजापर प्रसन्न हुए और उन परम प्रभुने उस राजाको एक ऐसा चक्र दिया, जो समराङ्गणमें शत्रुओंका संहार कर सके। उस अस्त्रके प्रभावसे महाराज वत्सने शत्रुओंको परास्तकर अपना राज्य फिर जीत लिया। राज्यपर आसीन होकर उस नरेशने एक हजार अश्वमेध यज्ञ किये और अन्तमें वह धर्मात्मा राजा भगवान् विष्णुके परम धामको प्राप्त हुआ। मुने! पापोंका नाश करनेवाली यह नृसिंह-द्वादशी धन्य है। तुम्हारे पूछनेपर मैंने इसका वर्णन कर दिया। अब तुम इसे सुनकर अपनी इच्छाके अनुसार जैसा चाहे करो। [अध्याय ४२]

वामन-द्वादशीव्रत

दुर्वासाजी कहते हैं—मुने! इसी प्रकार चैत्र-मासके शुक्लपक्षमें वामन-द्वादशीव्रत होता है। इसमें भी संकल्पकर रातमें उपवास करके भक्तिके साथ देवाधिदेव भगवान् श्रीहरिकी पूजा करनी चाहिये। पूजाकी विधि यह है कि '**ॐ वामनाय नमः**' इस मन्त्रसे भगवान्के दोनों चरणोंकी, '**ॐ विष्णवे नमः**' कहकर उनके कटिभागकी, '**ॐ वासुदेवाय नमः**'से उदरकी, '**ॐ संकर्षणाय नमः**' कहकर हृदयकी, '**ॐ विश्वभृते नमः**'से कण्ठकी, '**ॐ व्योमरूपिणे नमः**'से शिरोदेशकी, '**ॐ विश्वजिते नमः**' तथा '**ॐ वामनाय नमः**' कहकर दोनों भुजाओंकी और '**पाञ्चजन्याय नमः**' कहकर शङ्खकी एवं '**सुदर्शनाय नमः**' कहकर चक्रकी पूजा करनी चाहिये। फिर पूर्वोक्त नरसिंह-व्रतके विधानके अनुसार अर्चनाकर उन सनातन वामन भगवान्की प्रतिमाको रत्नगर्भित कलशपर स्थापित करे। चतुर साधक पहले बताये हुए पात्रपर भगवान् वामनकी शक्तिके अनुसार सुवर्णमयी मूर्ति स्थापित करे और सब कृत्य करे, भगवान्को यज्ञोपवीत पहनाये। उन भगवान् वामनके पास कमण्डलु, छाता, खड़ाऊँ, कमलकी माला तथा आसन या चटाई भी रखनी चाहिये। द्वादशीके दिन प्रातःकाल इन उपकरणोंके साथ वह प्रतिमा ब्राह्मणको दान कर दे। उस समय भगवान् वामनकी इस प्रकार प्रार्थना करनी चाहिये—'लघुरूप धारण करनेवाले भगवान् विष्णु मुझपर प्रसन्न हों।' फिर यों कहे—'भगवन्! आप चैत्रमासके शुक्लपक्षकी द्वादशीके दिन प्रकट हुए हैं। मैं आपकी प्रसन्नता चाहता हूँ।' सब अन्य व्रतोंकी तरह इसकी भी विधि है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

सुनते हैं पहले हर्यश्व नामसे प्रसिद्ध एक राजा थे, जिन्हें कोई पुत्र न था, अतः वे संतान-प्राप्तिके लिये यज्ञ एवं तपस्या कर रहे थे, इसी बीच भगवान् श्रीहरि ब्राह्मणका वेष धारणकर वहाँ आये और बोले—'राजन्! आपका यह सब उपक्रम किस लक्ष्यको लेकर है?' राजा बोले—'मैं यह सब पुत्र-प्राप्तिके लिये ही कर रहा हूँ।' तब ब्राह्मणने राजासे कहा—'राजन्! तुम वामन-द्वादशीव्रतका अनुष्ठान करो।' फिर वे अन्तर्धान हो गये। राजाने यथाशीघ्र व्रतका अनुष्ठान किया और तेजस्वी, बुद्धिमान् एवं ब्राह्मणको रत्नगर्भित प्रतिमा दान कर दी। और भगवान् वामनसे प्रार्थना की—'भगवन्! अपुत्रा अदितिकी प्रार्थनापर आप स्वयं पुत्ररूपसे उनके यहाँ प्रकट हुए थे' यदि यह बात सत्य है तो मुझे भी संतान प्राप्त हो।

मुने! इस विधानसे व्रत एवं प्रार्थना करनेपर उस राजाको उग्राश्व नामक पुत्रकी प्राप्ति हुई थी, जो आगे चलकर महाबली चक्रवर्ती सम्राट् हुआ। इस व्रतमें ऐसी शक्ति है कि जिसे पुत्र न हो, वह पुत्रवान् तथा निर्धन व्यक्ति धनवान् बन जाता है। जिसका राज्य छिन गया हो, वह पुनः अपना राज्य वापस पा जाता है। व्रत करनेवाला मनुष्य मरनेपर भगवान् विष्णुके लोकको प्राप्त होता है। फिर स्वर्गमें बहुत समय प्रमोदकर वह मर्त्यलोकमें बुद्धिमान् नहुषकुमार ययातिके समान चक्रवर्ती राजा होता है। [अध्याय ४३]

जामदग्न्य-द्वादशीव्रत

दुर्वासाजी कहते हैं—इसी प्रकार मनुष्य (परशुराम-द्वादशीका व्रती साधक) वैशाखमासके शुक्लपक्षमें पूर्वोक्त नियमानुसार संकल्पकर विधिके साथ मृत्तिका लगाकर स्नान करे और फिर देवालयमें जाय। व्रती पुरुषको भक्तिपूर्वक भगवान् श्रीहरिके अवतार परशुरामकी—'**ॐ जामदग्न्याय नमः**' से चरण, '**ॐ सर्वधारिणे नमः**'से उदर, '**ॐ मधुसूदनाय नमः**'से कटिप्रदेश, '**ॐ श्रीवत्सधारिणे नमः**'से जङ्घा, '**ॐ क्षत्रान्तकाय नमः**'से भुजाओं, '**ॐ शितिकण्ठाय नमः**'से केहुनी, '**ॐ पाञ्चजन्याय नमः**'से शङ्ख, '**ॐ सुदर्शनाय नमः**'से चक्र तथा '**ॐ ब्रह्माण्डधारिणे नमः**'से शिरोदेशकी पूजा करे। इसके बाद पहलेकी ही तरह सामने एक कलश स्थापित करे। उसके ऊपर भगवान् परशुरामकी मूर्ति स्थापितकर पूर्वोक्त नियमानुसार दो वस्त्रोंसे उसे आच्छादित करे। कलशपर बाँसके बने पात्रमें परशुरामजीकी आकृतिवाली सुवर्णकी प्रतिमा स्थापित करे। प्रतिमाके दाहिने हाथमें फरसा धारण कराये, फिर उसकी पुष्प, चन्दन एवं अर्घ्य आदि उपचारोंसे पूजा करे। भगवान्के सामने श्रद्धा-भक्तिपूर्वक पूरी रात जागरण करे। प्रातःकाल सूर्योदय होनेपर स्वच्छ वेलामें वह प्रतिमा ब्राह्मणको दे दे। इस प्रकार नियमपूर्वक व्रत करनेसे जो फल प्राप्त होता है, उसे सुनो।

प्राचीन समयकी बात है—वीरसेन नामके एक पराक्रमी तथा भाग्यशाली राजा थे, जो पुत्रप्राप्तिके लिये तीव्र तपस्या कर रहे थे। महर्षि याज्ञवल्क्यका आश्रम वहाँसे निकट ही था, अतः एक दिन वे उन्हें देखने आये। उन तेजस्वी ऋषिको पास आते देखकर राजा वीरसेन हाथ जोड़कर खड़े हो गये और उनका विधिवत् स्वागत किया। तत्पश्चात् याज्ञवल्क्यमुनिने पूछा—'धर्मज्ञ राजन्! तुम्हारे तप करनेका क्या प्रयोजन है? तुम कौन-सा कार्य करना चाहते हो?'

राजा वीरसेनने कहा—महर्षे! मैं पुत्रहीन हूँ।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

मुझे कोई संतान नहीं है। द्विजवर! इस कारण तपस्याद्वारा अपने शरीरको मैं सुखाना चाहता हूँ।

याज्ञवल्क्यजी बोले—राजन्! तपस्यामें बड़ा क्लेश उठाना पड़ता है, अतः तुम यह विचार छोड़ दो। मैं तुम्हें अत्यन्त सरल उपाय बताता हूँ। उसे करनेसे तुम्हें अवश्य पुत्र प्राप्त हो जायगा।

फिर उन्होंने उस यशस्वी राजाको इस वैशाख मासके शुक्लपक्षमें होनेवाला यही परशुराम-द्वादशीव्रत बतलाया। पुत्रकी अभिलाषा रखनेवाले राजा वीरसेनने भी पूर्ण विधिके साथ यह व्रत सम्पन्न किया। फलस्वरूप उन्हें राजा नल-जैसा परम धार्मिक पुत्र प्राप्त हुआ, जिन 'पुण्यश्लोक' राजाकी कीर्ति अबतक संसारमें गायी जाती है। यह तो इस व्रतके फलका प्रासङ्गिक उल्लेखमात्र हुआ, वस्तुतः जो यह व्रत करता है, उसे सुपुत्र तथा जीवनभर विद्या, श्री और कान्ति सब सुलभ हो जाती है और परलोकमें उसे जो सुख होता है, वह कहता हूँ, सुनो। इस व्रतको करनेवाले व्यक्ति एक कल्पतक, अप्सराओंके साथ आनन्द करते हुए ब्रह्माजीके लोकमें रहते हैं। फिर जब पुनः सृष्टि आरम्भ होती है तब वे चक्रवर्ती राजा होते हैं और तीस हजार वर्षोंकी उन्हें लम्बी आयु प्राप्त होती है।

[अध्याय ४४]

श्रीराम एवं श्रीकृष्ण-द्वादशीव्रत

दुर्वासाजी कहते हैं—इसी प्रकार ज्येष्ठमासके शुक्लपक्षमें श्रीराम-द्वादशी व्रत होता है। मनुष्यको चाहिये कि वह संकल्प करके विधिके साथ विविध प्रकारके पवित्र पुष्पोंसे परम प्रभु परमात्माकी पूजा करे। '**ॐ रामाभिरामाय नमः**' कहकर श्रीभगवान्‌के दोनों चरणोंकी, '**ॐ त्रिविक्रमाय नमः**' कहकर कटिदेशकी, '**ॐ धृतविश्वाय नमः**' कहकर उनके उदरकी, '**ॐ संवत्सराय नमः**' से हृदयकी, '**ॐ संवर्तकाय नमः**'से कण्ठकी, '**ॐ सर्वास्त्रधारिणे नमः**'से भुजाओंकी, '**ॐ पाञ्चजन्याय नमः**'से शङ्खकी तथा '**ॐ सुदर्शनचक्राय नमः**'से चक्रकी एवं '**ॐ सहस्रशिरसे नमः**' से भगवान्‌के शिरःप्रदेशकी पूजा करे। इस प्रकार विधिवत् पूजाकर पूर्वोक्त विधिद्वारा एक कलश स्थापितकर उसे वस्त्रसे आच्छादित करे। फिर उस कलशपर भगवान् राम एवं लक्ष्मणकी सुवर्णमयी प्रतिमा रखकर विधिपूर्वक पूजन करे और पुत्रकी इच्छावाला व्रती प्रातःकाल उन प्रतिमाओंको ब्राह्मणोंको दे दे।

पहले पुत्र न होनेपर महाराज दशरथने भी पुत्रकी कामनासे वसिष्ठजीकी बड़ी आराधनाकर जब पुत्रोत्पत्तिका उपाय पूछा तो मुनिने उन्हें यही विधान बतलाया था। इस व्रतके रहस्यको जानकर राजा दशरथने इसका अनुष्ठान किया, जिसके फलस्वरूप स्वयं भगवान् श्रीहरि महान् शक्तिशाली रामरूपमें उनके पुत्र हुए। महामुने! उस समय सनातन श्रीहरिने अपनेको (राम, लक्ष्मणादि) चार रूपोंमें विभक्त कर लिया था। यह तो यहाँकी बात हुई, अब परलोककी बात सुनो। जबतक इन्द्र और सम्पूर्ण देवता स्वर्गमें रहते हैं, तबतक इस व्रतका करनेवाला पुरुष स्वर्गमें विविध भोगोंको भोगता है। वहाँकी अवधि समाप्त हो जानेपर वह पुनः मर्त्यलोकमें आता है। यहाँ आनेपर वह सौ यज्ञ करनेवाला राजा होता है। जो इस व्रतको निष्कामभावसे करता है, उस पुरुषके समस्त पाप समाप्त हो जाते हैं। साथ ही उसे भगवान् श्रीहरिका कैवल्य-पद भी प्राप्त हो जाता है, जो स्वच्छ एवं सनातन है।

CC-0. In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

दुर्वासाजी कहते हैं—इसी प्रकार आषाढ़-मासके शुक्लपक्षमें श्रीकृष्ण-द्वादशीव्रत होता है। व्रतीको चाहिये कि संकल्प करके विधिके साथ '**ॐ चक्रपाणये नमः**', '**ॐ भूपतये नमः**', '**ॐ पाञ्चजन्याय नमः**', '**ॐ सुदर्शनाय नमः**', '**ॐ पुरुषाय नमः**' कहकर श्रीकृष्णरूपधारी भगवान् श्रीहरिकी क्रमशः भुजा, कण्ठ, शङ्ख, चक्र एवं सिरका पूजन करे। पूजा करनेके बाद इसी प्रकार अग्रभागमें वह पूर्ववत् कलश स्थापितकर उसे वस्त्रसे आच्छादित कर दे। फिर उसके ऊपर सनातन श्रीहरिके चतुर्व्यूहरूपमें अवतरित स्वर्णनिर्मित श्रीकृष्णकी प्रतिमा स्थापित करे। फिर चन्दन एवं पुष्प आदिसे उसकी विधिवत् पूजा करे। तदनन्तर पूर्वकी भाँति वह प्रतिमा वेदपाठी ब्राह्मणको दान कर दे। इस प्रकार नियमके साथ व्रत करनेवालेको जो पुण्य प्राप्त होता है, उसे सुनो—

यदुवंशमें वसुदेव नामक एक श्रेष्ठ कुशल पुरुष हुए हैं। उनकी पत्नीका नाम देवकी था। देवकी पतिके साथ-ही-साथ सभी व्रतोंका अनुष्ठान करती थीं। साथ ही वे पातिव्रत-धर्मका भी पूर्णरूपसे पालन करती थीं। परंतु उन साध्वीको कोई पुत्र न था। बहुत समय व्यतीत हो जानेपर एक बार श्रीनारदजी वसुदेवजीके घर आये। उन्होंने भक्तिपूर्वक मुनिकी पूजा की। फिर नारदजीने कहा—'वसुदेव! मैं यह देवताओंसे सम्बन्धित एक कार्य बताता हूँ, उसे सुनो। अनघ! मैंने स्वयं देखा है, देवताओंकी सभामें जाकर पृथ्वीने कहा है—'देवताओ! अब मैं भार ढोनेमें असमर्थ हो गयी हूँ। दुर्जन दल बाँधकर मुझे दुःख दे रहे हैं। अतः आपलोग उनका संहार करें।'

'इस प्रकार पृथ्वीके कहनेपर उन देवताओंने भगवान् नारायणका ध्यान किया। ध्यान करते ही भगवान् श्रीहरिने उनके सामने प्रकट होकर कहा—'देवताओ! यह कार्य मैं स्वयं करनेके लिये उद्यत हूँ, इसमें कोई संशय नहीं। मैं मनुष्यके रूपमें मर्त्यलोकमें जाऊँगा, किंतु जो स्त्री अपने पतिके साथ आषाढ़मासके शुक्लपक्षमें द्वादशीव्रतका अनुष्ठान करेगी, मैं उसीके गर्भमें निवास करूँगा।' भगवान् श्रीहरिके ऐसा कहनेपर देवता तो अपने स्थानपर चले गये, पर मैं (नारदजी) यहाँ आ गया हूँ। मेरे आनेका विशेष कारण यह है कि आपकी कोई संतान (जीवित) नहीं है। अतः आपको यह बतला दूँ।' इसी द्वादशीव्रतके करनेसे वसुदेवजीको श्रीकृष्ण-जैसे पुत्रकी प्राप्ति हुई। साथ ही उन यदुश्रेष्ठको विशाल वैभव भी प्राप्त हो गया। जीवनमें सुख भोगकर अन्तमें वे भगवान् श्रीहरिके परम धामको गये। मुने! आषाढ़मासमें होनेवाली द्वादशीव्रतकी यह विधि मैंने तुम्हें बतला दी। [अध्याय ४५-४६]

बुद्ध-द्वादशीव्रत

दुर्वासाजी कहते हैं—मुने! श्रावणमासके शुक्लपक्षमें एकादशीके दिन बुद्धव्रत करनेका विधान है। पूर्वकथित विधिके अनुसार चन्दन एवं फूल आदिसे भगवान् श्रीहरिकी पूजा करनी चाहिये। '**ॐ दामोदराय नमः**', '**ॐ हृषीकेशाय नमः**', '**ॐ सनातनाय नमः**', '**ॐ श्रीवत्सधारिणे नमः**', '**ॐ चक्रपाणये नमः**', '**ॐ हरये नमः**', '**ॐ मञ्जुकेशाय नमः**' तथा '**ॐ भद्राय नमः**'—इन मन्त्रोंके द्वारा क्रमशः भगवान् बुद्धरूपी श्रीहरिके चरण, कटिभाग, उदर, छाती, भुजाएँ, कण्ठ, सिर एवं शिखाकी क्रमशः अर्चना करनी चाहिये।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

इस प्रकार सम्यक् रीतिसे पूजाकर पहलेके ही समान कलश स्थापित करे और दो वस्त्रोंसे उसे आच्छादितकर उसके ऊपर सम्पूर्ण संसारको अपने उदरमें धारण करनेकी शक्तिवाले देवेश्वर भगवान् श्रीहरिकी सुवर्णमयी प्रतिमा स्थापित करे। फिर विधानके अनुसार गन्ध, पुष्प आदिसे क्रमशः पूजन करे। तत्पश्चात् पहले-जैसे ही वेद और वेदाङ्गके पारगामी ब्राह्मणको वह प्रतिमा दे दे। मुने! यह विधि श्रावणमासकी एकादशी-व्रतकी कही गयी है। इस प्रकार नियमके साथ यदि व्रत किया जाय तो उसका जो प्रभाव होता है, वह कहता हूँ, सुनो।

प्राचीन समयकी बात है—सत्ययुगमें नृग नामसे प्रसिद्ध एक प्रतापी नरेश थे। जिन्हें आखेट (शिकार)-का बड़ा शौक था। अतः प्रायः वे गहन वनोंमें घूमते रहते थे। एक समयकी बात है, वे घोड़ेपर चढ़कर किसी वनमें बहुत दूर चले गये, जहाँ सिंह, बाघ, हाथी, सर्प और डाकुओंका निवास था। राजा नृगके पास इस समय अन्य कोई सहायक भी न था। वे घोड़ेको खोलकर एक वृक्षके नीचे श्रमसे थककर सो गये। इतनेमें ही रात हो गयी और चौदह हजार व्याधोंका एक दल मृगोंको मारनेके विचारसे वहाँ आ गया। व्याधोंने देखा राजा सोये हैं। उनका शरीर सोने और रत्नोंसे सुशोभित है। लक्ष्मी उनके अङ्ग-अङ्गकी शोभा बढ़ा रही हैं। अतः वे सभी वधिक तुरंत अपने सरदारके पास गये और उसे इसकी सूचना दी। सुवर्ण और रत्नके लोभमें पड़कर वह सरदार भी राजा नृगको मारनेके लिये उद्यत हो गया और वे व्याध हाथमें तलवार लेकर उन सोये हुए राजाके पास पहुँच गये। वे उन्हें पकड़ना ही चाहते थे कि राजाके शरीरसे सहसा चन्दन-माल्यादिसे विभूषित एक स्त्री प्रकट हो गयी। उसने चक्र उठाकर सभी व्याधों तथा म्लेच्छोंको मार डाला। उनका वधकर वह देवी उसी क्षण पुनः राजा नृगके शरीरमें समा गयी। इतनेमें राजा भी जग गये और देखा कि म्लेच्छ नष्ट हो गये हैं और देवी शरीरमें प्रविष्ट हो रही है। अब राजा घोड़ेपर सवार होकर वामदेवजीके आश्रमपर गये और उन्होंने भक्तिपूर्वक उनसे पूछा—'भगवन्! वह स्त्री कौन थी तथा वे मरे हुए व्याध कौन थे? आप मुझपर प्रसन्न होकर इस आश्चर्यजनक घटनाका रहस्य बतानेकी कृपा कीजिये।'

वामदेवजी बोले—राजन्! इसके पूर्वजन्ममें शूद्रजातिमें तुम्हारा जन्म हुआ था। उस समय ब्राह्मणोंके मुखसे तुमने श्रावणमासके शुक्ल-पक्षकी द्वादशीव्रतके अनुष्ठानकी बात सुनी और राजन्! बड़ी श्रद्धाके साथ विधिपूर्वक तुमने उस दिन उपवास भी किया। अनघ! उसीका परिणाम है कि इस समय तुम्हें राज्य उपलब्ध हुआ है। वही द्वादशीदेवी सम्पूर्ण आपत्तियोंमें साकार होकर तुम्हारी रक्षा करती हैं। उसीके प्रयाससे ये घोर पापी एवं निर्दयी म्लेच्छ जीवनसे हाथ धो बैठे हैं। राजन्! श्रावण मासकी यह द्वादशी ही तुम्हारी रक्षिका है। इसमें इतनी अपार शक्ति है कि सहसा प्राप्त विपत्ति-कालमें भी तुम्हारी रक्षा हो जाती है और इसकी कृपासे तुम्हें राज्य भी सुलभ हो गया है। अब जो बारह मासोंकी द्वादशी करते हैं, उनके पुण्यका तो कहना ही क्या है। उनके प्रभावसे तो मानव इन्द्रलोकतक पहुँच जाता है।

[अध्याय ४७]

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

कल्कि-द्वादशीव्रत

दुर्वासाजी कहते हैं—मुने! पूर्वकथित व्रतोंकी भाँति ही भाद्रपदमासके शुक्लपक्षमें जो एकादशी होती है, उस तिथिमें कल्कि-व्रत करना चाहिये। इसमें विधिपूर्वक संकल्पकर देवाधिदेव भगवान् श्रीहरिकी इस प्रकार अर्चना करनी चाहिये। '**ॐ कल्कये नमः**', '**ॐ हृषीकेशाय नमः**', '**ॐ म्लेच्छविध्वंसनाय नमः**', '**ॐ शितिकण्ठाय नमः**', '**ॐ खड्गपाणये नमः**', '**ॐ चतुर्भुजाय नमः**', तथा '**ॐ विश्वमूर्तये नमः**' कहकर क्रमशः भगवान् कल्किके चरण, कमर, उदर, कण्ठ, भुजा, हाथ एवं सिरकी पूजा करनी चाहिये। इसके बाद बुद्धिमान् पुरुष पहलेके समान ही सामने कलश स्थापितकर उसपर भगवान् कल्किकी सुवर्णनिर्मित प्रतिमा स्थापित-कर उसके ऊपर एक स्वच्छ वस्त्र लपेटकर चन्दन और पुष्पसे उस प्रतिमाको अलङ्कृत करे। पुनः प्रातःकाल उसे किसी शास्त्रके ज्ञाता ब्राह्मणको दान कर दे।

मुनिवर! इस प्रकार यह व्रत करनेपर जो फल प्राप्त होता है, उसे सुनो—बहुत पहले काशीपुरीमें विशाल नामक एक पराक्रमी राजा थे। बादमें उनके गोत्रके व्यक्तियोंने ही उनके राज्यको छीन लिया। अब वे गन्धमादन पर्वतके पवित्र बदरीवनके क्षेत्रमें चले गये और तप करने लगे। इसी समय किसी दिन श्रीनर-नारायणनामक पुराण एवं परम प्रसिद्ध ऋषि वहाँ पधारे। उन दोनों देवताओंने, जिन्हें सम्पूर्ण देवगण नमस्कार करते हैं और जिनके आगे किसीकी शक्ति काम नहीं देती, उस समय राजा विशालको देखा और मनमें विचार किया कि यह राजा बहुत पहलेसे यहाँ आया है और परब्रह्म परमात्मा विष्णुका निरन्तर ध्यान कर रहा है। अतः नर-नारायणने प्रसन्न होकर उन निष्पाप नरेशसे कहा—'राजेन्द्र! हमलोग तुम्हारी कल्याणकामनासे वर देने आये हैं। तुम हमसे कोई वर माँग लो।'

राजा विशालने कहा—आप दोनों कौन हैं, यह मैं नहीं जानता। फिर किसके सामने वर पानेकी प्रार्थना करूँ। मैं जिनकी आराधना करता हूँ, मेरी उन्हींसे वर-प्राप्तिकी हार्दिक इच्छा है।

राजाके इस प्रकार कहनेपर नर-नारायणने उनसे पूछा—'राजन्! तुम किसकी आराधना करते हो? अथवा कौन-सा वर पानेकी तुम्हें इच्छा है? हमलोग जानना चाहते हैं, तुम इसे बताओ।' ऐसा पूछनेपर राजा विशाल बोले—'मैं भगवान् विष्णुकी आराधना करता हूँ' और फिर वे चुपचाप बैठ गये। तब नर-नारायणने पुनः उनसे कहा—'राजन्! उन्हीं देवेश्वरकी कृपासे हम तुम्हें वर देनेके लिये आये हैं। तुम वर माँगो—तुम्हारे मनमें क्या अभिलाषा है?'

राजा विशालने कहा—अनेक प्रकारकी दक्षिणासे सम्पन्न होनेवाले यज्ञ करके मैं भगवान् यज्ञेश्वरकी उपासना करना चाहता हूँ। आप वर देकर इसी मनोरथको पूर्ण करें।

उस समय राजाके पास नर और नारायण—दोनों महाभाग विराजमान थे। उनमेंसे नरने कहा—ये भगवान् नारायण हैं। अखिल जगत्को मार्ग दिखाना इनका प्रधान काम है। संसारकी सृष्टि करनेमें निपुण ये प्रभु मेरे साथ तपस्या करनेके विचारसे इस बदरीवनमें आ गये हैं। मत्स्य, कच्छप, वराह, नरसिंह, वामन और परशुराम—इन सब रूपोंसे पूर्वसमयमें इनका अवतार हो चुका है। इनकी शक्ति अपरिमेय है। फिर ये ही महाराज दशरथजीके घर राजा राम

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

हुए। उस समय इनका रूप महान् आकर्षक था। उस समय म्लेच्छ राक्षसोंको मार पृथ्वीका भार दूर कर सुखी किया था। कभी पापियोंसे भयभीत होकर नरसमुदायने इनकी स्तुति की थी। उस अवसरपर इन्होंने नरसिंहरूपसे अवतार लिया था। बलिको मोहनेके निमित्त वामन तथा क्षत्रियोंके हाथसे राज्य वापस करनेके लिये परशुराम ये बन चुके हैं। दुष्ट शत्रुओंको दमन करनेके लिये इन्होंने कृष्णका अवतार धारण किया है। अतः पण्डितजन इनकी उपासना करते हैं। यदि पुत्र-प्राप्तिकी कामना हो तो बुद्धिमान् पुरुष इनके बालकृष्ण-रूपकी उपासना करे। रूपकी इच्छा करनेवाला इनके बुद्धावतारकी तथा शत्रुका संहार चाहनेवाला कल्कि-अवतारकी उपासना करे—यह संशय-शून्य सिद्धान्त है।

इस प्रकारकी बातें स्पष्ट करके मुनिवर नरने राजा विशालको भगवान् हरिकी यह द्वादशी बतला दी। वे राजा इस व्रतको सम्पन्न करनेमें संलग्न भी हो गये। फलस्वरूप वे चक्रवर्ती राजा हुए। मुने! उन्हीं राजा विशालसे सम्बन्ध रखनेके कारण यह बदरीवन 'विशाल' नामसे प्रसिद्ध हुआ। वे नरेश इस जन्ममें सुखपूर्वक राज्यकर अन्तमें बदरीवनमें गये, जहाँ अनेक प्रकारके यज्ञ करके भगवान् नारायणके परम पदको प्राप्त किया। [अध्याय ४८]

पद्मनाभ-द्वादशीव्रत

दुर्वासाजी कहते हैं—मुने! पूर्वकथित द्वादशीव्रतकी भाँति आश्विनमासके शुक्लपक्षमें यह व्रत भी है। उस तिथिमें पद्मनाभ भगवान्की अर्चना करनेकी विधि है। '**ॐ पद्मनाभाय नमः**', '**ॐ पद्मयोनये नमः**', '**ॐ सर्वदेवाय नमः**', '**ॐ पुष्कराक्षाय नमः**', '**ॐ अव्ययाय नमः**', '**ॐ प्रभवाय नमः**'—इन मन्त्रोंको पढ़कर क्रमशः भगवान् पद्मनाभके दोनों चरणों, कटिभाग, उदर, हृदय, हाथ एवं सिरकी पूजा करनी चाहिये। फिर '**सुदर्शनाय नमः**' एवं '**कौमोदक्यै नमः**' आदि कहकर भगवान्के आयुधोंकी पूजा करनी चाहिये। इसमें भी पूर्ववत् सामने कलश रखना चाहिये, उसपर भगवान् पद्मनाभकी सुवर्णमयी प्रतिमा स्थापित करे, चन्दन-पुष्प आदिसे उसके अङ्गोंकी पूजा करनी चाहिये। रात बीत जानेपर प्रातःकाल फिर वह प्रतिमा ब्राह्मणको दे दे। महामते! इस प्रकार व्रत करनेसे जो पुण्य प्राप्त होता है, वह बताता हूँ, सुनो।

सत्ययुगकी बात है—भद्राश्व नामसे विख्यात एक शक्तिशाली राजा थे, जिनके नामपर 'भद्राश्ववर्ष' प्रसिद्ध हुआ है। एक बार कभी अगस्त्य मुनि उनके घर आये और कहने लगे—'राजन्! मैं सात रातोंतक तुम्हारे घरपर निवास करना चाहता हूँ।' राजा भद्राश्वने सिर झुकाकर मुनिको प्रणाम किया और कहा—'मुनिवर! आप अवश्य निवास करें।' राजा भद्राश्वकी सुन्दरी रानीका नाम कान्तिमती था। उसका तेज ऐसा था मानो बारहों सूर्य एक साथ प्रकाश फैला रहे हों। इसी प्रकार राजाकी पाँच सौ सुन्दरियाँ भी थीं; जिनका व्रत संयमित था। सुन्दर स्वभाववाली वे सौतें दासीकी भाँति प्रतिदिन कार्यमें संलग्न रहती थीं। कान्तिमतीको ही राजाकी पटरानी होनेका सौभाग्य प्राप्त था। एक बार उस (रूप और तेजसे सम्पन्न कल्याणी कान्तिमती)-पर अगस्त्य मुनिकी दृष्टि पड़ी। साथ ही उसके भयसे कार्यमें तत्पर रहनेवाली उन सुन्दरी सौतोंको भी उन्होंने देखा।

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

राजा भद्राश्व तो रानी कान्तिमतीके प्रसन्न मुखको प्रतिक्षण देखता ही रहता था। ऐसी परम सुन्दरी रानीको देखनेके कुछ समय बाद अगस्त्यजी आनन्दमें विह्वल होकर बोले—'राजन्! आप धन्य हैं, धन्य हैं।' इसी प्रकार दूसरे दिन रानीको देखकर अगस्त्य मुनिने कहा—'अरे! यह तो सारा विश्व वञ्चित रह गया।' फिर तीसरे दिन उस रानीको देखकर यों कहने लगे—'अहो! ये मूर्ख गोविन्द भगवान्‌को भी नहीं जानते, जिन्होंने केवल एक दिनकी प्रसन्नतासे इस राजाको सब कुछ प्रदान किया था।' चौथे दिन अगस्त्य मुनिने अपने दोनों हाथोंको ऊपर उठाकर फिर कहा—'जगत्प्रभो! आपको साधुवाद—धन्यवाद है, स्त्रियाँ धन्य हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य! तुम्हें पुनः-पुनः धन्यवाद है। भद्राश्व! तुम्हें धन्यवाद है। हे अगस्त्य! तुम भी धन्य हो। प्रह्लाद एवं महाव्रती ध्रुव! तुम सभी धन्य हो।'

इस प्रकार उच्च स्वरसे कहकर अगस्त्य मुनि राजा भद्राश्वके सामने नाचने लगे। फिर तो ऐसे कार्यमें संलग्न अगस्त्य मुनिको देखकर रानीसहित उस नरेशने मुनिसे पूछा—'ब्रह्मन्! आपके इस हर्षका क्या कारण है? आप क्यों इस प्रकार नृत्य कर रहे हैं।'

मुनिवर अगस्त्यने कहा—राजन्! बड़े आश्चर्यकी बात है। तुम कितने अज्ञानी हो; साथ ही तुम्हारा अनुगमन करनेवाले ये मन्त्री, पुरोहित और अन्य अनुजीवी भी मूर्ख ही हैं, जो मेरी बात समझ नहीं पाते।

इस प्रकार अगस्त्य मुनिके कहनेपर राजा भद्राश्वने हाथ जोड़कर कहा—'ब्रह्मन्! आपके मुखसे उच्चरित पहेलीको हम नहीं समझ पा रहे हैं। अतः महाभाग! यदि आप अनुग्रह करना चाहते हों तो मुझे बतानेकी कृपा करें।'

अगस्त्यजी बोले—राजन्! पूर्वजन्ममें यह रानी किसी नगरमें हरिदत्त नामक एक वैश्यके घरमें दासीका काम करती थी। उस समय भी तुम्हीं इसके पति थे। हरिदत्तके ही यहाँ तुम भी सेवावृत्तिसे एक कर्मचारीका काम करते थे। एक समयकी बात है, आश्विनमासके शुक्लपक्षकी द्वादशीका व्रत नियमपूर्वक करनेके लिये वह वैश्य तत्पर हुआ। स्वयं भगवान् विष्णुके मन्दिरमें जाकर पुष्प एवं धूप आदिसे उन प्रभुकी पूजा की। तुम दोनों—स्त्री एवं पुरुष उस वैश्यकी सुरक्षाके लिये साथ थे। पूजनोपरान्त वह वैश्य तो अपने घर लौट आया। महामते! दीपक बुझ न जायँ, इसलिये तुम दोनोंको वहीं रहनेकी आज्ञा दे दी। उस वैश्यके चले जानेपर तुमलोग दीपकोंको भलीभाँति जलाकर वहीं बैठे रहे। राजन्! तुमलोग पूरी एक रात—जबतक सबेरा न हुआ, तबतक वहाँसे नहीं हटे। कुछ दिनोंके बाद आयु समाप्त हो जानेके कारण तुम दोनों स्त्री-पुरुषोंकी मृत्यु हो गयी। उस पुण्यके प्रभावसे राजा प्रियव्रतके घर तुम्हारा जन्म हुआ और तुम्हारी यह पत्नी, जो उस जन्ममें वैश्यके यहाँ दासीका काम करती थी, अब रानी हुई है। वह दीपक दूसरेका था। भगवान् विष्णुके मन्दिरमें केवल उसे प्रज्वलित रखनेका काम तुम्हारा था। यह उसीका ऐसा फल है। फिर जो अपने द्रव्यसे श्रीहरिके सामने दीपक प्रज्वलित करे, उसका जो पुण्य है, उसकी संख्या तो की ही नहीं जा सकती। इसीसे मैंने कहा—'राजन्! आप धन्य हैं!' आप धन्य हैं!' सत्ययुगमें पूरे वर्षतक, त्रेतायुगमें आधे वर्षतक तथा द्वापरयुगमें तीन महीनोंतक भक्तिपूर्वक श्रीहरिकी पूजा करनेसे विद्वान् पुरुष जो फल प्राप्त करते हैं, कलियुगमें उतना फल केवल '**नमो नारायणाय**' कहकर प्राप्त किया

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

जा सकता है। इसमें कोई संशय नहीं। इसीलिये मेरे मुखसे निकल गया, 'यह सारा जगत् वञ्चित हो गया है।' मैंने केवल भक्तिकी बात कही है। भगवान् विष्णुके सम्मुख दूसरेके जलाये दीपकको प्रज्वलित कर देनेमात्रसे ऐसा फल प्राप्त हुआ है। अब जो मैंने मूर्ख होनेकी बात कही, इसका अभिप्राय इतना ही है कि भगवान्‌के मन्दिरमें दीप-दान करनेके महत्त्वको ये लोग नहीं जानते। मैंने ब्राह्मणों और राजाओंको धन्यवाद इसलिये दिया है कि जो अनेक प्रकारके यज्ञोंद्वारा भक्तिके साथ उक्त विधिसे श्रीहरिकी उपासना करते हैं, वे धन्यवादके पात्र होते हैं। मुझे उन प्रभुके अतिरिक्त इस जगत्‌में अन्य कुछ भी नहीं दीखता, अतः मैंने अपनेको भी धन्य कहा। इस स्त्रीको तथा तुम्हें धन्य बतानेका कारण यह है कि यह एक वैश्यके घर सेविका थी और तुम भी सेवाका ही कार्य करते थे। स्वामीके चले जानेपर तुमलोगोंने भगवान्‌के मन्दिरमें दीपकको प्रज्वलित रखा। अतः यह स्त्री और इससे बढ़कर तुम धन्यवादके पात्र हो। प्रह्लादके शरीरमें आसुर भावनाके बीज थे, फिर भी परमपुरुष परमात्माको छोड़कर उनकी दृष्टिमें अन्य कोई सत्ता न थी, अतः मैंने उन्हें धन्य कहा है। ध्रुवका जन्म राजाके घरमें हुआ था। बचपनमें ही वे वनमें चले गये और वहाँ भगवान् विष्णुकी आराधनाकर सर्वोत्कृष्ट सुन्दर स्थान प्राप्त किया। महाराज! इसलिये मैंने ध्रुवको भी साधु कहा है।

अगस्त्यजीसे राजा भद्राश्वने संक्षेपरूपसे उपदेश देनेकी प्रार्थना की थी; अतः मुनिने कहा—'राजन्! अब कार्तिककी पूर्णिमाका पर्व आ गया है। मैं पुष्करक्षेत्र जा रहा हूँ'—यों कहकर वे चल पड़े। पुष्कर जाते समय ही वे राजा भद्राश्वके महलपर रुके थे और उन मुनिवरने राजाको वहीं द्वादशीव्रत करनेका उपदेश दिया था। चलते समय मुनि राजाको पुत्र-प्राप्तिका आशीर्वाद दे गये।

राजा भद्राश्वने भी भगवान् पद्मनाभकी द्वादशीका व्रत किया। फलतः वे पुत्र-पौत्र और उत्तम-से-उत्तम भोगोंसे सम्पन्न होकर अन्तमें भगवान् पद्मनाभके धामको प्राप्त हुए। [अध्याय ४९]

धरणीव्रत

दुर्वासाजी कहते हैं—अगस्त्यजी पुष्कर तीर्थमें जाकर पुनः राजा भद्राश्वके भवनपर ही वापस आ गये। मुनिको अपने यहाँ आये देखकर उन राजाके मनमें महान् हर्ष हुआ। उन धार्मिक नरेशने उन्हें आसनपर बैठाया और पाद्य एवं अर्घ्य आदिसे पूजा कर कहने लगे—'भगवन्! आपके आदेशानुसार आश्विनमासकी द्वादशीकी व्रतविधिका मैंने अनुष्ठान किया। अब कार्तिक-मासमें यह व्रत करनेसे जो पुण्य होता है, वह मुझे बतानेकी कृपा कीजिये।'

अगस्त्यजी बोले—राजन्! कार्तिकमासकी विधिपूर्वक द्वादशी-व्रतके और फलकी बात मैं तुमसे कहता हूँ, तुम उसे सावधान होकर सुनो। व्रतीको मेरे द्वारा पहले बताये विधानके अनुसार संकल्प करके स्नान करना चाहिये। फिर भगवान् नारायणकी '**ॐ सहस्त्रशिरसे नमः**', '**ॐ पुरुषाय नमः**', '**ॐ विश्वरूपिणे नमः**', '**ॐ ज्ञानास्त्राय नमः**', '**ॐ श्रीवत्साय नमः**', '**ॐ जगद्ग्रसिष्णवे नमः**', '**ॐ दिव्यमूर्तये नमः**' तथा '**ॐ सहस्त्रपादाय नमः**'—इन मन्त्रोंद्वारा क्रमशः सिर, भुजा, कण्ठ, अस्त्रों, हृदयदेश, उदर, कटिभाग तथा चरणदेशकी पूजा करनी चाहिये। विद्वान् पुरुष अनुलोम-क्रमसे

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भी पूजन करें। फिर '**ॐ दामोदराय नमः**' कहकर सभी अङ्गोंकी एक साथ पूजा करनी चाहिये।

इस प्रकार पूजाकर प्रतिमाके सामने चार कलश रखकर उनमें रत्न डालकर उन्हें उजले चन्दनसे लेपकर पुष्पमालासे अलङ्कृत तथा श्वेत वस्त्रसे आवेष्टितकर और उनपर तिलपूर्ण ताँबेका पात्र रखे। महाराज! फिर उनमें चारों समुद्रकी कल्पना करे। फिर उनके मध्यभागमें भगवान् श्रीहरिकी प्रतिमा स्थापितकर विधिवत् पूजा करनी चाहिये। उस दिन रातमें जागरणकर भगवान्‌की मानसिक पूजाकर वैष्णव-यज्ञका अनुष्ठान करे। बहुत-से योगी पुरुष सोलह दलवाले चक्रमें योगीश्वर प्रभुकी अर्चना करते हैं। इस प्रकार पूजनका कार्य समाप्त हो जानेपर प्रातः चार समुद्रोंकी भावनासे कलशोंको चार ब्राह्मणको दान कर दे। प्रतिमा पाँचवें वेदज्ञ ब्राह्मणोंको देनी चाहिये। दो अथवा चार प्रतिमाएँ भी देनेकी विधि है। यदि दान ग्रहण करनेवाले ब्राह्मण पञ्चरात्र-आगमके आचार्य हों तो सर्वोत्तम है; उन्हें देनेपर हजार व्रतोंका फल प्राप्त होता है। जो इस व्रतके रहस्यको स्पष्ट बतानेमें कुशल हैं तथा मन्त्रोच्चारणपूर्वक विधि सम्पन्न कराते हैं, ऐसे व्यक्तिको दान करनेसे वह करोड़ गुणा फल देता है। अपने गुरुके रहते दूसरेका आश्रय लेनेवाले और उसकी पूजा करनेवालेकी दुर्गति होती है। उसके किये हुए किसी दानका कोई फल नहीं, अतः प्रयत्न करके सर्वप्रथम गुरुका सम्मान करना चाहिये। इसके बाद दूसरेको दे। गुरु पढ़ा-लिखा हो अथवा कुछ भी न जानता हो, फिर भी उसे भगवान् श्रीहरिका स्वरूप जानना चाहिये। गुरु चाहे उत्तम मार्गका अनुसरण करता है अथवा अधम मार्गका; किंतु शिष्यके लिये एकमात्र वही गति है। जो व्यक्ति पहले गुरुका सम्मानकर फिर मूर्खताके कारण पीछे उसके प्रतिकूल व्यवहार करता है, वह पतित होता है और करोड़ युगोंतक उसे नरककी यातना भोगनी पड़ती है।

इस प्रकार दानकर द्वादशीके दिन भगवान् विष्णुकी पुनः विधिपूर्वक पूजा करनी चाहिये। फिर ब्राह्मणोंको भोजन कराये और उन्हें अपनी शक्तिके अनुसार दक्षिणा दे। इसका नाम 'धरणीव्रत' है। पूर्वकालमें दक्षप्रजापतिने इस व्रतका आचरण किया था। फलस्वरूप वे प्रजापतिके पदपर प्रतिष्ठित हुए और अन्तमें मुक्त होकर सनातन श्रीहरिमें लीन हो गये। हैहयवंशी कृतवीर्य नामक नरेशने भी यह व्रत किया था, जिसके प्रभावसे उसे कार्तवीर्य नामक पुत्र प्राप्त हुआ। अन्तमें वह भी सनातन श्रीहरिके लोकमें चला गया। शकुन्तलाने भी इसी प्रकार यह व्रत किया था, जिससे वह चक्रवर्ती राजा भरतकी माता बनी। यों ही प्राचीन समयमें अनेक चक्रवर्ती राजाओंने उक्त विधिसे यह व्रत किया है और इसके प्रतापसे वे प्रमुख चक्रवर्ती हो गये हैं—यह बात वेदोंमें बतायी गयी है। प्राचीन समयमें पातालमें डूबकर कालक्षेप करती हुई पृथ्वीने भी इस उत्तम व्रतको किया था। तभीसे यह व्रत धरणीव्रतके नामसे प्रसिद्ध हुआ। पृथ्वीद्वारा यह व्रत सम्पन्न होते ही भगवान् श्रीहरिने परम संतुष्ट होकर उसी समय वराहका रूप धारण किया और इस प्रकार उसे ऊपर उठा लाये, जैसे नौका जलमें डूबते हुए प्राणीको बचा लेती है। मुने! इस धरणीव्रतका स्वरूप मैंने तुम्हें बता दिया। जो श्रेष्ठ पुरुष इस प्रसङ्गको सुनेगा अथवा भक्तिके साथ इस व्रतको करेगा, वह सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त हो अन्तमें भगवान् विष्णुके परम धामको ही प्राप्त होगा। [अध्याय ५०]

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

अगस्त्य-गीता

[नासदीय सूक्त—व्याख्या]

भगवान् वराह कहते हैं—वसुंधरे! दुर्वासा मुनिके कहे हुए इस उत्तम धरणीव्रतको सुनकर सत्यतपा उसी क्षण हिमालयके संनिकट एक ऐसे पवित्र स्थानपर चले गये, जहाँ पुष्पभद्रा नामकी नदी, चित्रशिला नामक प्रसिद्ध पहाड़ तथा भद्रवटसंज्ञक वटका वृक्ष था। उन मुनिने वहीं अपना सुन्दर आश्रम बना लिया। भविष्यमें सत्यतपाके द्वारा वहाँ एक बहुत बड़ी विचित्र लीला सम्पन्न होगी।

भगवती पृथ्वीने कहा—प्रभो! आप सनातन पुरुष हैं। तपोमय! इस व्रतको मैंने कई हजार कल्प पहले किया था। मैं तो उसे सर्वथा भूल ही गयी थी। परंतु आज आपकी कृपासे वह पुरानी बात मुझे याद आ गयी। परम प्रभो! जातिस्मरता प्राप्त होने—पूर्वजन्मोंकी बात स्मरण आ जानेके कारण मेरे मनको बड़ी शान्ति मिल रही है। भगवन्! मैं जानना चाहती हूँ कि अगस्त्य मुनि राजा भद्राश्वके भवनपर पुनः कब आये और उनकी आज्ञासे राजाने फिर क्या किया? वह सब आप मुझे बतानेकी कृपा करें।

भगवान् वराह बोले—राजा भद्राश्व सदा श्वेत अश्व (उजले घोड़े)-पर ही चढ़ते थे। जब अगस्त्य ऋषि दूसरी बार उनके यहाँ आये तो उन्होंने उन्हें उत्तम आसनपर बैठाया और पहलेसे भी बढ़कर उनकी पूजा की और पूछा—'भगवन्! वह कौन-सा ऐसा कर्म है, जिसे करनेसे संसारसे मुक्ति मिल सकती है। अथवा देहधारी एवं बिना देहवाले—सभी प्राणियोंके लिये कौन-सा कर्म वैध है, जिसका सम्पादन कर लेनेपर उनके सामने शोक नहीं आ सकता।'

अगस्त्यजी कहते हैं—राजन्! सावधानीसे सुनो। यह कथा दृष्ट एवं अदृष्ट—दोनों लोकोंसे सम्बद्ध है। यह बात उस समयकी है, जब कि दिन, रात, नक्षत्र, दिशाएँ, आकाश, देवता एवं सूर्य—इन सबका नितान्त अभाव था। उस क्षण पशुपाल नामक एक पुरुष शासन कर रहे थे। एक समयकी बात है—पशुओंकी रक्षा करते समय उनके मनमें पूर्वी समुद्र देखनेकी उत्कण्ठा जगी और वे तुरंत चल पड़े। उस महासागरके तटपर एक वन था और वहाँ बहुत-से सर्प निवास करते थे। वहाँ आठ वृक्ष थे और एक स्वच्छन्दगामिनी नदी थी। तिरछे एवं ऊपरकी ओर गमन करनेवाले अन्य प्रधान पाँच पुरुष भी थे। एक विशिष्ट पुरुष था, जिसके प्रसादसे तेजके कारण चमकनेवाली एक स्त्री शोभा पा रही थी। उस समय हजार सूर्यों-जैसी आकृतिवाले उस महान् पुरुषको उस स्त्रीने अपने वक्षःस्थलपर स्थान दे रखा था। उस पुरुषके अधरपर तीन रंगवाले तीन विकार विराजमान थे। वही पुरुष उसका संचालक था। उसकी गति कहीं रुकती न थी। उसे देखकर वह स्त्री मौन हो गयी। तब वह प्रबन्धक पुरुष भी उस वनमें चला गया। उसके वनमें प्रविष्ट होते ही क्रूर स्वभाववाले आठ सर्प राजाके पास पहुँचे और उन प्रभुके चारों ओर लिपट गये। सर्पोंके आक्रमणसे राजा चिन्तित होकर सोचने लगे कि इनका संहार कैसे हो?

इतनेमें उनके सामने तीन वर्णवाला एक दूसरा पुरुष प्रकट हो गया। उसने श्वेत, रक्त एवं पीत—इन तीन रूपोंको धारण कर रखा था। उसने अपना नाम जानना चाहा और कहा—'मेरे लिये दूसरा स्थान चाहिये।' तब प्रधान पुरुषने पूछा—'कहाँ जानेका विचार करते हो? साथ ही उस

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi
In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth

पुरुषका नाम 'महत्' रख दिया। अब उस पुरुषने उन जगन्नियन्ता प्रभुके साथ रहनेकी स्वीकृति भी प्राप्त कर ली। तब राजाने कहा—'तुम्हें जगत्की जानकारी रखना आवश्यक है।' इसपर उस स्त्रीने कहा—'इस जगत्में तो मैं ओतप्रोत हूँ।' तब जो दूसरा पुरुष प्रकट हुआ था, उसने कहा—'तुम डरो मत।' इसके बाद वह वीर पुरुष राजाके पास जाकर स्वयं स्थित हो गया।

तदनन्तर दूसरे पाँच पुरुष आये और प्रधान राजाके चारों ओर खड़े हो गये। राजन्! उन डाकुओंने शस्त्र उठाकर प्रधान राजाको मारनेकी तैयारी कर ली। फिर डर जानेके कारण एक दूसरेमें वे लीन हो गये। उनके लीन होनेपर भी राजाका भवन विशेषरूपसे सुशोभित होने लगा। राजन्! फिर पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश—इन पाँच महाभूतोंने अपना एक समूह बनाया। उस समय वायुका रूप शीतल एवं सुखदायी था। अन्य भी चारों उत्तम गुण एवं प्रकाशसे सम्पन्न थे। ये भी राजभवनमें आये। तब उन प्रधान पुरुष पशुपालके सूक्ष्म रूपको देखकर तीन वर्णवाले पुरुषने उनसे कहा—'महाराज! मेरे कोई पुत्र नहीं है।' उस समय पशुपालने पूछा—'बतलाइये आपके लिये मैं क्या करूँ?' फिर तीन वर्णवाले पुरुषने उत्तर दिया—'हमलोग आपको बन्धनमें डालना चाहते थे। यद्यपि हमने प्रयत्न भी किया, किंतु असफल रहे। राजन्! ऐसी स्थितिमें अब हम आपके शरीरमें आश्रय पाना चाहते हैं। मुझपर आपकी पुत्र-भावना होनी चाहिये।'

राजन्! इस प्रकार तीन वर्णवाले पुरुषके कहनेपर राजा पशुपालने उससे फिर कहा—'मैं पुत्र ऐसा चाहता हूँ, जो दूसरोंका भी प्रबन्धक हो।' और उस तीन वर्णवाले पुरुषको अपना पुत्र मान लिया। पर उसमें उनकी आसक्ति न हुई।

[अध्याय ५१]

अगस्त्य-गीतामें पशुपालका चरित्र

अगस्त्यजी कहते हैं—राजन्! इस प्रकार पशुपालसंज्ञक परम प्रभुने एक पुरुषका सृजन किया और उसे शासनकी आज्ञा दे दी। स्वतन्त्र होनेके कारण वह पुरुष राजा बन गया। उस पुत्रमें तीन रंग थे। उसने अहंकार नामक पुत्र उत्पन्न किया। उस पुत्रसे अवबोधस्वरूपिणी एक कन्या उत्पन्न हुई। उस कन्याने ज्ञान प्रदान करनेकी योग्यतावाले एक सुन्दर पुत्रको जन्म दिया। उस पुत्रके पाँच पुत्र उत्पन्न हुए। उनमें सभी रूपोंका समावेश था और वे विषयोंको भोगनेकी रुचि रखते थे, जो इन्द्रिय कहलाये। अब सबने रहनेका एक सुन्दर भवन बना लिया। उनका वह मन्दिर ऐसा था, जिसमें नौ दरवाजे हुए और चारों ओर जानेवाला एक स्तम्भ हुआ। जलसे सम्पन्न हजारों नदियाँ उसे सुशोभित कर रही थीं। राजा पशुपाल साकार रूप धारणकर अब पुरुषके रूपमें विराजने लगे। वेद और छन्द उन्हें स्मरण हो आये। फिर उन वेदोंमें प्रतिपादित नियम एवं यज्ञ—इन सबकी उन्होंने व्यवस्था की।

राजन्! किसी समयकी बात है—राजा पशुपालके मनमें आनन्दके अभावका अनुभव हुआ। अब उन्होंने संसारकी सृष्टि करनेकी इच्छा की और योगमायाका आश्रय लेकर एक ऐसा पुत्र प्रकट किया, जिसके चार मुख, चार भुजाएँ, चार वेद और चार पथ हुए। महामते! समुद्र, वन और तृणसे लेकर हाथीप्रभृति पशुतकमें उनका प्रवेश है।

अगस्त्यजी कहते हैं—राजन्! प्रस्तुत कथा प्रायः मेरे, तुम्हारे तथा अखिल जन्तुओंके शरीरमें

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

समान रूपसे चरितार्थ होती है। पशुपालसे* जिसकी उत्पत्ति हुई, उसके चार चरण और चार मुख थे। उन्हींको इस कथाका उपदेष्टा एवं प्रवर्तक कहा गया है। सत्यस्वरूप स्वर ही उसका पुत्र है। उसने जो कुछ कहा है, वह धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष—इन चारोंका साधन है। पुरुषोंका इन चारोंसे सम्बन्ध है। भक्तिपूर्वक उपासना करनेवालेको ये सुलभ हो जाते हैं। इनमें जो प्रथम धर्म है, उसका दूसरा रूप वृषभका है। उसके चार सींग हैं। उसीका अर्थ और काम भी अनुसरण करते हैं। चौथी मुक्ति है। जो भक्तिके साथ उसका आदर करता है, उसे वह परब्रह्म परमात्मा सुलभ हो जाता है। इस ब्रह्मका ही सनातन अंश मनुष्योंमें व्यक्त रूपसे विराजमान है। अतः मनुष्य प्रथम अवस्थामें ब्रह्मचारीके रूपमें रहे। दूसरी अवस्थामें धर्मका आश्रय लेकर सेवक-वर्गका भरण-पोषण करना चाहिये। तीसरी अवस्था वानप्रस्थ बतायी गयी है। इस अवस्थामें भी उसका अन्तःकरण धर्मयुक्त होना आवश्यक है।

इसके पश्चात् उस परब्रह्मने—**'अहमस्मि'** केवल मैं ही हूँ—यों कहा। फिर वह एक दूसरे ही चार, एक एवं दो प्रकारके रूपसे विराजने लगा। भिन्न प्रकारके उत्पन्न होनेके कारण उसकी भुजाएँ भी उसीका अनुसरण करने लगीं। सर्वप्रथम चार मुखवाले ब्रह्माने देखा कि कुछ प्रजाएँ नित्य और कुछ अनित्य हैं। राजन्! तब ब्रह्माके मनमें विचार उठा कि मैं कैसे पिताजीसे मिलूँ। क्योंकि मेरे पिताजी एक महान् पुरुष हैं। उनमें जो गुण हैं, वे उनकी इन संतानोंमें किसीमें भी दृष्टिगोचर नहीं होते हैं। स्वरकी दृष्टिके प्रकरणमें एक ऐसी श्रुति है कि जो पिताके पुत्रका पुत्र है, उसे अपने पितामहके नामका संरक्षक होना चाहिये। इसमें कोई अन्यथा विचार नहीं है। कहीं भी ऐसा अवसर मिलना आवश्यक है, जहाँ पिताका भाव दीख पड़े।

अब मुझे क्या करना चाहिये—ब्रह्माजी यह सोच ही रहे थे कि परमपिता परमात्माके मनमें रोष आ गया। अब ब्रह्माने स्वर मथना आरम्भ किया, जिससे स्वरका सिर प्रकट हो गया। उसकी आकृति नारियलके फलके समान थी। ब्रह्माजीके प्रयाससे वह स्वर फिर विभक्त हो गया। अब वे प्राण, अपान, उदान, समान एवं व्यान रूपसे सामने आ गये। अब ब्रह्माने उन्हें ठहरनेका स्थान बता दिया।

इस प्रकार अथक परिश्रम करनेके पश्चात् जब समर्थ ब्रह्माने पुनः प्राणि-शरीरपर दृष्टि डाली तो उन्हें शरीरके भीतर अपने पिता परब्रह्म परमात्माकी झाँकी दृष्टिगोचर हुई। सम्पूर्ण प्राणियोंमें त्रसरेणुके समान सूक्ष्म रूप धारण कर वे सर्वत्र विराजमान थे। वे ही सर्वोपरि विराजमान एवं सर्वव्यापक हैं। सम्पूर्ण जगत्की सृष्टिसे सम्बन्ध रखनेवाला यह इतिहास अपना प्रथम स्थान रखता है। जो इसे तत्त्वसे जानता है, उसे उत्तम कर्म करनेकी योग्यता प्राप्त हो जाती है। [अध्याय ५२-५३]

उत्तम पति प्राप्त करनेका साधनस्वरूप व्रत

राजा भद्राश्वने पूछा—विप्रवर! विशुद्ध ज्ञानकी प्राप्तिके लिये पुरुषको किस देवताकी आराधना करनी चाहिये और उनके आराधनकी कौन-सी विधि है? मुझे यह बतानेकी कृपा कीजिये।

अगस्त्यजी कहते हैं—राजन्! भगवान् विष्णु ही सदा सभीके द्वारा—किमधिकं देवताओंद्वारा भी आराध्य हैं। अब इनके पूजनका प्रकार बताता हूँ, जिससे वर-प्राप्ति हो सकती है।

* यहाँ पशुपाल परब्रह्म परमात्मा तथा चार मुखवाले ब्रह्मा हैं।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

देवताओं, मुनियों एवं मानवों—प्रायः सभीके लिये यह रहस्यकी बात है—भगवान् नारायण ही सर्वोपरि देवता हैं। उन्हें प्रणाम करनेपर प्राणी क्लेश नहीं पाता। राजन्! सुना जाता है—महात्मा नारदजीने पूर्वकालमें भगवान् विष्णुके इस व्रतको अप्सराओंको बतलाया था।

अप्सराओंने पूछा—नारदजी! आप ब्रह्माजीके पुत्र हैं। हमें उत्तम पति पानेकी अभिलाषा है। भगवान् नारायण हमारे प्राणपति हो सकें, इसके लिये आप हमलोगोंको कोई व्रत बतानेकी कृपा करें।

नारदजी कहते हैं—प्रायः सबके लिये कल्याणदायक नियम है कि प्रश्न करनेके पहले विनयपूर्वक प्रणाम करे। पर तुमलोगोंने इस नियमका पालन नहीं किया; क्योंकि तुम्हें युवावस्थाका गर्व है। फिर भी तुमलोग देवाधिदेव भगवान् विष्णुके नामका कीर्तन करो। उनसे वर माँगो—'प्रभो! आप हमारे स्वामी होनेकी कृपा करें।' इससे तुम्हारा सम्पूर्ण मनोरथ सिद्ध होगा—इसमें कोई संशय नहीं करना चाहिये। एक व्रत भी बताता हूँ, जिसे करनेसे भगवान् श्रीहरि स्वयं वर देनेके लिये उद्यत हो जाते हैं। चैत्र और वैशाखमासके शुक्लपक्षमें जो द्वादशी तिथि है, उस दिन यह व्रत करना चाहिये। रातमें विधिवत् भगवान् श्रीहरिकी पूजा करे। बुद्धिमान् व्यक्तिको चाहिये कि भगवान्‌की प्रतिमाके ऊपर लाल फूलोंसे एक मण्डल बनवाये। नृत्य, गीत एवं वाद्यके साथ रातमें जागरण करे।

'ॐ भवाय नमः', 'ॐ अनङ्गाय नमः', 'ॐ कामाय नमः', 'ॐ सुशास्त्राय नमः', 'ॐ मन्मथाय नमः', तथा **'ॐ हरये नमः'** कहकर क्रमशः भगवान्‌के सिर, कटि, भुजा, उदर एवं चरण आदिकी पूजा करे। फिर भगवान्‌को प्रणामकर रात्रि-जागरणकी विधि सम्पन्न करके प्रातःकाल भगवान्‌की वह प्रतिमा वेद-वेदाङ्गके जानकार ब्राह्मणको दान कर दे।

अप्सराओ! इस प्रकार व्रत करनेपर इच्छानुकूल भगवान् विष्णु अवश्य पतिरूपमें तुम्हें प्राप्त होंगे। इसके पश्चात् ईंखके पवित्र रस तथा मल्लिका आदिके फूलोंसे उन देवेश्वरकी पूजा करना। सुन्दरियो! तुमने मुझे प्रणाम किये बिना जो प्रश्न किया है, उससे अष्टावक्रद्वारा तुम्हारे उपहासपर शाप भी मिलेगा। फलस्वरूप गोपलोग तुम्हें हर लेंगे।

अगस्त्यजी कहते हैं—राजन्! इस प्रकार कहकर देवर्षि नारदजी उसी क्षण वहाँसे चले गये। उन अप्सराओंने व्रतकी विधि सम्पन्न की। फलस्वरूप स्वयं भगवान् श्रीहरि उनपर संतुष्ट होकर उनके पति हुए।

[अध्याय ५४]

शुभ-व्रत

[कुब्जाम्रेश्वर-ऋषीकेश-माहात्म्य]

अगस्त्यजी कहते हैं—राजन्! अब मैं व्रतोंमें उत्तम शुभसंज्ञक व्रतका वर्णन करता हूँ, तुम उसे सुनो। महाभाग! इसके प्रभावसे भगवान् विष्णुका दर्शन सुलभ हो जाता है, इसमें कोई संदेह नहीं। मार्गशीर्षमासके प्रथम दिन इस व्रतको आरम्भ करना चाहिये। इसमें दशमीको एक समय भोजन करनेका नियम है। उस दिन स्नान करके दोपहरमें भगवान् विष्णुकी पूजा करे। एकादशीके दिन उपवासकर ब्राह्मणोंको विधिके साथ यव देना चाहिये। उस समय दान, होम एवं अर्चन—इन सभी क्रियाओंमें सदा भगवान् श्रीहरिके नामोंका कीर्तन करना चाहिये। राजेन्द्र! अगहन,

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

पूस, माघ एवं फाल्गुन—इन चार महीनोंमें ऐसे ही नियमोंका पालन करना समुचित है। उपवास करके पूजा सम्पन्न करे। फिर विद्वान् पुरुष चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ एवं आषाढ़—इन चार महीनोंमें उसी तरह संयमपूर्वक व्रत करे। इस चौमासेमें ब्राह्मणोंके लिये प्रीतिपूर्वक पात्रसहित सत्तू दान करना चाहिये। श्रावण, भाद्रपद और आश्विन—इन तीन महीनोंमें अगहनमासमें तैयार होनेवाले धानको बाँटनेका विधान है। इन तीन मासोंकी अवधि कार्तिक आरम्भ होनेके पूर्वतक मानी जाती है। इन महीनोंमें भी पूर्व-जैसे ही उपवास करके पूजा करनेका नियम है। दशमीके दिन संयमशील एवं पवित्र रहे। एकादशीके दिन बुद्धिमान् व्यक्ति मासके नामका उच्चारण करके भक्तिके साथ भगवान् श्रीहरिकी पूजा करे। द्वादशीके दिन व्रतको समाप्त करे।

राजन्! एकादशीके दिन पर्वत एवं पातालके रूपसे अङ्कित पृथ्वीकी सुवर्णमयी प्रतिमाके पूजन एवं दानका विशेष महत्त्व है। भगवान् श्रीहरिके सामने उस प्रतिमाको स्थापितकर उसे दो सफेद वस्त्रोंसे ढक दे, पासमें बीज बिखेर दे और रातमें जागरण करे। फिर प्रातःकाल चौबीस ब्राह्मणोंको आमन्त्रितकर प्रत्येक ब्राह्मणको गाय, दो वस्त्र, सुवर्णमयी अँगूठी तथा कुण्डल आदि आभूषण दे। राजन्! यदि व्रती पुरुष राजा है तो वह प्रत्येक ब्राह्मणको अपनी शक्तिके अनुसार भरण-पोषणकी व्यवस्था कर दे और दक्षिणामें सुवर्णसे बनी हुई पृथ्वीकी प्रतिमा, दो गौ और दो वस्त्र दे। अथवा अपनी सम्पत्तिके अनुसार चाँदीकी पृथ्वी बनवाये और भगवान् श्रीहरिको स्मरण करते हुए उसे ब्राह्मणोंको अर्पण कर दे। निमन्त्रित ब्राह्मणोंको भोजन, छाता और खड़ाऊँ भी दे। तत्पश्चात् प्रार्थना करे—'भगवान् कृष्ण, दामोदर, श्रीहरि मुझपर प्रसन्न हो जायँ।' राजन्! इस व्रतके अनुष्ठानसे जो फल मिलता है, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। फिर भी एक प्रसङ्ग सुनाता हूँ।

सत्ययुगमें एक ब्रह्मवादी राजा थे। उन्होंने ब्रह्माजीसे पुत्र-प्राप्तिका उपाय पूछा। तब ब्रह्माजीने उन्हें यह व्रत बता दिया और राजा इस व्रतको करनेमें संलग्न हो गये। राजन्! व्रत समाप्त हो जानेपर विश्वात्मा श्रीहरि राजाके सामने पधारे और कहा—'राजन्! तुम मुझसे वर माँगो।'

राजाने कहा—'देवेश! मुझे ऐसा पुत्र देनेकी कृपा कीजिये, जो वैदिक मन्त्रोंका पूर्ण जानकार, दूसरोंका यज्ञ करानेवाला, स्वयं यज्ञ करनेमें तत्पर, कीर्तिसम्पन्न, दीर्घायु, असंख्य सद्गुणोंसे युक्त, ब्राह्मणोंमें निष्ठा रखनेवाला तथा शुद्ध अन्तःकरणसम्पन्न हो तथा जहाँ पहुँच जानेपर फिर सोच करनेका अवसर सामने नहीं आता, वह मोक्ष प्रदान कर दे।' इसपर श्रीहरि 'एवमस्तु'—कहकर अन्तर्धान हो गये। अब राजाके घर समयानुसार पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम 'वत्सश्री' रखा गया। वह वेद-वेदाङ्गका पूर्ण जानकार था। भगवान् विष्णुके प्रसादस्वरूप उस प्रतापी पुत्रको पाकर राजा तपस्या करनेके विचारसे निकल पड़े। वे हिमालय पर्वतपर इन्द्रियोंको वशमें करके तथा निराहार रहकर भगवान् विष्णुकी आराधना करते हुए इस प्रकार स्तुति करने लगे।

राजाने कहा—क्षर एवं अक्षर—अखिल जगत् जिनका रूप है, जो क्षीरसागरमें शयन करते हैं, देहधारियोंके लिये परम पद, इन्द्रियोंके अविषय, विश्वकी रक्षा करनेवालोंमें सर्वश्रेष्ठ तथा जलमय आकृति बनाये हुए हैं, उन भक्तोंकी याचना पूर्ण करनेवाले प्रभुकी मैं स्तुति करता हूँ। देवताओं एवं दानवोंके निरन्तर प्रार्थना करनेपर सृष्टि करनेके विचारसे आपने इस जगत्की रचना की है। भगवन्! आप सदा एक कूटस्थ रूपसे आसीन रहकर इच्छामात्रसे संसारकी सृष्टि करते हैं। प्रभो!

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

आप कच्छप एवं नृसिंह आदि अनेक अवतार धारण कर चुके हैं। पर आपके अवतार लेनेकी यह बात भी मायिक ही है, तथ्य नहीं।[१] नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध, कल्कि, वरेश, शम्भु एवं विबुधारिनाशन आदि नामोंसे सम्बोधित होनेवाले भगवन्! आपको मेरा निरन्तर प्रणाम है। विष्णो! आप स्वयं आदि यज्ञपुरुष हैं। यज्ञकी सामग्री हवि आदि आपका ही रूप है। पशु, ऋत्विक् और घृत—ये सब आप ही हैं। कमलनेत्र! मैं आपकी शरणमें आया हूँ, इस संसारसागरसे मेरा उद्धार कीजिये।

स्तुतिके अन्तमें परम प्रभु प्रसन्न हुए। वे एक कुबड़े ब्राह्मणका वेष धारणकर वहाँ आये। उनके वहाँ पधारते ही आमका वृक्ष भी वैसा ही कुबड़ा बन गया। उन राजाको बड़ा आश्चर्य हुआ कि ऐसे विशाल वृक्षका यह छोटा रूप कैसे हो गया—फिर सोचा कि परम प्रभुकी संनिधिका यह परिणाम है। फिर उन्होंने ब्राह्मण-वेषधारी प्रभुको प्रणाम किया। साथ ही कहा—'भगवन्! आप परम पुरुष परमात्मा हैं। अवश्य ही मुझपर कृपा करनेके लिये आपका यहाँ पधारना हुआ है। हरे! अब आप अपने वास्तविक स्वरूपका दर्शन करानेकी कृपा कीजिये।'

जब राजाने इस प्रकार भगवान् श्रीहरिसे प्रार्थना की, तो वे शङ्ख, चक्र एवं गदा हाथमें लिये हुए सौम्य रूप धारणकर उनके सामने विराजमान हो गये और यह वचन कहा—'राजेन्द्र! तुम्हारे मनमें जो भी इच्छा हो, वह मुझसे माँग लो।' भगवान् श्रीहरिके यों कहनेपर राजाकी आँखें प्रसन्नतासे खिल उठीं। साथ ही कहा—'देवेश! आप मुझे मोक्ष देनेकी कृपा करें।' राजाकी ऐसी बात सुनकर पुनः श्रीभगवान् बोले—'राजन्! मेरे यहाँ आनेपर इस विशाल आम्रके वृक्षमें जो कुब्जत्व आ गया है, इसके परिणामस्वरूप यह स्थान कुब्जाम्रक (ऋषिकेशका नामान्तर) तीर्थके नामसे प्रसिद्ध होगा। इस उत्तम तीर्थमें ब्राह्मण अथवा पशु-पक्षी आदि योनिवाले भी यदि अपने शरीरका त्याग करेंगे तो उनको ले जानेके लिये पाँच सौ दिव्य विमान उपस्थित होंगे और वहाँके उन योगियोंकी मुक्ति हो जायगी।'

महाराज! इस प्रकार कहकर भगवान् जनार्दनने शङ्खके अग्रभागसे राजाका स्पर्श किया। केवल स्पर्श होते ही उन नरेशको परम निर्वाण पद प्राप्त हो गया। अतएव तुम भी उन परम प्रभुकी शरण ग्रहण करो, जिससे शोक करनेके योग्य पद तुम्हें पुनः प्राप्त न हो सके। जो मनुष्य प्रातःकाल उठकर यह चरित्र पढ़ेगा, उसे भगवान् श्रीहरि धर्म एवं मोक्ष प्रदान करेंगे। राजन्! जो इस परम पवित्र शुभ-व्रतको करेगा, उसे इस संसारमें सम्पूर्ण सुख-सम्पत्ति और भोग सुलभ होंगे एवं आयु समाप्त होनेपर वह भगवान्में लीन हो जायगा।

[अध्याय ५५]

धन्यव्रत

अगस्त्यजी कहते हैं—राजन्! इसके बाद अब उत्तम धन्यव्रत बताता हूँ, जिसके प्रभावसे निर्धन व्यक्ति भी यथाशीघ्र धन्यवादका पात्र हो सकता है। यह नक्तव्रत[२] है। अगहनमासके शुक्लपक्षकी प्रतिपदा तिथिको यह व्रत करना चाहिये। इस व्रतमें अग्निस्वरूप भगवान् विष्णुकी पूजाका विधान है। **'ॐ वैश्वानराय नमः', 'ॐ अग्नये नमः', 'ॐ हविर्भुजाय नमः',**

१. द्रष्टव्य—'अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन्। प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय सम्भवाम्यात्ममायया॥' (गीता ४। ६)

२. जिस व्रतमें दिनभर व्रत करके रातमें चार घड़ीके बाद भोजन किया जाता है, उसे 'नक्तव्रत' कहते हैं।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

'**ॐ द्रविणोदाय नमः**', '**ॐ संवर्ताय नमः**' तथा—'**ॐ ज्वलनाय नमः**'—इन मन्त्रवाक्योंका उच्चारण करके अग्निमय भगवान् श्रीहरिके चरण, उदर, वक्षःस्थल, भुजाएँ, सिर तथा सर्वाङ्गकी क्रमशः पूजा करनी चाहिये। इस विधानसे देवाधिदेव भगवान् जनार्दनकी अर्चना करनेके पश्चात् उनके सामने एक हवनकुण्ड बनवानेकी विधि है। विद्वान् पुरुष इन्हीं उक्त मन्त्रोंद्वारा उस कुण्डमें हवन करे। इस व्रतमें यवान्न और घृतसे युक्त भोजन करनेकी बात कही गयी है। यह व्रत ऐसा ही कृष्णपक्षमें भी होता है। चार महीनेतक इसे करना चाहिये। चैत्रसे आषाढ़तक चार महीनोंमें घृतयुक्त खीर तथा श्रावणसे कार्तिकतक सत्तूका भोजन करनेका नियम है। इस प्रकार एक वर्षमें यह व्रत समाप्त होता है। व्रत पूरा हो जानेपर विद्वान् पुरुष अग्निदेवकी सुवर्णमयी प्रतिमा बनवाये और दो लाल वस्त्रोंसे उसे आच्छादितकर लाल फूलसे पूजा करे और लाल चन्दन एवं कुङ्कुमका अनुलेपन करे। फिर ब्राह्मणकी पूजा करे। उसे दो वस्त्र अर्पण करे और वह प्रतिमा उस ब्राह्मणको दे दे। तदनन्तर यह मन्त्र पढ़कर प्रार्थना करे—'भगवन्! इस 'धन्य' नामक व्रतको सम्पन्न करनेसे मैं धन्य हो गया, मेरा कर्म धन्य हो गया तथा मेरी चेष्टा धन्य हो गयी। अब मुझे सदा सुख-शान्ति सुलभ हो जाय।' इस प्रकार कहकर वह श्रेष्ठ प्रतिमा एवं शक्तिके अनुसार धनराशि देनेका विधान है। जिसके पास भोग्य वस्तुका अत्यन्त अभाव है, वह पुरुष भी यदि इस धन्यव्रतको करता है, तो वह तुरंत धन्य होनेका अधिकारी हो जाता है। केवल इस व्रतके करनेसे ही व्यक्ति इस जन्ममें सौभाग्य एवं प्रचुर धन-धान्यसे सम्पन्न हो जीवन्मुक्त हो जाता है। जो भी व्यक्ति इस प्रसङ्गको सुनेगा अथवा भक्तिके साथ पढ़ेगा, वे दोनों इस लोकमें उसी क्षण धन्य हो जायँगे। ऐसा सुना जाता है कि पूर्व कल्पमें महात्मा कुबेरका जन्म शूद्रयोनिमें हुआ था। उस समय उन्होंने इस व्रतको किया था और इसीके फलस्वरूप वे धनके स्वामी बन गये।

[अध्याय ५६]

कान्तिव्रत

अगस्त्यजी कहते हैं—राजन्! अब कान्ति नामक व्रतको बताता हूँ। पहले चन्द्रमाने यह व्रत किया था, जिसके फलस्वरूप उन्हें पुनः कान्ति सुलभ हो गयी। प्राचीन कालकी बात है। दक्ष प्रजापतिके शापसे चन्द्रमाको राजयक्ष्मा नामक रोग हो गया। तब उन्होंने यह व्रत किया और वे फिर तत्क्षण कान्तिमान् बन गये। राजेन्द्र! यह नक्तव्रत है। इसे कार्तिकमासके शुक्लपक्षकी द्वितीया तिथिके दिन करना चाहिये। इसमें बलराम और श्रीकृष्णकी पूजा होती है। इस तिथिमें ये दोनों देवता दो कलावाले चन्द्रमामें विराजते हैं। अतः चन्द्रमाको विष्णुका उत्तम रूप माना जाता है। बुद्धिमान् पुरुष '**ॐ बलदेवाय नमः**' कहकर उनके चरणोंकी तथा '**ॐ केशवाय नमः**' से सिरकी अर्चना करे। सुव्रत! फिर आगे कहे जानेवाले मन्त्रको पढ़कर उन्हें अर्घ्य देना चाहिये। भगवन्! आप अमृतस्वरूप हैं, ब्रह्माने आपका सम्मान किया है, यज्ञलोकके आप अध्यक्ष हैं। परमात्मन्! इस समय आप चन्द्रमाके रूपमें पधारे हैं। अतः आपको नमस्कार है।* व्रती

* नमोऽस्त्वमृतरूपाय स वै विधिवराय च। यज्ञलोकाधिपतये सोमाय परमात्मने॥ (५७। ६)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

ब्राह्मण रातमें घृतसे युक्त यवान्न भोजन करे। (यह भी चौमासेका व्रत है) फाल्गुनसे लेकर चार महीनेतक इस व्रतको करनेवाला पुरुष पवित्रतापूर्वक रहकर खीर भोजन करे। कार्तिक-मासमें यवान्नके आहारपर रहे और अगहनी चावलसे बने हुए हव्यद्वारा हवन करे। आषाढ़ आदि चार महीनोंमें तिलका हवन करना चाहिये। इसी प्रकार तिलका भोजन भी करना चाहिये। फिर वर्ष पूरा हो जानेपर चन्द्रमाकी एक सोनेकी प्रतिमा बनवाकर उसे दो सफेद वस्त्रोंसे आच्छादित करे। उसपर उजले फूल चढ़ाकर श्वेत चन्दनसे अनुलेपनकर तथा भलीभाँतिसे पूजा करके ब्राह्मणको दे दे, अथवा वर्षभर व्रतकर चन्द्रमाकी चाँदीकी ही मूर्ति बनवाये और दो श्वेत वस्त्रोंसे आच्छादितकर उसकी श्वेत पुष्पों एवं श्वेत चन्दनसे पूजा करे। ऐसे ही ब्राह्मणकी भी पूजाकर उसे वह प्रतिमा दान कर दे। ब्राह्मणको प्रतिमा अर्पण करते समय व्रती मन-ही-मन मन्त्र पढ़े—'नारायण! आप चन्द्रमाके रूपमें पधारे हैं। आपको मेरा नमस्कार। भगवन्! आपकी कृपासे मैं भी इस लोकमें कान्तिमान्, सर्वज्ञ एवं प्रियदर्शन बन जाऊँ।'[१] राजन्! उक्त प्रतिमाको दानकर मनुष्य तत्क्षण कान्ति प्राप्त कर लेता है। बहुत पहले स्वयं चन्द्रमाने यह व्रत किया था। व्रत पूर्ण हो जानेपर स्वयं भगवान् श्रीहरि उनपर संतुष्ट हो गये और उनका यक्ष्मा रोग दूरकर उन्हें 'अमृता'[२] नामकी कला प्रदान की। महाभाग चन्द्रमाने उस कलाको द्वितीयाके बाद सदा अपनेमें स्थान दिया। उन्हें यह कला तपके प्रभावसे ही उपलब्ध हुई है। इतना ही नहीं, वे सोम और द्विजराज भी कहलाने लगे। शुक्लपक्षकी द्वितीया तिथिके दिन सोमरस पीनेवाले दोनों अश्विनीकुमारोंका कीर्तन करना चाहिये। ये दोनों शुक्लपक्षकी द्वितीयाके चन्द्रमामें शेष और विष्णु नामसे विख्यात होकर सुशोभित होते हैं—इसमें कोई संशय नहीं। राजेन्द्र! भगवान् विष्णु परम पुरुष परमात्मा हैं। उनसे रिक्त कोई देवता नहीं है। वे ही अनेक नाम धारणकर सर्वत्र (सभी देवताओंके रूपमें) विराजित हैं।

[अध्याय ५७]

सौभाग्य-व्रत

अगस्त्यजी कहते हैं—राजन्! अब उस सौभाग्य-व्रतको सुनो, जिसके आचरणसे स्त्री एवं पुरुषोंको शीघ्र सौभाग्यकी प्राप्ति होती है—भाग्यका उदय हो जाता है। फाल्गुनमासके शुक्लपक्षकी तृतीया तिथिको नक्तव्रतके रूपमें कर्ताको पवित्र एवं सत्यवादी होकर उपवास करना चाहिये। इस व्रतमें लक्ष्मीसहित भगवान् श्रीहरिकी अथवा उमासहित महाभाग शंकरकी पूजाका विधान है। जो लक्ष्मी हैं, वही गिरिजा हैं और जो श्रीहरि हैं, वे ही तीन नेत्रवाले हर भी हैं—सम्पूर्ण वेदशास्त्रों एवं पुराणोंमें यही बात सुस्पष्ट निर्दिष्ट है। किंतु जो ग्रन्थ इसके विपरीत यह कहता है कि 'विष्णुसे रुद्र भिन्न हैं, वह किसी अच्छे कविका प्रबन्ध हो सकता है, पर उसे 'शास्त्र' कदापि नहीं कहा जा सकता। अतः विष्णु रुद्रके ही स्वरूप हैं और लक्ष्मी गौरीकी

१. कान्तिमानपि लोकेऽस्मिन् सर्वज्ञः प्रियदर्शनः। त्वत्प्रसादात्सोमरूपिन्नारायण नमोऽस्तु ते॥ (५७।१२)

२. अमृता मानदा पूषा तुष्टिः पुष्टीरतिर्धृतिः। शशिनी चन्द्रिका कान्तिर्ज्योत्स्ना श्रीः प्रीतिरङ्गदा॥
पूर्णा पूर्णामृता कामदायिन्यः शशिनः कलाः॥ (शारदातिलक २।१२-१३)
इस तन्त्रवचनानुसार 'अमृता', शुक्लपक्षकी द्वितीयाकी चन्द्रकला है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

ही अन्यतम प्रतिकृति हैं—यही कहना समुचित है। जो इन दोनोंमें भेद बतलाता है, वह निकृष्ट है।'

राजेन्द्र! फिर व्रती पुरुष यत्नपूर्वक लक्ष्मीसहित श्रीहरिकी भलीभाँति पूजा करे। उन परम प्रभुके पूजनके मन्त्र यों हैं—'**ॐ गम्भीराय नमः, ॐ सुभगाय नमः, ॐ देवदेवाय नमः, ॐ त्रिनेत्राय नमः, ॐ वाचस्पतये नमः, ॐ रुद्राय नमः**'—इन मन्त्रोंके द्वारा क्रमशः उनके दोनों चरण, कटिभाग, उदर, मुख, सिर एवं सभी अङ्गोंकी पूजा करनी चाहिये। इस विधिके अनुसार पूजाकर मेधावी मनुष्य लक्ष्मीसहित विष्णुकी और गौरीसहित शंकरकी पुष्प-चन्दन आदि उपचारोंद्वारा पूजा करे। तदनन्तर मूर्तिके सामने मधु एवं घृतसे हवन करना चाहिये। महाराज! यदि सर्वोत्तम सौभाग्य पानेकी कामना हो तो तिल और घृतसे हवन कराये। इस दिन बिना नमक तथा घृतके शुद्ध गेहूँसे तैयार किया हुआ भोजन पृथ्वीपर ही बैठकर करना चाहिये। कृष्णपक्षके लिये भी यही विधि बतायी जाती है। आषाढ़से लेकर आश्विनतकके चार महीनोंमें यह व्रत प्रतिपदा तिथिके दिन होता है और द्वितीयाको पारण करनेकी विधि है। इन महीनोंमें यह व्रत यावान्नसे करना चाहिये। राजन्! इसके पश्चात् कार्तिकसे पूसतक—तीन मासोंमें व्रती पुरुष पवित्रतापूर्वक संयमसे रहकर श्यामाक (साँवा)-का भोजनमें उपयोग करे। नरेश! फिर माघमासके शुक्लपक्षकी तृतीया तिथिके दिन बुद्धिमान् पुरुष अपनी शक्तिके अनुसार पार्वती-शंकर तथा लक्ष्मी-नारायणकी सुवर्णमयी प्रतिमा बनवाकर किसी सत्पात्र एवं विद्वान् ब्राह्मणको अर्पण कर दे। जिसके पास अन्नका अभाव हो, वेदका जो पारगामी विद्वान् हो, जो सदा दूसरोंका उपकार करता हो, जिसके आचरण पवित्र हों तथा विशेष रूपसे विष्णुमें भक्ति रखता हो, ऐसे ब्राह्मणको वह प्रतिमा देनी चाहिये। साथ ही दानमें छः पात्र भी देनेकी विधि है। एकसे लेकर छः तक वे पात्र क्रमशः मधु, घृत, तिलका तैल, गुड़, लवण एवं गायके दूधसे पूर्ण हों। इन पात्रोंके दान करनेके प्रभावसे व्रत करनेवाला व्यक्ति स्त्री अथवा पुरुष—कोई भी हो, वह अन्य सात जन्मोंमें सुन्दर सद्भाग्यशाली और परम दर्शनीय हो जाता है।

[अध्याय ५८]

अविघ्नव्रत

अगस्त्यजी कहते हैं—राजन्! सुनो। अब मैं 'विघ्नहर' नामक व्रतको बतलाता हूँ। इसके विधिपूर्वक आचरण करनेसे पुरुष विघ्नोंद्वारा पराभूत—बाधित या तिरस्कृत नहीं होता। इसके प्रारम्भिक ग्रहणकी विधि इस प्रकार है। फाल्गुनमासकी चतुर्थीको दिनमें उपवास रहकर चार घड़ी रात बीतनेपर भोजन करे। प्रातःपारणामें तिल लेने चाहिये। उस दिन तिलसे ही हवन करे तथा तिल ही ब्राह्मणको दान भी दे। इसी प्रकार चार मासतक इसका अनुष्ठानकर पाँचवें महीनेमें (आषाढ़की) चतुर्थीको सुवर्णमयी गणेशकी प्रतिमाकी भलीभाँति पूजाकर खीर एवं तिलसे भरे हुए पाँच पात्रोंके साथ उसे ब्राह्मणको दे देनी चाहिये। इस प्रकार इस व्रतका अनुष्ठानकर मनुष्य सम्पूर्ण विघ्नोंसे छुटकारा पा जाता है। अपने अश्वमेध यज्ञमें विघ्न पड़नेपर राजा सगरने इसी व्रतका अनुष्ठानकर, अश्वको प्राप्तकर यज्ञ सम्पन्न किया था। त्रिपुरासुरसे युद्धके समय भगवान् रुद्रने भी इसी व्रतके प्रभावसे त्रिपुरासुरका वध किया था। मैंने भी समुद्रपानके समय यही व्रत किया था।

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

परंतप! पूर्वसमयमें तप एवं ज्ञानकी इच्छावाले अन्य अनेक राजाओंने विघ्न दूर करनेके लिये इस व्रतका आचरण किया था। इस व्रतके दिन पुण्यात्मा पुरुष विघ्न समाप्त होनेके निमित्त '**ॐ शूराय नमः, ॐ धीराय नमः, ॐ गजाननाय नमः, ॐ लम्बोदराय नमः, ॐ एकदंष्ट्राय नमः**'—इन मन्त्रोंका उच्चारण कर गणेशजीकी सम्यक् प्रकारसे पूजा करे और इन्हीं मन्त्रोंद्वारा हवन भी करे। केवल इसी व्रतके करनेसे मानव सभी विघ्नोंसे मुक्त हो जाता है। गणेशजीकी प्रतिमा दान करनेसे तो उसके जीवनकी सारी अभिलाषाएँ ही पूरी हो जाती हैं।

[अध्याय ५९]

शान्ति-व्रत

अगस्त्यजी कहते हैं—राजन्! अब तुम्हें 'शान्ति-व्रत' का उपदेश करता हूँ। इसके आचरणसे गृहस्थोंके घरमें सदा शान्ति-सन्मति बनी रहती है। सुव्रत! कार्तिकमासके शुक्लपक्षकी पञ्चमी तिथिके दिनसे आरम्भकर एक वर्षपर्यन्त व्रतीको अत्यन्त उष्ण भोजनका त्याग करना चाहिये तथा प्रदोषकालमें शेषशायी श्रीहरिकी सम्यक् प्रकारसे पूजा करनी चाहिये। '**ॐ अनन्ताय नमः**', '**ॐ वासुकये नमः**', '**ॐ तक्षकाय नमः**', '**ॐ कर्कोटकाय नमः**', '**ॐ पद्माय नमः**', '**ॐ महापद्माय नमः**', '**ॐ शङ्खपालाय नमः**', '**ॐ कुटिलाय नमः**'—इन मन्त्रोंके द्वारा भगवान् विष्णुके शय्यास्वरूप शेषनागके क्रमशः दोनों चरण, कटिभाग, उदर, छाती, कण्ठ,दोनों भुजाएँ, मुख एवं सिरकी विधि-पूर्वक पृथक्-पृथक् पूजा करनी चाहिये। फिर भगवान् विष्णुको लक्ष्यकर सभी अङ्गोंको दूधसे भी स्नान कराये। तत्पश्चात् श्रद्धालु साधकको भगवान्के सामने तिलमिश्रित दूधसे हवन करना चाहिये।

इस प्रकार एक वर्ष पूराकर ब्राह्मणोंको भोजन कराये और सुवर्णमयी शेषनागकी प्रतिमा बनाकर ब्राह्मणको दान दे। राजन्! जो पुरुष इस प्रकार यह व्रत भक्तिपूर्वक करता है, उसे निश्चय ही शान्ति सुलभ हो जाती है, साथ ही उसे सर्पोंसे भी भय नहीं होता। [अध्याय ६०]

काम-व्रत

अगस्त्यजी कहते हैं—राजेन्द्र! अब मैं 'काम-व्रत' कहता हूँ, सुनो। इस व्रतके प्रभावसे मनमें उठी कामनाएँ सिद्ध हो जाती हैं। यह व्रत पौष-मासके शुक्लपक्षमें होता है तथा यह व्रत एक वर्षपर्यन्त चलता है। इसमें पञ्चमी तिथिके दिन भोजनकर षष्ठीके दिन फलाहारपर रह जाय। अथवा यह भी नियम है कि बुद्धिमान् पुरुष षष्ठीके दिन दोपहरमें फलाहार करे और रातमें मौन होकर ब्राह्मणोंके साथ शुद्ध भात खाय या केवल फलाहारपर ही व्रत करे। षष्ठीको पूरा दिनभर उपवास रहकर सप्तमी तिथिमें पारणा करनी चाहिये। इसमें भगवान् कार्तिकेयकी पूजा-कर हवन करना चाहिये। इस प्रकार एक वर्ष-पर्यन्त व्रत करे। षडानन, कार्तिकेय, सेनानी, कृत्तिकासुत, कुमार और स्कन्द—इन नामोंसे विष्णु ही प्रतिष्ठित हैं। अतः उनके इन नामोंसे ही उनकी पूजा करनी चाहिये। व्रत समाप्त होनेपर ब्राह्मणको भोजन कराये और षण्मुखकी सुवर्णमयी प्रतिमा ब्राह्मणको दे। वस्त्रसहित प्रतिमा ब्राह्मणको देते समय व्रती इस प्रकार प्रार्थना करे—'भगवान् कार्तिकेय! आपकी कृपासे मेरी सम्पूर्ण कामनाएँ सिद्ध हो जायँ।' फिर ब्राह्मणको

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

लक्ष्य कर कहे—'ब्राह्मण देवता! मैं भक्तिपूर्वक यह प्रतिमा देता हूँ, आप कृपापूर्वक इसे स्वीकार करें।' इस प्रकारके दानमात्रसे व्रतीके इस जन्मकी समस्त कामनाएँ सिद्ध हो जाती हैं। संतानहीनको पुत्र, धनकी इच्छावालेको धन तथा राज्य छिन जानेवालेको राज्य सुलभ हो सकता है—इसमें कुछ भी अन्यथा विचार नहीं करना चाहिये। महाराज! इस व्रतका पूर्व समयमें ब्रह्मचर्यका पालन करते हुए राजा नलने अनुष्ठान किया था। उस समय वे ऋतुपर्णके राज्यमें निवास करते थे। नृपवर! प्राचीन कालके बहुत-से अन्य प्रधान नरेशोंने भी हाथसे राज्य निकल जानेपर कामनासिद्धिके लिये इस व्रतका आचरण किया था। [अध्याय ६१]

आरोग्य-व्रत

अगस्त्यजी कहते हैं—महाराज! अब आरोग्य नामक एक दूसरा परमपवित्र व्रत बताता हूँ, जिसके प्रभावसे सम्पूर्ण पाप भस्म हो जाते हैं। इस व्रतमें आदित्य, भास्कर, रवि, भानु, सूर्य, दिवाकर एवं प्रभाकर—इन सात नामोंसे भगवान् सूर्यकी विधिपूर्वक पूजा करनी चाहिये। इस व्रतमें षष्ठी तिथिके दिन भोजनकर सप्तमीको प्रातःकाल भगवान् भास्करकी पूजा करते हुए उपवास करना चाहिये। फिर अष्टमी तिथिको भोजन करे, यही इस व्रतकी विधि है। इस प्रकार पूरे एक वर्षतक जो भगवान् सूर्यकी पूजा करता है, उसे इस जन्ममें आरोग्य, धन तथा धान्य सुलभ हो जाते हैं और परलोकमें वह उस पवित्र स्थानपर पहुँचता है, जहाँ जाकर पुनः संसारमें जन्म नहीं लेना पड़ता।

प्राचीन समयकी बात है, अनरण्य नामके महान् प्रतापी राजा थे, जिनके वशमें सम्पूर्ण पृथ्वी थी। राजन्! उन महाभाग नरेशने यह व्रत किया तथा उस दिन भगवान् भास्करकी पूजा भी की, जिसके फलस्वरूप भगवान् सूर्य उनपर प्रसन्न हो गये और राजा अनरण्यको उन्होंने उत्तम आरोग्य प्रदान कर दिया।

राजा भद्राश्वने पूछा—राजन्! आपने राजाके आरोग्य होनेकी बात कही तो क्या इसके पूर्व वे रोगी थे? भला, वे सार्वभौम राजा रोगग्रस्त कैसे हो गये?

अगस्त्यजी कहते हैं—राजन्! राजा अनरण्य चक्रवर्ती सम्राट् थे; साथ ही वे अत्यन्त रूपवान् एवं यशस्वी भी थे। एक समयकी बात है—वे परम पराक्रमी राजा दिव्य मानसरोवरपर गये, जहाँ देवताओंका निवास है। वहाँ उन्हें सरोवरके बीचमें एक बड़ा-सा श्वेत कमल दीखा। उस कमलपर अँगूठेकी आकृतिके बराबर एक दिव्य पुरुष बैठे थे, जिनका शरीर बड़ा तेजःपूर्ण था। उनकी दो भुजाएँ थीं और वे लाल वस्त्रोंसे आच्छादित थे। उस कमलको देखकर राजा अनरण्यने अपने सारथिसे कहा—'तुम किसी प्रकार इस कमलको ले आनेका प्रयत्न करो। कारण, जब मैं इसे अपने सिरपर धारण करूँगा, तब संसारमें मेरी बड़ी प्रतिष्ठा होगी, अतः देर मत करो।'

राजन्! अनरण्यके ऐसा कहनेपर सारथि उस सरोवरमें घुसा। फिर उस कमलको लेनेके लिये आगे बढ़ा और उसे स्पर्श करना चाहा, इतनेमें वहाँ बड़े उच्च स्वरसे हुंकारकी ध्वनि हुई। उस शब्दके प्रभावसे सारथिके हृदयमें आतङ्क छा गया। वह जमीनपर गिरा और उसके प्राण निकल गये तथा राजा भी कुष्ठग्रस्त, बलहीन एवं विवर्ण

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

हो गये। अपनी ऐसी स्थिति देखकर राजा—'यह क्या हुआ?' इस चिन्तामें पड़ गये और वहीं रुके रहे। इतनेमें ही महान् तपस्वी ब्रह्मपुत्र बुद्धिमान् वसिष्ठजी वहाँ आ गये और उन्होंने राजा अनरण्यसे पूछा—'राजन्! तुम यहाँ कैसे पहुँचे तथा तुम्हारे शरीरकी ऐसी स्थिति कैसे हुई? अब मैं तुम्हारे लिये क्या करूँ? यह बताओ।'

राजन्! वसिष्ठजीके इस प्रकार पूछनेपर अनरण्यने उनसे कमलसम्बन्धी सम्पूर्ण वृत्तान्तका वर्णन किया। राजाकी बात सुनकर मुनिने कहा—'राजन्! तुम साधु थे, पर तुम्हारे मनमें असाधुता आ गयी। इसीलिये तुमपर कुष्ठरोगका आक्रमण हो गया है।' मुनिके ऐसा कहनेपर राजाने हाथ जोड़कर काँपते हुए पूछा—'विप्रवर! मैं साधु या असाधु कैसे हूँ और मेरे शरीरमें यह कोढ़ कैसे हो गया? यह सब आप बतानेकी कृपा करें।'

वसिष्ठजी बोले—राजन्! इस 'ब्रह्मोद्भव' कमलकी तीनों लोकोंमें प्रसिद्धि है। इसके दर्शनकी बड़ी भारी महिमा है। इससे सम्पूर्ण देवता प्रसन्न हो सकते हैं। राजन्! छः महीनेके भीतर कभी भी जनता इस सरोवरमें यह कमल देख लिया करती है। जो मनुष्य केवल इसका दर्शन करके जलमें पैर रख देता है, उसके सम्पूर्ण पाप भाग जाते हैं तथा वह पुरुष निर्वाणपदका अधिकारी हो जाता है; क्योंकि जलमें दीखनेवाली यह ब्रह्माजीकी प्रारम्भिक मूर्ति है। इस मूर्तिका दर्शनकर जो जलमें प्रवेश करता है, उसकी संसारसे मुक्ति हो जाती है। राजन्! तुम्हारा सारथि इस विग्रहको देखकर जलमें चला गया और जानेपर उसने इसे लेनेकी भी चेष्टा की। नरेश! इसका कारण यह था कि तुम्हारे मनमें लोभ उत्पन्न हो गया था एवं तुम्हारी बुद्धि नष्ट हो चुकी थी। इसीका परिणाम है कि तुम कोढ़ी बन गये हो। तुमने इनका दर्शन कर लिया है, जिसके कारण साधुकी श्रेणीमें आ गये। नरेश! साथ ही इस कमलको पानेके लिये तुम्हारे मनमें जो मोह उत्पन्न हो गया, इस कारण मैंने तुम्हें असाधु कहा।

देवताओंका भी कथन है कि 'मानसरोवरके ब्रह्मपद्म नामक कमलपर (ब्रह्मरूपमें) भगवान् श्रीहरि आकर विराजते हैं। उनका दर्शनकर हम उस ब्रह्मपदको पा जायँगे, जहाँसे पुनः संसारमें आना नहीं पड़ता है। राजन्! यही कारण है कि तुम्हारे अङ्गमें कुष्ठ हो गया। इस कमलपर स्वयं भगवान् श्रीहरि सूर्यका रूप धारण करके विराजते हैं। वस्तुतः विचार किया जाय तो यह सनातन परब्रह्म परमात्माका ही रूप है। 'मैं इसको अपने सिरपर धारण करूँ, जिससे मेरी प्रसिद्धि हो जाय' तुमने ऐसी भावना लेकर इसे प्राप्त करनेके लिये सारथिको भेजा। यह बेचारा सारथि तो उसी क्षण अपने प्राणोंसे हाथ धो बैठा और तुम्हारी देह कुष्ठरोगसे व्याप्त हो गयी। अतएव महाराज! तुम भी यह आरोग्य नामक व्रत करो। इस व्रतके करनेसे तुम कुष्ठरोगसे छुटकारा पा जाओगे।

ऐसा कहकर वसिष्ठजी राजाके पाससे चले गये। राजाने भी उनकी बात सुनकर प्रतिदिन उस सरोवरपर जाने और वहाँ ब्रह्माजीके दर्शन करनेका नियम बना लिया और फिर वे शीघ्र ही कुष्ठमुक्त होकर स्वस्थ एवं कृतार्थ हो गये।

[अध्याय ६२]

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

पुत्रप्राप्ति-व्रत

अगस्त्यजी कहते हैं—महाराज! अब संक्षेपमें एक कल्याणप्रद व्रत बताता हूँ, उसे सुनो! इसका नाम पुत्रप्राप्ति-व्रत है। राजन्! भाद्रपदमासके कृष्णपक्षकी जो अष्टमी तिथि होती है, उस दिन उपवासपूर्वक व्रत करना चाहिये। सप्तमी तिथिके दिन संकल्प करके अष्टमी तिथिमें भगवान् श्रीहरिकी पूजाका विधान है। मनमें ऐसी भावना करे कि भगवान् नारायण कृष्णरूप धारण करके माताकी गोदमें बैठे हैं। माताओंका समुदाय उनकी सब ओर शोभा दे रहा है। अष्टमीकी प्रातःकालीन स्वच्छ वेलामें पहले कहे हुए विधानके अनुसार बड़े यत्नसे भगवान्का अर्चन करना चाहिये। इस विधिके साथ गोविन्दका पूजन करनेके पश्चात् यव, तिल एवं घृतमिश्रित हव्य पदार्थसे हवन करना चाहिये। फिर भक्तिपूर्वक ब्राह्मणोंको दही भोजन कराये और अपनी शक्तिके अनुसार उन्हें दक्षिणा दे। तदनन्तर स्वयं भोजन करे। पहला ग्रास उत्तम तिलका होना चाहिये। फिर अपनी इच्छाके अनुसार दूसरा अन्न खाया जा सकता है। भोज्य-पदार्थ स्निग्ध एवं सरस वस्तुओंसे युक्त हो। साधक प्रतिमास इसी विधिके अनुसार व्रत करे। इसे कृष्णाष्टमीव्रत भी कहते हैं। इसके प्रभावसे जिसे पुत्र न हो, वह पुत्रवान् बन जाता है।

सुना जाता है—प्राचीन समयमें शूरसेन नामके एक प्रतापी राजा थे। उनके कोई पुत्र नहीं था। अतः उन्होंने हिमालय पर्वतपर जाकर तपस्या आरम्भ कर दी। परिणामस्वरूप उनके घर एक पुत्रकी उत्पत्ति हुई जिसका नाम वसुदेव हुआ। महाभाग वसुदेवने अनेक व्रत और यज्ञ किये। ऐसे पुत्रके प्राप्त हो जानेसे राजर्षि शूरसेनको उत्तम निर्वाणपद सुलभ हो गया।

राजन्! इस प्रकार मैंने तुम्हारे सामने कृष्णाष्टमी-व्रतका संक्षिप्त वर्णन किया। यह व्रत एक वर्षतक करना चाहिये। वर्ष पूरा हो जानेपर ब्राह्मणको दो वस्त्र देनेका विधान है। राजन्! इसका नाम पुत्रव्रत है। इसे कर लेनेपर मनुष्य सम्पूर्ण पापोंसे निश्चय ही छूट जाता है। [अध्याय ६३]

शौर्य एवं सार्वभौम-व्रत

अगस्त्यजी कहते हैं—राजन्! अब मैं एक दूसरे शौर्यव्रतका वर्णन करता हूँ; जिसे करनेसे अत्यन्त भीरु व्यक्तिमें भी तत्क्षण महान् शौर्यका प्राकट्य होता है। इस व्रतको आश्विनमासके शुक्लपक्षमें नवमी तिथिके दिन करना चाहिये। सप्तमी तिथिके दिन संकल्प करके अष्टमी तिथिके दिन भातका परित्याग करना चाहिये और नवमी तिथिके दिन पक्वान्न खानेका विधान है। राजन्! सर्वप्रथम भक्तिपूर्वक ब्राह्मणोंको भोजन कराना चाहिये। इस व्रतमें महातेजस्वी, महाभागा, भगवती महामाया दुर्गाकी भक्तिके साथ आराधना करनी चाहिये। इस प्रकार जबतक एक वर्ष पूरा न हो जाय, तबतक विधिपूर्वक यह व्रत करना उचित है। व्रत समाप्त हो जानेपर बुद्धिमान् पुरुष अपनी शक्तिके अनुसार कुमारी कन्याओंको भोजन कराये। यदि अपने पास शक्ति हो तो सुवर्ण और वस्त्र आदिसे उन कन्याओंको अलंकृतकर भोजन कराना चाहिये। इसके पश्चात् उन भगवती दुर्गासे क्षमा माँगे और प्रार्थना करे—'देवि! आप मुझपर प्रसन्न हो जायँ।'

इस प्रकार व्रत करनेपर राजा, जिसका राज्य हाथसे निकल गया है, अपना राज्य पुनः प्राप्त

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth

कर लेता है। इसी प्रकार मूर्खको विद्या और भीरु व्यक्तिको शौर्यकी प्राप्ति होती है।

अगस्त्यजी कहते हैं—राजन्! अब मैं संक्षेपमें सार्वभौम नामक व्रत बतलाता हूँ, जिसका सम्यक् प्रकार आचरण करनेसे व्यक्ति सार्वभौम राजा हो जाता है। इसके लिये कार्तिकमासके शुक्लपक्षकी दशमी तिथिको उपवास रहकर रातमें भोजन करना चाहिये। तदनन्तर दसों दिशाओंमें शुद्ध बलि दे, फिर चित्र-विचित्र फूलोंद्वारा श्रेष्ठ ब्राह्मणोंकी भक्तिके साथ पूजाकर दिशाओंकी ओर लक्ष्य करते हुए इस उत्तम व्रतका आचरण करनेवाला पुरुष इस प्रकार प्रार्थना करे, 'देवियो! आप मेरे जन्म-जन्ममें सर्वार्थ सिद्धि प्रदान करें।' ऐसा कहकर शुद्ध चित्तसे उन देवियोंके लिये बलि दे।

तदनन्तर रातमें पहले भलीभाँति सिद्ध किया हुआ दधिमिश्रित अन्न भोजन करे। फिर बादमें इच्छानुसार गेहूँ या चावलसे बना हुआ भोजन करना चाहिये। राजन्! इस प्रकार जो पुरुष प्रतिवर्ष व्रत करता है, वह दिग्विजयी होता है। फिर जो मनुष्य मार्गशीर्षमासके शुक्लपक्षमें एकादशी तिथिके दिन निराहार रहकर विधिके अनुसार व्रत करता है, उसे यह धन प्राप्त होता है, जिसके लिये कुबेर भी लालायित रहते हैं।

एकादशी तिथिके दिन निराहार रहकर द्वादशी तिथिके दिन भोजन करना—यह महान् वैष्णव-व्रत है। चाहे शुक्लपक्ष हो या कृष्णपक्ष—दोनोंका फल बराबर है। राजन्! इस प्रकार किया हुआ व्रत कठिन-से-कठिन पापोंको भी नष्ट कर देता है। त्रयोदशी तिथिको व्रत रहकर रातमें चार घड़ीके बाद भोजन करनेसे 'धर्मव्रत' होता है। चतुर पुरुषको फाल्गुन शुक्लपक्षकी त्रयोदशी तिथिसे प्रारम्भकर चैत्र कृष्णपक्षकी चतुर्दशी तिथितक रौद्रव्रत करना चाहिये। राजन्! माघ माससे आरम्भकर वर्ष समाप्त होनेतक जो नक्तव्रत किया जाता है, उसका नाम पितृव्रत है। इस व्रतमें शुद्ध पञ्चमी तिथिके दिन तथा अमावास्याको रात्रिमें भोजन करनेका विधान है। नरेन्द्र! इस तिथिव्रतको जो पुरुष पंद्रह वर्षोंतक करता है, उसका फल उस फलका बराबरी कर सकता है, जो एक हजार अश्वमेध-यज्ञ और सौ राजसूय-यज्ञ करनेसे मिलता है। राजेन्द्र! मानो उस पुरुषने एक कल्पमें बताये हुए सभी व्रतोंको कर लिया। इनमेंसे एक-एक व्रतमें वह शक्ति है कि व्रतीके पापोंको सदा नष्ट करता रहता है। फिर यदि कोई श्रेष्ठ पुरुष इन सभी व्रतोंका आचरण कर सके तो राजन्! वह पवित्रात्मा पुरुष सम्पूर्ण शुद्ध लोकोंको प्राप्त कर ले, इसमें क्या आश्चर्य है?

[अध्याय ६४-६५]

राजा भद्राश्वका प्रश्न और नारदजीके द्वारा विष्णुके आश्चर्यमय स्वरूपका वर्णन

राजा भद्राश्वने कहा—मुने! यदि आपको भी कोई विशेष आश्चर्यजनक बात दीखी या विदित हुई हो तो वह मुझे बतानेकी कृपा कीजिये। इसके लिये मेरे मनमें बड़ी उत्सुकता है।

अगस्त्यजी कहते हैं—राजन्! भगवान् जनार्दन ही आश्चर्यरूप (समस्त आश्चर्योंके भण्डार या मूर्तिमान्) हैं। मैंने इनके अनेक आश्चर्योंको देखा है। राजन्! पूर्व समयकी बात है। एक बार नारदजी श्वेतद्वीपमें गये। वहाँ उन्हें ऐसे परम तेजस्वी पुरुषोंके दर्शन हुए, जिनके हाथोंमें शङ्ख,

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

चक्र, गदा और कमल शोभा पा रहे थे। तो नारदजीके मुँहसे सहसा 'यही सनातन विष्णु हैं, यही विष्णु हैं, ये विष्णु हैं' ये शब्द निकले। फिर नारदजीके मनमें यह विचार आया कि मैं प्रभुकी आराधना किस प्रकार करूँ? ऐसा विचार कर नारदजीने परम प्रभु भगवान् श्रीहरिका ध्यान किया। सहस्र दिव्य वर्षोंसे भी अधिक समयतक उनके ध्यान करनेपर भगवान् प्रसन्न होकर प्रकट हुए और बोले—'महामुने! तुम वर माँगो; कहो, तुम्हें मैं क्या दूँ?'

नारदजी बोले—जगत्प्रभो! मैंने एक हजार दिव्य वर्षोंतक आपका ध्यान किया है। अच्युत! इतनेपर यदि आप मुझपर प्रसन्न हो गये हों तो मुझे कृपया अपनी प्राप्तिका उपाय बतलाइये।

देवाधिदेव विष्णुने कहा—द्विजवर! जो मनुष्य 'पुरुषसूक्त' तथा वैदिक संहिताका पाठ करते हुए मेरी उपासना करते हैं, वे मुझे शीघ्र ही प्राप्त करते हैं। पञ्चरात्रद्वारा निर्दिष्ट मार्गसे जो मानव मेरा यजन करते हैं, उन्हें भी मैं प्राप्त हो जाता हूँ। द्विजके लिये तो पञ्चरात्रका नियम बताया गया है, दूसरोंको मेरे नाम-लीला, धाम, क्षेत्र, तीर्थ, मन्दिरोंकी यात्रा एवं दर्शन करना चाहिये।

नारद! सत्त्वगुणवाले पुरुष मुझे पानेके अधिकारी हैं। कलियुगमें रजोगुण-तमोगुणकी ही विशेषता रहेगी। नारद! यह दुर्लभ पञ्चरात्र-शास्त्रका मेरी कृपासे ही ज्ञान होगा। द्विजवर! वेदका अध्ययन, पञ्चरात्र-पाठ तथा यज्ञ एवं भक्ति—ये मुझे प्राप्त करानेके साधन हैं। मैं इनके द्वारा सुलभ होता हूँ, अन्यथा करोड़ वर्षोंतक यत्न करनेपर भी मनुष्य मुझे नहीं प्राप्त कर सकता।

इस प्रकार परम प्रभु भगवान् नारायणने नारदजीसे कहा और वे उसी क्षण अन्तर्धान हो गये।

राजा भद्राश्वने पूछा—भगवन्! पहले जिन गोरी एवं काली स्त्रियोंकी बात आयी है, वे कौन थीं? उनका सीता और कृष्णा कैसे नाम पड़ गया? ब्रह्मन्! सात प्रकारके पवित्र पुरुष कौन हुए? उस पुरुषने अपना बारह प्रकारका रूप कैसे बना लिया? दो देह और छः सिरका क्या तात्पर्य है?

अगस्त्यजी कहते हैं—राजन्! जो गोरी और काली—ये दो देवियाँ थीं, इनका परस्पर बहनका नाता है। दोनोंके दो वर्ण हैं—एकका शुक्ल और दूसरीका कृष्ण। कृष्णाको रात्रिदेवी कहा जाता है। राजन्! पुरुष एक होते हुए भी सात प्रकारके रूपोंसे सुशोभित हैं। जो बारह प्रकारके दो शरीर तथा छः सिरकी बात कही गयी है उनका तात्पर्य संवत्सरसे जानना चाहिये। उत्तरायण और दक्षिणायन—ये दो गतियाँ उनके शरीर तथा वसन्त आदि छः ऋतुएँ मुँह हैं। सूर्य दिनके और चन्द्रमा रात्रिके अधिष्ठाता हैं। राजन्! इन्हीं विष्णुसे इस जगत्की उत्पत्ति हुई है। अतएव उन भगवान् विष्णुको ही परमदेवता जानना चाहिये। वैदिक क्रियासे हीन व्यक्ति उन परम प्रभु परमात्माको देखनेमें सर्वथा असमर्थ है।

राजा भद्राश्वने पूछा—मुने! परमात्माका चारों युगोंमें कैसा स्वरूप जानना चाहिये? ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र—इन चारों वर्णोंका प्रत्येक युगमें कैसा आचार होता है?

अगस्त्यजी कहते हैं—राजन्! सत्ययुगमें वैदिक कर्म करके यज्ञोंद्वारा देवताओंकी पूजा करनेवाले दिव्य पुरुषोंसे पृथ्वी सुशोभित रहेगी। ऐसा ही समय त्रेतायुगमें भी रहेगा। महाराज! द्वापरयुगमें सत्त्वगुण और रजोगुणकी बहुलता होगी। फिर महाराज युधिष्ठिर राजा होंगे। इसके पश्चात् कलिस्वरूप तमोगुणका विस्तार होगा। राजन्! कलियुगके आ जानेपर ब्राह्मण अपने

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

मार्गसे च्युत हो जायँगे। राजेन्द्र! क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र—इन सबकी जाति प्रायः नष्ट-सी हो जायगी। इनमें सत्य और शौचका नितान्त अभाव हो जायगा। फिर तो संसार नष्टप्राय हो जायगा। वर्ण एवं धर्म सर्वदाके लिये दूर चले जायँगे।

नरेन्द्र! बहुत समयसे चिरकालार्जित पाप तथा वर्णसंकर जातिके पुरुषके साथ रहनेसे ब्राह्मणद्वारा जो पाप बनता है, इससे दस बार प्रणवसहित गायत्रीके जप करने तथा तीन सौ बार प्राणायाम करनेसे वह उस पापसे छुटकारा पा जाता है। प्रायश्चित्तोंसे ब्रह्महत्या-जैसे पाप भी छूट जाते हैं, शेष पापोंसे छूटनेकी तो बात ही क्या है? अथवा जो श्रेष्ठ ब्राह्मण सर्वोत्तम रूपधारी भगवान् श्रीहरिको जानकर ध्यान आदिसे उनकी पूजा करता है, वह उन पापोंसे लिप्त नहीं हो सकता। वेदका अध्ययन करनेवाला ब्राह्मण सौ बार किये हुए पापोंसे भी लिप्त नहीं होता। जिसके द्वारा भगवान् विष्णुका स्मरण, वेदका अध्ययन, द्रव्यका दानरूपमें वितरण तथा भगवान् श्रीहरिका यजन होता रहता है, वह ब्राह्मण तो सदा शुद्ध ही है। वह तो विरुद्ध धर्मवालेका भी उद्धार कर सकता है। राजन्! तुमने जो पूछा था, वह सब मैंने बतला दिया। महाराज! मनु आदि महानुभावोंने जिसे बड़े विस्तारसे कहा है, उसीका मैंने यहाँ संक्षेप रूपसे वर्णन किया है।

[अध्याय ६६—६८]

भगवान् नारायणसम्बन्धी आश्चर्यका वर्णन

राजा भद्राश्वने कहा—भगवन्! आप सभी ब्राह्मणोंमें प्रधान एवं दीर्घजीवी हैं। मैं यह जानना चाहता हूँ कि आपके शरीरकी यह विशेषता क्यों और कैसी है? महानुभाव! आप मुझे यह बतलानेकी कृपा करें।

अगस्त्यजी बोले—राजन्! मेरा यह शरीर अनेक अद्भुत कुतूहलोंका भण्डार है। बहुत कल्प बीत चुके, किंतु अभी यह यों ही पड़ा है। वेद और विद्यासे इसका भलीभाँति संस्कार हुआ है। राजन्! एक समयकी बात है—मैं सम्पूर्ण भूमण्डलपर घूम रहा था। घूमते-घूमते मैं उस महान् 'इलावृत' नामक वर्षमें पहुँचा, जो सुमेरु-पर्वतके पार्श्वभागमें है। वहाँ मुझे एक सुन्दर सरोवर दिखायी दिया। उसके तटपर एक विशाल आश्रम था। उस आश्रममें मुझे एक तपस्वी दीख पड़े, जिनका शरीर उपवासके कारण शिथिल पड़ गया था तथा शरीरमें केवल हड्डियाँ ही शेष रह गयी थीं। वे वृक्षकी छाल लपेटे हुए थे। महाराज! उन तपस्वीको देखकर मैं सोचने लगा—ये कौन हैं? फिर मैंने उनसे कहा—'ब्रह्मन्! मैं आपके पास आया हूँ। मुझे कुछ देनेकी कृपा करें।' तब उन मुनिने मुझसे कहा—'द्विजवर! आपका स्वागत है। ब्रह्मन्! आप यहाँ ठहरिये, मैं आपका आतिथ्य करनेके लिये उद्यत हूँ।'

राजन्! उन तपस्वीकी यह बात सुनकर मैं आश्रममें चला गया। इतनेमें देखता हूँ कि वे ब्राह्मणदेवता तेजसे मानो संदीप्त हो रहे हैं। मैं भूमिपर बैठ गया, अब उनके मुखसे हुंकारकी ध्वनि निकली, जिससे पातालका भेदनकर पाँच कन्याएँ निकल आयीं। उनमेंसे एकके हाथमें सुवर्णका पृष्ठासन (पीढ़ा) था। उसने बैठनेके लिये वह आसन मुझे दे दिया। दूसरेके हाथमें जल था। वह उससे मेरे दोनों पैरोंको धोने लगी। अन्य दो कन्याएँ हाथमें पंखे लेकर मेरी दोनों ओर खड़ी होकर हवा करने लगीं। इसके पश्चात् उन महान् तपस्वीने फिर हुंकार किया। इस

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

शब्दके होते ही तुरंत एक नौका सामने आ गयी, जिसका विस्तार एक योजन था। राजन्! सरोवरमें उस नावको एक कन्या चला रही थी। वह उसे लेकर आ गयी। उस नावमें सैकड़ों सुन्दर कन्याएँ थीं। सबके हाथमें सोनेके कलश थे। राजन्! वे कन्याएँ आ गयीं—यह देखकर उन तपस्वीने मुझसे कहा—'ब्रह्मन्! यह सारी व्यवस्था आपके स्नानके लिये की गयी है। महाशय! आप इस नावपर विराजकर स्नान करें।'

नरेन्द्र! फिर उन तपस्वीके कथनानुसार ज्यों ही मैंने नावमें प्रवेश किया कि इतनेमें ही वह नौका सरोवरमें डूब गयी। उस नावके साथ मैं भी जलमें डूब गया। तबतक सुमेरुगिरिके शिखरपर वे तपस्वी और उनका दिव्य पुर मुझे अपने-आप दिखायी पड़े। सात समुद्र, पर्वत-समूह तथा सात द्वीपोंसे युक्त यह पृथ्वी भी वहाँ दृष्टिगोचर हुई। उत्तम व्रतका पालन करनेवाले राजन्! आज भी जब मैं यहाँ बैठा हूँ तो वह उत्तम लोक मुझे स्मरण हो रहा है। मेरे मनमें इस प्रकारकी चिन्ता हो रही है कि कब मैं उस उत्तम लोकमें पहुँचूँगा। राजन्! ऐसा परब्रह्म परमात्माका कौतुक है, जो मैंने तुम्हें सुना दिया। यही मेरे शरीरकी घटना है। अब तुम दूसरा क्या सुनना चाहते हो!

[अध्याय ६९]

सत्ययुग, त्रेता और द्वापर आदिके गुणधर्म

राजा भद्राश्वने पूछा—मुने! उस दिव्य लोकको देख लेनेके बाद पुनः उसे पानेके लिये आपने कौन-सा व्रत, तप अथवा धर्म किया?

अगस्त्यजी कहते हैं—राजन्! विवेकी पुरुषको चाहिये कि वह भगवान् श्रीहरिकी भक्तिपूर्वक आराधना छोड़कर अन्य किन्हीं लोकोंकी कामना न करे; क्योंकि परम प्रभुकी आराधनासे सभी लोक अपने-आप ही सुलभ हो जाते हैं। ऐसा सोचकर मैंने उन सनातन श्रीहरिकी आराधना आरम्भ कर दी और प्रचुर दक्षिणा देकर अनेक यज्ञोंका अनुष्ठान करता हुआ सौ वर्षोंतक मैं उनकी आराधनामें संलग्न रहा। नृपनन्दन! एक समयकी बात है—देवाधिदेव यज्ञमूर्ति भगवान् जनार्दनकी इस प्रकार उपासना करते हुए बहुत दिन बीत चुके थे, तब मैंने एक यज्ञमें सभी देवताओंकी आराधना की और इन्द्रसहित सभी देवता एक साथ ही उस यज्ञमें पधारे तथा उन्होंने अपना-अपना स्थान ग्रहण कर लिया। भगवान् शंकर भी पधारे और अपने निश्चित स्थानपर विराजमान हो गये। सम्पूर्ण देवता, ऋषि तथा नागगण भी आ गये। उन्हें आते देखकर सूर्यके समान तेजस्वी विमानपर चढ़कर भगवान् सनत्कुमार भी वहाँ पधारे और सिर झुकाकर भगवान् रुद्रको प्रणाम किया। राजेन्द्र! उस समय समस्त देवता, ऋषि, नारद, सनत्कुमार एवं भगवान् रुद्र जब अपने-अपने स्थानपर स्थित होकर बैठ गये, तब उनकी ओर दृष्टि डालकर मैंने यह बात पूछी—'आप सभी महानुभावोंमें कौन श्रेष्ठ हैं तथा किनकी (अग्र)पूजा होनी चाहिये?' मेरे यह पूछनेपर देव-समुदायके सामने ही भगवान् रुद्र मुझसे कहने लगे।

भगवान् रुद्र बोले—समस्त देवताओ, परम पवित्र देवर्षियो, प्रसिद्ध ब्रह्मर्षियो तथा महान् मेधावी अगस्त्यजी! आप सभी लोग मेरी बात सुन लें—'जिनकी यज्ञोंद्वारा पूजा होती है, देवतासहित सम्पूर्ण संसार जिनसे उत्पन्न हुआ है तथा जिनमें लीन भी हो जाता है, वे भगवान् जनार्दन ही सर्वश्रेष्ठ हैं और सभी यज्ञोंद्वारा वे ही आराधित होते हैं। उन परम प्रभुमें सभी ऐश्वर्य विद्यमान हैं। उन्होंने ही अपने तीन प्रकारके रूप

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth

धारण कर लिये हैं। जब उनमें सर्वाधिक रजोगुण तथा स्वल्प सत्त्वगुण एवं तमोगुणका समावेश हुआ, तब वे ब्रह्मा नामसे प्रसिद्ध हुए। भगवान् नारायणने अपने नाभिकमलसे इन ब्रह्माकी सृष्टि की है। मुझे भी बनानेवाले वे परम प्रभु नारायण ही हैं। अतः भगवान् श्रीहरि ही सर्व-प्रधान हैं।

जिनमें सत्त्वगुण और रजोगुणका आधिक्य हुआ और जिन्हें कमलका आसन मिल गया, वे ब्रह्मा कहलाये। जो ब्रह्मा एवं चतुर्मुख कहलाते हैं, वे भी भगवान् नारायण ही हैं। जो स्वल्प सत्त्व एवं रजोगुण और किंचित् अधिक तमोगुणसे युक्त हैं, वह मैं रुद्र हूँ—इसमें कोई संदेहकी बात नहीं है। सत्त्व, रज और तम—ये तीन प्रकारके गुण कहे जाते हैं। सत्त्वगुणके प्रभावसे प्राणीको मुक्ति सुलभ हो जाती है; क्योंकि सत्त्वगुण भगवान् नारायणका स्वरूप है। जब रज और सत्त्वका सम्मिश्रण होता है और रजोगुणकी कुछ अधिकता होती है, तब सृष्टिका कार्य आरम्भ होता है। यह ब्रह्माजीका स्वाभाविक गुण है। यह बात सम्पूर्ण शास्त्रोंमें पढ़ी जाती है। जिसका वेदोंमें उल्लेख नहीं है, वह रौद्रकर्म मनुष्योंके लिये कदापि हितकर नहीं है। उससे लोक तथा परलोकमें भी मनुष्योंकी दुर्गति ही होती है।

सत्त्वका पालन करनेसे प्राणी जन्म-मरणके बन्धनसे मुक्त हो जाता है। कारण, सत्त्व भगवान् नारायणका स्वरूप है। वे ही प्रभु यज्ञका स्वरूप धारण कर लेते हैं। सत्ययुगमें भगवान् नारायण शुद्ध (ध्यानादिद्वारा) सूक्ष्मरूपसे सुपूजित होते हैं। त्रेतायुगमें वे यज्ञरूपसे तथा द्वापरयुगमें 'पञ्चरात्र' विधिसे की गयी पूजा स्वीकार करते हैं और कलियुगमें तमोगुणी मानव मेरे बनाये हुए अनेक रूपवाले मार्गोंसे मनमें ईर्ष्यासहित उन परमात्मा श्रीहरिकी उपासना करते हैं।

मुनिवर! उन भगवान् नारायणसे बढ़कर अन्य कोई देवता इस समय न है, न अन्य किसी कालमें होगा। जो विष्णु हैं, वही स्वयं ब्रह्मा हैं और जो ब्रह्मा हैं, वही मैं महेश्वर हूँ। तीनों वेदों, यज्ञों और पण्डितसमाजमें यही बात निर्णीत है। द्विजवर! हम तीनोंमें जो भेदकी कल्पना करता है, वह पापी एवं दुरात्मा है; उसकी दुर्गति होती है। अगस्त्य! इस विषयमें एक प्राचीन वृत्तान्त कहता हूँ, तुम उसे सुनो। कल्पके आरम्भमें लोग भगवान् श्रीहरिकी भक्तिसे विमुख रहे। फिर उन सबका भूलोकमें वास हुआ। वहाँ उन्होंने भगवान् विष्णुकी आराधना की। फलस्वरूप उन्हें भुवर्लोकका वास सुलभ हो गया। फिर उस लोकमें रहकर वे भगवान् केशवकी उपासनामें तत्पर हो गये। इससे उन्हें स्वर्गमें स्थान मिल गया। यों क्रमशः संसारसे मुक्त होकर वे परमधाममें पहुँच गये।

द्विजवर! इस प्रकार जब सभी विरक्त एवं मुक्त होने लगे तो देवताओंने भगवान्का ध्यान किया। सर्वव्यापी होनेके कारण वे प्रभु वहाँ तुरंत ही प्रकट हो गये और बोले—'देवताओ! आप सभी श्रेष्ठ योगी हैं। कहें, मेरे योग्य आपलोगोंका कौन-सा कार्य सामने आ गया?' तब उन देवताओंने परम प्रभु देवेश्वर श्रीहरिको प्रणाम किया और कहा—'भगवन्! आप हमलोगोंके आराध्यदेव हैं। इस समय सभी मानव मुक्ति-पदपर आरूढ़ हो गये हैं। अतः अब सृष्टिका क्रम सुचारुरूपसे कैसे चलेगा? नरकोंमें किसका वास हो?'

देवताओंके ऐसा पूछनेपर भगवान्ने उनसे कहा—'देवताओ! सत्ययुग, त्रेता और द्वापर—इन तीन युगोंमें तो बहुत मनुष्य मुझे प्राप्त कर लेंगे। पर कलियुगमें विरले लोग ही मुझे प्राप्त कर सकेंगे; कारण, वेदोंको छोड़कर या वेदविरोधी

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

अन्य शास्त्रोंद्वारा मेरा ज्ञान सम्भव नहीं। मैं वेदोंसे विशेषकर—ब्राह्मणसमुदायद्वारा ही ज्ञेय हूँ। विप्र! मैं, ब्रह्मा और विष्णु—ये तीन प्रधान देवता ही तीनों युग हैं। हम तीनों ही सत्त्व आदि तीनों गुण, तीनों वेद, तीनों अग्नियाँ, तीनों लोक, तीनों सन्ध्याएँ, तीनों वर्ण और तीनों सवन (स्नान) हैं। इस प्रकार तीन प्रकारके बन्धनसे यह जगत् बँधा है। द्विजवर! जो मुझे दूसरा नारायण या दूसरा ब्रह्म जानता है और ब्रह्माको अपर रुद्र मानता है, उसकी समझ ठीक है, क्योंकि गुण एवं बलसे हम तीनों एक हैं। हममें भेद-बुद्धि ही मोह है।' [अध्याय ७०]

कलियुगका वर्णन

अगस्त्यजी कहते हैं—राजन्! भगवान् रुद्रके ऐसा कहनेपर मैं, सभी देवता लोग तथा ऋषिगण उन प्रभुके चरणोंपर गिर पड़े। राजन्! फिर इतनेमें ही देखता क्या हूँ कि उनके श्रीविग्रहमें मैं, भगवान् नारायण और कमलासन ब्रह्मा भी स्थित हैं। ये सभी (त्रसरेणुके) समान सूक्ष्मरूपसे रुद्रके शरीरमें विराजमान थे। उनके शरीरकी दीप्ति प्रज्वलित भास्करके समान थी। ऐसी स्थितिमें उन भगवान् रुद्रको देखकर यज्ञके सदस्य एवं ऋषिगण—सभी महान् आश्चर्यमें पड़ गये। सबके मुखसे जय-जयकारकी ध्वनि होने लगी। वे लोग ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा सामवेदका उच्चारण करने लगे। तब उन सभीने परस्पर कहा—'क्या ये रुद्र स्वयं परब्रह्म भगवान् नारायण हैं; क्योंकि एक ही मूर्तिमें ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्र—ये तीनों महापुरुष मूर्तिमान् बनकर दर्शन दे रहे हैं।'

भगवान् रुद्रने कहा—क्रान्तदर्शी ऋषियो! इस यज्ञमें तुम्हारे द्वारा मेरे उद्देश्यसे जिस हव्य पदार्थका हवन हुआ है, उस भागको हम तीनों व्यक्तियोंने ग्रहण किया है। मुनिवरो! हम तीनोंमें अनेक प्रकारके भाव नहीं हैं। समीचीन दृष्टिवाले हमें एक ही देखते हैं। विपरीत बुद्धिवाले अनेक समझते हैं।

राजन्! इस प्रकार रुद्रके कहनेपर वे सभी मुनि मोहशास्त्रकी व्यवस्था करनेवाले उन महाभाग (रुद्र)-से पूछनेके लिये उद्यत हो गये।

ऋषियोंने पूछा—भगवन्! प्राणियोंको मोहमें डालनेके लिये आपके द्वारा जो भिन्न-भिन्न मोहकारक शास्त्र रचे गये हैं—इनका प्रयोजन ही क्या है? आपने इन्हें बनाया ही क्यों?—यह हमें बतानेकी कृपा करें।

भगवान् रुद्र कहते हैं—ऋषियो! भारतवर्षमें 'दण्डकारण्य' नामका एक वन है। वहाँ गौतम नामक ब्राह्मण महान् कठिन तपस्या कर रहे थे। उनकी तपस्यासे प्रसन्न होकर ब्रह्माजी उनके पास पधारे और उनसे कहा—'तपोधन! वर माँगो।' जब संसारके सृजन करनेवाले ब्रह्माने ऐसा कहा, तब मुनिने प्रार्थना की—'भगवन्! मुझे धान्योंकी ऐसी पङ्क्ति चाहिये, जो सदा फूल एवं फलोंसे सम्पन्न हो।'

इस प्रकार मुनिवर गौतमके माँगनेपर पितामह ब्रह्माने उन्हें इच्छित वर दे दिया। वर पाकर महर्षिने शतशृङ्ग पर्वतपर एक श्रेष्ठ आश्रम बनाया। वहाँ उन्होंने महान् श्रम किया, खेती तैयार हो गयी। क्यारियाँ ऐसी बनी थीं कि प्रतिदिन प्रातःकाल नयी-नयी शालियाँ तैयार होतीं। ब्राह्मणवर्ग धान्य लाता। गौतमजी उसीसे मध्याह्नके समय भोजन सिद्ध कर लेते और उससे अतिथिसत्कार एवं ब्राह्मणोंको भोजन कराते थे। एक समयकी बात है—पूरे देशमें घोर अकाल पड़ गया।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

द्विजवर! बारह वर्षोंतक वर्षा नहीं हुई, जिसके स्मरणमात्रसे रोंगटे खड़े हो जाते हैं। ऐसी अनावृष्टि देखकर वनमें निवास करनेवाले सभी मुनि भूखसे पीड़ित हो गौतमजीके पास गये। उस समय अपने यहाँ आये हुए उन मुनियोंको देखकर ऋषिने सिर झुकाकर उन्हें प्रणाम किया और कहा—'महानुभावो! आपलोग सुप्रसिद्ध मुनियोंके पुत्र हैं। आप सभी मेरे स्थानपर पधारिये और आज्ञा दीजिये, मैं क्या सेवा करूँ।' इस प्रकार गौतमजीके कहनेपर उन मुनियोंने वहाँ अपना स्थान ग्रहण किया। जबतक वर्षा नहीं हुई, तबतक अनेक प्रकारका भोजन करते हुए ठहरे रहे। कुछ समयके बाद अनावृष्टि समाप्त हो गयी। इस प्रकार अवर्षण समाप्त हो जानेपर उन ब्राह्मणोंने तीर्थयात्राके निमित्त जानेका विचार किया। उनके समाजमें शाण्डिल्य नामके एक तपस्वी मुनि थे।

मारीचने पूछा —शाण्डिल्य! मैं तुमसे बहुत अच्छी बात कहता हूँ। देखो, गौतम मुनि तुम सभीके लिये पिताके स्थानपर हैं। उनसे आज्ञा लिये बिना तपस्या करनेके लिये हमलोगोंका तपोवनमें चलना उचित नहीं है।

मारीच मुनिके इस प्रकार कहनेपर वे सभी हँस पड़े। फिर वे कहने लगे, 'क्या गौतम मुनिका अन्न खाकर हमलोगोंने अपने शरीरको बेच दिया है।' ऐसी बात कहकर उन लोगोंने जानेके लिये फिर छल करनेकी बात सोच ली। उन लोगोंने मायाके द्वारा एक गाय तैयार की। उसको उन्होंने गौतमजीकी यज्ञशालामें छोड़ दिया और वह गाय वहाँ चरने लगी। उसपर गौतम मुनिकी दृष्टि पड़ी। उन्होंने हाथमें जल ले लिया और कहा—'आप भगवान् रुद्रको प्राणोंके समान प्यारी हैं।' गौतम मुनिके मुँहसे यह बात निकलते तथा पानीके बूँदके टपकते ही वह गाय पृथ्वीपर गिरी और मर गयी। उधर मुनिलोग जानेके लिये तैयार हो गये। यह देखकर बुद्धिमान् गौतमजीने नम्रतापूर्वक खड़े होकर उन मुनियोंसे कहा—'विप्रो! आप यथाशीघ्र जानेका ठीक-ठीक कारण बतानेकी कृपा करें। मैं तो विशेषरूपसे आपमें सदा श्रद्धा रखता हूँ। ऐसे मुझ विनीत व्यक्तिको छोड़कर जानेका क्या कारण है?'

ऋषियोंने कहा—'ब्रह्मन्! इस समय आपके शरीरमें यह गोहत्या निवास कर रही है। मुनिवर! जबतक यह रहेगी, तबतक हमलोग आपका अन्न नहीं खा सकते।' उनके ऐसा कहनेपर धर्मज्ञ गौतमजीने उन मुनियोंसे कहा—'तपोधनो! आपलोग मुझे गोवधका प्रायश्चित्त बतानेकी कृपा करें।'

ऋषिगण बोले—'ब्रह्मन्! यह गौ अभी मरी नहीं, बेहोश है। यदि इसपर गङ्गा-जल डाल दिया जाय तो अवश्य उठ जायगी। इसके लिये कर्तव्य है कि आप व्रत करें अथवा क्रोधका त्याग करें।' ऐसा कहकर वे ऋषिलोग वहाँसे चलने लगे। उनके ऐसा कहनेसे बुद्धिमान् गौतमजी आराधना करनेके विचारसे महान् पर्वत हिमालयपर चले गये। उन महान् तपस्वीने तुरंत ही तप आरम्भ कर दिया और सौ वर्षोंतक वे मेरी आराधना करते रहे। तब प्रसन्न होकर मैंने गौतमसे कहा—'सुव्रत! वर माँगो।' अतः उन्होंने मुझसे कहा—'आपकी जटामें तपस्विनी गङ्गा निवास करती हैं। उन्हें देनेकी कृपा कीजिये। इन पुण्यमयी नदीका नाम गोदावरी है। मेरे साथ चलनेकी ये कृपा करें।'

(अब मुनिवर अगस्त्यजी राजा भद्राश्वसे कहते हैं—राजन्!) इस प्रकार गौतम मुनिके प्रार्थना करनेपर भगवान् शंकरने अपनी जटाका

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

एक भाग उन्हें दे दिया। उसे लेकर मुनि भी उस स्थानके लिये प्रस्थित हो गये, जहाँ वह मृत गाय पड़ी थी। (उसके ऊपर गौतम मुनिने शंकरके दिये हुए जटा-जाह्नवीके जलके छींटे दिये। फिर क्या था—) उस जलसे भींग जानेपर वह सुन्दरी गौ उठकर चली गयी। साथ ही वहाँ उस गङ्गाजलके प्रभावसे पवित्र जलवाली एक विशाल नदीका प्रादुर्भाव हो गया। कुछ लोग उसे पुनीत तालाब कहने लगे। इस महान् आश्चर्यको देखकर परम पवित्र सप्तर्षि वहाँ आ गये। वे सभी विमानपर बैठे थे और उनके मुखसे 'साधु-साधु'की ध्वनि निकल रही थी। साथ ही वे कहने लगे—'गौतम! तुम धन्य हो। अथवा धन्यवादके पात्रोंमें भी तुम्हारे समान अन्य कौन है, जिसके प्रयाससे भगवती गङ्गा इस दण्डकारण्यमें आ सकी हैं।'

(भगवान् रुद्र ऋषियोंसे कहते हैं—) इस प्रकार जब सप्तर्षियोंने कहा, तब गौतमजी बोल पड़े—'अरे, यह क्या? अकारण मुझपर गोवधका कलङ्क कहाँसे आ गया था?' फिर ध्यानपूर्वक देखनेसे उन्हें ज्ञात हो गया कि मेरे यहाँ ठहरे हुए उन ऋषियोंकी मायाका ही यह प्रभाव था, जिससे ऐसा दृश्य उपस्थित हो गया था। अब वे भलीभाँति विचार करके उन्हें शाप देनेको उद्यत हो गये। मिथ्या व्रतका स्वाँग बनाये हुए वे ऋषिलोग ऐसे थे कि सिरपर जटा थी और ललाटपर भस्म! मुनिने उन्हें यों शाप दिया—'तुम लोग तीनों वेदोंसे बहिष्कृत हो जाओगे। तुम्हें वेद-विहित कर्म करनेका अधिकार न होगा।' मुनिवर गौतमजीके कठोर शापको सुनकर सप्तर्षियोंने कहा—'द्विजवर! ऐसा शाप उचित नहीं। वैसे तो आपकी बात व्यर्थ नहीं हो सकती, यह बिलकुल निश्चय है। किंतु इसमें थोड़ा सुधार कर दीजिये। उपकारके बदले अपकार करनेके दोषसे दूषित होनेपर भी आपकी ऐसी कृपा हो कि ये श्रद्धाके पात्र बन सकें। आपके मुँहकी वाणीरूपी अग्निसे दग्ध हुए ये ब्राह्मण कलियुगमें प्रायः क्रिया-हीन एवं वैदिक कर्मसे बहिष्कृत होंगे। यह जो गङ्गा यहाँ आयी हैं, इनका गौण नाम गोदावरी नदी होगा। ब्रह्मन्! जो मनुष्य कलियुगमें इस गोदावरीपर आकर गोदान करेंगे तथा अपनी शक्तिके अनुसार दान देंगे, उन्हें देवताओंके साथ स्वर्गमें आनन्द मिलेगा। जिस समय सिंहराशिपर बृहस्पति जायँगे, उस अवसरपर जो समाहितचित्त होकर गोदावरीमें पहुँचेगा और वहाँ स्नान करके विधिपूर्वक पितरोंका तर्पण करेगा, उसके पितर यदि नरक भोगते होंगे, तब भी स्वर्ग सिधार जायँगे। यदि पहलेसे ही वे पितर स्वर्गमें पहुँचे होंगे तो उनकी मुक्ति हो जायगी, यह बिलकुल निश्चित है। साथ ही गौतमजी! संसारमें आपकी बड़ी ख्याति होगी और अन्तमें आपको सनातन मुक्ति सुलभ हो जायगी।'

इस प्रकार गौतमजीसे कहकर सप्तर्षिगण उस कैलासपर्वतपर चले गये, जहाँ उमाके साथ सदा मैं रहता हूँ। उसी समय उन श्रेष्ठ मुनियोंने कलियुगमें होनेवाले ब्राह्मणोंका वृत्तान्त मुझे बताया। उन्होंने मुझसे यह भी कहा कि 'प्रभो! वे सभी ब्राह्मण कलियुगमें आपके रूपका अनुकरण करेंगे। उनका सिर जटामय मुकुटसे सम्पन्न होगा। वे अपनी इच्छासे प्रेतका वेष बना लेंगे। मिथ्या चिह्न धारण कर लेना उनका स्वभाव होगा। आपसे मेरी प्रार्थना है, उनपर अनुग्रहकर उन्हें कोई शास्त्र देनेकी कृपा करें। कलिके व्यवहारसे इन्हें पीड़ा होगी, उस समय भी इनका निर्वाह करना आवश्यक है।'

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth

द्विजवर अगस्त्यजी! यह बहुत पहलेकी बात है—सप्तर्षियोंके इस प्रकार प्रार्थना करनेपर वैदिक क्रियासे मिलती-जुलती संहिता मैंने बना दी। मेरे श्वाससे निकलनेके कारण वह शिवसंहिताके नामसे विख्यात होगी। मेरे और शाण्डिल्यशास्त्रके अनुयायी उसमें अवगाहन करेंगे। बहुत थोड़े अपराधसे ही वे दाम्भिक स्थितिमें पहुँच गये हैं, मैं भविष्यकी बात जानता हूँ। अतएव मेरे ही प्रयाससे मोहित होकर वे ब्राह्मण महान् लालची हो जायँगे। कलिमें उन मनुष्योंके द्वारा अनेक नये शास्त्रोंकी रचना होगी। प्रमाणसे तो वे हमारी संहिताकी अपेक्षा भी अधिक बढ़ जायँगे। वह 'पाशुपत' दीक्षा कई प्रकारकी होगी। क्योंकि मैं पशुपति कहलाता हूँ और मुझसे उसका सम्बन्ध है। इस समय प्रचलित जो वेदका मार्ग है, इससे उसका सिद्धान्त अलग है। पवित्रतासे रहित उस रौद्र कर्मको क्षुद्र कर्म जानना चाहिये। जो मनुष्य रुद्रका आश्रय लेकर कलिमें अपनी जीविका चलायेंगे और वेदान्तके सिद्धान्तका मिथ्या प्रचार करेंगे, उनके रग-रगमें स्वार्थ भरा रहेगा। वे मनःकल्पित शास्त्रोंके सम्पादक होंगे। उनके उपास्य रुद्र बड़े ही उग्ररूपधारी हैं—ऐसा जानना चाहिये। मैं उन रुद्रोंमें नहीं हूँ। प्राचीन समयमें जब देवताओंके लिये कार्य उपस्थित हुआ था, तो भैरवका रूप धारण करके ऐसा नाच करनेमें मेरी तत्परता हुई थी। उन क्रूर कर्म करनेवाले रुद्रोंसे मेरा यही सम्बन्ध है। दैत्योंका विनाश करनेकी इच्छासे मेरे द्वारा यह हँसने योग्य घटना घट गयी। उस समय आँखोंसे जो बिन्दुएँ पृथ्वीपर पड़ीं, वे भविष्यकालके लिये असंख्य रुद्रके चिह्न (लिङ्ग) बन गयीं। उग्ररूपी रुद्रके उपासकोंमें रुद्रका स्वाभाविक गुण आ जानेसे मांस और मदिरापर उनकी सदा रुचि होगी। वे स्त्रियोंमें आसक्त होंगे, सदा पापकर्मोंमें उनकी प्रवृत्ति होगी। भूतलपर ऐसे ब्राह्मणोंके होनेका कारण एकमात्र उनपर गौतममुनिका शाप ही है। उनमें भी जो मेरी आज्ञाका अनुसरण तथा सदाचारका पालन करेंगे, वे स्वर्गके अधिकारी होंगे। साथ ही यह भी कहा गया है कि जो संशयवश मुझसे विमुख हो वेदान्तका समर्थक बनेंगे, वे मेरे वंशज दोषके भागी होंगे। उन्हें नीचेके लोक अथवा नरकमें जाना होगा। पहले गौतमजीके वचनरूपी आगसे वे दग्ध तो हुए ही हैं, फिर मेरी आज्ञाका भी उन्होंने अनादर किया है, अतः उन ब्राह्मणोंको नरकमें जाना होगा, इसमें कुछ संदेह नहीं है।

भगवान् रुद्र कहते हैं—इस प्रकार मेरे कहनेपर वे ब्राह्मणकुमार जैसे आये थे, वैसे ही चले गये। परम तपस्वी गौतमने भी अपने आश्रमका मार्ग पकड़ा। विप्रो! मैंने यह कलि-धर्मका लक्षण तुम्हें बता दिया। जो इससे विपरीत मार्गका अनुसरण करता है, उसे पाखण्डी समझना चाहिये। [अध्याय ७१]

प्रकृति और पुरुषका निर्णय

भगवान् वराह कहते हैं—वसुंधरे! महाभाग रुद्र सर्वज्ञानी, सबकी सृष्टिके प्रवर्तक, परम प्रभु एवं सनातन पुरुष हैं। उन्हें प्रणाम करके प्रयत्नशील हो अगस्त्यजीने उनसे यह प्रश्न किया।

अगस्त्यजीने पूछा—महाभाग रुद्र! ब्रह्मा, विष्णु और महेश—इन तीन देवताओंके समुदायको सम्पूर्ण शास्त्रोंमें त्रयी कहा गया है। आप सभी महानुभाव सर्वव्यापी हैं। आपका तो ऐसा सम्बन्ध है, जैसे दीपक, अग्नि और दीपकको प्रज्वलित करनेवाला व्यक्ति। तीन नेत्रोंसे शोभा पानेवाले

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भगवन्! मेरी यह जिज्ञासा है कि किस समय आपकी प्रधानता रहती है? कब विष्णु प्रधान माने जाते हैं? अथवा किस समय ब्रह्माकी प्रधानता होती है? आप यह बात मुझे बतानेकी कृपा कीजिये।

भगवान् रुद्रने कहा—द्विजवर! वैदिक सिद्धान्तके अनुसार परब्रह्म परमात्मा विष्णु ही ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव—इन तीन भेदोंसे पठित एवं निर्दिष्ट हैं; पर माया-मोहित बुद्धिवाले इसे समझ नहीं पाते हैं। '**विश प्रवेशने**' यह धातु है। इसमें '**स्नु**' प्रत्यय लगा देनेसे 'विष्णु' शब्द निष्पन्न हो जाता है। इन विष्णुको ही सम्पूर्ण देवसमाजमें सनातन परमात्मा कहते हैं। महाभाग! जो ये विष्णु हैं, वे ही आदित्य हैं। सत्ययुगसे सम्बन्धित श्वेतद्वीपमें उन दोनों महानुभावोंकी मैं निरन्तर स्तुति करता हूँ। सृष्टिके समय मेरे द्वारा ब्रह्माजीका स्तवन होता है और मैं कालरूपसे सुशोभित होता हूँ। ब्रह्मासहित सभी देवता और दानव सदा सत्ययुगमें मेरे स्तवनके लिये प्रयत्न-शील रहते हैं। भोगकी इच्छा करनेवाला देवसमुदाय मेरी लिङ्ग-मूर्तिका यजन करता है। मुक्तिकी इच्छा रखनेवाले मानव सहस्र मस्तकवाले जिन प्रभुका मनसे यजन करते हैं, वे ही विश्वके आत्मा स्वयं भगवान् नारायण हैं। द्विजवर! जो पुरुष ब्रह्मयज्ञके द्वारा निरन्तर यजन करते हैं, उनका प्रयास ब्रह्मको प्रसन्न करनेके लिये होता है। वेदको भी 'ब्रह्म' कहा जाता है। नारायण, शिव, विष्णु, शंकर और पुरुषोत्तम—इनमें केवल नामोंका ही भेद है। वस्तुतः इन सबको सनातन परब्रह्म परमात्मा कहते हैं। विप्र! वैदिक कर्मसे सम्बन्ध रखनेवाले पुरुषोंके द्वारा ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश्वर—इन नामोंका पृथक्-पृथक् उच्चारण होता है। हम तीनों मन्त्रके आदि देवता हैं, इसमें कुछ विचारनेकी आवश्यकता नहीं है। वैदिक कर्मके अवसरपर ही मेरा, विष्णुका तथा वेदोंका पार्थक्य है। वस्तुतः हम तीनों एक ही हैं। विद्वान् पुरुषको चाहिये कि इसमें भेद-भावकी कल्पना न करे। उत्तम व्रतका आचरण करनेवाले द्विजवर! जो पक्षपातके कारण इसके विपरीत कल्पना करता है, वह पापी नरकमें जाता है। उसकी समझमें मैं रुद्र, ब्रह्मा और विष्णु तथा ऋग्, यजुः और साम—इनमें ऐसी भेद-भावना होती है। [अध्याय ७२]

वैराज-वृत्तान्त

भगवान् रुद्र कहते हैं—द्विजवर! अब एक दूसरा प्रसङ्ग कहता हूँ, सुनो। मुनिश्रेष्ठ! इसमें बड़े कौतूहलकी बात है। जिस समय मैं जलमें था, तब यह घटना घटी थी। विप्रवर! सर्वप्रथम ब्रह्माजीने मेरी सृष्टि करके कहा—'तुम प्रजाओंकी रचना करो', किंतु इस कार्यकी जानकारी मुझे प्राप्त न थी। अतः मैं जलमें (तपस्या करनेके लिये) चला गया। जलमें गये अभी एक क्षण ही हुआ था—ज्यों ही मैं पैठता हूँ, त्यों ही परम प्रभु परमात्माकी मुझे झाँकी मिली। उन पुरुषकी आकृति केवल अँगूठेके बराबर थी। मैं मनको सावधान करके उनका ध्यान करने लगा। इतनेमें ही जलसे ग्यारह पुरुष निकल आये। उनकी ऐसी प्रतिभा थी, मानो प्रलयकालकी अग्नि हो। वे अपनी किरणोंसे जलको संतप्त कर रहे थे। मैंने उनसे पूछा—'आपलोग कौन हैं, जो जलसे निकलकर अपने तेजसे इस पानीको अत्यन्त तप्त कर रहे हैं? साथ ही यह भी बतायें कि आप कहाँ जायँगे?'

इस प्रकार मेरे पूछनेपर उन आदरणीय

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

पुरुषोंने कुछ भी न कहा। वे सभी परम प्रशंसनीय ब्राह्मण थे। बिना कुछ कहे ही वे चल पड़े। तदनन्तर उनके जानेके कुछ ही क्षण बाद एक अत्यन्त महान् पुरुष आये, जिनकी आकृति बहुत सुन्दर थी। उनके शरीरका वर्ण मेघके समान श्यामल था और आँखें कमलके तुल्य थीं। मैंने उनसे पूछा—'पुरुषप्रवर! आप कौन हैं तथा जो अभी गये हैं, वे पुरुष कौन हैं? आपके यहाँ आनेका क्या प्रयोजन है? बतानेकी कृपा करें।'

पुरुषने कहा—ये पुरुष, जो पहले आकर चले गये हैं, इनका नाम आदित्य है। ये बड़े तेजस्वी हैं। ब्रह्माजीने इनका ध्यान किया है, अतः ये यहाँसे चले गये। कारण, इस समय ब्रह्माजी संसारकी रचना कर रहे हैं। इस अवसरपर उन्हें इनकी आवश्यकता है। देव! ब्रह्माके सृजन किये हुए जगत्की रक्षाका भार इनपर अवलम्बित होगा—इसमें कोई संशय नहीं है।

श्रीरुद्र बोले—भगवन्! आप महान् पुरुषोंके भी सिरमौर हैं। मैं आपको कैसे जानूँ! आप अपने नाम तथा स्वरूपका परिचय बताते हुए सभी प्रसङ्ग बतानेकी कृपा कीजिये; क्योंकि मुझे आपके सम्बन्धमें अभी कोई ज्ञान नहीं है।

इस प्रकार भगवान् रुद्रके पूछनेपर उस पुरुषने उत्तर दिया—'मैं भगवान् नारायण हूँ। मेरी सत्ता सदा सर्वत्र रहती है। मैं जलमें शयन करता हूँ। मैं आपको दिव्य आँखें दे रहा हूँ, आप मुझे अब देख सकते हैं। जब उन्होंने मुझसे ऐसी बात कही तब मैंने उनपर पुनः दृष्टि डाली। इतनेमें जिनकी आकृति केवल अँगूठेके बराबर थी, वे अब विराट्रूपमें दीखने लगे। उनका वह तेजस्वी विग्रह प्रदीप्त था। उनकी नाभिमें मैंने कमलका दर्शन किया। सूर्यके समान वहीं ब्रह्माजी भी दिखायी पड़े तथा उनके समीप ही मैंने स्वयं अपनेको भी देखा। उन परमात्माको देखकर मेरा मन आनन्दसे भर गया। विप्रवर! तब मेरे मनमें ऐसी बुद्धि उत्पन्न हुई कि इनकी स्तुति करूँ। सुव्रत! फिर तो निश्चित विचार हो जानेपर मैं इस स्तोत्रसे उन विश्वात्मा परम प्रभुकी आराधना करने लगा—मुझमें तपस्याका बल था, इसीसे इस शुभ कर्मकी ओर मेरी बुद्धि प्रवृत्त हुई।'

मैं (रुद्र)-ने कहा—जिनका अन्त नहीं है, जो विशुद्ध चित्तवाले, सुन्दर रूपधारी, सहस्र भुजाओंसे सुशोभित एवं अनन्त किरणोंके आकर हैं तथा जिनका कर्म महान् शुद्ध और देह परम विशाल है, उन परब्रह्म परमात्माके लिये मेरा नमस्कार है। अखिल विश्वका दुःख दूर करना जिनका सहजस्वभाव है, जो सहस्र सूर्य एवं अग्निके समान तेजस्वी हैं, सम्पूर्ण विद्याएँ जिनमें आश्रय पाती हैं तथा समस्त देवता जिन्हें निरन्तर नमस्कार करते हैं, उन चक्र धारण करनेवाले कल्याणके स्रोत प्रभुके लिये मेरा नमस्कार है। प्रभो! अनादिदेव, अच्युत, शेषशायी, विभु, भूतपति, महेश्वर, मरुत्पति, सर्वपति, जगत्पति, भुवःपति और भुवनपति आदि नामोंसे भक्तजन आपको सम्बोधित करते हैं। ऐसे आप भगवान्के लिये मेरा नमस्कार है। नारायण! आप जलके स्वामी, विश्वके लिये कल्याणदाता, पृथ्वीके स्वामी, संसारके संचालक, जगत्के लोचनस्वरूप, चन्द्रमा एवं सूर्यका रूप धारण करनेवाले, विश्वमें व्याप्त, अच्युत एवं परम पराक्रमी पुरुष हैं। आपकी मूर्ति तर्कका विषय नहीं है और आप अमृत-स्वरूप तथा अविनाशी हैं। नारायण! प्रचण्ड अग्निकी लपटें आपके श्रीविग्रहकी समता करनेमें असफल हैं। आपके मुख चारों ओर हैं। आपकी कृपासे देवताओंका महान् दुःख दूर हुआ है। सनातन प्रभो! आपके लिये नमस्कार है, मैं आपकी शरण

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

हूँ, आप मेरी रक्षा कीजिये। विभो! आपके अनेक स्वरूपोंका मुझे दर्शन हो रहा है। आपके भीतर जगत्का निर्माण करनेवाले सनातन ब्रह्मा तथा ईश दिखायी पड़ रहे हैं, उन आप परम पितामहके लिये मेरा नमस्कार है। संसाररूपी चक्रमें भटकनेवाले परम पवित्र अनेक साधक उत्तम मार्गपर चलते हुए भी आपकी आराधनामें जब कथंचित् (किसी प्रकार) सफल होते हैं; तब आदिदेव! ऐसे आप प्रभुकी आराधना करनेकी मुझमें शक्ति ही कहाँ है, अतः देवेश्वर! मैं आपको केवल प्रणाम करता हूँ। आदिदेव! आप प्रकृतिसे परे एकमात्र पुरुष हैं। जो सौभाग्यशाली पुरुष आपके इस स्वरूपको जानता है, उसे सब कुछ जाननेकी क्षमता प्राप्त हो जाती है। आपकी मूर्ति बड़ी-से-बड़ी और छोटी-से-छोटी है। आपके स्वरूपोंमें जो गुण हैं, वे हठपूर्वक विभाजित नहीं किये जा सकते। भगवन्! आप वागिन्द्रियके मूलकारण, अखिल कर्मसे परे और विश्वात्मा हैं। आपका यह श्रेष्ठ शरीर विशुद्ध भावोंसे ओत-प्रोत है। आपकी उपासनामें संसारके बन्धन काटनेकी शक्ति है। उसीके द्वारा आपका सम्यक् ज्ञान सम्भव है। साधारण पुरुषकी बात तो दूर देवता भी आपको जान नहीं पाते। फिर भी तपस्याद्वारा अन्तःकरण शुद्ध हो जानेसे मैं आपको कवि, पुराण एवं आदिपुरुषके रूपमें जाननेमें सक्षम हुआ हूँ। मेरे पिता ब्रह्माजीने सृष्टिके अवसरपर बारंबार वेदोंकी सहायता ली है। अतएव उनका भी चित्त परम शुद्ध हो गया है। प्रभो! मुझ-जैसा व्यक्ति तो आपको पुकारनेमें भी असमर्थ है; क्योंकि आप ब्रह्मप्रभृति प्रधान देवताओंसे भी अगम्य कहे जाते हैं। अतएव वे देवताका रूप धारण करके आपको अनेकों बार प्रणाम करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप तपोरहित होनेपर भी उन्हें आपकी जानकारी प्राप्त हो जाती है। देवताओंमें भी बहुत-से उदार कीर्तिवाले हैं। किंतु भक्तिका अभाव होनेसे आपको जाननेकी उनके मनमें इच्छा ही नहीं होती है। प्रभो! अभक्त वेदवादियोंको भी कई जन्मतक विवेक नहीं होता। आपकी कृपासे उन्हें ऐसी बुद्धि उत्पन्न हो जाय—इसके लिये मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ। जिसे आप प्राप्त हो जाते हैं, उसे किसी वस्तुकी अपेक्षा क्या है। यही नहीं, उसे देवता और गन्धर्वकी भी शरण नहीं लेनी पड़ती, वह स्वयं कल्याणस्वरूप हो जाता है। यह सारा संसार आपका ही रूप है। आप महान्, सूक्ष्म तथा स्थूलस्वरूप हैं। आदिप्रभो! यह जगत् आपका ही बनाया हुआ है।

भगवन्! आप कभी महान् रूप तथा कभी स्थूलरूप धारण कर लेते हैं और कभी आपका रूप अत्यन्त सूक्ष्म हो जाता है। आपके विषयमें भिन्न विचार होनेसे मानव मोह-क्लेशमें पड़ता है। अब जब आप स्वयं प्रत्यक्ष पधारे हैं तब अधिक कहना ही क्या है? वसु, सूर्य, पवन एवं पृथ्वी सब आपमें ही स्थित हैं। आपका सदा समान रूप रहता है, आत्मारूपसे आप सर्वत्र विराजते हैं, व्यापकता आपका स्वभाव है। सत्त्वगुण आपकी शोभा बढ़ाते हैं, आप अनन्त एवं सम्पूर्ण ऐश्वर्योंसे सम्पन्न हैं। आप मुझपर प्रसन्न होनेकी कृपा कीजिये।

भगवान् वराह कहते हैं—वसुंधरे! अमित तेजस्वी महाभाग रुद्रने जब भगवान् श्रीहरिकी इस प्रकार स्तुति की तब वे संतुष्ट हो गये। फिर तो मेघके समान गम्भीर वाणीमें उन्होंने ये वचन कहे।

भगवान् विष्णु बोले—देवेश्वर! तुम्हारा कल्याण हो, उमापते! तुम वर माँगो। भगवन्! हममें भेद तो औपचारिकमात्र है। तत्त्वतः हम दोनों एक हैं।

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

रुद्रने कहा—प्रभो! पितामह ब्रह्माने सृष्टि करनेके लिये मेरी नियुक्ति की थी। मुझसे कहा था—'तुम प्रजाओंकी रचना करो।' प्राणियोंकी उत्पत्ति करनेवाले प्रभो! इस विषयमें आपसे तीन प्रकारका ज्ञान प्राप्त करना मेरे लिये परम आवश्यक है।

भगवान् विष्णुने कहा—रुद्र! तुम सनातन एवं सर्वज्ञ हो—इसमें कोई संदेह नहीं। तुम्हारे भीतर ज्ञानकी प्रभूत राशि है। तुम देवताओंके लिये सम्यक् प्रकारसे परम पूज्य बनोगे।

इस प्रकार कहकर भगवान् श्रीहरिने स्वयं अपना रूप मेघका बना लिया। वे जलसे बाहर निकले और महाभाग रुद्रसे उन्होंने ये वचन कहे—'शम्भो! वे जो ग्यारह प्राकृत पुरुष थे, उनका नाम वैराज है। उन्हींको आदित्य कहते हैं। वे इस समय पृथ्वीपर गये हैं। उन्हें मेरा अंश जानना चाहिये। धरातलपर विष्णु-नामसे मैं ही बारह रूपोंमें अवतीर्ण होऊँगा। शंकरजी! इस प्रकार अवतार ग्रहणकर वे सभी आपकी आराधना करेंगे।' ऐसा कहकर वे भगवान् नारायण स्वयं अपने ही अंशसे एक दिव्य बादलकी रचनाकर आकाशसे अद्भुत शब्दकी तरह पता नहीं, कहाँ अन्तर्धान हो गये।

भगवान् रुद्र कहते हैं—ऐसी शक्तिसे सम्पन्न, सर्वत्र विचरनेवाले तथा सम्पूर्ण प्राणियोंकी सृष्टि करनेमें परम कुशल श्रीहरिने उस समय मुझे इस प्रकारका वर दिया था। अतएव मैं देवताओंसे श्रेष्ठ हुआ। वस्तुतः भगवान् नारायणसे श्रेष्ठ कोई देवता न हुआ है और न होगा। सज्जनश्रेष्ठ! पुराणों और वेदोंका यही रहस्य है। मैंने आपलोगोंके सामने यह सब प्रसङ्ग बता दिया, जिससे सुस्पष्ट हो जाता है कि इस जगत्में एकमात्र भगवान् श्रीहरिकी ही उपासना की जानी चाहिये। [अध्याय ७३]

भुवन-कोशका वर्णन

भगवान् वराह कहते हैं—वसुंधरे! भगवान् रुद्र पुराणपुरुष, शाश्वत देवता, यज्ञस्वरूप, अविनाशी, विश्वमय, अज, शम्भु, त्रिनेत्र एवं शूलपाणि हैं। उन सनातन प्रभुसे सम्पूर्ण ऋषियोंने पुनः प्रश्न किया।

ऋषिगण बोले—देवेश्वर! आप हम सम्पूर्ण देवताओंमें श्रेष्ठ हैं। अतः हम आपसे एक प्रश्न पूछ रहे हैं, इसे आप बतानेकी कृपा करें। उमापते! पृथ्वीका प्रमाण, पर्वतोंकी स्थिति और उनका विस्तार क्या है। देवेश्वर! कृपया इसका वर्णन करें।

भगवान् रुद्र कहते हैं—धर्मका पूर्ण ज्ञान रखनेवाले महाभाग ऋषियो! समस्त पुराणोंमें भूलोककी ही चर्चा की जाती है। यह लोक पृथ्वीतलपर है। मैं तुम्हारे सामने संक्षेपसे इसका वर्णन करता हूँ, इस प्रसङ्गको सुनो।

जिन परब्रह्म परमेश्वरका प्रसङ्ग चला है, उनका ज्ञान सम्पूर्ण विद्याओंकी जानकारीसे ही सम्भव है। उन्हींका नाम परमात्मा है। उनमें पापका लेशमात्र भी नहीं है। वे परमाणु-जैसा सूक्ष्म तथा अचिन्त्यरूप भी धारण कर लेते हैं। उन्हीं सम्पूर्ण लोकोंमें व्याप्त रहनेवाले पीताम्बरधारीका नाम नारायण है। पृथ्वी उन्हींके वक्षःस्थलपर टिकी है। वे दीर्घ, ह्रस्व, कृश, लोहित आदि गुणोंसे रहित तथा समस्त प्रपञ्चसे परे हैं। बहुत पहलेसे ही उनका यह रूप है। उनका स्वरूप केवल ज्ञानका विषय है। सृष्टिके आदिमें उन प्रभुमें सत्त्व, रज और तमके निर्माण करनेकी इच्छा हुई, अतः उन्होंने जलकी सृष्टि करके योगनिद्राकी सहायतासे उसमें शयन किया। फिर उनकी नाभिपर एक कमल उग आया। तब उस कमलपर जो सम्पूर्ण वेदों एवं ज्ञानके भंडार, अचिन्त्य स्वरूप, अत्यन्त शक्तिशाली तथा प्रजाओंके

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth 1361 S. Varah Puran_Section_6_2_Back

रक्षक कहे जाते हैं, वे ब्रह्मा प्रकट हुए। उन्होंने सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार-प्रभृति धर्मज्ञानी पुत्रोंको सर्वप्रथम उत्पन्न किया और फिर स्वायम्भुव मनु, मरीचि आदि मुनियों तथा दक्ष आदि प्रजापतियोंकी सृष्टि की। भगवन्! दक्षद्वारा सृष्ट स्वायम्भुव मनुसे इस भूमण्डलका विशेष विस्तार हुआ। उन महाभाग मनुमहाराजके भी दो पुत्र हुए, जिनके नाम क्रमशः प्रियव्रत और उत्तानपाद थे। प्रियव्रतसे दस पुत्रोंकी उत्पत्ति हुई। वे थे—आग्नीध्र, अग्निबाहु, मेध, मेधातिथि, ध्रुव, ज्योतिष्मान्, द्युतिमान्, हव्य, वपुष्मान् और सवन। उन प्रियव्रतने अपने सात पुत्रोंके लिये पृथ्वीके सात द्वीपोंके सात भाग बनाकर उनके रहनेकी व्यवस्था कर दी। उस समय महाभाग प्रियव्रतकी आज्ञासे आग्नीध्र जम्बूद्वीपके, मेधातिथि शाकद्वीपके, ज्योतिष्मान् क्रौञ्चद्वीपके, द्युतिमान् शाल्मलिद्वीपके, हव्य गोमेदद्वीपके, वपुष्मान् प्लक्षद्वीपके तथा सवन पुष्करद्वीपके शासक हुए। पुष्करद्वीपके शासक सवनसे दो पुत्रोंका जन्म हुआ। वे पुत्र महावीति (कुमुद) और धातक नामसे प्रसिद्ध रहे हैं। उनके लिये सवनने उन्हींके नामसे पुकारे जानेवाले दो देशोंका निर्माण किया। धातकका राज्यखण्ड 'धातकीखण्ड' के नामसे तथा कुमुदका राज्यखण्ड 'कौमुदखण्ड' के नामसे प्रसिद्ध हुआ। शाल्मलिद्वीपके स्वामी द्युतिमान्के तीन पुत्र हुए। उनके नाम कुश, वैद्युत और जीमूतवाहन थे। शाल्मलिद्वीपके देश भी उन्हींके नामोंसे विख्यात हुए। ज्योतिष्मान्के सात पुत्र हुए। उनके नाम कुशल, मनुगव्य, पीवर, अन्ध्र, अन्धकारक, मुनि और दुन्दुभि थे। उनके नामपर क्रौञ्चद्वीपमें सात महादेश हुए। कुशद्वीपके स्वामी कुश बड़े प्रतापी थे। उनके सात पुत्र हुए। वे उद्भिद्, वेणुमान्, रथपाल, मनु, धृति, प्रभाकर और कपिल नामसे प्रसिद्ध हुए। उस द्वीपमें उनके नामपर भी सात वर्ष (देश) हैं। शाकद्वीपके स्वामी मेधातिथिके सात पुत्र हुए। उनके नाम इस प्रकार हैं—नाभि, शान्तभय, शिशिर, मुखोदम, नन्दशिव, क्षेमक और ध्रुव।

इस द्वीपमें उन्हींके नामसे प्रसिद्ध उनके ये वर्ष भी हैं—हेमवान्, हेमकूट, किम्पुरुष, नैषध, हरिवर्ष, मेरुमध्य, इलावृत, नील, रम्यक्, श्वेत, हिरण्मय और शृङ्गवान्। पर्वतके उत्तरी भागमें उत्तरकुरु, माल्यवान् हैं। भद्राश्व और गन्धमादनपर महाराज नाभिका शासन आरम्भ हुआ। केतुमालवर्षपर भी उन्हींका शासन हुआ। इसी प्रकार स्वायम्भुव मन्वन्तरमें भूमण्डलकी व्यवस्था हुई है। प्रत्येक कल्पके आरम्भमें प्रधान मनुओंद्वारा भूमण्डलके विभाजन एवं पालनका ऐसा ही प्रबन्ध होता आया है। कल्पकी यह स्वाभाविक व्यवस्था है और भविष्यमें भी सदा ऐसा ही होगा।

अब महाभाग! मैं नाभिकी संतानका वर्णन करता हूँ—नाभिकी धर्मपत्नीका नाम मेरुदेवी था। उन्होंने ऋषभ नामक पुत्रको जन्म दिया। ऋषभसे भरत नामक पुत्रकी उत्पत्ति हुई। भरत सबसे बड़े पुत्र हुए। अतएव उनके पिता ऋषभने हिमाद्रि पर्वतके दक्षिण भागमें भारत नामके इस महान् वर्षका उन्हें शासक बना दिया। भरतसे सुमतिका जन्म हुआ। सुमतिको अपना राज्य देकर भरत जंगलमें चले गये। सुमतिके तेज, तेजके सत्सुत, सत्सुतके इन्द्रद्युम्न, इन्द्रद्युम्नके परमेष्ठी, परमेष्ठीके प्रतिहर्ता, प्रतिहर्ताके निखात, निखातके उन्नेता, उन्नेताके अभाव, अभावके उद्गाता, उद्गाताके प्रस्तोता, प्रस्तोताके विभु, विभुके पृथु, पृथुके अनन्त, अनन्तके गय, गयके नय, नयके विराट्, विराट्के महावीर्य और महावीर्यके सुधीमान् पुत्र हुए। सुधीमान्से सौ पुत्रोंकी उत्पत्ति हुई। इस

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

प्रकार इन प्रजाओंकी निरन्तर वृद्धि होती गयी। उनसे सात द्वीपोंवाली यह पृथ्वी तथा भारतवर्ष सर्वथा व्याप्त हो गया। उनके वंशमें उत्पन्न हुए राजाओंसे यह भूमण्डल पालित होता आया है। सत्ययुग, त्रेता आदि युगों एवं महायुगोंसे परिपूर्ण एकहत्तर चतुर्युगका एक मन्वन्तर कहा जाता है। भुवनके प्रसङ्गमें मैंने यह स्वायम्भुवमन्वन्तरकी बात कही। [अध्याय ७४]

जम्बूद्वीपसे सम्बन्धित सुमेरुपर्वतका वर्णन

भगवान् रुद्र कहते हैं— विप्रवर! अब मैं जम्बूद्वीपका यथार्थ वर्णन करूँगा। साथ ही समुद्रों और द्वीपोंकी संख्या एवं विस्तारका भी वर्णन करूँगा। उन सब द्वीपोंमें जितने वर्ष और नदियाँ हैं, उनका तथा पृथ्वी आदिके विस्तारका प्रमाण, सूर्य एवं चन्द्रमाकी पृथक् गतियाँ, सातों द्वीपोंके भीतर वर्तमान हजारों छोटे द्वीपोंके नाम-रूपका वर्णन, जिनसे यह जगत् व्याप्त है, उनकी पूरी संख्या बतानेके लिये तो कोई भी समर्थ नहीं है। फिर भी मैं सूर्य और चन्द्रमा आदि ग्रहोंके साथ उन सात द्वीपोंका वर्णन करूँगा, जिनके प्रमाणोंको मनुष्य तर्कद्वारा प्रतिपादन करते हैं। वस्तुतः जो भाव सर्वथा अचिन्त्य हैं, उनको तर्कसे सिद्ध करनेकी चेष्टा नहीं करनी चाहिये। जो वस्तु प्रकृतिसे परे है, वही अचिन्त्यका लक्षण है—उसे अचिन्त्य-स्वरूप समझना चाहिये। अब मैं जम्बू-द्वीपके नौ वर्षोंका तथा अनेक योजनोंमें फैले हुए उसके मण्डलोंका यथार्थ वर्णन करता हूँ, तुम उसे सुनो। चारों तरफ फैला हुआ यह जम्बूद्वीप लाख योजनोंका है। अनेक योजनवाले पवित्र बहुत-से जनपद इसकी शोभा बढ़ाते हैं। यह सिद्ध और चारणोंसे व्याप्त है तथा पर्वतोंसे इसकी शोभा अत्यन्त मनोहर जान पड़ती है। अनेक प्रकारकी सुन्दर धातुएँ इसका गौरव बढ़ा रही हैं। शिलाजीत आदिके उत्पन्न होनेसे इसकी महिमा चरम सीमापर पहुँच गयी है। पर्वतीय नदियोंसे चारों तरफ यह चमचमा रहा है। ऐसे विस्तृत एवं श्रीसम्पन्न भूमण्डलवाले जम्बूद्वीपमें नौ वर्ष चारों ओर व्याप्त हैं। यह ऐसा सुन्दर द्वीप है, जहाँ सम्पूर्ण प्राणियोंको प्रकट करनेवाले भगवान् श्रीनारायण विराजते हैं। इसके विस्तारके अनुसार चारों ओर समुद्र हैं तथा पूर्वमें उतने ही लम्बे-चौड़े ये छः वर्ष पर्वत हैं। इसके पूर्व और पश्चिम—दो तरफ लवणसमुद्र हैं। वहाँ बर्फसे व्याप्त हुआ हिमालय, सुवर्णसे भरा हेमकूट तथा अत्यन्त सुख देनेवाला महान् निषध नामक पर्वत है। चार वर्णवाले सुवर्णयुक्त सुमेरु-पर्वतका वर्णन तो मैं पहले ही कर चुका हूँ, जो कमलके समान वर्तुलाकार है। उसके चारों भाग बराबर हैं और वह बहुत ऊँचा है। उसके पार्श्व भागोंमें परमब्रह्म परमात्माकी नाभिसे प्रकट हुए तथा प्रजापति नामसे प्रसिद्ध एवं गुणवान् ब्रह्माजी विराजते हैं। इस जम्बूद्वीपके पूर्व भागमें श्वेतवर्ण-वाले प्राणी हैं, जो ब्राह्मण हैं। जो दक्षिणकी ओर पीतवर्ण हैं, उन्हें वैश्य माना जाता है। जो पश्चिमकी ओर भृङ्गराजके पत्रकी आभावाले हैं, उनको शूद्र कहा गया है। इस सुमेरुपर्वतके उत्तर भागमें संचय करनेके इच्छुक जो प्राणी हैं तथा जिनका वर्ण लाल है, उन्हें क्षत्रियकी संज्ञा प्राप्त हुई है। इस प्रकार वर्णोंकी बात कही जाती है। स्वभाव, वर्ण और परिमाणसे इसकी गोलाईका वर्णन हुआ है। इसका शिखर नीलम एवं वैदूर्य मणिके समान है। वह कहीं श्वेत, कहीं शुक्ल और कहीं पीले रंगका है। कहीं वह धतूरेके रंगके समान हरा है और कहीं मोरके पंखकी भाँति चितकबरा। इन

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

सभी पर्वतोंपर सिद्ध और चारणगण निवास करते हैं। इन पर्वतोंके बीचमें नौ हजार लम्बा-चौड़ा 'विष्कम्भ' नामका पर्वत कहा जाता है। इस महान् सुमेरुपर्वतके मध्य भागमें इलावृत वर्ष है। इसीसे उसका विस्तार चारों ओर फैला हुआ हजार योजन माना जाता है। उसके मध्यमें धूम्ररहित आगकी भाँति प्रकाशमान महामेरु है। सुमेरुकी वेदीके दक्षिणका आधा भाग और उत्तरका आधा भाग उसका (महामेरुका) स्थान माना जाता है। वहाँ जो ये छः वर्ष हैं, उनकी वर्ष-पर्वतकी संज्ञा है। इन सभी वर्षोंके आगे एक योजनका अवकाश है। वर्षोंकी लम्बाई-चौड़ाई—दो-दो हजार योजनकी है। उन्हींके परिमाणसे जम्बूद्वीपका विस्तार कहा जाता है। एक-एक लाख योजन विस्तारवाले नील और निषध नामके दो पर्वत हैं। उनके अतिरिक्त श्वेत, हेमकूट, हिमवान् और शृङ्गवान् नामक पर्वत हैं। जम्बूद्वीपके प्रमाणसे निषधपर्वतका वर्णन किया गया है। हेमकूट निषधसे हीन है, वह उसके बारहवें भागके ही तुल्य है। वह हिमवान् पर्वत पूर्वसे पश्चिमतक फैला हुआ है। द्वीपके मण्डलाकार होनेसे कहीं कम और कहीं अधिक हो जानेकी बात कही जाती है। वर्षों और पर्वतोंके प्रमाण जैसे दक्षिणके कहे जाते हैं, वैसे ही उत्तरमें भी हैं। उनके मध्यमें जो मनुष्योंकी बस्तियाँ हैं, उनके नाम अनुवर्ष हैं। वे वर्ष विषम स्थानवाले पर्वतोंसे घिरे हुए हैं। उन अगम्य वर्षोंको अनेक प्रकारकी नदियोंने घेर रखा है। उन वर्षोंमें विभिन्न जातिवाले प्राणी निवास करते हैं। ये हिमालय-सम्बन्धी वर्ष हैं, जहाँ भरतकी संतान सुशोभित होती है।

हेमकूटपर जो उत्तम वर्ष है, उसे किम्पुरुष कहते हैं। हेमकूटसे आगेके वर्षका नाम निषध और हरिवर्ष है। हरिवर्षसे आगे और हेमकूटके पासके भू-भागको इलावृतवर्ष कहा जाता है। इलावृतके आगेके वर्षोंका नाम नील और रम्यक सुना गया है। रम्यकसे आगे श्वेतवर्ष और हिरण्यमयवर्षोंकी प्रतिष्ठा है। हिरण्यमयवर्षसे आगे शृङ्गवन्त और कुरुवर्षोंका अवस्थान है। ये दोनों वर्ष धनुषाकार दक्षिण और उत्तरतक झुके हैं—ऐसा जानना चाहिये। इलावृतके चारों कोने बराबर हैं। यह प्रायः द्वीपके चतुर्थांश भागमें है। निषधकी वेदीके आधे भागको उत्तर कहा गया है। इनके दक्षिण और उत्तर दिशाओंमें तीन-तीन वर्ष हैं। उन दोनों भागोंके मध्यमें मेरुपर्वत है। उसीको इलावृतवर्ष जानना चाहिये। प्रमाणमें वह चौंतीस हजार योजन बताया गया है। उसके पश्चिम गन्धमादन नामका प्रसिद्ध पर्वत है। ऊँचाई और लम्बाई-चौड़ाईमें प्रायः माल्यवान् पर्वतसे उसकी तुलना होती है। उक्त निषध और गन्धमादन—इन दोनों पर्वतोंके मध्यभागमें सुवर्णमय मेरुपर्वत है। सुमेरुके चारों भागोंमें समुद्रकी खानें हैं। इसके चारों कोण समान स्थितिमें हैं। वहाँ सभी धातुओंकी मेद एवं हड्डियाँ उनके अवतार लेनेमें सहयोगी नहीं हैं। छः प्रकारके योगैश्वर्योंके कारण वे विभु कहलाते हैं। सनातन कमलकी उत्पत्तिका निमित्तकारण वे ही हैं। उस कमलपर स्थित चतुर्मुख ब्रह्मा भी उन परब्रह्म परमात्माके ही रूप हैं, कोई अन्य शक्ति नहीं। कमलकी आकृति धारण करनेवाली तथा वनों एवं ह्रदोंसे सम्पन्न पृथ्वी इन्हीं परब्रह्म परमात्मासे उत्पन्न हुई है।

जिसपर संसार स्थान पाता है, उस कमलके विस्तारका स्पष्ट रूपसे मैंने वर्णन किया। द्विजवरो! अब क्रमशः विभाग करके उनके विशेष गुणोंका वर्णन करता हूँ, सुनो। सुमेरुपर्वतके

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanda Peeth

पार्श्वभागोंमें पूर्वमें श्वेतपर्वत, दक्षिणमें पीत, पश्चिममें कृष्णवर्ण और उत्तरमें रक्तवर्णका पर्वत है। पर्वतोंका राजा मेरुपर्वत शुक्लवर्णवाला है, उसकी कान्ति प्रचण्ड सूर्यके समान है तथा वह धूमरहित अग्निकी भाँति प्रदीप्त होता रहता है एवं चौरासी हजार योजन ऊँचा है। वह सोलह हजार योजनतक नीचे गया है और सोलह हजार योजन ही उसका पृथ्वीपर विस्तार है। उसकी आकृति शराव (उभरे हुए ढकने)-की भाँति गोल है। इसके शिखरका ऊपरी भाग बत्तीस योजनके विस्तारमें है और छानबे योजनकी दूरीमें चारों तरफ यह फैला है। यह उसके मण्डलका प्रमाण है। वह पर्वत महान् दिव्य ओषधियोंसे सम्पन्न तथा प्रशस्त रूपवाले सम्पूर्ण शोभनीय भवनोंसे आवृत है। इसपर सम्पूर्ण देवता, गन्धर्वों, नागों, राक्षसों तथा अप्सराओंका समुदाय आनन्दका अनुभव करता है। प्राणियोंके सृजन करनेवाले ब्रह्माजीका भव्य भवन भी इसीपर शोभा पाता है। इसके पश्चिममें भद्राश्व, भारत और केतुमाल हैं। उत्तरमें पुण्यवान् कुरुओंसे सुशोभित कुरुवर्ष है। पद्मरूप उस मेरुपर्वतकी कर्णिकाएँ चारों ओर मण्डलाकार फैली हैं। योजनोंके प्रमाणसे मैं उसके दैर्घ्यका विस्तार बताता हूँ, उसके मण्डलकी लम्बाई-चौड़ाई हजारों योजनकी है। कमलकी आकृतिवाले उस मेरुपर्वतके केशर-जालोंकी संख्याएँ उनहत्तर कही गयी हैं। वह चौरासी हजार योजन ऊँचा है। वह लम्बाईमें एक लाख योजन और चौड़ाईमें अस्सी हजार योजन है। वहाँ चौदह योजनके विस्तारमें चार पर्वत हैं। कमल-पुष्पकी आकृतिवाले उस मेरुपर्वतके भी नीचे चार पंखुड़ियाँ हैं। उनका प्रमाण चौदह हजार योजन है। उस कमलकी सुप्रसिद्ध कर्णिकाओंका तुम्हारे सामने जो मैंने परिचय दिया है, अब संक्षेपसे मैं उसका वर्णन करता हूँ। तुम चित्तको एकाग्र करके सुनो।

द्विजवरो! कमलकी आकृतिवाले उस मेरु-पर्वतकी कर्णिकाएँ सैकड़ों मणिमय पत्रोंसे विचित्र रूपसे सुशोभित हो रही हैं। उनकी संख्या एक हजार है। मेरुगिरिमें एक हजार कन्दराएँ हैं। इस पर्वतराजमें वृत्ताकार एवं कमलकर्णिकाओंकी तरह विस्तृत एक लाख पत्ते हैं। उसपर मनोवती नामकी श्रीब्रह्माजीकी रमणीय सभा है और अनेक ब्रह्मर्षि उसके सदस्य हैं। महात्मा, ब्रह्मचारी, विनयी, सुन्दर व्रतोंके पालक, सदाचारी, अतिथिसेवी गृहस्थ, विरक्त और पुण्यवान् योगीपुरुष उस सभाके सभासद हैं। इसमें ही मेरा निवास है। इस सभा-मण्डलका परिमाण चौदह हजार योजन है। वह रत्न और धातुओंसे सम्पन्न होनेके कारण बड़ा सुन्दर और अद्भुत प्रतीत होता है। उसपर अनगिनत रत्न-मणिमय तोरणयुक्त मन्दिर हैं। ऐसे दिव्य मन्दिरोंसे वह पर्वत चारों तरफसे घिरा है। वहाँ तीस हजार योजन विस्तृत चक्रपाद नामसे विख्यात एक श्रेष्ठ पर्वत है। उस चक्रपाद नामक पर्वतसे दस योजन विस्तारवाली एक नदी, जिसे ऊर्ध्ववाहिनी कहते हैं, अमरावतीपुरीसे आकर उसकी उपत्यकाओंमें प्रवाहित होती है। विप्रवरो! उस नदीकी प्रतिमाके सामने सूर्य एवं चन्द्रमाके ज्योतिपुञ्ज भी फीके पड़ जाते हैं। सायं और प्रातःकालकी संध्याके समय जो उसका सेवन करते हैं, उन्हें ब्रह्माजीकी प्रसन्नता प्राप्त होती है।

[अध्याय ७५]

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

आठ दिक्पालोंकी पुरियोंका वर्णन

भगवान् रुद्र कहते हैं—द्विजवरो! उस मेरुपर्वतका पूर्वी देश परम प्रकाशमय है। उसमें चक्रपाद नामका एक पर्वत है, जिसकी अनेक धातुओंसे विद्योतित होनेसे अद्भुत शोभा होती है। इस परम रमणीय चक्रपाद पर्वतको सम्पूर्ण देवताओंकी पुरी कहते हैं। वहाँ किसीसे पराजित न होनेवाले बलाभिमानी देवताओं, दानवों और राक्षसोंका निवास है। उस पुरीमें सोनेकी बनी हुई चहारदीवारियाँ तथा मनोहर तोरण शोभा बढ़ाते रहते हैं। उस पुरीके ईशानकोणमें एक तेज:पूर्ण स्थानपर इन्द्रकी अमरावतीपुरी है। उस परम रमणीय पुरीमें सभी दिव्य पुरुष निवास करते हैं। सैकड़ों विमानोंकी वहाँ पङ्क्तियाँ लगी रहती हैं। बहुत-सी वापियाँ उसकी शोभा बढ़ाती हैं। वहाँ हर्षका कभी भी ह्रास नहीं होता। बहुत-से रंग-बिरंगे फूल उसकी मनोहरता बढ़ाते रहते हैं। पताकाएँ एवं ध्वजाएँ माला-सी बनकर उसे अत्यन्त मनोमोहक बनाती हैं। ऋद्धि-सिद्धियोंसे परिपूर्ण उस पुरीमें देवता, यक्षगण, अप्सराएँ और ऋषिसमुदाय निवास करते हैं। उस पुरीके मध्य-भागमें हीरे एवं वैदूर्यमणिकी वेदीसे मण्डित 'सुधर्मा' नामकी सभा है, जो अपने गुणोंके कारण तीनों लोकोंमें प्रसिद्ध है। वहाँ समस्त सुरगण एवं सिद्ध-समुदायोंसे घिरे शचीपति सहस्राक्ष इन्द्र विराजते हैं।

इस अमरावतीपुरीसे कुछ दूर दक्षिणमें महाभाग अग्निदेवकी पुरी है, जो 'तेजोवती' नामसे प्रसिद्ध है तथा जिसमें अग्निके समान गुण पाये जाते हैं। उसके दक्षिणमें यमराजकी 'संयमनीपुरी' है। अमरावतीके नैर्ऋत्य-कोणमें विरूपाक्षकी 'कृष्णवतीपुरी' है। उसके पीछे पश्चिम दिशामें जलके स्वामी महात्मा वरुणकी 'शुद्धवतीपुरी' है। इसी प्रकार उसके वायव्य कोणमें वायु देवताकी 'गन्धवतीपुरी' है। इस 'गन्धवती'के पीछे अर्थात् उत्तर दिशामें गुह्यकोंके स्वामी कुबेरकी मनोहर 'महोदयापुरी' है। इस पुरीमें वैदूर्यमणिसे बनी हुई वेदियाँ है। इसी प्रकार ब्रह्मलोककी आठवीं कर्णिका या अन्तर्पटपर ईशानकोणमें महान् पुरुष भगवान् रुद्रकी पुरी शोभा पाती है, जो 'मनोहरा' नामसे प्रसिद्ध है। इसमें अनेक प्रकारके भूतसमुदाय, विविध भाँतिके पुष्प, ऊँचे भवन, वन और आश्रम हैं, जिनसे उसकी अद्भुत शोभा होती है। भगवान् रुद्रका यह लोक सबके लिये प्रार्थनाकी विषय—अभिलषणीय वस्तु है। [अध्याय ७६]

मेरुपर्वतका वर्णन

भगवान् रुद्र कहते हैं—द्विजवरो! मेरुपर्वतके मध्यभागमें कर्णिकाका मूल है। उसका परिमाण एक सहस्र योजन है। अड़तालीस हजार योजनकी गोलाईसे शोभा पानेवाले पर्वतराज मेरुका यह मूल भाग है। उसकी मर्यादाके व्यवस्थापक आठों दिशाओंमें आठ सुन्दर पर्वत हैं। जठर और देवकूट नामसे प्रसिद्ध पूर्व दिशामें सीमा निश्चित करनेवाले भी दो पर्वत हैं। मेरुके अग्रभागमें मर्यादाकी रक्षा करनेवाले चार पर्वतोंके आगे चौदह दूसरे पर्वत हैं जो सात द्वीपवाली पृथ्वीको अचल रखनेमें सहायक हैं। अनुमानत: उन पर्वतोंकी तिरछी होती हुई ऊपरतककी चौड़ाई दस हजार योजन होगी। इसपर जगह-जगह हरिताल, मैनशिला आदि धातुएँ तथा सुवर्ण एवं मणिमण्डित गुफाएँ हैं; जो इसकी शोभा बढ़ाती हैं। सिद्धोंके अनेक भवन तथा क्रीडास्थानसे

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

सम्पन्न होनेके कारण इसकी प्रभा सदा दीप्त होती रहती है।

मेरुगिरिके पूर्वभागमें मन्दराचल, दक्षिणमें गन्धमादन, पश्चिममें विपुल और पार्श्वभागमें सुपार्श्वपर्वत हैं। उन पर्वतोंके शिखरोंपर चार महान् वृक्ष हैं। अत्यन्त समृद्धिशाली देवता, दैत्य और अप्सराएँ उनकी सुरक्षामें संनद्ध रहते हैं। मन्दर-गिरिके शिखरपर कदम्ब नामसे प्रसिद्ध एक वृक्ष है। उस कदम्बकी शाखाएँ शिखर-जैसी ऊँची हैं और उसके फूल घड़े-जैसे विशाल हैं, जिनकी गन्ध बड़ी ही हृदयहारी है। वह कदम्ब सभी कालमें विराजमान रहकर शोभा पाता है। यह वृक्ष अपनी गन्धसे दिशाओंको सदा सुगन्धित करता रहता है। इसका नाम 'भद्राश्व' है। वर्षोंकी गणनामें केतुमालवर्षमें इसका प्रादुर्भाव हुआ था। यह विशाल वृक्ष कीर्ति, रूप और शोभासे सम्पन्न है। यहाँ साक्षात् भगवान् नारायण भी सिद्धों एवं देवताओंसे सेवित होकर विराजते हैं। पहले भगवान् श्रीहरिने इस लोकके विषयमें पूछा था और देवताओंने उसके शिखरकी बार-बार प्रशंसा की। इससे सम्पूर्ण मनुष्योंके स्वामी भगवान्ने उस वर्षका अवलोकन किया।

इस मेरुपर्वतके दक्षिण ओर दो बड़े शिखर और हैं। वहाँ फलों, फूलों और महान् शाखाओंसे सुशोभित जम्बू-वृक्षोंका एक वन है। उस वृक्षसमूहसे पुराण-प्रसिद्ध, स्वादिष्ठ, गन्धयुक्त एवं अमृतकी तुलना करनेवाले बहुत-से फल उस पर्वतकी चोटीपर प्रायः गिरते रहते हैं। इन फलोंके रससे उत्पन्न उस महान् श्रेष्ठ पर्वतसे एक विस्तृत नदी बहती है, जिससे अग्निके समान चमकीला जाम्बूनद नामक सुवर्ण बन जाता है। वह अत्यन्त सुन्दर सुवर्ण देवताओंके अनुपम आभूषणोंका काम करता है। देवता, दानव, गन्धर्व, यक्ष-राक्षस और गुह्यकगण अमृतकी तुलना करनेवाले इन जम्बू-फलोंसे निकले हुए आसवको प्रसन्नतापूर्वक पीते हैं। इसीलिये दक्षिणके वर्षोंमें उस वर्षकी 'जम्बूलोक' संज्ञासे प्रसिद्धि है। मानव-समाज इसे ही जम्बूद्वीप भी कहता है।

इस मेरुपर्वतके दक्षिणमें बहुत दूरतक फैला हुआ एक विशाल पीपलका वृक्ष है। उस वृक्षकी ऊँचाई अत्यन्त ऊपरतक फैली हुई है तथा उसकी बड़ी-बड़ी शाखाएँ हैं। वह अनेक प्राणियों तथा श्रेष्ठ गुणोंका आश्रय है, जिसका नाम 'केतुमाल' है। अब इस वृक्षकी विशेषताका वर्णन करता हूँ, सुनो। क्षीरसमुद्रके मन्थनके समय इन्द्रने इस वृक्षको चैत्य मानकर इसकी शाखाको मालाके रूपमें अपने गलेमें धारण कर लिया, तभीसे यह वृक्ष 'केतुमाल' नामसे विख्यात हो गया और इस वर्षकी भी 'केतुमाल' नामसे प्रसिद्धि हुई।

सुपार्श्वनामक पर्वतके उत्तरशृङ्गपर एक महान् वट-वृक्ष है। इस वृक्षकी शाखाएँ बड़ी विशाल हैं, जिनका विस्तार तीन योजनतक है। यह वृक्ष केतुमाल और इलावृतवर्षोंकी सीमापर है। इसके चारों ओर भाँति-भाँतिकी लम्बी शाखाएँ अलंकारके रूपमें विराजमान हैं तथा यह सिद्धगणोंसे सदा सुसेवित रहता है। ब्रह्माजीके मानस-पुत्र वहाँ प्रायः आते तथा उसकी प्रशंसा करते हैं। वहाँ सात कुरुमहात्मा निवास करते हैं, जिनके नामसे यह 'कुरुवर्ष' प्रसिद्ध है। कुरुवर्षके स्वामी वे सातों महात्मा पुरुष भी स्वर्ग एवं वरुणादि देवलोकोंमें प्रसिद्ध हैं।

[अध्याय ७७]

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

मन्दर आदि पर्वतोंका वर्णन

भगवान् रुद्र कहते हैं—द्विजवरो! अब उन पर्वतोंके पृष्ठभागमें स्थित अत्यन्त रम्य चार पर्वतोंका वर्णन करता हूँ। पक्षी अपने कलरवसे उनके शृङ्गोंकी शोभा बढ़ाते रहते हैं। ये पर्वत देवताओं एवं देवाङ्गनाओंके साथ-साथ विहार करनेके लिये मानो क्रीडास्थल हैं। शीतल तथा मन्दगतिसे प्रवाहित तथा सुगन्धपूर्ण पवनसे युक्त उन शिखरोंकी किंनरगण सदा सेवा करते हैं, इससे उनकी रमणीयता और बढ़ जाती है। इन चारों पर्वतोंके पूर्वमें चैत्ररथ वन और दक्षिणमें गन्धमादन पर्वत स्थित है। उन पर्वतोंपर स्वादिष्ठ जलसे परिपूर्ण कई सरोवर भी हैं, जिनका पर्वतके सभी भागोंसे सम्बन्ध है। यह वह रमणीय स्थान है, जहाँ देवसमुदाय अपनी रमणियोंके सहित अनेक दुर्गम वन-प्रान्तोंको लाँघकर आता और बड़े हर्षका अनुभव करता है। परम पवित्र जल तथा रत्नोंसे पूर्ण बहुत-से सरोवर, झील एवं जलाशय वहाँकी शोभा बढ़ाते हैं। खिले हुए नील, स्वच्छ एवं लाल कमलोंसे उन जलाशयोंकी सुन्दरता सीमा पार कर जाती है। ये सभी पर्वत विविध प्रकारके दिव्य गुणोंसे सम्पन्न हैं। इनके पूर्वमें अरुणोद, दक्षिणमें मानसोद, पश्चिममें असितोद और उत्तरमें महाभद्र नामक सरोवर हैं। श्वेत, कृष्ण एवं पीले रंगके कमलोंसे इन सरोवरोंकी अनुपम शोभा होती है। अरुणोद-सरोवरके पूर्वी भागमें जो पर्वत प्रसिद्ध हैं, उनके नाम बतलाता हूँ, सुनो। वे हैं विकङ्क, मणिशृङ्ग, सुपात्र, महोपल, महानील, कुम्भ, सुविन्दु, मदन, वेणुनद्ध, सुमेदा, निषध और देवपर्वत। वे सभी पर्वत अपने समुदायमें सर्वोत्कृष्ट एवं पवित्र भी हैं।

अब मानससरोवरके दक्षिण भागमें जो महान् पर्वत बताये गये हैं, उनके नाम बतलाता हूँ, सुनो—तीन चोटियोंवाला त्रिशिखर, गिरिश्रेष्ठ शिशिर, कपि, शताक्ष, तुरग, सानुमान्, ताम्राह, विष, श्वेतोदन, समूल, सरल, रत्नकेतु, एकमूल, महाशृङ्ग, गजमूल, शावक, पञ्चशैल और कैलास—ये प्रधान और रमणीय पर्वत मानससरोवरके पश्चिमी भागमें हैं। विप्रो! महाभद्र-सरोवरके उत्तरमें जो पर्वत विद्यमान हैं, अब उनके नाम कहता हूँ, सुनो। हंसकूट, महान् पर्वत वृषहंस, कपिञ्जल, गिरिराज इन्द्रशैल, सानुमान्, नील, कनकशृङ्ग, शतशृङ्ग, पुष्कर, महान् एवं सर्वोत्कृष्ट विराज तथा पर्वतराज भारुचि। वे सभी पर्वत उत्तर-गिरि कहे गये हैं। उनके उत्तरीय भागमें कुछ ग्राम, नगर तथा जलाशय हैं। [अध्याय ७८]

मेरुपर्वतके जलाशय

भगवान् रुद्र कहते हैं—द्विजवरो! सीमान्त और कुमुदपर्वतोंके बीचकी अधित्यकामें अनेक पक्षी निवास करते हैं तथा वह विविध भाँतिके प्राणियोंद्वारा सेवित है। उसकी लम्बाई तीन सौ योजन और चौड़ाई सौ योजन है। उसमें एक स्वादिष्ठ तथा स्वच्छ जलवाला श्रेष्ठ जलाशय है, जिसकी विशाल सुगन्धित कमल-पुष्प निरन्तर शोभा बढ़ाते रहते हैं। इन विशाल आकृतिवाले कमलोंमें एक-एक लाख पत्ते हैं। वह जलाशय देवताओं, दानवों, गन्धर्वों और महान् सर्पोंसे कभी रिक्त नहीं रहता। उस दिव्य एवं पवित्र जलाशयका नाम 'श्रीसरोवर' है। सम्पूर्ण प्राणियोंको शरण देनेमें कुशल उस सरोवरमें सदा स्वच्छ जल भरा रहता है। उसके अन्तर्गत कमलवनके बीच एक बहुत बड़ा कमल है, जिसमें एक करोड़ पत्ते हैं। वह कमल मध्याह्न-कालीन सूर्यकी भाँति

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

सदा प्रफुल्लित एवं प्रकाशमान रहता है। उसके सदा खिले रहनेसे मण्डलकी मनोहरता और अधिक बढ़ जाती है। सुन्दर केसरके खजानेकी तुलना करनेवाले उस कमलपर मतवाले भ्रमर निरन्तर गूँजते रहते हैं। इस कमलके मध्यभागमें साक्षात् भगवती लक्ष्मीका निवास है। इन देवीने अपने आवासके लिये ही उस कमलको अपना मन्दिर बना रखा है। इस सरोवरके तटपर सिद्धपुरुषोंके भी आश्रम हैं।

विप्रवरो! उसके पावन तटपर एक बहुत बड़ा मनोहर बिल्वका भी वृक्ष है। उसपर फूल और फल सदा लदे रहते हैं। वह सौ योजन चौड़ा और दो सौ योजन लम्बा है। उसके चारों ओर अन्य अनेक वृक्ष भी हैं, जिनकी ऊँचाई आधा कोस है। हजार शाखाओं और स्कन्धोंसे युक्त वह वृक्ष फलोंसे सदा परिपूर्ण रहता है। वे फल चमकीले, हरे और पीले रंगके हैं और उनका स्वाद अमृतके समान है। उनसे उत्कट गन्ध निकलती रहती है। वे विशाल आकारके फल जब पककर गिरते हैं तो जमीनपर तितर-बितर हो जाते हैं। उस वनका नाम 'श्री'वन या 'लक्ष्मी'वन है, जो सभी लोकोंमें विख्यात है। उसके आठों दिशाओंमें देवता निवास करते हैं। ऐसे उस कल्याणप्रद बिल्व-वृक्षके* पास उसके फलोंको खानेवाले पुण्यकर्मा मुनि सुरक्षा करनेमें सदा उद्यत रहते हैं। उसके नीचे लक्ष्मीजी सदा विराजती हैं और सिद्ध-समुदाय उसकी सेवामें सदा संलग्न रहता है।

विप्रवरो! वहाँ मणिशैल नामका एक महान् पर्वत है। उसके भीतर भी एक स्वच्छ कमलका वन है। उस वनकी लम्बाई दो सौ योजन और चौड़ाई सौ योजनकी है। सिद्ध और चारण वहाँ रहकर उसकी सेवा करते हैं। इन फूलोंको भगवती लक्ष्मी धारण करती हैं, अतः ये सदा प्रफुल्लित एवं प्रकाशमान प्रतीत होते हैं। उसके चारों ओर आधे कोसतक अनेक पर्वत-शिखर फैले हुए हैं। वह कमलका वन फूले हुए पुष्पोंसे सम्पन्न होनेके कारण जान पड़ता है, मानो पक्षियोंके रहनेका पिंजरा हो। उस वनमें बहुत-से कमल खिले हुए हैं। उन फूलोंका परिमाण दो हाथ चौड़ा और तीन हाथ लम्बा है। कुछ खिले हुए पुष्प मैनशिलाकी भाँति लाल और बहुत-से केसरके रंगके-से पीले हैं। वे तीव्र सुगन्धोंद्वारा देवताओंके मनको मुग्ध कर देते हैं। मतवाले भौंरोंकी गुनगुनाहटसे सम्पूर्ण वनकी शोभा विचित्र होती है। देवताओं, दानवों, गन्धर्वों, यक्षों, राक्षसों, किंनरों, अप्सराओं और महोरगोंसे सेवित उस वनमें प्रजापति भगवान् कश्यपजीका एक अत्यन्त दिव्य आश्रम है।

द्विजवरो! महानील और ककुभ नामक पर्वतके मध्यभागमें भी एक बहुत बड़ा वन है। उसमें सिद्धों और साधुओंका समुदाय सदा निवास करता है। अनेक सिद्धोंके आश्रम वहाँ सुशोभित हैं। महानील और ककुभ नामक पर्वतोंके मध्यमें 'सुखा' नामकी एक नदी है और उसीके तटपर यह महान् वन है, जो पचास योजन लम्बा तथा तीस योजन चौड़ा है। इस वनका नाम 'ताल-वन' है। वनकी छवि बढ़ानेवाले वृक्ष दृढ़, बड़े-बड़े फलोंसे युक्त तथा मीठी गन्धोंसे व्याप्त हैं, जिनसे वह पर्वत परिपूर्ण है। सिद्धलोग उसकी सेवा करते हैं। वहीं ऐरावत हाथीकी आकृतिवाली एक पर्वतीय भूमि है, जो ईरावान, रुद्रपर्वत एवं देवशील पर्वतोंके मध्य-भागमें स्थित है, हजार योजन लम्बी और सौ योजन चौड़ी है। यहाँ बस

* बिल्व एवं कमल—ये दोनों ही भगवती लक्ष्मीके आवास हैं।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

केवल एक ही विशाल शिला है, जिसपर एक भी वृक्ष अथवा लता नहीं है। विप्रवरो! इस शिलाका चतुर्थांश भाग जलमें डूबा रहता है। इस प्रकार उपत्यकाओं तथा पर्वतोंका वर्णन किया गया है, जो मेरुपर्वतके आस-पासमें यथास्थान शोभा पाते हैं। [अध्याय ७९]

मेरुपर्वतकी नदियाँ

भगवान् रुद्र कहते हैं—मेरुपर्वतके दक्षिण दिशामें बहुत-से पहाड़ एवं नदियाँ हैं। यह सिद्धोंकी आवासभूमि है। शिशिर और पतङ्ग नामक पर्वतके मध्यभागमें एक स्वच्छ भूमि है। वहाँ दिव्य एवं मुक्त स्त्रियाँ रहती हैं और वहाँके वृक्ष भी गलित पत्र हो गये हैं। वहीं इक्षुक्षेप नामक शिखर है, जिसकी वृक्ष शोभा बढ़ाते हैं। उस शिखरपर बहुत सुन्दर गूलरके वृक्षोंका एक वन है, जिसकी पक्षी समुदाय सदा सेवा करता है। उस वनके वृक्षपर जब फल लगते हैं तो वे ऐसे सुशोभित होते हैं, मानो महान् कछुवे हों। सिद्धादि आठ प्रकारकी देवयोनियाँ उस वनमें सदा निवास करती और उस वनकी रक्षा करती हैं। उस स्थानपर स्वच्छ एवं स्वादिष्ठ जलवाली अनेक नदियाँ प्रवाहित होती हैं, जहाँ कर्दम-प्रजापतिका आश्रम है। वह सौ योजन परिमाणके एक वृत्ताकार वनसे घिरा है। वहीं ताम्राभ और पतङ्ग-पर्वतके मध्यभागमें एक महान् सरोवर है, जो दो सौ योजन लम्बा और सौ योजन चौड़ा है। उसके चारों ओर प्रातःकालीन सूर्यके तुल्य हजारों पत्तोंसे परिपूर्ण कमल उस सरोवरकी शोभा बढ़ाते हैं। वहाँ अनेक सिद्ध और गन्धर्वोंका निवास है। उसके बीचमें एक महान् शिखर है, जिसकी लम्बाई तीन सौ योजन और चौड़ाई सौ योजन है। अनेक धातु और रत्न उसको सुशोभित करते रहते हैं। उसके ऊपर एक बहुत लम्बी-चौड़ी सड़क है, जिसके अगल-बगलमें रत्नोंसे बनी हुई चहारदीवारियाँ हैं। उस सड़कके पास ही पुलोम विद्याधरका पुर है, जिसके परिवारके व्यक्तियोंकी संख्या एक लाख है। इसी प्रकार विशाख और श्वेतनामक पर्वतोंके मध्यभागमें भी एक नदी है, जिसके पूर्वीतटपर एक बड़ा विशाल आम्रका वृक्ष है। उस वृक्षको सोनेके समान चमकनेवाले, उत्तम गन्धोंसे युक्त तथा महान् घड़ेकी आकृतिवाले असंख्य फल सब ओरसे मनोहर बना रहे हैं। वहाँ देवताओं और गन्धर्वोंका निवास है।

वहाँ सुमूल और वसुधार—ये दो प्रसिद्ध पर्वत हैं। इनके बीचमें तीन सौ योजन चौड़ी और पाँच सौ योजन लम्बी रिक्त भूमि है, जहाँ एक बिल्वका वृक्ष है। इससे भी बड़े घड़ेकी आकृतिवाले असंख्य फल गिरते रहते हैं। उन फलोंके रससे उस भूमिकी मिट्टी गीली हो जाती है और बिल्वफल खानेवाले गुह्यक लोग उस स्थलकी रक्षा करते हैं।

इसी प्रकार वसुधार और रत्नधार पर्वतोंके मध्यभागमें एक किंशुक अर्थात् पलाशका दिव्य वन है। वह वन सौ योजन चौड़ा और तीन सौ योजन लम्बा है। जब वह गन्धयुक्त वन फूलता है तब उसके पुष्पोंकी सुगन्धसे सौ योजनकी भूमि सुवासित हो जाती है। वहाँ जलकी कभी कमी नहीं होती और सिद्ध लोग वहाँ सदा निवास करते हैं। वहाँ भगवान् सूर्यका एक विशाल मन्दिर है। प्रजाओंकी रक्षा करनेवाले तथा जगत्के जनक भगवान् सूर्य वहाँ प्रति-मास अवतरित होते हैं, अतः देवतालोग वहाँ पहुँचकर उनकी स्तुति-नमस्कार आदिद्वारा आराधना करते हैं।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

इसी प्रकार पञ्चकूट और कैलासपर्वतोंके बीचमें 'हंसपाण्डुर' नामसे प्रसिद्ध एक भूमिखण्ड है, जिसकी लम्बाई हजार योजन और चौड़ाई सौ योजन है। क्षुद्र प्राणी उसे लाँघनेमें असमर्थ हैं। वह भूभाग मानो स्वर्गकी सीढ़ी है। अब हम मेरुकी पश्चिम दिशाके पर्वतों एवं नदियोंका वर्णन करते हैं। सुपार्श्व और शिखिशैलसंज्ञक पर्वतोंके मध्यमें 'भौमशिलातल' नामक एक मण्डल है। वह चारों तरफ सौ योजनतक फैला है। वहाँकी भूमि सदा तपती रहती है, जिससे कोई इसे छू नहीं सकता। उसके बीचमें तीस योजनतक फैला हुआ अग्निदेवका स्थान है। वहाँ भगवान् नारायण लोकका संहार करनेके विचारसे 'संवर्तक' नामक अग्निका रूप धारणकर बिना लकड़ीके ही सर्वदा प्रज्वलित रहते हैं। यहीं कुमुद और अञ्जन—ये दोनों श्रेष्ठ शैल हैं। उनके बीचमें 'मातुलुङ्गस्थली' सुशोभित होती है। इसका विस्तार सौ योजन है। वहाँ जानेमें सभी प्राणी असमर्थ हैं। पीले रंगवाले फलोंसे उसकी बड़ी शोभा होती है। वहाँ सिद्ध पुरुषोंसे सम्पन्न एक पवित्र तालाब है। यहीं बृहस्पतिका भी एक वन है। ऐसे ही पिंजर और गौर नामवाले दो पर्वतोंके बीचमें छोटी-छोटी अनेक नदियाँ हैं। भँवरोंसे व्याप्त बड़े-बड़े कमल उन द्रोणियोंकी शोभा बढ़ाते हैं। वहाँ भगवान् नारायणका देवमन्दिर है। इसी प्रकार शुक्ल तथा पाण्डुर नामसे विख्यात महान् पर्वतोंके बीचमें तीस योजन चौड़ा तथा नब्बे योजन लम्बा एक पर्वतीय भाग है, जिसमें एक ही शिला है और वृक्ष एक भी नहीं है। वहाँ एक ऐसी बावली है, जिसका जल कभी तनिक भी नहीं हिलता। उसमें एक वृक्ष तथा एक 'स्थलपद्मिनी' है, जो अनेक प्रकारके कमलोंसे आवृत है। वह वृक्ष उस वापीके मध्यभागमें है और वहीं पाँच योजन प्रमाणवाला एक बरगदका भी वृक्ष है। वहाँ भगवान् शंकर नीले वस्त्र धारण करके पार्वतीके साथ निवास करते हैं, जिनकी यक्ष, भूत आदि सदा आराधना करते हैं। 'सहस्रशिखर' और 'कुमुद'—इन दोनों पर्वतोंके बीचमें 'इक्षुक्षेप' नामक शिखर है, जो बीस योजन चौड़ा और पचास योजन लम्बा है। उस ऊँचे शिखरपर बहुत-से पक्षी निवास करते हैं। अनेक वृक्षोंके मधुर रसवाले फलोंसे उसकी विचित्र शोभा होती है। वहाँ चन्द्रमाका महान् आश्रम है, जिसका निर्माण दिव्य वस्तुओंसे हुआ है। ऐसे ही शङ्खकूट और ऋषभके मध्यभागमें 'पुरुषस्थली' है। इसी प्रकार कपिञ्जल और नागशैल नामसे प्रसिद्ध पर्वतोंके मध्यभागमें सौ योजन चौड़ी और दो सौ योजन लम्बी एक अधित्यका है, जहाँ बहुत-से यक्ष निवास करते हैं। वह स्थली दाख और खजूरके वृक्षोंसे व्याप्त है। इसी प्रकार पुष्कर और महादेव-संज्ञक पर्वतोंके बीचमें साठ योजन चौड़ा और सौ योजन लम्बा एक बड़ा उपवन है, जिसका नाम 'पाणितल' है। वृक्षों और लताओंका यहाँ एक प्रकार सर्वथा अभाव-सा है।

[अध्याय ८०]

देव-पर्वतोंपरके देव-स्थानोंका परिचय

भगवान् रुद्र कहते हैं— अब पर्वतोंके अन्तर्वर्ती देवस्थलोंका वर्णन करता हूँ। जिस सीतानामक पर्वतका वर्णन पहले आया है, उसके ऊपर देवराज इन्द्रकी क्रीडा-स्थली है। वहाँ उनका पारिजात नामके वृक्षोंका वन है। उसके पास ही पूर्व दिशामें 'कुञ्जर' नामक प्रसिद्ध पर्वत है, जिसके ऊपर दानवोंके आठ नगर हैं। इसी प्रकार 'वज्रपर्वत'पर राक्षसोंकी पुरियाँ हैं। उनके निवासी असुर 'नालका' नामसे प्रसिद्ध हैं और वे सभी कामरूपी भी हैं। 'महानील'पर्वतपर पंद्रह सहस्र

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

किन्नरोंके नगर हैं। वहाँ देवदत्त, चन्द्रदत्त आदि पंद्रह गर्वपूर्ण राजा शासन करते हैं ये। पुरियाँ सुवर्णमयी हैं। 'चन्द्रोदय' पर्वतपर बहुत-सी बिलें और नगर हैं और वहाँ सर्पोंका निवास है। गरुडके राज्यशासनसे वे सर्प बिलोंमें छिपे रहते हैं। 'अनुराग' नामक पर्वतपर दानवेश्वरोंके रहनेकी व्यवस्था है। 'वेणुमान्' पर्वतपर विद्याधरोंके तीन नगर हैं। उनमें प्रत्येक नगरकी लम्बाई तीन सौ योजन और चौड़ाई सौ योजनकी है। उनमें विद्याधरोंके शासक उलूक, गरुड, रोमश और महावेत्र नियुक्त हैं। कुञ्जर तथा वसुधारपर्वतोंपर भगवान् पशुपतिका निवास है। करोड़ों भूतगण यहाँ शंकरकी सेवा करते हैं।

वसुधार और रत्नधार—इन दोनों पर्वतोंके ऊपर वसुओं एवं सप्तर्षियोंकी पुरियाँ हैं, जिनकी संख्या पंद्रह है। पर्वतोत्तम एकशृङ्ग पर्वतपर प्रजाओंकी रक्षा करनेवाले चतुर्मुख ब्रह्माजीका निवासस्थान है। 'गज' नामक पर्वतपर महान् भूतसमुदायसे घिरी स्वयं भगवती पार्वती विराजती हैं। पर्वतप्रवर वसुधारपर चौरासी योजनके विस्तारसे मुनियों, सिद्धों और विद्याधरोंका एक श्रेष्ठ नगर है। उसके चारों ओर चहारदीवारी तथा बीचमें तोरण है। युद्ध करनेमें निपुण, पर्वतनामवाले अनेक गन्धर्व वहाँ निवास करते हैं। उनके राजाका नाम पिंगल है। वे राजाओंके भी राजा हैं। देवता और राक्षस पञ्चकूटपर तथा दानव 'शतशृङ्ग' पर्वतपर रहते हैं। दानवों और यक्षोंकी पुरियाँ सौकी संख्यामें हैं। 'प्रभेदक' पर्वतके पश्चिम भागमें देवताओं, दानवों और सिद्धोंकी पुरियाँ हैं। उस प्रभेदक गिरिके शिखरपर एक बहुत बड़ी शिला है। वहाँ प्रत्येक पर्वतपर चन्द्रमा स्वयं ही आते हैं। उसके पास ही उत्तर दिशामें 'त्रिकूट' नामका एक पर्वत है। कभी-कभी ब्रह्माजीका वहाँ निवास होता है। ऐसे ही अग्निदेवका भी वहाँ निवास-स्थान है। वहाँ अग्निदेवता मूर्तिमान् होकर रहते हैं और अन्य देवता उनकी उपासना करते हैं। उसके उत्तर 'शृङ्ग' पर्वतपर देवताओंके भवन हैं। इसके पूर्वमें भगवान् नारायणका, बीचमें ब्रह्माका तथा पश्चिममें भगवान् शंकरका निवास-स्थान है। वहीं यक्ष आदिकोंके बहुत-से नगर हैं। वहाँ तीस योजन विस्तारवाली एक नदी है, जिसका नाम 'नन्दजल' है। उसके उत्तर तटपर 'जातुच्छ' नामक एक ऊँचा पर्वत है। वहाँ सर्पोंका राजा, जो नन्द नामसे प्रसिद्ध है, निवास करता है। उसके सौ भयंकर फन हैं। इस प्रकार इन आठ दिव्य पर्वतोंको जानना चाहिये। सोना-चाँदी, रत्न, वैदूर्य और मैनशिल आदि रंगसे क्रमशः वे पर्वत वर्ण धारण करते हैं। यह पृथ्वी लाख कोटि अर्थात् अगणित पर्वतोंसे पूर्ण है। उनपर सिद्ध और विद्याधरोंके अनेक आलय हैं। इसी प्रकार मेरुपर्वतके पार्श्व-भागमें केसर, वलय, आलबाल और सिद्धलोक आदि हैं। यह पृथ्वी कमलकी आकृतिमें सुव्यवस्थित हुई है। सामान्यरूपसे सभी पुराणोंमें इसी क्रमका प्रतिपादन होता है।

[अध्याय ८१]

नदियोंका अवतरण

भगवान् रुद्र कहते हैं—अब आपलोग नदियोंका अवतरण सुनें—जिसे आकाश-समुद्र कहते हैं, उसीसे आकाशगङ्गाका प्रादुर्भाव हुआ है। यह आकाश-समुद्र प्रायः निरन्तर इन्द्रके ऐरावत हाथीद्वारा (स्नानादि करनेसे) क्षुभित एवं बाधित होता रहता है। फिर वह आकाशगङ्गा चौरासी हजार योजन ऊपरसे मेरुपर्वतपर गिरती है। वहाँसे मेरुकूटकी उपत्यकाओंसे नीचे बहती हुई वह

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi
In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth

चार भागोंमें विभक्त हो जाती है। आश्रयहीन होनेके कारण चौंसठ हजार योजन दूरसे गिरती हुई वह नीचे उतरती है। यही नदी भूभागपर पहुँचकर सीता, अलकनन्दा, चक्षु एवं भद्रा आदि नामोंसे विख्यात होती है। इन नदियोंके बीचमें इक्यासी हजार पर्वतोंको लाँघती हुई 'गो' अर्थात् पृथ्वीपर गमन करनेके कारण इसे ही जनता '**गां गता**'—'गङ्गा' कहती है।

अब 'गन्धमादन'के पार्श्वभागमें स्थित अमर-गण्डिकाका वर्णन करता हूँ। वह चार सौ योजन चौड़ी और तीस योजन लम्बी है। उसके तटपर केतुमाल नामसे प्रसिद्ध अनेक जनपद हैं। वहाँके निवासी पुरुष काले वर्णवाले एवं अत्यन्त पराक्रमी हैं। यहाँकी स्त्रियाँ कमलके समान नेत्रोंवाली परम सुन्दर होती हैं। वहाँ कटहलके वृक्ष विशेषतया बड़े-बड़े होते हैं। ब्रह्माजीके पुत्र ईशान—शिव ही वहाँके शासक हैं। उसका जल पीनेसे प्राणियोंके पास बुढ़ापा और रोग नहीं आ सकते तथा वे मनुष्य हजार वर्षकी आयुसे सम्पन्न और हृष्ट-पुष्ट रहते हैं। माल्यवान्पर्वतके पूर्वी शिखरसे 'पूर्वगण्डिका'का प्रादुर्भाव हुआ है। इसकी लम्बाई-चौड़ाई हजार योजन है। वहाँपर भद्राश्व नामसे प्रसिद्ध अनेक जनपद हैं। वहीं भद्ररसाल नामका एक वन है। कालाम्र नामक वृक्षोंकी संख्या तो अनगिनत है। वहाँके पुरुष श्वेतवर्णके और स्त्रियाँ कमल अथवा कुन्द-वर्णकी होती हैं। उन सबकी आयु दस हजार वर्षकी है। वहाँ पाँच 'कुल'-पर्वत हैं। वे पर्वत शैल वर्ण, मालाख्य, 'कोरजस्क' त्रिपर्ण और नील नामसे विख्यात हैं। वहाँसे झील-झरनों एवं सरोवरोंके तटवर्ती जनपदोंके नाम भी प्रायः वैसे ही हैं। वहाँके देशवासी उन्हीं नदियोंके जल पीते हैं। उन नदियोंके नाम इस प्रकार हैं—सीता, सुवाहिनी, हंसवती, कासा, महावक्रा, चन्द्रवती, कावेरी, सुरसा, आख्यावती, इन्द्रवती, अङ्गारवाहिनी, हरित्तोया, सोमावर्ता, शतह्रदा, वनमाला, वसुमती, हंसा, सुपर्णा, पञ्चगङ्गा, धनुष्मती, मणिवप्रा, सुब्रह्मभोगा, विलासिनी, कृष्णतोया, पुण्योदा, नागवती, शिवा, शैवालिनी, मणितटा, क्षीरोदा, वरुणताली और विष्णुपदी। जो इन पुण्यमयी नदियोंका जल पीते हैं, उनकी आयु दस हजार वर्षकी हो जाती है। यहाँके निवासी सभी स्त्री-पुरुष भगवान् रुद्र और उमाके भक्त हैं।

[अध्याय ८२]

नैषध एवं रम्यकवर्षोंके कुलपर्वत, जनपद और नदियाँ

भगवान् रुद्र कहते हैं—मैंने आपलोगोंसे भद्राश्ववर्षका संक्षेपमें और केतुमालवर्षका कुछ विस्तारपूर्वक वर्णन किया। अब (निषधवर्षके) पर्वतराज नैषधके पश्चिममें रहनेवाले कुलपर्वतों, जनपदों और नदियोंका वर्णन करता हूँ। विशाख, कम्बल, जयन्त, कृष्ण, हरित, अशोक और वर्धमान—ये तो वहाँके सात कुल-पर्वत हैं। इन पर्वतोंके बीच छोटे-छोटे पर्वतों एवं शिखरोंकी संख्या अनन्त है। वहाँके नगर-जनपद आदि भी इन पर्वतोंके नामोंसे ही प्रसिद्ध हैं। ये पर्वत हैं—सौर, ग्रामान्तसातप, कृतसुराश्रवण, कम्बल, माहेय, कूटवास, मूलतप, क्रौञ्च, कृष्णाङ्ग, मणिपङ्कज, चूडमल, सोमीय, समुद्रान्तक, कुरकुञ्ज, सुवर्णतट, कुह, श्वेताङ्ग, कृष्णपाद, विद, कपिल, कर्णिक, महिष, कुब्ज, करनाट, महोत्कट, शुकनाक, सगज, भूम, ककुरञ्जन, महानाह, किकिसपर्ण, भौमक, चोरक, धूमजन्मा, अङ्गारज, जीवलौकित, वाचांसहांग, मधुरेय, शुकेय, चकेय, श्रवण, मत्तकाशिक, गोदावाय, कुलपंजाब, वर्जह और मोदशालक। इन पर्वतीय जनपदोंमें निवास करनेवाली

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

प्रजा जिन पर्वतीय नदियोंका ही जल पीती है, वे नदियाँ हैं—रत्नाक्षा, महाकदम्बा, मानसी, श्यामा, सुमेधा, बहुला, विवर्णा, पुङ्खा, माला, दर्भवती, भद्रनदी, शुकनदी, पल्लवा, भीमा, प्रभञ्जना, काम्बा, कुशावती, दक्षा, काशवती, तुङ्गा, पुण्योदा, चन्द्रावती, सुमूलावती, ककुपद्मिनी, विशाला, करंटका, पीवरी, महामाया, महिषी, मानषी और चण्डा। ये तो प्रधान नदियाँ हैं, छोटी-छोटी दूसरी नदियाँ भी हजारोंकी संख्यामें हैं।

भगवान् रुद्र कहते हैं—विप्रो! अब उत्तर और दक्षिणके वर्षोंमें जो-जो पर्वतवासी कहे जाते हैं, उनका मैं क्रमसे वर्णन करता हूँ, आपलोग सावधान होकर सुनें। मेरुके दक्षिण और श्वेतगिरिसे उत्तर सोमरसकी लताओंसे परिपूर्ण 'रम्यकवर्ष' है। (इस सोमके प्रभावसे) वहाँके उत्पन्न हुए मनुष्य प्रधान बुद्धिवाले, निर्मल और बुढ़ापा एवं दुर्गतिके वशीभूत नहीं होते। वहाँ एक बहुत बड़ा वटका भी वृक्ष है, जिसका रंग प्रायः लाल कहा गया है। इसके फलका रस पीनेवाले मनुष्योंकी आयु प्रायः दस हजार वर्षोंकी होती है और वे देवताओंके समान सुन्दर होते हैं। श्वेतगिरिके उत्तर और त्रिशृङ्गपर्वतके दक्षिणमें हिरण्मय नामक वर्ष है। वहाँ एक नदी है, जिसे हैरण्यवती कहते हैं। वहाँ इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले कामरूपी पराक्रमी यक्षोंका निवास है। वहाँके लोगोंकी आयु प्रायः ग्यारह हजार वर्षोंकी होती है, पर कुछ लोग पन्द्रह सौ वर्षोंतक ही जीवित रहते हैं। उस देशमें बड़हर और कटहलके वृक्षोंकी बहुतायत है। उनके फलोंका भक्षण करनेसे ही वहाँके निवासी इतने दिनोंतक जीवित रहते हैं। त्रिशृङ्गपर्वतपर मणि, सुवर्ण एवं सम्पूर्ण रत्नोंसे युक्त शिखर क्रमशः उसके उत्तरसे दक्षिण समुद्रतक फैले हुए हैं। वहाँके निवासी उत्तरकौरव कहलाते हैं। वहाँ बहुत-से ऐसे वृक्ष हैं जिनसे दूध एवं रस निकलते हैं। उन वृक्षोंसे वस्त्र और आभूषण भी पाये जाते हैं। वहाँकी भूमि मणियोंकी बनी है तथा रेतोंमें सुवर्णखण्ड मिले रहते हैं। स्वर्गसुख भोगनेवाले पुरुष पुण्यकी अवधि समाप्त हो जानेपर यहाँ आकर निवास करते हैं। इनकी आयु तेरह हजार वर्षोंकी होती है। उसी द्वीपके पश्चिम चन्द्रद्वीप है। देवलोकसे चार हजार योजनकी दूरी पार करनेपर यह द्वीप मिलता है। हजार योजनकी लम्बाई-चौड़ाईमें इसकी सीमा है। उसके बीचमें 'चन्द्रकान्त' और 'सूर्यकान्त' नामसे प्रसिद्ध दो प्रस्रवणपर्वत हैं। उनके बीचमें 'चन्द्रावर्त्ता' नामकी एक महान् नदी है, जिसके किनारे बहुसंख्यक वृक्ष हैं और जिसमें अनेक छोटी-छोटी नदियाँ आकर मिलती हैं। 'कुरुवर्ष'की उत्तरी अन्तिम सीमापर यह नदी है। समुद्रकी लहरें प्रायः यहाँ आती रहती हैं। यहाँसे पाँच हजार योजन आगे जानेपर 'सूर्यद्वीप' मिलता है। वह वृत्ताकारमें हजार योजनके क्षेत्रफलमें फैला हुआ है। उसके मध्यभागमें सौ योजन विस्तारवाला तथा उतना ही ऊँचा श्रेष्ठ पर्वत है। उस पर्वतसे 'सूर्यावर्त' नामकी एक नदी प्रवाहित होती है। वहाँ भगवान् सूर्यका निवासस्थान है। वहाँकी प्रजा सूर्योपासक एवं दस हजार वर्ष आयुवाली तथा सूर्यके ही समान वर्णकी होती है। 'सूर्यद्वीप'से चार हजार योजनकी दूरीपर पश्चिममें भद्राकारनामक द्वीप है। यह द्वीप समुद्री देशमें है। इसका क्षेत्रफल एक सहस्र योजन है। वहाँ पवनदेवका रत्नजटित दिव्य मन्दिर है। जिसे लोग 'भद्रासन' कहते हैं। पवनदेव अनेक प्रकारका रूप धारणकर यहाँ निवास करते हैं। यहाँकी प्रजा तपे हुए सुवर्णके समान वर्णवाली होती है और इनकी आयु प्रायः पाँच हजार वर्षोंकी होती है। [अध्याय ८३-८४]

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भारतवर्षके नौ खण्डोंका वर्णन

भगवान् रुद्र कहते हैं—विप्रवरो! यह भूमण्डल कमलकी भाँति गोलाकारमें व्यवस्थित है—ऐसा कहा गया है। अब इसके अन्तर्वर्ती नौ उपवर्षों या खण्डोंका वर्णन करता हूँ—सुनो। उनके नाम इस प्रकार हैं—इन्द्रद्वीप, कसेरु, ताम्रवर्ण, गभस्तिमान्, नागद्वीप, सौम्य, गन्धर्व, वारुण और भारत। ये सभी उपवर्ष समुद्रोंसे घिरे हुए हैं। इनमेंसे एक-एकका प्रमाण हजार योजन है। भारतवर्षमें सात 'कुल'संज्ञक पर्वत हैं, जिनके नाम इस प्रकार हैं—महेन्द्र, मलय, सह्य, शुक्तिमान्, ऋक्षगिरि, विन्ध्याचल और पारियात्र। इनके अतिरिक्त बहुत-से छोटे-छोटे पर्वत हैं, जिनके नाम यों बताये जाते हैं—मन्दर, शारद, दर्दुर, कैलास, मैनाक, वैद्युत, वारन्धम, पाण्डुर, तुङ्गप्रस्थ, कृष्णगिरि, जयन्त, ऐरावत, ऋष्यमूक, गोमन्त, चित्रकूट, श्रीपर्वत, चकोरकुट, श्रीशैल और कृतस्थल। इनसे भी कुछ छोटे बहुत-से दूसरे पर्वत हैं, जिनमें आर्य तथा म्लेच्छ लोगोंके जनपद हैं। भारतवासी जिन नदियोंका जल पीते हैं वे हैं—गङ्गा, सिन्धु, सरस्वती, शतद्रु, वितस्ता, विपाशा, चन्द्रभागा, सरयू, यमुना, इरावती, देविका, कुहू, गोमती, धूतपापा, बाहुदा, दृषद्वती, कौशिकी, निश्चीरा, गण्डकी, इक्षुमती और लोहिता आदि। ये सभी नदियाँ हिमालयसे प्रादुर्भूत हुई हैं। 'परियात्र[1]' पर्वतसे निकली हुई नदियोंके नाम इस प्रकार हैं—वेदस्मृति, वेदवती, सिन्धु, पर्णाशा, चन्द्रनाभा, नर्मदा, सदानीरा, रोहिणीपारा, चर्मण्वती, विदिशा, वेत्रवती, शिप्रा, अवन्ती और कुन्ती। शोण, ज्योतीरथा, नर्मदा, सुरसा, मन्दाकिनी, दशार्णा, चित्रकूटा, तमसा, पिप्पला, करतोया, पिशाचिका, चित्रोत्पला, विमला, विशाला, वञ्जका, वालुवाहिनी, शुक्तिमती, विरजा, पङ्किनी और रात्री—ये नदियाँ ऋक्षमान्[2] नामक पर्वतसे प्रकट हुई हैं। विन्ध्यपर्वतकी उपत्यकासे निकली हुई नदियोंके नाम ये हैं—मणिजाला, शुभा, तापी, पयोष्णी, निर्विन्ध्या, वेणा, पाशा, वैतरणी, वैदिपाला, कुमुद्वती, तोया, दुर्गा और अन्तःशिला। सह्य-पर्वतसे प्रकट हुई नदियाँ इन नामोंसे विख्यात हैं—गोदावरी, भीमरथी, कृष्णावेणी, वञ्जुला, तुङ्गभद्रा, सुप्रयोगा और बाह्यकावेरी। मलय-गिरिसे निकली हुई नदियाँ कृतमाला, ताम्रपर्णी, पुष्पावती और उत्पलावती नामोंसे विख्यात हैं। महेन्द्रपर्वतसे निकली हुई नदियाँ हैं—त्रिसामा, ऋषिकुल्या, इक्षुला, त्रिदिवा, लाङ्गूलिनी और वंशधरा। ऋषिका, सुकुमारी, मन्दगामिनी, कृपा और पलाशिनी—ये चार नदियाँ शुक्तिमान्[3] पर्वतसे प्रवाहित हुई हैं। ये ही सब भारतके 'कुल'पर्वत और प्रधान नदियाँ मानी गयी हैं। इनके अतिरिक्त छोटी-छोटी बहुत-सी नदियाँ हैं। एक लाख योजनवाला यह समग्र भाग 'जम्बूद्वीप' कहलाता है।

[अध्याय ८५]

१-प्रायः अन्य पुराणोंमें इसका नाम 'पारिपात्र' है। यह विन्ध्यका पश्चिमी भाग है, जिसमें अरावलीसहित पठार पर्वतमाला भी सम्मिलित है।

२-यह गोण्डवानासे उड़ीसातक फैला हुआ, विन्ध्यपर्वतमालाका पूर्वी भाग है।

३-यह विन्ध्यपर्वतमालाका मध्यवर्ती भाग है (पार्जीटर, नन्दलाल दे आदि)। शुक्तिमती नदी भी इसीसे निकलती है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

शाक एवं कुश-द्वीपोंका वर्णन

भगवान् रुद्र कहते हैं—अब आपलोग शाकद्वीपका वर्णन सुनें। जम्बूद्वीप अपने दूने परिमाणके लवण-समुद्रद्वारा आवृत है। गोलाईमें भी यही जम्बूद्वीपके दूने परिमाणमें है। यहाँके निवासी बड़े पवित्र और दीर्घजीवी होते हैं। दरिद्रता, बुढ़ापा और व्याधिका उन्हें पता नहीं रहता। इस शाकद्वीपमें भी सात ही कुलपर्वत हैं। इस द्वीपके दोनों ओर समुद्र हैं—एक ओर लवणसमुद्र और दूसरी ओर क्षीरसमुद्र। वहाँ पूर्वमें फैला हुआ महान् पर्वत उदयाचलके नामसे प्रसिद्ध है। उसके ऊपर (पश्चिम) भागमें जो पर्वत है, उसका नाम 'जलधार' है। उसीको लोग 'चन्द्रगिरि' भी कहते हैं। इन्द्र वहींसे जल लेकर (संसारमें) वर्षा करते हैं। उसके बाद 'श्वेतक'-नामक पर्वत है। उसके अन्तर्गत छः छोटे-छोटे दूसरे पर्वत हैं। वहाँकी प्रजा इन पर्वतोंपर अनेक प्रकारसे मनोरञ्जन करती है। उसके बाद रजतगिरि है। उसीको जनता शाकगिरि भी कहती है। उसके बाद 'आम्बिकेय'पर्वत है, जिसे लोग 'विभ्राजक' तथा केसरी भी कहते हैं। वहींसे वायुका प्रवाह आरम्भ होता है। जो कुलपर्वतोंके नाम हैं, उन्हीं नामोंसे वहाँके वर्षों या खण्डोंकी भी प्रसिद्धि है। वे कुलपर्वत इस प्रकार हैं—उदय, सुकुमार, जलधार, क्षेमक और महाद्रुम। पर्वतोंके दूसरे-दूसरे नाम भी हैं। उसके मध्यमें शाक नामका एक वृक्ष है। वहाँ सात बड़ी-बड़ी नदियाँ हैं। एक-एक नदीके दो-दो नाम हैं। ये हैं—सुकुमारी, कुमारी, नन्दा, वेणिका, धेनु, इक्षुमती और गभस्ति।

भगवान् रुद्र कहते हैं—अब आपलोग कुश नामक तीसरे द्वीपका वर्णन सुनें। यह द्वीप विस्तारमें शाकद्वीपसे दूने परिमाणवाला है। क्षीरसमुद्रके चारों ओर कुशद्वीप है। यहाँ भी सात कुलपर्वत हैं। उन सभी पर्वतोंके एक-एकके दो-दो नाम हैं। जैसे—कुमुदपर्वत, इसीका दूसरा नाम 'विद्रुम' भी है। इसी प्रकार दूसरा पर्वत उन्नत भी हेम नामसे विख्यात है, तीसरा पर्वत द्रोण या पुष्पवान् नामसे विख्यात है, चौथा कङ्क या कुश है, पाँचवाँ पर्वत ईश या अग्निमान् है, छठा पर्वत महिष या हरि है। इसपर अग्निका निवास है और सातवाँ ककुध्र या मन्दर है। ये पर्वत कुशद्वीपमें व्यवस्थित हैं।

इन पर्वतोंसे विभाजित भूभाग ही विभिन्न वर्ष या खण्ड हैं। उनमें एक-एक वर्षके दो-दो नाम हैं। जैसे—कुमुदपर्वतसे सम्बन्धित वर्ष श्वेत या उद्भिद् कहा जाता है। उन्नतगिरिका वर्ष लोहित या वेणुमण्डल नामसे विख्यात है। वलाहक-पर्वतका वर्ष जीमूत या रथाकर नामसे भी प्रसिद्ध है। द्रोणगिरिके पासके वर्षको कुछ लोग हरिवर्ष कहते हैं और दूसरे बलाधन। यहाँ भी सात नदियाँ हैं। उनमें प्रत्येक नदीके भी दो-दो नाम हैं। जैसे—पहली नदी 'प्रतोया' है। उसीका दूसरा नाम 'प्रवेशा' है। दूसरी नदी 'शिवा' नामसे विख्यात है, जिसका एक नाम 'यशोदा' भी है। तीसरी नदीको 'चित्रा' कहते हैं। उसीकी एक संज्ञा 'कृष्णा' है। चौथी 'ह्लादिनी'को लोग 'चन्द्रा' भी कहते हैं। पाँचवीं नदी 'विद्युल्लता' नामसे प्रसिद्ध है। इसका दूसरा नाम 'शुक्ला' है। छठी नदी 'वर्णा' कहलाती है। उसका एक नाम 'विभावरी' भी है। सातवीं नदीकी संज्ञा 'महती' है। इसीको लोग 'धृति' भी कहते हैं। ये सभी नदियाँ अपना प्रधान स्थान रखती हैं। यहाँ अन्य

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

छोटी-छोटी बहुत-सी नदियाँ हैं। यह कुशद्वीपके अवान्तर भागका वर्णन है। शाकद्वीप शास्त्रोंमें इसके दूने उपकरणोंसे युक्त है, प्राय: ऐसी बात कही जाती है। कुशद्वीपके मध्यमें एक बहुत बड़ी कुशकी झाड़ी है। इसलिये इसका नाम 'कुशद्वीप' पड़ा। अमृतकी तुलना करनेवाले दधिमण्डोद-समुद्रसे, जो मानमें 'क्षीरसमुद्र'का दुगुना है, घिरा हुआ है। [अध्याय ८६-८७]

क्रौञ्च और शाल्मलिद्वीपका वर्णन

भगवान् रुद्र बोले—अब आपलोग क्रौञ्चद्वीपका वर्णन सुनें। द्वीपोंके क्रममें यह चौथा द्वीप है। इसका परिमाण कुशद्वीपसे दुगुना है। वहाँ एक समुद्र है, जिसे दुगुने परिमाण-वाले इस क्रौञ्चद्वीपने घेर रखा है। उस द्वीपमें सात प्रधान पर्वत हैं। पहला जो क्रौञ्च है, उसे लोग 'विद्युल्लता', 'रैवत' और 'मानस' भी कहते हैं। अन्य पर्वतोंके दो-दो नाम हैं। जैसे—पावन-अन्धकार, अच्छोदक-देवावृत, सुराप-देविष्ठ, काञ्चनशृङ्ग-देवनन्द, गोविन्द-द्विविन्द और पुण्डरीक-तोयासह। ये सातों रत्नमय पर्वत क्रौञ्चद्वीपमें स्थित हैं, जो एक-से-एक अधिक ऊँचे हैं।

अब वहाँके वर्षोंका वर्णन करता हूँ, उसे सुनो। इस क्रौञ्चद्वीपके वर्ष भी दो-दो नामोंसे पुकारे जाते हैं। जैसे—कुशल-माधव, वामक-संवर्तक, उष्णवान्-सप्रकाश, पावनक-सुदर्शन, अन्धकार-संमोह, मुनिदेश-प्रकाश और दुन्दुभि-अनर्थ आदि। वहाँ नदियाँ भी सात ही हैं, उनके नाम इस प्रकार हैं—गौरी, कुमुद्वती, संध्या, रात्रि, मनोजवा, ख्याति और पुण्डरीका। ये सातों नदियाँ विभिन्न स्थानोंपर भिन्न नामोंसे पुकारी जाती हैं। गौरीको कहीं पुष्पवहा, कुमुद्वतीको आर्द्रवती, रौद्राको संध्या, सुखावहाको भोगजवा, क्षिप्रोदाको ख्याति और बहुलाको पुण्डरीका कहते हैं। देशके वर्ण-वैचित्र्यसे प्रभावित अनेकों छोटी-छोटी नदियाँ हैं। इस क्रौञ्चद्वीपके चारों तरफ घृत-समुद्र है, जो शाल्मलिद्वीपसे घिरा है।

भगवान् रुद्र कहते हैं—इस प्रकार चार द्वीपोंका वर्णन हो चुका, अब आपलोग पाँचवें द्वीप तथा वहाँके निवासियोंका वर्णन सुनें। यह पाँचवाँ 'शाल्मलिद्वीप' परिमाणमें 'क्रौञ्चद्वीप'से दुगुना बड़ा है। यह द्वीप घृत-समुद्रके चारों ओर फैला हुआ है। घृत-समुद्रसे विस्तारमें यह दूना है। वहाँ सात प्रधान पर्वत और उतनी ही नदियाँ हैं। सभी पर्वत पीले सुवर्णमय हैं तथा उनके नाम हैं—सर्वगुण, सौवर्णरोहित, सुमनस, कुशल, जाम्बूनद और वैद्युत। ये कुलपर्वत कहलाते हैं। इन्हींके नामसे यहाँके सात वर्ष या खण्ड प्रसिद्ध हैं। अब छठे गोमेदद्वीपका वर्णन किया जाता है। जिस प्रकार शाल्मलिद्वीप 'सुरोद'से घिरा हुआ है, वैसे ही 'सुरोद' भी अपने दुगुने परिमाणवाले 'गोमेद'से घिरा है। वहाँ दो ही प्रधान पर्वत हैं, जिनमें एकका नाम अवसर और दूसरेका नाम कुमुद है। यहाँ ईखके रसका समुद्र है। उस समुद्रसे दूने विस्तारमें पुष्करद्वीप है, जिससे वह घिर-सा गया है। वहाँ उस पुष्करपर ही मानस नामका एक पर्वत है। उसके भी दो भाग हो गये हैं। वे दोनों भाग बराबर-बराबर प्रमाणमें एक-एक वर्ष बन गये हैं। उसके सभी भागोंमें मीठा जल मिलता है। इसके बाद अब कटाहका वर्णन किया जाता है। यह पृथ्वीका प्रमाण हुआ। ब्रह्माण्डकी लम्बाई-चौड़ाई कटाह (कड़ाहे)-की

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भाँति है। इस प्रकारके विधान किये हुए ब्रह्माण्ड-मण्डलोंकी संख्या सम्भव नहीं है। यह पृथ्वी महाप्रलयमें रसातलमें चली जाती है। प्रत्येक कल्पमें भगवान् नारायण वराहका रूप धारणकर इसे अपने दाढ़की सहायतासे वहाँसे ऊपर ले आते हैं और उन्हींकी कृपासे यह पृथ्वी समुचित स्थानपर स्थित हो पाती है। द्विजवरो! पृथ्वीकी लम्बाई-चौड़ाईका मान मैंने तुमलोगोंके सामने वर्णन कर दिया। तुम्हारा कल्याण हो। अब मैं अपने निवासस्थान कैलासको जा रहा हूँ।

भगवान् वराह कहते हैं—वसुंधरे! इस प्रकार कहकर महात्मा रुद्र उसी क्षण कैलासके लिये चल पड़े और सम्पूर्ण देवता और ऋषि भी जहाँसे आये थे, वहाँ जानेके लिये प्रस्थित हो गये।

[अध्याय ८८-८९]

त्रिशक्ति-माहात्म्य* और सृष्टिदेवीका आख्यान

भगवती पृथ्वीने पूछा—भगवन्! कुछ लोग रुद्रको परमात्मा एवं पुण्यमय शिव कहते हैं, इधर दूसरे लोग विष्णुको ही परमात्मा कहते हैं। कुछ अन्य लोग ब्रह्माको सर्वेश्वर बताते हैं। वस्तुतः इनमेंसे कौन-से देवता श्रेष्ठ तथा कौन कनिष्ठ हैं? देव! मेरे मनमें इसे जाननेका कौतूहल हो रहा है। अतः आप इसे बतानेकी कृपा कीजिये।

भगवान् वराह कहते हैं—वरानने! भगवान् नारायण ही सबसे श्रेष्ठ हैं। उनके बाद ब्रह्माका स्थान है। देवि! ब्रह्मासे ही रुद्रकी उत्पत्ति है और वे रुद्र (तपःसाधनाके प्रभावसे) सर्वज्ञ बन गये। उन भगवान् रुद्रके अनेक प्रकारके आश्चर्यमय कर्म हैं। सुन्दरि! मैं उनके चरित्रोंका वर्णन करता हूँ, तुम उन्हें सुनो—

महान् रमणीय एवं नाना प्रकारके विचित्र धातुओंसे सुशोभित कैलास नामका एक पर्वत है, जो भगवान् शूलपाणि त्रिलोचन शिवका नित्य-निवास-स्थल है। एक दिनकी बात है—सम्पूर्ण प्राणिवर्गद्वारा नमस्कृत भगवान् पिनाकपाणि अपने सभी गणोंसे घिरे हुए उस कैलासपर्वतपर विराजमान थे और उनके पासमें ही भगवती पार्वती भी बैठी थीं। इनमेंसे किन्हीं गणोंका मुँह सिंहके समान था और वे सिंहकी ही भाँति गर्जना कर रहे थे। कुछ गण हाथीके समान मुखवाले थे तो कुछ गण घोड़ेकी मुखाकृतिके और कुछके मुख सूँस-जैसे भी थे। उनमेंसे कितने तो गाते, नाचते, दौड़ते और ताली ठोंकते, हँसते-किलकिलाते, गरजते और मिट्टीके ढेलोंको उठाकर परस्पर लड़ रहे थे। कुछ बलके अभिमान रखनेवाले गण मल्लयुद्धके नियमसे लड़ रहे थे। भगवान् रुद्रका देवी पार्वतीके साथ हास-विलास भी चल रहा था, इतनेमें ही अविनाशी ब्रह्माजी भी देवताओंके साथ वहाँ पहुँच आये। उन्हें आया देखकर भगवान् शिवने उनकी विधिपूर्वक पूजा की और उनसे पूछा—'ब्रह्मन्! आप इस समय यहाँ कैसे पधारे? और आपके मनमें यह घबड़ाहट कैसी है?'

ब्रह्माजीने कहा—'अन्धक' नामके एक महान्

*'वराहपुराण'का यह आख्यान बहुत प्रसिद्ध है। भास्करराय ने 'ललितासहस्रनाम'—'सौभाग्य भास्करभाष्य'के पृ० ११७, १३३, १३६, १४५—५०, १५४ (३ बार), १६१ आदिपर तथा 'सेतुबन्ध'में भी पग-पगपर इस ('त्रिशक्तिमाहात्म्य')-के श्लोकोंको उद्धृत किया है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

दैत्यने सभी देवताओंको अत्यन्त पीड़ित कर रखा है। उससे त्राण पानेकी इच्छासे शरण खोजते हुए सभी देवता मेरे पास पहुँचे। तब मैंने इन लोगोंसे कहा कि 'हम सब लोग भगवान् शंकरके पास चलें।' देवेश! इसी कारण हम सभी यहाँ आये हुए हैं।

इस प्रकार कहकर ब्रह्माजी पिनाकपाणि भगवान् रुद्रकी ओर देखने लगे। साथ ही उन्होंने उसी क्षण परम प्रभु भगवान् नारायणको भी अपने मनमें स्मरण किया। बस, तत्क्षण भगवान् नारायण—ब्रह्मा एवं रुद्र—इन दोनों देवताओंके बीचमें विराजमान हो गये। अब ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्र—ये तीनों ही परस्पर प्रेमपूर्वक दृष्टिसे देखने लगे। उस समय उन तीनोंकी जो तीन प्रकारकी दृष्टियाँ थीं, अब एकरूपमें परिणत हो गयीं और इससे तत्काल एक कन्याका प्रादुर्भाव हुआ, जिसका स्वरूप परम दिव्य था। उसके अङ्ग नीले कमलके समान श्यामल थे तथा उसके सिरके बाल भी नीले घुँघुराले एवं मुड़े थे। उसकी नासिका, ललाट और मुखकी सुन्दरता असीम थी। विश्वकर्माने शास्त्रोंमें जो अग्निजिह्वके अङ्ग-लक्षण बतलाये हैं, वे सभी लक्षण सुन्दर प्रतिष्ठा पानेवाली उस कुमारी कन्यामें एकत्र दिखायी देते थे। अब ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश्वर—इन तीनों देवताओंने उस दिव्य कन्याको देखकर पूछा—'शुभे! तुम कौन हो? और विज्ञानमयि! देवि! तुम क्या करना चाहती हो?' इसपर शुक्ल, कृष्ण एवं रक्त—इन तीन वर्णोंसे सुशोभित उस कन्याने कहा—'देवश्रेष्ठो! मैं तो आपलोगोंकी दृष्टिसे ही उत्पन्न हुई हूँ। क्या आपलोग अपनेसे ही उत्पन्न अपनी पारमेश्वरी शक्ति मुझ कन्याको नहीं जानते?'

इसपर ब्रह्मा आदि तीनों देवताओंने अत्यन्त प्रसन्न होकर उस दिव्य कुमारीको वर दिया—'देवि! तुम्हारा नाम 'त्रिकला' होगा। तुम विश्वकी सर्वदा रक्षा करोगी। महाभागे! गुणोंके अनुसार तुम्हारे अन्य भी बहुत-से नाम होंगे और उन नामोंमें सम्पूर्ण कार्योंको सिद्ध करनेकी शक्ति होगी। सुन्दर मुख एवं अङ्गोंसे शोभा पानेवाली देवि! तुममें जो ये तीन वर्ण दिखायी पड़ते हैं, तुम इनसे अपनी तीन मूर्तियाँ बना लो।'

देवताओंके इस प्रकार कहनेपर उस कुमारीने अपने श्वेत, रक्त और श्यामल रंगसे युक्त तीन शरीर बना लिये। ब्रह्माके अंशसे 'ब्राह्मी' (सरस्वती) नामक मङ्गलमयी सौम्यरूपिणी शक्ति उत्पन्न हुई, जो प्रजाओंकी सृष्टि करती है। सूक्ष्म कटिभाग, सुन्दररूप तथा लाल वर्णवाली जो दूसरी कन्या थी, वह 'वैष्णवी' कहलायी। उसके हाथमें शङ्ख एवं चक्र सुशोभित हो रहे थे। वह विष्णुकी कला कही जाती है तथा अखिल विश्वका पालन करती है, जिसे विष्णुमाया भी कहते हैं। जो काले रंगसे शोभा पानेवाली रुद्रकी शक्ति थी और जिसने हाथमें त्रिशूल ले रखा था तथा जिसके दाँत बड़े विकराल थे, वह जगत्का संहार-कार्य करनेवाली 'रुद्राणी' है। ब्रह्मासे प्रकट हुई श्वेत वर्णवाली कन्या 'विभावरी' कहलाती है। उस कुमारीके नेत्र खिले हुए कमलके समान सुन्दर थे। वह ब्रह्माजीके परामर्शसे अन्तर्धान होकर सर्वज्ञता प्राप्त करनेकी अभिलाषासे श्वेतगिरिपर तपस्या करनेके लिये चली गयी और वहाँ पहुँचकर उसने तीव्र तप आरम्भ कर दिया। इधर जो कुमारी भगवान् विष्णुके अंशसे अवतरित हुई थी, वह भी अत्यन्त कठोर तपस्या करनेका संकल्प लेकर मन्दराचल पर्वतपर चली गयी। तीसरी जो श्यामलवर्णकी कन्या थी तथा जिसके नेत्र बड़े विशाल और दाढ़ भयंकर थे तथा जो रुद्रके

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

अंशसे उत्पन्न हुई थी, वह कल्याणमयी कुमारी तपस्या करनेके उद्देश्यसे 'नीलगिरि' पर चली गयी।

कुछ समयके पश्चात् प्रजापति ब्रह्माजी प्रजाओंकी सृष्टिमें तत्पर हुए, पर बहुत समयतक प्रयास करनेपर भी प्रजाकी वृद्धि नहीं हुई। अब वे मन-ही-मन सोचने लगे कि क्या कारण है कि मेरी प्रजा बढ़ नहीं रही है। (भगवान् वराह पृथ्वीसे कहते हैं) सुव्रते! अब ब्रह्माजीने योगाभ्यासके सहारे अपने हृदयमें ध्यान लगाया तो श्वेतपर्वतपर स्थित 'सृष्टि' कुमारीकी तपस्याकी बात उनकी समझमें आ गयी। उस समय तपस्याके प्रभावसे उस कन्याके सम्पूर्ण पाप दग्ध हो चुके थे। फिर तो ब्रह्माजी कमलके समान नेत्रवाली वह दिव्य कुमारी जहाँ विराजमान थी, वहाँ पहुँचकर उस तपस्विनी दिव्य कुमारीको देखा और साथ ही वे ये वचन बोले—'कमनीय कान्तिवाली कल्याणि! तुम प्रधान कार्यकी अवहेलना करके अब तपस्या क्यों कर रही हो? विशाल नेत्रोंवाली कन्यके! मैं तुमपर प्रसन्न हूँ। तुम वर माँग लो।'

'सृष्टि' देवीने कहा—'भगवन्! मैं एक स्थानपर नहीं रहना चाहती, इसलिये मैं आपसे यह वर माँगती हूँ कि मैं सर्वत्रगामिनी बन जाऊँ।' जब सृष्टिदेवीने प्रजापति ब्रह्मासे ऐसी बात कही, तब उन्होंने उससे कहा—'देवि! तुम सभी जगह जा सकोगी और सर्वव्यापिनी होगी। ब्रह्माजीके ऐसा कहते ही कमलके समान नेत्रोंवाली वह 'सृष्टि' देवी उन्हींके अङ्कमें लीन हो गयी। अब ब्रह्माजीकी सृष्टि बड़ी तेजीसे बढ़ने लगी और फिर शीघ्र ही उनके सात मानसपुत्र हुए। उन पुत्रोंसे भी अन्य संतानोंकी उत्पत्ति हुई। फिर उनसे बहुत-सी प्रजाएँ उत्पन्न हुईं। इसके बाद स्वेदज, उद्भिज्ज, जरायुज और अण्डज—इन चार प्रकारके प्राणियोंकी उत्पत्ति हुई। फिर तो चर-अचर प्राणियोंकी सृष्टिसे यह सारा विश्व ही भर गया। यह सम्पूर्ण स्थावर-जङ्गमात्मक जगत् तथा सारा वाङ्मय विश्व—इन सबकी रचनामें उस 'सृष्टि'देवीका ही हाथ है। उसीने भूत, भविष्य और वर्तमान—इन तीनों कालोंकी भी व्यवस्था की।'

[अध्याय ९०]

त्रिशक्ति-माहात्म्यमें 'सृष्टि', 'सरस्वती' तथा 'वैष्णवी' देवियोंका वर्णन

भगवान् वराह कहते हैं—सुन्दर अङ्गोंसे शोभा पानेवाली वसुंधरे! उस 'सृष्टिदेवी'का दूसरा विधान भी बहुत विस्तृत है, उसे बताता हूँ, सुनो—परमेष्ठी रुद्रके द्वारा जो वह तीन शक्तिवाली देवी बतायी गयी है, उसके प्रकरणमें सर्वप्रथम श्वेत वर्णवाली सृष्टिदेवीका प्रसङ्ग आया है। वह सम्पूर्ण अक्षरोंसे युक्त होनेपर भी 'एकाक्षरा' कहलाती है। यह देवी कहीं तो 'वागीशा' और कहीं 'सरस्वती' कही जाती है और कहीं वह 'विश्वेश्वरी' और 'अमिताक्षरा' नामसे भी प्रसिद्ध है। कुछ स्थलोंमें उसीको 'ज्ञाननिधि' अथवा 'विभावरी' देवी भी कहते हैं। अथवा वरानने! जितने भी स्त्रीवाची नाम हैं, वे सभी उसके नाम हैं, ऐसा समझना चाहिये।

विष्णुके अंशवाली 'वैष्णवी' देवीका वर्ण लाल है। उनकी आँखें बड़ी-बड़ी हैं तथा उनका रूप अत्यन्त मनोहर है। ये दोनों शक्तियाँ तथा तीसरी जो रुद्रके अंशसे अभिव्यक्त रौद्रीशक्ति है, भगवान् रुद्रको जाननेवालेके लिये एक साथ सिद्ध हो जाती है। देवी वसुंधरे! यह सर्वरूपमयी देवी एक ही है, परंतु (वह एक ही यहाँ इस प्रकार) तीन भेदोंसे निर्दिष्ट है। सुन्दरि! मैंने तुम्हारे सामने

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi
In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth

इसी सनातनी सृष्टि देवीका वर्णन किया है। स्थावर-जङ्गममय यह अखिल जगत् उस सृष्टि देवीसे ओतप्रोत है। जो यह सृष्टि देवी है, जिससे आदिकालमें अव्यक्तजन्मा ब्रह्माकी सृष्टिका सम्बन्ध हुआ था, उसकी (महिमाको जानकर) पितामह ब्रह्माने उचित शब्दोंमें (इस प्रकार) स्तुति की थी।

ब्रह्माजी बोले—देवि! तुम सत्यस्वरूपा, सदा अचल रहनेवाली, सबको आश्रय देनेमें कुशल, अविनाशी, सर्वव्यापी, सबको जन्म देनेवाली, अखिल प्राणियोंपर शासन करनेमें परम समर्थ, सर्वज्ञ, सिद्धि-बुद्धिरूपा तथा सम्पूर्ण सिद्धियोंको प्रदान करनेवाली हो। सुन्दरि! तुम्हारी जय हो! देवि! ओंकार तुम्हारा स्वरूप है, तुम उसमें सदा विराजती हो, वेदोंकी उत्पत्ति भी तुमसे ही हुई है। मनोहर मुखवाली देवि! देवता, दानव, यक्ष, गन्धर्व, राक्षस, पशु और वीरुध (वृक्ष-लता आदि)—इन सबका जन्म तुम्हारी ही कृपासे होता है। तुम्हीं विद्या, विद्येश्वरी, सिद्धा और सुरेश्वरी हो।'

भगवान् वराह कहते हैं—वसुंधरे! जो वैष्णवी देवी तपस्या करनेके लिये मन्दराचल पर्वतपर गयी थी, अब उसका वर्णन सुनो—उस देवीने कौमारव्रत धारणकर विशाल-क्षेत्रमें एकाकी रहकर कठोर तप आरम्भ किया। बहुत दिनोंतक तपस्या करनेके पश्चात् उस देवीके मनमें विक्षोभ उत्पन्न हुआ, जिससे अन्य बहुत-सी कुमारियाँ उत्पन्न हो गयीं; उनके नेत्र बड़े सुन्दर एवं बाल काले और घुँघराले थे। उनके होठ बिम्बाफलके समान लाल थे और आँखें बड़ी-बड़ी थीं और उन कन्याओंके शरीरसे दिव्य प्रकाश फैल रहा था। ऐसी करोड़ों कुमारियाँ उस वैष्णवी देवीके शरीरसे प्रकट हुई थीं, फिर उस देवीने उन कुमारियोंके लिये सैकड़ों नगर और ऊँचे महलोंका निर्माण किया। उन भवनोंके भीतर मणियोंकी सीढ़ियाँ, अनेक जलाशय एवं छोटे-छोटे सुन्दर उपवन थे। उस मन्दराचलपर स्थित उन असंख्य भवनोंमें अब वे कन्याएँ निवास करने लगीं। शोभने! उनमेंसे प्रधान-प्रधान कुछ कन्याओंके नाम इस प्रकार हैं—विद्युत्प्रभा, चन्द्रकान्ति, सूर्यकान्ति, गम्भीरा, चारुकेशी, सुजाता, मुञ्जकेशिनी, उर्वशी, शशिनी, शीलमण्डिता, चारुकन्या, विशालाक्षी, धन्या, चन्द्रप्रभा, स्वयम्प्रभा, चारुमुखी, शिवदूती, विभावरी, जया, विजया, जयन्ती और अपराजिता। इन देवियोंने भगवती वैष्णवीके अनुचरियोंका स्थान ग्रहण कर लिया। इतनेमें ब्रह्माके पुत्र तपोधन नारदजी एक दिन वहाँ अचानक आ गये। उन्हें देखकर वैष्णवीदेवीने विद्युत्प्रभासे कहा—तुम इन्हें यह आसन दो तथा पैर धोने और आचमन करनेके लिये जल भी बहुत शीघ्र इनके पास उपस्थित कर दो।

इस प्रकार वैष्णवी देवीके कहनेपर विद्युत्प्रभाने मुनिवर नारदको आसन, पाद्य और अर्घ्य निवेदन किया और वे भी देवीको नमस्कारकर आसनपर बैठ गये। अब वैष्णवीने उनसे कहा—'मुनिवर! इस समय आप किस लोकसे यहाँ पधारे हैं और आपका क्या कार्य है? नारदमुनिने कहा—'कल्याणि! मैं पहले ब्रह्मलोकमें गया था, फिर वहाँसे इन्द्रलोकमें और फिर कैलासपर्वतपर पहुँचा। देवेश्वरि! पुनः मेरे मनमें आपके दर्शनकी इच्छा हुई, अतः यहाँ आ गया। इस प्रकार कहकर श्रीमान् नारद मुनि वैष्णवी देवीकी ओर देखने लगे। नारद आश्चर्यसे चकित हो गये! उन्होंने मनमें सोचा। 'अहो! इनका रूप तो बड़ा विचित्र है। इनकी सुन्दरता, धीरता एवं कान्ति कैसी आश्चर्यकारिणी है। फिर इतनेपर भी इनकी उपरति—निष्कामता तो और ही आश्चर्यदायिनी है। यह सब देख नारदजी फिर कुछ खिन्न-से हो गये तथा सोचने लगे—'देवता,

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

गन्धर्व, सिद्ध, यक्ष, किंनर और राक्षसोंकी स्त्रियोंमें भी कोई इतना सुन्दर नहीं है। विश्वकी अन्य स्त्रियोंमें भी कहीं ऐसा रूप नहीं दीखता।

फिर नारदजी सहसा उठे और वैष्णवीदेवीको प्रणामकर आकाश मार्गद्वारा समुद्रमें स्थित महिषासुरकी राजधानीमें पहुँच गये। उसने ब्रह्माजीके वरप्रसादसे सारी देव-सेनाको पराजित कर दिया था। महिषासुरने सभी लोकोंमें विचरण करनेवाले नारदमुनिको आये देखकर बड़ी श्रद्धा-भक्तिसे पूजा की।

नारदमुनिने उस असुरसे कहा—असुरेन्द्र! सावधान होकर सुनो। विश्वमें रत्नके समान एक कन्या प्रकट हुई है। तुमने तो वरदानके प्रभावसे चर-अचर तीनों लोकोंको अपने वशमें कर लिया है। दैत्य! मैं ब्रह्मलोकसे मन्दराचलपर गया, वहाँ मैंने देवीकी वह पुरी देखी, जो सैकड़ों कन्याओंसे व्याप्त है। उनमें जो सबसे प्रधान है वैसी देवताओं, दैत्यों और यक्षोंके यहाँ भी कोई सुन्दरी कन्या नहीं दिखायी देती। कहाँतक कहूँ, मैंने उसकी जैसी सुन्दरता देखी है तथा उसमें जितना सतीत्वका प्रभाव है, ऐसी कन्या समस्त ब्रह्माण्डमें भी कभी कहीं नहीं देखी। देवता, गन्धर्व, ऋषि, सिद्ध, चारण तथा सब अन्य दैत्योंके अधिपति भी उसी कन्याकी उपासना करते हैं। पर देवताओं और गन्धर्वोंपर जो विजय प्राप्त करनेमें समर्थ न हो, ऐसा कोई भी व्यक्ति उस कन्याको जीतनेमें समर्थ नहीं है।

वसुंधरे! इस प्रकार कहकर नारद मुनि क्षणभर वहाँ ठहरकर फिर महिषासुरसे आज्ञा लेकर तुरंत वहाँसे प्रस्थित हो गये और वे जिधरसे आये थे, उधर ही आकाशकी ओर चले गये।

[अध्याय ९१-९२]

महिषासुरकी मन्त्रणा और देवासुर-संग्राम

भगवान् वराह बोले—नारदजीके चले जानेपर महिषासुर सदा चकितचित्तसे उसी कन्याका ध्यान करने लगा। अतः उसे तनिक भी कहीं चैन न था। अब उसने अपने मन्त्रिमण्डलको बुलाया। उसके आठ मन्त्री थे, जो सभी शूरवीर, नीतिमान् एवं बहुश्रुत थे। वे थे—प्रघस, विघस, शङ्कुकर्ण, विभावसु, विद्युन्माली, सुमाली, पर्जन्य और क्रूर। वे महिषासुरके पास आकर बोले कि 'हम-लोगोंके लिये जो सेवाकार्य हो, आप उसकी तुरंत आज्ञा कीजिये।' उनकी बात सुनकर दैत्योंका शासक पराक्रमी महिषासुर बोला—'नारदजीके कथनानुसार मैंने एक कन्याको पानेके लिये तुमलोगोंको यहाँ बुलाया है। मन्त्रियो! देवर्षि नारदने मुझे एक लड़कीकी बात बतायी है; किंतु देवताओंके स्वामी इन्द्रको जीते बिना उसकी प्राप्ति सम्भव नहीं है। अब आप सब लोग विचारकर शीघ्र बतायें कि वह कन्या किस प्रकार सुलभ होगी और देवता कैसे पराजित होंगे?'

महिषासुरके ऐसा कहनेपर सभी मन्त्री अपना-अपना मत बतलाने लगे। प्रघस बोला—'दैत्यवर! आपसे नारदमुनिने जिस कन्याकी बात कही है, वह महान् सती है। उसका नाम 'वैष्णवी' देवी है। उस सुन्दर रूप धारण करनेवाली देवीको पराशक्ति कहा जाता है। जो गुरुकी पत्नी, राजाकी रानी तथा सामन्त, मन्त्री या सेनापतिकी स्त्रियोंके अपहरणकी इच्छा करता है, वह राजा शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। प्रघसके इस प्रकार कहनेपर विघसने कहा—'राजन्! उस देवीके विषयमें प्रघसने सत्य बात ही बतलायी है। यदि सब लोगोंका एक मत हो जाय और बुद्धि इस बातका समर्थन करे तो सर्वप्रथम

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

हमें उस कन्याका वरण ही करना चाहिये। परंतु स्वच्छन्दतापूर्वक उसका बलात् अपहरण या अपकर्षण कदापि ठीक नहीं है। मन्त्रिवरो! यदि मेरी बात आपलोगोंको रुचे तो हम सभी मन्त्री उस देवीके पास चलकर प्रार्थना करें। पहले साम-नीतिसे ही काम लेना चाहिये। यदि इससे काम न बने तो हमलोगोंको दानका आश्रय लेना चाहिये। इतनेपर भी काम न बने तो भेद-नीतिका सहारा लिया जाय और यदि इतनेपर भी काम न बने, तो अन्तमें दण्डका प्रयोग करना चाहिये। इस क्रमसे नीतियोंका प्रयोग करनेपर भी यदि वह कन्या न मिल सके तो हम सभी लोग अपने अस्त्र-शस्त्रोंसे सुसज्जित होकर चलें और फिर बलपूर्वक उसे देवताओंसे छीन लें।

विघसके इस प्रकार कहनेपर अन्य मन्त्री बोले, उस सुन्दरी कन्याके विषयमें विघसने जो बात कही है, वह बहुत ही युक्त है। हमलोग यथाशीघ्र वही करें। अब शास्त्रोंके जानकार, नीतिज्ञ, पवित्र और शक्तिसम्पन्न एक दूतको वहाँ भेज दिया जाय। दूतके द्वारा उसके रूप, पराक्रम, शौर्य-गर्व, बल, बन्धुओंके सहयोग, सामग्री, रहनेके साधन आदिकी जानकारी प्राप्तकर उस देवीको प्राप्त करनेके लिये प्रयत्न करना चाहिये।

जब विघसने सभामें यह बात कही तो सब लोग उसे 'साधु-साधु' (बहुत ठीक) कहने लगे। सुन्दरि! तदनन्तर सभी मन्त्रियोंने मन्त्रिश्रेष्ठ विघसकी प्रशंसा की और साथ ही उस देवीको देखनेके लिये सभी लक्षणोंसे युक्त 'विद्युत्प्रभनामक' दूतको भेजा। इधर महिषासुरके मन्त्रियोंने मन्त्रिमण्डलकी पुनः बैठक बुलायी और परस्पर परामर्शकर उसे उस कन्याको शीघ्र प्राप्त करनेके लिये देवताओंपर आक्रमणकर विजय प्राप्त करनेकी सलाह दी। महिषकी सेनामें उस समय नौ पद्मकी संख्यामें असुर योद्धा थे। उसने अपने सेनापति विरुपाक्षको ससैन्य युद्धके लिये प्रस्थान करनेकी आज्ञा दी।

भगवान् वराह कहते हैं—वसुंधरे! इस सारी सेनाके साथ इच्छानुसार रूप धारण करनेवाला महान् पराक्रमी महिषासुर हाथीपर सवार होकर मन्दराचल पर्वतपर पहुँचा। उसके वहाँ पहुँचते ही देवसमुदायमें भगदड़ मच गयी। सभी असुरसैनिकोंने अपने-अपने शस्त्रों और वाहनोंके साथ गम्भीर गर्जना करते हुए देवताओंपर आक्रमण कर दिया। उनका तुमुल युद्ध देखकर रोंगटे खड़े हो जाते थे। अञ्जनके समान काले नीलकुक्षि, मेघवर्ण, बलाहक, उदाराक्ष, ललाटाक्ष, सुभीम, भीमविक्रम और स्वर्भानु—इन आठ दैत्योंने मोर्चेपर वसुओंको मारना आरम्भ किया। इधर ध्वाङ्क्ष, ध्वस्तकर्ण, शङ्कुकर्ण, वज्रके समान कठोर अङ्गों-वाला ज्योतिर्वीर्य, विद्युन्माली, रक्ताक्ष, भीमदंष्ट्र, विद्युज्जिह्व, अतिकाय, महाकाय, दीर्घबाहु और कृतकान्त—ये प्रधान गिने जानेवाले बारह दैत्य युद्ध-भूमिमें आदित्योंकी ओर दौड़े। काल, कृतान्त, रक्ताक्ष, हरण, मृगहा, नल, यज्ञहा, ब्रह्महा, गोघ्न, स्त्रीघ्न और संवर्तक—इन ग्यारह दैत्योंने रुद्रोंपर चढ़ाई कर दी। महिषासुर भी उन देवताओंकी ओर बड़े वेगसे दौड़ा। इस प्रकार आदित्यों, वसुओं और रुद्रोंके साथ अगणित संख्यामें असुर और राक्षस लड़ने लगे। उस युद्धभूमिमें असुरोंके द्वारा देवताओंके सैनिक बड़े परिमाणमें नष्ट हो गये। अन्तमें देवताओंकी सेना भग्न हो गयी और इन्द्र तथा सम्पूर्ण देवता उस युद्ध-भूमिमें ठहर न सके। दानवोंने उन्हें अनेक प्रकारके शस्त्रों, शूलों, पट्टिशों और मुद्गरोंसे अर्दित कर दिया था। अन्तमें दानवोंसे पीड़ित होकर ये सभी देवता ब्रह्माजीके लोकमें गये। [अध्याय ९३-९४]

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

महिषासुरका वध

भगवान् वराह बोले—वसुधे! अब इधर विद्युत्प्रभ नामक दैत्य भी महिषासुरको प्रणामकर चला और उसके दूतके रूपमें भगवती वैष्णवीके पास पहुँचा, जहाँ वे सैकड़ों अन्य कुमारियोंके साथ बैठी थीं। फिर बिना किसी शिष्टाचारके ही उसने उनसे इस प्रकार कहना आरम्भ किया।

विद्युत्प्रभ बोला—''देवि! पूर्व समयकी बात है—सृष्टिके प्रारम्भमें सुपार्श्व नामक एक अत्यन्त ज्ञानी ऋषि थे। उनका जन्म सरस्वती-नदीके तटवर्ती देशमें हुआ था। सिन्धुद्वीप नामसे प्रसिद्ध उनके मित्र भी उन्हींके समान तेजस्वी एवं प्रतापी थे। माहिष्मती नामकी उत्तम पुरीमें उन्होंने निराहारका नियम लेकर कठिन तपस्या प्रारम्भ कर दी। विप्रचित्ति नामक दैत्यकी माहिष्मती नामकी कन्या बड़ी ही सुन्दरी थी। एक बार वह सखियोंके साथ घूमती हुई पर्वतकी उपत्यकामें गयी; जहाँ उसे एक तपोवन दिखायी पड़ा। उस तपोवनके स्वामी एक ऋषि थे। जो मौनव्रत धारणकर तपस्या कर रहे थे। उन महात्माका वह पवित्र आश्रम रम्य वनखण्डोंके कारण अत्यन्त मनोहर जान पड़ता था। जब विप्रचित्तिकुमारी माहिष्मतीने उसे देखा तो वह सोचने लगी—'मैं इस तपस्वीको भयभीत कर क्यों न स्वयं इस आश्रममें रहूँ और सखियोंके साथ आनन्दसे विहार करूँ।'

''ऐसा सोचकर उस दानवकन्या माहिष्मतीने अपना रूप एक भैंसका बनाया। उसके सिरपर अत्यन्त तीक्ष्ण सींग सुशोभित हो रहे थे। विश्वेश्वरि! वह राक्षसी अपनी सखियोंको साथ लेकर सुपार्श्व ऋषिके पास पहुँची। फिर तो सुन्दर मुखवाली उस दैत्यकन्याने सखियोंसहित वहाँ पहुँचकर ऋषिको डराना आरम्भ कर दिया। एक बार तो वे ऋषि अवश्य डर गये, पर पीछे उन्होंने ज्ञाननेत्रसे देखा तो बात उनकी समझमें आ गयी कि यह सुन्दर नेत्रवाली (भैंस नहीं) कोई राक्षसी है। अतः मुनिने क्रोधमें आकर उसे शाप दे दिया—'दुष्टे! तू भैंसका वेष बनाकर जो मुझे डरानेका प्रयास कर रही है, इसके फलस्वरूप तुझे सौ वर्षोंतक भैंसके रूपमें ही रहना पड़ेगा।'

''ऋषिके इस प्रकार कहनेपर दानवकन्या माहिष्मती काँप उठी और उनके पैरोंपर गिरकर रोती हुई कहने लगी—'मुने! आप कृपया अपने इस शापको समाप्त कर दें। माहिष्मतीकी प्रार्थनापर दयालु मुनिने उसके शापके अन्तका समय बता दिया और उससे कहा—'भद्रे! इस भैंसके रूपसे ही तुम एक पुत्र उत्पन्नकर शापसे मुक्त हो जाओगी, मेरी बात सर्वथा असत्य नहीं हो सकती।'

''ऋषिके यों कहनेपर माहिष्मती नर्मदानदीके तटपर गयी, जहाँ तपस्वी सिन्धुद्वीप तपस्या कर रहे थे। वहीं कुछ समय पूर्व एक दैत्यकन्या इन्दुमती जलमें नंगे स्नान कर रही थी। उसका रूप अत्यन्त मनोहर था। उसपर दृष्टि पड़ते ही मुनिका रेत शिलाखण्डपर स्खलित हो गया, जो एक सोते-से होकर नर्मदामें आया। अब माहिष्मतीकी दृष्टि उसपर पड़ी। उसने अपनी सखियोंसे कहा—'मैं यह स्वादिष्ठ जल पीना चाहती हूँ।' और ऐसा कहकर वह उस रेतको पी गयी, जिससे उसे गर्भ रह गया। समयानुसार उससे एक पुत्रकी उत्पत्ति हुई, जो बड़ा पराक्रमी, प्रतापी और बुद्धिमान् हुआ और वही 'महिषासुर' नामसे प्रसिद्ध हुआ है। देवि! देवताओंके सैनिकोंको रौंदनेवाला वही महिष आपका वरण कर रहा है। अनघे! वह महान् असुर युद्धभूमिमें देवसमुदायको भी परास्त कर चुका है। अब वह सारी त्रिलोकीको जीतकर आपको सौंप देगा।

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

अतः आप भी उसका वरण करें।''

दूतके ऐसा कहनेपर भगवती वैष्णवीदेवी बड़े जोरोंसे हँस पड़ीं। उनके हँसते समय उस दूतको देवीके उदरमें चर और अचरसहित तीनों लोक दीखने लगे। वह उसी क्षण आश्चर्यसे घबराकर मानो चक्कर खाने लगा। अब उस दूतके उत्तरमें देवीकी प्रतिहारिणी (द्वारपालिका)-ने, जिसका नाम जया था, भगवती वैष्णवीके हृदयकी बात कहना प्रारम्भ किया।

जया बोली—'कन्याको प्राप्त करनेकी इच्छा करनेवाले महिषने तुझसे जैसा कहा है, तुमने वैसी ही बात यहाँ आकर कही है। किंतु समस्या यह है कि इस वैष्णवीदेवीने सदाके लिये 'कौमार-व्रत' धारण कर रखा है। यहाँ इस देवीकी अनुगामिनी अन्य भी बहुत-सी वैसी ही कुमारियाँ हैं। उनमेंसे एक भी कुमारी तुम्हें लभ्य नहीं है। फिर स्वयं भगवती वैष्णवीके पानेकी तो कल्पना ही व्यर्थ है। दूत! तुम बहुत शीघ्र यहाँसे चले जाओ। तुम्हारी दूसरी कोई बात यहाँ नहीं हो सकेगी।'

इस प्रकार प्रतिहारिणीके कहनेपर विद्युत्प्रभ वहाँसे चला गया। इतनेमें ही परम तपस्वी मुनिवर नारदजी उच्च स्वरसे वीणाकी तान छेड़ते हुए आकाशमार्गसे वहाँ पहुँचे। उन मुनिने 'अहोभाग्य! अहोभाग्य!' कहते हुए उन कुमारीको प्रणाम किया और देवीद्वारा पूजित होकर वे सुन्दर आसनपर बैठ गये। फिर सम्पूर्ण देवियोंको प्रणामकर वे कहने लगे—'देवि! देवसमुदायने बड़े आदरसे मुझे आपके पास भेजा है; क्योंकि महिषासुरने संग्राममें उन्हें परास्त कर दिया है। देवि! यही नहीं, वह दैत्यराज आपको पानेके लिये भी प्रयत्नशील है। वरानने! देवताओंकी यह बात आपको बताने आया हूँ। देवेश्वरि! आप डटकर उस दैत्यसे युद्ध करें तथा उसे मार डालें।'

भगवती वैष्णवीसे यों कहकर नारदजी तुरंत अन्तर्धान हो गये। वे इच्छानुसार वहाँसे कहीं अन्यत्र चले गये। अब देवीने सभी कन्याओंसे कहा—'तुम सभी अस्त्र-शस्त्रसे सुसज्जित हो जाओ'। तब वे समस्त परम पराक्रमी कन्याएँ देवीकी आज्ञासे भयंकर आकार धारणकर ढाल, तलवार और धनुष आदि शस्त्रास्त्रोंसे सुसज्ज हो दैत्योंका संहार करने तथा युद्ध करनेके विचारसे डट गयीं। इतनेमें ही महिषासुरकी सेना भी देवसेनाको छोड़कर वहीं आ गयी। फिर क्या था, उन स्वाभिमानिनी कन्याओं तथा दानवोंमें युद्ध छिड़ गया। उन कन्याओंके प्रयाससे असुरोंकी वह चतुरङ्गिणी सेना क्षणभरमें समाप्त हो गयी। कितनोंके सिर कटकर पृथ्वीपर गिर पड़े। अन्य बहुत-से दैत्योंकी छाती चीरकर क्रव्यादगण रक्त पीने लगे। अनेक प्रधान दानवोंके मस्तक कट गये और वे कबन्धरूपमें नृत्य करने लग गये। इस प्रकार एक ही क्षणमें पापबुद्धिवाले वे असुर युद्धभूमिसे भाग चले। कुछ दूसरे दैत्य भागते हुए महिषासुरके पास पहुँचे। निशाचरोंकी उस विशाल सेनामें हाहाकार मच गया, उनकी ऐसी व्याकुलता देखकर महिषासुरने सेनापतिसे कहा—'सेनापते! यह क्या? मेरे सामने ही सेनाका ऐसा संहार?' तब हाथीके समान आकृतिवाले 'यज्ञहनु' (विरुपाक्ष)-ने महिषासुरसे कहा—'स्वामिन्! इन कुमारियोंने ही चारों ओरसे हमारे सैनिकोंको भगा दिया है।'

अब क्या था? महिषासुर हाथमें गदा लेकर उधर दौड़ पड़ा, जहाँ देवताओं एवं गन्धर्वोंसे सुपूजित भगवती वैष्णवी विराजमान थीं। उसे आते देखकर भगवती वैष्णवीने अपनी बीस भुजाएँ बना लीं और उनके बीसों हाथोंमें क्रमशः

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

धनुष, ढाल, तलवार, शक्ति, वाण, फरसा, वज्र, शङ्ख, त्रिशूल, गदा, मूसल, चक्र, बरछा, दण्ड, पाश, ध्वज, घण्टा, पानपात्र, अक्षमाला एवं कमल—ये आयुध विराजमान हो गये। उन देवीने कवच भी धारण कर लिया और सिंहपर सवार हो गयीं। फिर उन्होंने देवाधिदेव, प्रलयंकर भगवान् रुद्रको स्मरण किया। स्मरण करते ही साक्षात् वृषध्वज वहाँ तत्क्षण पहुँच गये। उन्हें प्रणामकर देवीने सूचित किया—'देवेश्वर! मैं सम्पूर्ण दैत्योंपर विजय प्राप्त करना चाहती हूँ। सनातन प्रभो! बस, आप केवल यहाँ उपस्थित रहकर (रण-क्रीडा) देखते रहें।'

यों कहकर भगवती परमेश्वरी सारी आसुरी सेनाका संहारकर महिषकी ओर दौड़ीं। महिष भी अब उनपर बड़े वेगसे टूट पड़ा। वह दानवराज कभी लड़ता, कभी भागता और कभी पुनः मोर्चेपर डट जाता। शोभने! उस दानवका देवीके साथ देवताओंके वर्षसे दस हजार वर्षोंतक यह संग्राम चलता रहा। अन्तमें वह डरकर सारे ब्रह्माण्डमें भागने लगा। फिर देवीने शतशृङ्गपर्वतपर* उसे पैरोंसे दबाकर शूलद्वारा मार डाला और तलवारद्वारा उसका सिर काटकर धड़से अलग कर दिया। महिषासुरका जीव शरीरसे निकलकर देवीके शस्त्र-निपातके प्रभावसे स्वर्गमें चला गया। उस अजेय असुरको पराजित देखकर ब्रह्माजीसहित सम्पूर्ण देवता देवीकी इस प्रकार स्तुति करने लगे।

देवताओंने स्तुति की—महान् ऐश्वर्योंसे सुसम्पन्न देवि! गम्भीरा, भीमदर्शना, जयस्था, स्थितिसिद्धान्ता, त्रिनेत्रा, विश्वतोमुखी, जया, जाप्या, महिषासुरमर्दिनी, सर्वगा, सर्वा, देवेशी, विश्वरूपिणी, वैष्णवी, वीतशोका, ध्रुवा, पद्मपत्रशुभेक्षणा, शुद्ध-सत्त्व-व्रतस्था, चण्डरूपा, विभावरी, ऋद्धि-सिद्धिप्रदा, विद्या, अविद्या, अमृता, शिवा, शाङ्करी, वैष्णवी, ब्राह्मी, सर्वदेवनमस्कृता, घण्टाहस्ता, त्रिशूलास्त्रा, उग्ररूपा, विरूपाक्षी, महामाया और अमृतस्रवा—इन विशिष्ट नामोंसे युक्त हम आपकी उपासना करते हैं। आप परम पुण्यमयी देवीके लिये हमारा निरन्तर नमस्कार है। ध्रुवस्वरूपा देवि! आप सम्पूर्ण प्राणियोंकी हितचिन्तिका हैं। अखिल प्राणी आपके ही रूप हैं। विद्याओं, पुराणों और शिल्पशास्त्रोंकी आप ही जननी हैं। समस्त संसार आपपर ही अवलम्बित है। अम्बिके! सम्पूर्ण वेदोंके रहस्यों और सभी देहधारियोंके केवल आप ही शरण हैं। शुभे! आपको सामान्य जनता विद्या एवं अविद्या नामसे पुकारती है। आपके लिये हमारा निरन्तर शतशः नमस्कार है। परमेश्वरि! आप विरूपाक्षी, क्षान्ति, क्षोभितान्तर्जला और अमला नामसे भी विख्यात हैं। महादेवि! हम आपको बारंबार नमस्कार करते हैं। भगवती परमेश्वरि! रणसंकटके उपस्थित होनेपर जो आपकी शरण लेते हैं, उन भक्तोंके सामने किसी प्रकारका अशुभ नहीं आता। देवि! सिंह-व्याघ्रके भय, चोर-भय, राज-भय, या अन्य घोर भयके उपस्थित होनेपर जो पुरुष मनको सावधानकर इस स्तोत्रका सदा पाठ करेगा, वह इन सभी संकटोंसे छूट जायगा। देवि! कारागारमें पड़ा हुआ मानव भी यदि आपका स्मरण करेगा तो बन्धनोंसे उसकी मुक्ति हो जायगी और वह आनन्दपूर्वक सुखसे स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करेगा।

---

*यह हिमालयका पुत्र कहा जाता है। पाण्डवोंका जन्म यहीं हुआ था। (महाभा० १।१२२-२३) यहाँ (वैष्णवीदेवी जम्मूसे ४५ मील)-पर सिद्धि शीघ्र मिलती है। 'हरिविलास' तथा 'वैद्य-जीवन' के रचयिता घटिकाशतककर्ता लोलिम्बराज इन्हीं देवीके उपासक थे।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भगवान् वराह कहते हैं—सुन्दरी पृथ्वि! इस प्रकार देवताओंद्वारा स्तुति-नमस्कार किये जानेपर भगवती वैष्णवीने उनसे कहा—'देवतागण! आपलोग कोई उत्तम वर माँग लें।'

देवता बोले—पुण्यस्वरूपिणी देवि! आपके इस स्तोत्रका जो पुरुष पाठ करेंगे, उनकी आप सम्पूर्ण कामनाएँ पूर्ण करनेकी कृपा करें। यही हमारा अभिलषित वर है। इसपर सर्वदेवमयी देवीने उन देवताओंसे 'एवमस्तु' कहकर वहाँसे उनको विदा कर दिया और स्वयं वहीं विराजमान रहीं। धराधरे! यह देवीके दूसरे स्वरूपका वर्णन हुआ। जो इसे जान लेता है, वह शोक-दुःख एवं दोषोंसे मुक्त होकर भगवतीके अनामयपदको प्राप्त करता है। [अध्याय ९५]

त्रिशक्तिमाहात्म्यमें रौद्रीव्रत

भगवान् वराह कहते हैं—वसुंधरे! जो रौद्रीशक्ति मनमें तपस्याका निश्चयकर 'नीलगिरि'पर गयी थीं और जिनका प्राकट्य रुद्रकी तमःशक्तिसे हुआ था, अब उनके व्रतकी बात सुनो। अखिल जगत्की रक्षाके निश्चयसे वे दीर्घकालतक तपस्याके साधनमें लगी रहीं और पञ्चाग्नि-सेवनका नियम बना लिया। इस प्रकार उन देवीके तपस्या करते हुए कुछ समय बीत जानेपर 'रुरु' नामक एक असुर उत्पन्न हुआ। जो महान् तेजस्वी था। उसे ब्रह्माजीका वर भी प्राप्त था। समुद्रके मध्यमें वनोंसे घिरी 'रत्नपुरी' उसकी राजधानी थी। सम्पूर्ण देवताओंको आतङ्कितकर वह दानवराज वहीं रहकर राज्य करता था। करोड़ों असुर उसके सहचर थे, जो एक-से-एक बढ़-चढ़कर थे। उस समय ऐश्वर्यसे युक्त वह 'रुरु' ऐसा जान पड़ता था, मानो दूसरा इन्द्र ही हो। बहुत समय व्यतीत हो जानेके पश्चात् उसके मनमें लोकपालोंपर विजय प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न हुई। देवताओंके साथ युद्ध करनेमें उसकी स्वाभाविक रुचि थी, अतः एक विशाल सेनाका संग्रहकर जब वह महान् असुर रुरु युद्ध करनेके विचारसे समुद्रसे बाहर निकला, तब उसका जल बहुत जोरोंसे ऊपर उछलने लगा और उसमें रहनेवाले नक्र, घड़ियाल तथा मत्स्य घबड़ा गये। वेलाचलके पार्श्ववर्ती सभी देश उस जलसे आप्लावित हो उठे। समुद्रका अगाध जल चारों ओर फैल गया और सहसा उसके भीतरसे अनेक असुर विचित्र कवच तथा आयुधसे सुसज्जित होकर बाहर निकल पड़े एवं युद्धके लिये आगे बढ़े। ऊँचे हाथियों तथा अश्व-रथ आदिपर सवार होकर वे असुर-सैनिक युद्धके लिये आगे बढ़े। उनके लाखों एवं करोड़ोंकी संख्यामें पदाति सैनिक भी युद्धके लिये निकल पड़े।

शोभने! रुरुकी सेनाके रथ सूर्यके रथके समान थे और उनपर यन्त्रयुक्त शस्त्र सुसज्ज थे। ऐसे असंख्य रथोंपर उसके अनुगामी दैत्य हस्तत्राणसे सुरक्षित होकर चल पड़े। इन असुर-सैनिकोंने देवताओंके सैनिकोंकी शक्ति कुण्ठित कर दी और वह अपनी चतुरङ्गिणी सेना लेकर इन्द्रकी नगरी अमरावतीपुरीके लिये चल पड़ा। वहाँ पहुँचकर दानवराजने देवताओंके साथ युद्ध आरम्भ कर दिया और वह उनपर मुद्गरों, मुसलों, भयंकर वाणों और दण्ड आदि आयुधोंसे प्रहार करने लगा। इस युद्धमें इन्द्रसहित सभी देवता उस समय अधिक देरतक टिक न सके और वे आहत हो मुँह पीछेकर भाग चले। उनका सारा उत्साह समाप्त हो गया तथा हृदय आतङ्कसे भर गया। अब वे भागते हुए उसी नीलगिरि पर्वतपर

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

पहुँचे, जहाँ भगवती रौद्री तपस्यामें संलग्न होकर स्थित थीं। देवीने देवताओंको देखकर उच्च स्वरसे कहा—'भय मत करो।'

देवी बोलीं—देवतागण! आपलोग इस प्रकार भीत एवं व्याकुल क्यों हैं? यह मुझे तुरंत बतलाएँ।

देवताओंने कहा—'परमेश्वरि! इधर देखिये! यह 'रुरु' नामक महान् पराक्रमी दैत्यराज चला आ रहा है। इससे हम सभी देवता त्रस्त हो गये हैं, आप हमारी रक्षा कीजिये।' यह देखकर देवी अट्टहासके साथ हँस पड़ीं। देवीके हँसते ही उनके मुखसे बहुत-सी अन्य देवियाँ प्रकट हो गयीं, जिनसे मानो सारा विश्व भर गया। वे विकृत रूप एवं अस्त्र-शस्त्रसे सुसज्जित थीं और अपने हाथोंमें पाश, अङ्कुश, त्रिशूल तथा धनुष धारण किये हुए थीं। वे सभी देवियाँ करोड़ोंकी संख्यामें थीं तथा भगवती तामसीको चारों ओरसे घेरकर खड़ी हो गयीं। वे सब दानवोंके साथ युद्ध करने लगीं और तत्काल असुरोंके सभी सैनिकोंका क्षणभरमें सफाया कर दिया। देवता अब पुनः लड़ने लग गये थे। कालरात्रिकी सेना तथा देवताओंकी सेना अब नयी शक्तिसे सम्पन्न होकर दैत्योंसे लड़ने लगी और उन सभीने समस्त दानवोंके सैनिकोंको यमलोक भेज दिया। बस, अब उस महान् युद्धभूमिमें केवल महादैत्य 'रुरु' ही बच रहा था। वह बड़ा मायावी था। अब उसने 'रौरवी' नामक भयंकर मायाकी रचना की, जिससे सम्पूर्ण देवता मोहित होकर नींदमें सो गये। अन्तमें देवीने उस युद्ध-स्थलपर त्रिशूलसे दानवको मार डाला। शुभलोचने! देवीके द्वारा आहत हो जानेपर 'रुरु'-दैत्यके चर्म (धड़) और मुण्ड—अलग-अलग हो गये। दानवराज 'रुरु'के चर्म और मुण्ड जिस समय पृथक् हुए, उसी क्षण देवीने उन्हें उठा लिया, अतः वे 'चामुण्डा' कहलाने लगीं। वे ही भगवती महारौद्री, परमेश्वरी, संहारिणी और 'कालरात्रि' कही जाती हैं। उनकी अनुचरी देवियाँ करोड़ोंकी संख्यामें बहुत-सी हैं। युद्धके अन्तमें उन अनुगामिनी देवियोंने इन महान् ऐश्वर्यशालिनी देवीको सब ओरसे घेर लिया और वे भगवती रौद्रीसे कहने लगीं—'हम भूखसे घबड़ा गयी हैं। कल्याणस्वरूपिणि देवि! आप हमें भोजन देनेकी कृपा कीजिये।'

इस प्रकार उन देवियोंके प्रार्थना करनेपर जब रौद्री देवीके ध्यानमें कोई बात न आयी, तब उन्होंने देवाधिदेव पशुपति भगवान् रुद्रका स्मरण किया। उनके ध्यान करते ही पिनाकपाणि परमात्मा रुद्र वहाँ प्रकट हो गये। वे बोले—'देवि! कहो! तुम्हारा क्या कार्य है?'

देवीने कहा—देवेश! आप इन उपस्थित देवियोंके लिये भोजनकी कुछ सामग्री देनेकी कृपा करें; अन्यथा ये बलपूर्वक मुझे ही खा जायँगी।

रुद्रने कहा—देवेश्वरि! महाप्रभे! इनके खानेयोग्य वस्तु वह है—जो गर्भवती स्त्री दूसरी स्त्रीके पहने हुए वस्त्रको पहनकर अथवा विशेष करके दूसरे पुरुषका स्पर्शकर पाकका निर्माण करती है, वह इन देवियोंके लिये भोजनकी सामग्री है। अज्ञानी व्यक्तियोंद्वारा दिया हुआ बलिभाग भी ये देवियाँ ग्रहण करें और उसे पाकर सौ वर्षोंके लिये सर्वथा तृप्त हो जायँ। अन्य कुछ देवियाँ प्रसव-गृहमें छिद्रका अन्वेषण करें। वहाँ लोग उनकी पूजा करेंगे। देवेशि! उस स्थानपर उनका निवास होगा। गृह, क्षेत्र, तडागों, वापियों और उद्यानोंमें जाकर निरन्तर रोती हुई जो स्त्रियाँ मनमारे बैठी रहेंगी, उनके शरीरमें प्रवेशकर कुछ देवियाँ तृप्ति लाभ कर सकेंगी।

फिर भगवान् शंकरने इधर जब रुरुको मरा हुआ देखा, तब वे देवीकी इस प्रकार स्तुति करने लगे।

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth

भगवान् रुद्र बोले—देवि! आपकी जय हो। चामुण्डे! भगवती भूतापहारिणि एवं सर्वगते परमेश्वरि! आपकी जय हो। देवि! आप त्रिलोचना, भीमरूपा, वेद्या, महामाया, महोदया, मनोजवा, जया, जृम्भा, भीमाक्षी, क्षुभिताशया, महामारी, विचित्राङ्गा, नृत्यप्रिया, विकराला, महाकाली, कालिका, पापहारिणी, पाशहस्ता, दण्डहस्ता, भयानका, चामुण्डा, ज्वलमानास्या, तीक्ष्णदंष्ट्रा, महाबला, शतयानस्थिता, प्रेतासनगता, भीषणा, सर्वभूतभयंकरी, कराला, विकराला, महाकाला, करालिनी, काली, कराली, विक्रान्ता और कालरात्रि—इन नामोंसे प्रसिद्ध हैं; आपके लिये मेरा बारंबार नमस्कार है। परमेष्ठी रुद्रने जब इस प्रकार देवीकी स्तुति की तब वे भगवती परम संतुष्ट हो गयीं। साथ ही उन्होंने कहा—'देवेश! जो आपके मनमें हो, वह वर माँग लें।'

रुद्र बोले—"वरानने! यदि आप प्रसन्न हैं तो इस स्तुतिके द्वारा जो व्यक्ति आपका स्तवन करें, देवि! आप उन्हें वर देनेकी कृपा करें। इस स्तुतिका नाम' 'त्रिप्रकार' होगा। जो भक्तिके साथ इसका पाठ करेगा, वह पुत्र, पौत्र, पशु और समृद्धसे सम्पन्न हो जायगा। तीन शक्तियोंसे सम्बद्ध इस स्तुतिको जो श्रद्धा भक्तिके साथ सुने, उसके सम्पूर्ण पाप विलीन हो जायँ और वह व्यक्ति अविनाशी पदका अधिकारी हो जाय।"

ऐसा कहकर भगवान् रुद्र अन्तर्धान हो गये। देवता भी स्वर्गको पधारे। वसुंधरे! देवीकी तीन प्रकारकी उत्पत्ति युक्त 'त्रिशक्ति-माहात्म्य'का यह प्रसङ्ग बहुत श्रेष्ठ है। अपने राज्यसे च्युत राजा यदि पवित्रतापूर्वक इन्द्रियोंको वशमें करके अष्टमी, नवमी और चतुर्दशीके दिन उपवासकर इसका श्रवण करेगा तो उसे एक वर्षमें अपना निष्कण्टक राज्य पुनः प्राप्त हो जायगा। न्यायसिद्धान्तके द्वारा ज्ञात होनेवाली पृथ्वी देवि! यह मैंने तुमसे 'त्रिशक्ति-सिद्धान्त'की बात बतलायी। इनमें सात्त्विकी एवं श्वेत वर्णवाली 'सृष्टि' देवीका सम्बन्ध ब्रह्मासे है। ऐसे ही वैष्णवी शक्तिका सम्बन्ध भगवान् विष्णुसे है। रौद्रीदेवी कृष्ण-वर्णसे युक्त एवं तमःसम्पन्न शिवकी शक्ति हैं। जो पुरुष स्वस्थचित्त होकर नवमी तिथिके दिन इसका श्रवण करेगा, उसे अतुल राज्यकी प्राप्ति होगी तथा वह सभी भयोंसे छूट जायगा। जिसके घरपर लिखा हुआ यह प्रसङ्ग रहता है, उसके घरमें भयंकर अग्निभय, सर्पभय, चोरभय और राज्य आदिसे उत्पन्न भय नहीं होते। जो विद्वान् पुरुष पुस्तकरूपमें इस प्रसङ्गको लिखकर भक्तिके साथ इसकी पूजा करेगा, उसके द्वारा चर और अचर तीनों लोक सुपूजित हो जायँगे। उसके यहाँ बहुत-से पशु, पुत्र, धन-धान्य एवं उत्तम स्त्रियाँ प्राप्त हो जायँगी। यह स्तुति जिसके घरपर रहती है, उसके यहाँ प्रचुर रत्न, घोड़े, गौएँ, दास और दासियाँ—आदि सम्पत्तियाँ अवश्य प्राप्त हो जाती हैं।

भगवान् वराह कहते हैं—भूतधारिणि! यह रुद्रका माहात्म्य कहा गया है। मैंने पूर्णरूपसे तुम्हारे सामने इसका वर्णन कर दिया। चामुण्डाकी समग्र शक्तियोंकी संख्या नौ करोड़ है। वे पृथक्-पृथक् रूपसे स्थित हैं। इस प्रकार जो रुद्रसे सम्बन्ध रखनेवाली यह 'तामसी शक्ति चामुण्डा' कही गयी उसका तथा वैष्णवी शक्तिके सम्मिलित भेद अठारह करोड़ है। इन सभी शक्तियोंके अध्यक्ष सर्वत्र विचरण करनेवाले भगवान् परमात्मा रुद्र ही हैं। जितनी ये शक्तियाँ हैं, रुद्र भी उतने ही हैं। महाभाग! जो इन शक्तियोंकी आराधना करता है, उसपर भगवान् रुद्र संतुष्ट होते हैं और वे साधककी मनःकल्पित सारी कामनाएँ सिद्ध कर देते हैं। [अध्याय ९६]

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

रुद्रके माहात्म्यका वर्णन

भगवान् वराह कहते हैं—'सुमुखि पृथ्वि! अब तुम रुद्रके व्रतकी उत्पत्तिका प्रसङ्ग सुनो, जिसे जानकर प्राणी पापोंसे मुक्त हो जाता है। जिस समय ब्रह्माजीने पूर्वकालमें रुद्रका सृजन किया, उस समय उन रुद्रकी विभु, पिङ्गाक्ष और फिर तीसरी बार नीललोहित संज्ञा हुई। अव्यक्तजन्मा परमशक्तिशाली ब्रह्माने कौतूहलवश प्रकट होते ही रुद्रको कन्धेपर उठा लिया। उस अवसरपर ब्रह्माका जो जन्म-सिद्ध पाँचवाँ सिर था, उससे आथर्वणमन्त्रका उच्चारण हो रहा था, जो इस प्रकार था—

कपालिन् रुद्र बभ्रोऽथ भव कैरात सुव्रत।
पाहि विश्वं विशालाक्ष कुमार वरविक्रम॥

(९७।५)

अर्थात् 'हे सुव्रत! कपाली, बभ्रु ,भव, कैरात, विशालाक्ष, कुमार और वरविक्रम-नामधारी रुद्र, आप विश्वकी रक्षा कीजिये।' पृथ्वि! इस मन्त्रके अनुसार ये रुद्रके भविष्यके कर्मसूचक नाम थे। पर 'कपाली' शब्द सुनकर रुद्रको क्रोध आ गया, अतः ब्रह्माजीके उस पाँचवें सिरको उन्होंने अपने बायें हाथके अँगूठेके नखसे काट डाला, पर कटा हुआ वह सिर उनके हाथमें ही चिपक गया। रुद्रने ब्रह्माजीकी शरण ली और बोले।

रुद्रने कहा—उत्तम व्रतोंका पालन करनेवाले भगवन्! कृपया यह बताइये कि यह कपाल मेरे हाथसे किस प्रकार अलग हो सकेगा तथा इस पापसे मैं कैसे मुक्त होऊँगा?

ब्रह्माजी बोले—रुद्रदेव! तुम नियमपूर्वक कापालिक व्रतका अनुष्ठान करो। इसके आचरण करते रहनेपर जब अनुकूल समय आयेगा, तब स्वयं अपने ही तेजसे तुम इस कपालसे मुक्त हो जाओगे।

अव्यक्त-मूर्ति ब्रह्माजीने जब रुद्रसे इस प्रकार कहा तब महादेव पापनाशक महेन्द्रपर्वतपर चले गये। वहाँ रहकर उन्होंने उस सिरको तीन भागोंमें विभाजित कर दिया। तीन खण्ड हो जानेपर भगवान् रुद्रने उसके बालोंको भी अलग-अलग कर हाथमें लिया और उसका यज्ञोपवीत बना लिया। इस प्रकार सात द्वीपोंवाली इस पृथ्वीपर विचरते हुए वे प्रतिदिन तीर्थोंमें स्नान करते और फिर आगे बढ़ जाते थे। सर्वप्रथम उन्होंने समुद्रमें स्नान किया। इसके बाद गङ्गामें गोता लगाया। फिर वे सरस्वती, गङ्गा-यमुनाका सङ्गम, शतद्रु (सतलज), महानदी, देविका, वितस्ता, चन्द्रभागा, गोमती, सिन्धु, तुङ्गभद्रा, गोदावरी, उत्तरगण्डकी, नेपाल, रुद्रमहालय, दारुवन, केदारवन, भद्रेश्वर होते हुए पवित्र क्षेत्र गयामें पहुँचे। वहाँ फल्गु नदीमें स्नान कर उन्होंने पितरोंका तर्पण किया। इस प्रकार भगवान् रुद्र सारे विश्व-ब्रह्माण्डमें चक्कर लगाते रहे। इस प्रकार उन्हें भ्रमण करते छः वर्ष बीत गये, इसी बीच उनके परिधान, कौपीन और मेखला अलग हो गये। देवि! अब रुद्र नग्न और कापालिकरूपमें हाथमें कपाल लिये प्रत्येक तीर्थमें घूमते रहे, किंतु वह अलग न हुआ। इसके बाद वे दो वर्षोंतक भू-मण्डलके सभी पवित्र तीर्थोंमें पुनः भ्रमण करते रहे। इस प्रकार बारह वर्ष बीत गये। फिर हरिहरक्षेत्रमें जाकर उन्होंने दिव्य नदी गङ्गा एवं देवाङ्गद-कुण्डमें स्नानकर भगवान् सोमेश्वरकी विधिवत् पूजा की। फिर वे 'चक्रतीर्थ'में गये और वहाँ स्नानकर 'त्रिजलेश्वर' महादेवकी आराधना की। तत्पश्चात् अयोध्या जाकर वे फिर वाराणसी पहुँचे और गङ्गामें स्नान करने लगे। सुन्दरि! जब वे गङ्गामें स्नान कर रहे थे, उसी क्षण

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

उनके हाथसे कपाल गिर गया। वसुंधरे! तभीसे भूमण्डलपर वाराणसीपुरीमें यह उत्तम तीर्थ 'कपालमोचन' नामसे विख्यात हुआ। वहाँ मनुष्य यदि भक्तिपूर्वक स्नान करता है तो उसकी शुद्धि हो जाती है। अब ब्रह्माजी देवताओंके साथ वहाँ आये और इस प्रकार बोले।

ब्रह्माजीने कहा—विशाल नेत्रोंवाले रुद्र! अब तुम लोकमार्गमें सुव्यवस्थित होओ। हाथमें कपाल होनेसे व्यग्र-चित्त होकर तुम जो भ्रमण करते रहे, इससे तुम्हारा यह व्रत भूमण्डलपर जन-समाजमें 'नग्नकापालिक-व्रत' नामसे विख्यात होगा। तुम जो पर्वतराज हिमालयपर भ्रमण करनेमें व्यस्त रहे, इसलिये देव! वह व्रत 'वाभ्रव्य' नामसे भी प्रसिद्ध होगा। अब इस तीर्थमें जो तुम्हारी शुद्धि हुई है, इसके कारण यह व्रत शुद्ध-शैव होगा और इसमें पापप्रशमन करनेकी शक्ति भरी रहेगी। देवसमुदायने आगे करके तुम्हें जो विधानके साथ पूज्य बनाया है, उस शास्त्रविधानकी सबके लिये व्याख्या करूँगा। इसमें कुछ अन्यथा विचार नहीं है। तुम्हारे द्वारा आचरित यह 'वाभ्रव्यव्रत' एवं 'कापालिक' व्रतका जो आचरण करेगा, वह तुम्हारी कृपासे ब्रह्महत्यारा ही क्यों न हो, उस पापसे मुक्त हो जायगा। तुम जो नग्न, कपाली, पिङ्गल-वर्ण और पुनः शुद्ध-शैवव्रत पालन करते रहे, इसके कारण नग्न, कपाल, वाभ्रव्य और शुद्ध-शैवके नामसे यह व्रत प्रसिद्ध होगा। तुमने मुझे आगे करके विधिपूर्वक जिन मन्त्रोंके द्वारा पूजा की है, वे सम्पूर्ण शास्त्र 'पाशुपतशास्त्र' कहलायेंगे।

अव्यक्तमूर्ति ब्रह्माजी जिस समय रुद्रसे इस प्रकार कह रहे थे, उसी समय देवताओंने 'जय-जयकार' की ध्वनि लगायी। अब महाभाग रुद्र परम संतुष्ट होकर अपने स्थान कैलासपर चले गये। ब्रह्माजी भी देवताओंके साथ श्रेष्ठ स्वर्गलोकमें सिधारे। अन्य देवता भी जैसे आये थे, वैसे ही आकाशमार्गद्वारा अपने स्थानपर चले गये। वसुंधरे! रुद्रके इस माहात्म्यका मैंने वर्णन किया। यह जो रुद्रका चरित्र है, इससे भूमण्डलपर स्थित कोई सम्पत्ति तुलना करनेमें समर्थ नहीं है।

[अध्याय ९७]

सत्यतपाका शेष वृत्तान्त

पृथ्वी बोली—भगवन्! सत्यतपा नामक व्याध, जो पीछे ब्राह्मण हो गया था और जिसने अपनी शक्तिद्वारा बाघके भयसे आरुणि मुनिकी रक्षा की थी और जो दुर्वासाजीसे वेद-पुराण सुनकर हिमालय-पर्वतपर चला गया था, आपने उसके भविष्यमें कोई विचित्र घटना घटनेकी बात बतलायी थी। विभो! मुझे उस घटनाको जाननेकी उत्सुकता हो रही है। कृपया आप उसे बतानेकी कृपा कीजिये।

भगवान् वराह बोले—वसुंधरे! वास्तवमें बात यह है कि सत्यतपा भृगुवंशमें उत्पन्न शुद्ध ब्राह्मण ही था। उसी जन्ममें फिर उसका डाकुओंका साथ हो गया, जिसके कारण वह व्याध बन गया। बहुत दिन बीत जानेके पश्चात् 'आरुणिऋषि'का सङ्ग उसे सुलभ हुआ। अतः फिर उसमें ब्राह्मणत्व आ गया। दुर्वासाजीके द्वारा भलीभाँति उपदेश ग्रहणकर फिर वह पूर्ण ब्राह्मण बन गया। (अब आश्चर्यकी कथा आगे सुनो—)

पृथ्वीदेवि! हिमालयपर्वतके उत्तरी भागमें 'पुष्पभद्रा' नामकी एक पवित्र नदी है। उस दिव्य नदीके तीरपर 'चित्रशिला' नामसे विख्यात एक शिला है। वहीं एक विशाल वटका वृक्ष है, जो 'भद्र' नामसे प्रसिद्ध है। वहाँ रहकर सत्यतपा तप

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

करने लगे। एक दिनकी बात है, लकड़ी काटते समय कुल्हाड़ीसे उनके बायें हाथकी तर्जनी अँगुली कट गयी। वह अँगुली जड़से कटकर अलग हो गयी, तब उस कटे हुए स्थानसे भस्मका चूर्ण बिखर उठा। उस अँगुलीसे न रक्त गिरा, न मांस और न मज्जा ही दिखायी पड़ी। फिर उस ब्राह्मणने अपनी कटी हुई अँगुलीको पहले-जैसे जोड़ भी दिया और वह जुड़ भी गयी। उसी भद्रवटके वृक्षके ऊपर एक किंनरदम्पतिका निवास था, जो उस समय वृक्षके ऊपर बैठा हुआ इन सब विचित्र कार्योंको देख रहा था। इस घटनासे उनके मनमें बड़ा आश्चर्य हुआ। प्रातःकाल वह इन्द्रलोकमें पहुँचा, जहाँ यक्ष, गन्धर्व, किंनर एवं इन्द्रके साथ सभी देवता विराजमान थे। वहाँ इन्द्रने उन सबसे कहा कि आप लोग कोई अपूर्व बात हुई हो तो बतलायें। रुद्र-सरोवरपर निवास करनेवाले उस किंनरदम्पतिने कहा—'पुष्पभद्राके पवित्र तटपर मैंने एक महान् आश्चर्य देखा है।' शुभे! फिर उसने सत्यतपासम्बन्धी अँगुलीके कटने तथा उस स्थानसे भस्म बिखरनेकी बात बतलायी। उसकी बात सुनकर सभी आश्चर्यसे भर गये और उसकी प्रशंसा की। फिर इन्द्रदेवने भगवान् विष्णुसे कहा—'प्रभो! आइये हमलोग हिमालयकी उस उत्तम घाटीमें चलें। वहाँ एक बड़े आश्चर्यकी घटना हुई है जिसे इस किंनरदम्पतिने बतलाया है।'

इस प्रकार बातचीत होनेके पश्चात् भगवान् विष्णुने वराहका रूप धारण किया और इन्द्रने अपना वेष एक व्याधका बनाया और दोनों सत्यतपा ऋषिके पास पहुँचे। वराहवेषधारी विष्णु उन ऋषिके आश्रमके सामने आकर घूमने लगे। वे कभी दीखते और कभी अदृश्य हो जाते। इतनेमें धनुषबाण हाथमें लिये हुए वधिक-वेषधारी इन्द्रने ऋषिके सामने आकर कहा—'भगवन्! आपने यहाँ एक बहुत विशाल शूकर अवश्य देखा होगा। आप कृपापूर्वक मुझे बतलायें तो मैं उसका वध कर डालूँ, जिससे अपने आश्रित जीवोंका भरण-पोषण कर सकूँ।'

वधिकके ऐसा कहनेपर सत्यतपा मुनि चिन्तामें पड़ गये और विचार करने लगे—'यदि मैं इस वधिकको सूअर दिखला दूँ तो यह उसे तुरंत मार डालेगा। यदि नहीं दिखाता तो इस वधिकका परिवार भूखसे महान् कष्ट पायगा, इसमें कोई संशय नहीं; क्योंकि यह वधिक अपनी स्त्री और पुत्रके साथ भूखसे कष्ट पा रहा है। इधर इस सूअरको बाण लग चुका है और वह मेरे आश्रममें आ गया है—ऐसी स्थितिमें मुझे क्या करना चाहिये?' इस प्रकार सोचते हुए, जब वे कोई निश्चय नहीं कर पा रहे थे कि सहसा उनकी बुद्धिमें एक बात आ गयी—'गतिशील प्राणी आँखोंसे ही देखते हैं—देखना नेत्रेन्द्रियका ही कार्य है। बात बतानेवाली जीभ कुछ नहीं देखती। इस प्रकार देखनेवाली इन्द्रिय आँख है, जिह्वा नहीं, और जो जिह्वाका विषय है, उसे नेत्र तत्त्वतः प्रकाशित करनेमें असमर्थ है।' अतः इस विषयमें अब मैं निरुत्तर होकर चुप रहूँगा। सत्यतपाके मनके इस प्रकारके निश्चयको जानकर वधिकरूपी इन्द्र और सूअररूप बने हुए विष्णु—इन दोनोंके मनमें बड़ी प्रसन्नता हुई। अतः वे दोनों महापुरुष अपने वास्तविक रूपमें उनके सामने प्रकट हो गये। साथ ही सत्यतपा ऋषिसे यह वचन कहा—'ऋषिवर! हम दोनों तुमपर बहुत प्रसन्न हैं। तुम परम श्रेष्ठ वर माँग लो।' यह सुनकर उस ऋषिने कहा—'देवेश्वरो! इस समय मेरे सामने आपलोगोंने प्रत्यक्ष उपस्थित होकर साक्षात् दर्शन दिया, इससे बढ़कर पृथ्वीपर मुझे दूसरा कोई श्रेष्ठ वर नहीं दीखता। हाँ, यदि आप

CC-0. In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

बलपूर्वक वर देकर मुझे कृतार्थ करना चाहते हैं तो मैं यही वर माँगता हूँ—'इस पर्वकालमें जो व्यक्ति यहाँ सदा ब्राह्मणोंकी भक्तिपूर्वक एक मासतक लगातार अर्चना करे उसके सभी पाप नष्ट हो जायँ। यही नहीं, उसका संचित पाप भी भस्म हो जाय। साथ ही मुझे भी मोक्ष प्राप्त हो जाय।'

वसुंधरे! विष्णु और इन्द्र—दोनों देवता 'ऐसा ही होगा' कहकर अन्तर्धान हो गये। वे ऋषि वर पाकर सर्वत्र परमात्माको देखते हुए वहीं स्थिर रहे। इसी समय उनके गुरु आरुणि आते दिखायी पड़े, जो तीर्थोंमें घूमते हुए भूमण्डलकी प्रदक्षिणा करके लौटे थे। मुनिवर आरुणिकी सत्यतपाने महान् भक्तिके साथ पूजा की, उनका चरण धोया और आचमन कराया तथा उन्हें गौएँ प्रदान कीं। जब आरुणिजी आसनपर बैठ गये और भलीभाँति जान गये कि मेरा यह शिष्य सिद्ध हो गया है तथा तपस्यासे इसके पाप भस्म हो गये हैं तो उन्होंने सत्यतपासे कहा—'उत्तम व्रतका पालन करनेवाले पुत्र! तपके प्रभावसे तुम्हारा अन्तःकरण शुद्ध हो गया है। तुममें ब्रह्मभावकी स्थिति हो गयी है। वत्स! अब उठो और मेरे साथ उस परम पदकी यात्रा करो, जहाँ जाकर फिर जन्म नहीं लेना पड़ता।' तदनन्तर मुनिवर आरुणि और सत्यतपा—वे दोनों सिद्ध पुरुष भगवान् नारायणका ध्यान करके उनके श्रीविग्रहमें लीन हो गये। जो भी व्यक्ति इस विस्तृत पर्वाध्यायके एक पादका भी श्रवण करता है या किसी अन्यको सुनाता है, उसे भी अभीष्ट गतिकी प्राप्ति होती है। [अध्याय ९८]

तिलधेनुका माहात्म्य

पृथ्वी बोलीं—भगवन्! अव्यक्तजन्मा ब्रह्माजीके शरीरसे जो आठ भुजाओंवाली गायत्री नामकी माया प्रकट हुई और जिन्होंने चैत्रासुरके साथ युद्धकर उसका वध किया, उन्हीं देवीने देवताओंका कार्य सिद्ध करनेके विचारसे 'नन्दा' नाम धारण किया तथा उन्हीं देवीने महिषासुरका भी वध किया। वही देवी 'वैष्णवी' नामसे विख्यात हुईं। भगवन्! यह सब कैसे क्या हुआ? आप मुझे बतानेकी कृपा करें।

भगवान् वराह कहते हैं—वसुंधरे! स्वायम्भुव मन्वन्तरमें इन्हीं देवीने मन्दरगिरिपर महिषासुर नामक दैत्यका वध किया। फिर उनके द्वारा विन्ध्यपर्वतपर नन्दारूपसे चैत्रासुर मारा गया। अथवा ऐसा समझना चाहिये कि वे देवी ज्ञानशक्ति हैं और महिषासुर मूर्तिमान् अज्ञान है।

देवि! अब मैं पाँच प्रकारके पातकोंका ध्वंस करनेवाला उपाय कहता हूँ, सुनो। भगवान् विष्णु देवताओंके भी देवता हैं। उनका यजन करनेसे पुत्र और धन प्राप्त होते हैं। इस जन्ममें जो पुरुष दरिद्रता, व्याधि और कुष्ठ-रोगसे दुःखी है, जिनके पास लक्ष्मी नहीं है, पुत्रका अभाव है, वह इस यज्ञके प्रभावसे तुरंत ही धनवान्, दीर्घायु, पुत्रवान् एवं सुखी हो जाता है। इसमें प्रधान कारण मण्डलमें विराजमान लक्ष्मीदेवीके साथ भगवान् नारायणका दर्शन ही है। भगवान् नारायण परम देवता हैं। देवि! विधानपूर्वक जो उनका दर्शन करता है और कार्तिक महीनेके शुक्लपक्षकी द्वादशी तिथिके दिन आचार्य-प्रदत्त मन्त्रका उच्चारण करते हुए उन देवताका यजन करता है, अथवा सम्पूर्ण द्वादशी तिथियोंके दिन या संक्रान्ति एवं सूर्यग्रहण तथा चन्द्रग्रहणके अवसरपर गुरुके आदेशानुसार जो उनकी पूजा एवं दर्शन करता है, उसपर श्रीहरि तुरंत ही प्रसन्न हो जाते हैं। उसके पाप दूर भाग जाते हैं। साथ ही उसपर अन्य देवता

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भी प्रसन्न हो जाते हैं, इसमें कोई संशय नहीं है।

ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य—तीनों वर्ण भक्तिके अधिकारी हैं। गुरुको चाहिये जाति, शौच और क्रिया आदिके द्वारा एक वर्षतक उनकी परीक्षा करे। एक वर्षतक शिष्य गुरुमें श्रद्धा रखते हुए उनमें भगवान् विष्णुकी भावना करके अचल भक्ति करे। वर्ष पूरा हो जानेपर वह गुरुसे प्रार्थना करे—'भगवन्! आप तपस्याके महान् धनी पुरुष विराजमान हैं और मेरे सामने प्रत्यक्ष हैं। हम चाहते हैं कि आपकी कृपासे संसाररूपी समुद्रको पार करानेवाला ज्ञान प्राप्त हो जाय। साथ ही संसारमें सुख देनेवाली लक्ष्मी भी हमें अभीष्ट हैं।'

विद्वान् पुरुष गुरुकी पूजा भी विष्णुके समान करे। श्रद्धालु पुरुष कार्तिकमासकी शुक्ला दशमी तिथिको दूधवाले वृक्षका मन्त्रसहित दन्तकाष्ठ ले और उससे मुँह धोये। फिर रात्रिभोजनके बाद साधक देवेश्वर भगवान् श्रीहरिके सामने सो जाय। रातमें जो स्वप्न दिखायी पड़े, उसे गुरुके सामने व्यक्त करना चाहिये और गुरुको भी इन स्वप्नोंमें कौन-सा शुभ है और कौन-सा अशुभ—इसपर विचार करना चाहिये। फिर एकादशीके दिन उपवास रहकर स्नान करके व्रती पुरुष देवालयमें जाय। वहाँ गुरुको चाहिये कि निश्चित की हुई भूमिपर मण्डल बनाकर उसपर सोलह पँखुड़ियोंवाला एक कमल तथा सर्वतोभद्र चक्र लिखे अथवा सफेद वस्त्रसे आठ पत्रवाला कमल बनाकर उसपर देवताओंको अङ्कित करे। उस चक्रको फिर यत्नसे उजले वस्त्रसे ऐसा आवेष्टित करे कि वह वस्त्र नेत्रबन्ध अर्थात् उस मण्डल-देवताकी प्रसन्नताका भी साधन बन जाय। वर्णके अनुक्रमसे शिष्योंको मण्डपमें प्रवेश करनेके लिये गुरु आज्ञा दें। शिष्यको हाथमें फूल लेकर प्रवेश करना चाहिये। नौ भागोंवाले मण्डलमें क्रमशः पूर्व, अग्निकोण, दक्षिण, नैर्ऋत्य, पश्चिम, वायव्य, उत्तर और ईशान आदि दिशाओंमें लोकपालसहित इन्द्र, अग्निदेव, यमराज, निर्ऋति, वरुण, वायु, कुबेर और रुद्रकी स्थापना तथा पूजा करे। मध्यभागमें परम प्रभु श्रीविष्णुकी अर्चना करनी चाहिये।

पुनः कमलके पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर पत्रोंपर बलराम, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध तथा समस्त पातकोंकी शान्ति करनेवाले वासुदेवकी स्थापना एवं पूजा करनी चाहिये। ईशानकोणमें शङ्खकी, अग्निकोणमें चक्रकी, दक्षिणमें गदाकी और वायव्यकोणमें पद्मकी स्थापना एवं पूजा करनी चाहिये। ईशानकोणमें मूसलकी एवं दक्षिणमें गरुडकी तथा देवेश विष्णुके वामभागमें बुद्धिमान् पुरुष लक्ष्मीकी स्थापना एवं पूजा करे। प्रधान देवताके सामने धनुष और खड्गकी स्थापना करे। नवें दलमें श्रीवत्स और कौस्तुभमणिकी कल्पना करनी चाहिये। फिर आठ दिशाओंमें विधानके अनुसार आठ कलश स्थापितकर बीचमें नवें प्रधान विष्णुकलशकी स्थापना करनी चाहिये। फिर उन कलशोंपर आठ लोकपालों तथा भगवान् विष्णुकी विधिपूर्वक पूजा करनी चाहिये। साधकको यदि मुक्तिकी इच्छा हो तो विष्णुकलशसे, लक्ष्मीकी इच्छा हो तो इन्द्रकलशसे, प्रभूत संतानकी इच्छा हो तो अग्निकोणके कलशसे, मृत्युपर विजय पानेकी इच्छा हो तो दक्षिणके कलशसे, दुष्टोंका दमन करनेकी इच्छा हो तो निर्ऋतिकोणके कलशसे, शान्ति पानेकी इच्छा हो तो वरुणकलशसे, पाप-नाशकी इच्छा हो तो वायव्यकोणके कलशसे, धन-प्राप्तिकी इच्छा हो तो उत्तरके कलशसे तथा ज्ञानकी इच्छा एवं लोकपाल-पद पानेकी कामना हो तो वह रुद्रकलशसे स्नान करे। किसी एक कलशके जलसे स्नान करनेपर भी मनुष्य सम्पूर्ण पापोंसे छूट जाता है। यदि साधक ब्राह्मण है तो

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

उसे अव्याहत ज्ञान होता है। नवों कलशोंसे स्नान करनेसे तो मनुष्य पापमुक्त होकर साक्षात् भगवान् विष्णुके तुल्य सर्वतः परिपूर्ण हो जाता है।

पूजाके अन्तमें गुरुकी आज्ञासे सबकी प्रदक्षिणा करे। फिर गुरुदेव प्राणायामसहित आग्नेयी एवं वारुणी-धारणाद्वारा विधिपूर्वक शिष्यका अन्तःकरण शुद्धकर उसे सोमरससे आप्यायितकर दीक्षाके प्रतिज्ञा-वचन सुनायें। इस प्रकार ब्राह्मणों, वेदों, विष्णु, ब्रह्मा, रुद्र, आदित्य, अग्नि, लोकपाल, ग्रहों, वैष्णव-पुरुषों और गुरुके सम्मान करनेवाले पुरुषको दीक्षाद्वारा शीघ्र सिद्धि प्राप्त होती है।

दीक्षाके अन्तमें प्रज्वलित अग्निमें—'**ॐ नमो भगवते सर्वरूपिणे हुं फट् स्वाहा**'—इस सोलह अक्षरवाले मन्त्रद्वारा हवनकी विधि है। गर्भाधान आदि संस्कारोंमें जैसी हवनकी क्रियाएँ होती हैं, वैसी ही यहाँ भी कर्तव्य हैं। हवनके बाद यदि दीक्षा-प्राप्त शिष्य किसी देशका राजा हो तो वह गुरुके लिये हाथी-घोड़ा, सुवर्ण, अन्न और गाँव आदि अर्पण करे। यदि दीक्षित साधक मध्यम श्रेणीका व्यक्ति है तो वह साधारण दक्षिणा दे।

दीक्षाके अन्तमें साधक पुरुष यदि वराह-पुराण सुनता है तो उससे सभी वेद, पुराण और सम्पूर्ण मन्त्रोंके जपका फल प्राप्त होता है। पुष्कर-तीर्थ, प्रयाग, गङ्गा-सागर-सङ्गम, देवालय, कुरुक्षेत्र, वाराणसी, ग्रहण तथा विषुवयोगमें उत्तम जप करनेवालेको जो फल होता है, उससे दूना फल जो दीक्षित पुरुष इस वराहपुराणको सुनता है, उसे प्राप्त होता है। प्राणियोंको धारण करनेवाली पृथ्वी देवि! देवता लोग भी ऐसी कामना करते हैं कि कब ऐसा सुअवसर प्राप्त होगा, जब भारतवर्षमें हमारा जन्म होगा और हम दीक्षा प्राप्तकर किसी प्रकारसे षोडश-कलात्मक वराहपुराण सुन सकेंगे तथा इस देहका त्यागकर उस परम स्थानको जायँगे, जहाँसे पुनः वापस नहीं होना पड़ता।

अन्न-दानके विषयमें महात्मा वसिष्ठ एवं श्वेतका संवादात्मक एक बहुत पुराना इतिहास—सच्ची कथा कही जाती है। वसुंधरे! इलावृतवर्षमें श्वेत नामके एक महान् तपस्वी राजा थे। उन नरेशने हरे-भरे वृक्षोंवाले वनसहित यह पृथ्वी दान करनेके विचारसे तपोनिधि वसिष्ठजीसे कहा—'भगवन्! मैं ब्राह्मणोंको यह समूची पृथ्वी दान करना चाहता हूँ। आप मुझे आज्ञा देनेकी कृपा करें।' इसपर वसिष्ठजीने कहा—'राजन्! अन्न सभी समयमें (पुण्यफलके स्वरूप) सुख देनेवाला है। अतः तुम सदा अन्नदान करो। जिसने अन्नदान कर दिया, उसके लिये भूतलपर दूसरा दान कोई शेष न रहा। सम्पूर्ण दानोंमें अन्नदान ही श्रेष्ठ है। अन्नसे ही प्राणी जीवन धारण करते और बढ़ते हैं, अतः राजन्! तुम प्रयत्नपूर्वक अन्नदान करो।' किंतु राजा श्वेतने वैसा न कर बहुत-से हाथी-घोड़े, रत्न, वस्त्र, आभूषण, धन-धान्यसे पूर्ण अनेक नगर एवं खजानेमें जो धन था, उसे ही ब्राह्मणोंको बुलाकर दान किया।

एक समयकी बात है—उत्तम धर्मके ज्ञाता राजा श्वेतने सम्पूर्ण पृथ्वीपर विजय प्राप्त करके अपने पुरोहित वसिष्ठजीसे, जो जपकर्ताओंमें सर्वोत्तम माने जाते हैं, कहा—'भगवन्! मैं एक हजार अश्वमेध-यज्ञ करना चाहता हूँ। फिर राजा श्वेतने उनकी अनुमतिसे यज्ञकर ब्राह्मणोंको बहुत-से सोना, चाँदी और रत्न दानमें दिये, किंतु उन राजाने उस समय भी अन्न और जलका दान नहीं किया; क्योंकि वे अन्न और जलको तुच्छ वस्तु समझते थे। अन्तमें कालधर्मके वश होकर जब वे परलोक पहुँचे तो वहाँ उन्हें भूख और विशेषकर प्यास सताने लगी। अतः वे अप्सराओंसहित

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

स्वर्गको छोड़कर श्वेतपर्वतपर पहुँचे। उनके पूर्वजन्मका शरीर उस समय भस्म हो गया था। अतः भूखे राजा श्वेतने अपनी हड्डियोंको एकत्रकर चाटना प्रारम्भ किया। फिर विमानपर चढ़कर वे स्वर्गमें गये। इसी प्रकार बहुत समय व्यतीत हो जानेके बाद उत्तम व्रती उन राजा श्वेतको महात्मा वसिष्ठने अपनी हड्डियाँ चाटते हुए देखा। उन्होंने पूछा—'राजन्! तुम अपनी हड्डी क्यों चाट रहे हो?' महात्मा वसिष्ठके ऐसी बात कहनेपर राजा श्वेतने उन मुनिवरसे ये वचन कहे—'भगवन्! मुझे क्षुधा सता रही है। मुनिवर! पूर्वजन्ममें मैंने अन्न और जलका दान नहीं किया, अतः इस समय मुझे भूख-प्यास कष्ट दे रही है।' राजा श्वेतके ऐसा कहनेपर मुनिवर वसिष्ठजीने पुनः उनसे कहा—'राजेन्द्र! मैं तुम्हारे लिये क्या करूँ? अदत्तदानका फल किसी प्राणीको नहीं मिलता। रत्न और सुवर्णका दान करनेसे मनुष्य सम्पत्तिशाली तो बन सकता है, पर अन्न और जल देनेसे उसकी सभी कामनाएँ सिद्ध हो जाती हैं; वह सर्वथा तृप्त हो जाता है। राजन्! तुम्हारी समझमें अन्न अत्यन्त तुच्छ वस्तु थी। अतः तुमने उसका दान नहीं किया।

राजा श्वेत बोले—अब मेरी, जिसने अन्नदान नहीं किया, तृप्ति कैसे होगी? यह मैं सिर झुकाकर आपसे पूछता हूँ, महामुने! बतानेकी कृपा कीजिये।

वसिष्ठजीने कहा—अनघ! इसका एक उपाय है, उसे सुनो। पूर्वकल्पमें विनीताश्व नामके एक बड़े प्रसिद्ध राजा हो चुके हैं, उन नरेशने कई अश्वमेध-यज्ञ किये। यज्ञोंमें ब्राह्मणोंको बहुत-सी गौएँ, हाथी और धन दिये, तुच्छ समझकर अन्नका दान नहीं किया। इसके बाद बहुत समय बीत जानेपर वे मरकर स्वर्ग पहुँचे और वहाँ वे राजा भी तुम्हारी ही तरह भूखसे दुःखका अनुभव करने लगे। फिर सूर्यके समान प्रकाशमान विमानपर चढ़कर वे स्वर्गसे मर्त्यलोकमें नीलपर्वतपर गङ्गा नदीके तटपर, जहाँ उनका निधन हुआ था, पहुँचे और अपने शरीरको चाटने लगे। उन्होंने वहीं अपने 'होता' पुरोहितको देखकर पूछा—'भगवन्! मेरी क्षुधा मिटनेका उपाय क्या है?' होताने उत्तर दिया—'राजन्! आप 'तिलधेनु', 'जलधेनु', 'घृतधेनु' तथा 'रसधेनु'का दान करें—इससे क्षुधाका क्लेश तुरंत शान्त हो जायगा। जबतक सूर्य तपते हैं, चन्द्रमा प्रकाश पहुँचाते हैं, तबतकके लिये इससे आपकी क्षुधा शान्त हो जायगी।' ऐसी बात कहनेपर राजाने मुनिसे फिर इस प्रकार पूछा।

विनीताश्व बोले—ब्रह्मन्! 'तिलधेनु'-दानका विधान क्या है? विप्रवर! मैं यह भी पूछता हूँ कि उसका पुण्य स्वर्गमें किस प्रकार भोगा जाता है, आप कृपया यह सब हमें बतलायें।

होता बोले—राजन्! 'तिलधेनु'का विधान सुनो। (मानशास्त्रके अनुसार) चार कुडवका एक 'प्रस्थ' कहा गया है, ऐसे सोलह प्रस्थ तिलसे धेनुका स्वरूप बनाना चाहिये। इसी प्रकार चार 'प्रस्थ'का एक बछड़ा भी बनाना चाहिये। चन्दनसे उस गायकी नासिकाका निर्माण करे और गुड़से उसकी जीभ बनायी जाय। इसी प्रकार उसकी पूँछ भी फूलकी बनाकर फिर घण्टा और आभूषणसे अलंकृत करना चाहिये। ऐसी रचना करके सोनेके सींग बनवाये। उसकी दोहनी काँसेकी और खुर सोनेके हों, जो अन्य धेनुओंकी विधिमें निर्दिष्ट है। तिलधेनुके साथ मृगचर्म वस्त्ररूपमें सर्वौषधिसहित मन्त्रद्वारा पवित्रकर उसका दान करना सर्वोत्तम है। दानके समय प्रार्थना करे—तिलधेनो! तुम्हारी कृपासे मेरे लिये अन्न-जल एवं सब प्रकारके रस तथा दूसरी वस्तुएँ भी सुलभ हों। देवि! ब्राह्मणको अर्पित होकर तुम हमारे लिये सभी वस्तुओंका सम्पादन करो।'

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

ग्रहीता ब्राह्मण कहे कि 'देवि! मैं तुम्हें श्रद्धापूर्वक ग्रहण कर रहा हूँ, तुम मेरे परिवारका भरण-पोषण करो। देवि! तुम मेरी कामनाओंको पूरी करो। तुम्हें मेरा नमस्कार है।' राजन्! इस प्रकार प्रार्थनाकर तिलधेनुका दान करना चाहिये। ऐसा करनेसे सम्पूर्ण कामनाएँ पूर्ण होती हैं। जो व्यक्ति श्रद्धाके साथ इस प्रसङ्गको सुनता या तिलधेनुका दान करता है अथवा दूसरेको दान करनेकी प्रेरणा करता है, वह समस्त पापोंसे छूटकर विष्णुलोकमें जाता है। गोमयसे मण्डल बनाकर गोचर्म* जितनी भूमिमें धेनुके आकारकी तिलधेनु होनी चाहिये।

[अध्याय ९९]

जलधेनु एवं रसधेनु-दानकी विधि

पुरोहित होताजी कहते हैं—राजेन्द्र! अब 'जलधेनु'-दानका विधान बताता हूँ। किसी पवित्र दिनमें सबसे पहले 'गोचर्म'के बराबर भूमिको गायके गोबरसे लीपकर उसके मध्यभागमें जल, कपूर, अगरु और चन्दनयुक्त एक कलश स्थापित करे। फिर उस कलशमें जलधेनुकी धारणाकर इसी प्रकारके एक दूसरे कलशमें बछड़ेकी कल्पना करे। फिर वहीं एक मन्त्रपुष्पोंसे युक्त वर्द्धनीपात्र रखे। पूर्वोक्त कलशमें दूर्वाङ्कुर, जटामासी, उशीर (खस)-की जड़, कुष्ठसंज्ञक ओषधि, शिलाजीत, नेत्रबाला, पवित्र पर्वतकी रेणु, आँवलेके फल, सरसों तथा सप्तधान्य आदि वस्तुओंको डालकर उसे पुष्पमालाओंसे सजाना चाहिये। राजन्! फिर चारों दिशाओंमें चार पात्रोंकी विशेषरूपसे कल्पना करे। इनमें एक पात्र घृतसे, दूसरा दहीसे, तीसरा मधुसे तथा चौथा शर्करासे पूर्ण होना चाहिये। इस कल्पित (कुम्भमयी) धेनुमें सुवर्णमय मुख एवं ताँबेके शृङ्ग, पीठ तथा नेत्रकी कल्पना करनी चाहिये। पासमें काँसेकी दोहनी रखे तथा उसके कुशके रोयें बनाये और सूत्रसे उसकी पूँछकी रचना करे। पुनः वस्त्र-आभरण तथा घण्टिकासे उसे सजाकर शुक्तिसे दाँत एवं गुड़से मुखकी रचना करे। चीनीसे उस धेनुकी जीभ और मक्खनसे स्तनोंका निर्माणकर ईखके चरण बनाये तथा चन्दन एवं फूलोंसे उस धेनुको सुशोभितकर काले मृगचर्मपर स्थापित करे। फिर चन्दन और फूलोंसे भलीभाँति उसकी पूजा करके वेदके पारगामी ब्राह्मणको निवेदित कर दे।

राजन्! जो मानव इस धेनु-दानको देखता और इस चर्चाको कहता-सुनता है तथा जो ब्राह्मण यह दान ग्रहण करता है—वे सभी सौभाग्यशाली पुरुष पापसे मुक्त होकर विष्णुलोकमें जाते हैं। राजन्! जिसने सदक्षिण अश्वमेध-यज्ञ किया और जिसने एक बार 'जलधेनु'का दान किया, उन दोनोंका फल समान होता है। इस प्रकार जलधेनुके दान करनेवाले व्यक्तिके सभी पाप समाप्त हो जाते हैं और वे जितेन्द्रिय पुरुष स्वर्गको जाते हैं।

पुरोहित होताजी कहते हैं—राजन्! संक्षेपमें अब 'रसधेनु'का विधान कहता हूँ। लिपी हुई पवित्र भूमिपर काला मृगचर्म और कुश बिछाकर उसपर ईखके रससे भरा हुआ एक घड़ा रखे और फिर पूर्ववत् ही संकल्प करे। उस घड़ेके पासमें

* सप्तहस्तेन दण्डेन त्रिंशद्दण्डान्निवर्तनम्। दश तान्येव गोचर्म दत्त्वा स्वर्गे महीयते॥

इस (पद्म०उत्त० ३३। ८-९, मार्क०पुरा० ४९। ३९, शातातप १। १५)-के वचनानुसार—सात हाथका दण्ड, तीस दण्डका निवर्तन और दस निवर्तनका 'गोचर्म'मान होता है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

उसके चौथाई हिस्सेके बराबर एक छोटा कलश बछड़ेके निमित्त रखना चाहिये। उसके चारों पैरोंके स्थानपर ईखके चार डंडे रखे और उनमें चाँदीकी चार खुरियाँ लगा दे। उसकी सोनेकी सींग बनाकर श्रेष्ठ आभूषण पहना दे। उसकी पूँछकी जगह वस्त्र और स्तनकी जगह घृत रखकर उसे फूल और कंबलसे सजाना चाहिये। उसका मुख और जीभ शर्करासे बनाये। दाँतकी जगहपर फल रखे। उस रसधेनुकी पीठ ताम्बेकी बनाये और रोयेंकी जगह फूल लगा दे तथा मोतीसे आँखोंकी रचनाकर चारों दिशाओंमें सात प्रकारके अन्न रखे। फिर उस धेनुको सब प्रकारके उपकरणोंसे सुसज्जित तथा अखिल गन्धोंसे सुवासित करना चाहिये। उसके चारों दिशाओंमें तिलसे भरे हुए चार पात्र रखे। ऐसी धेनु समस्त लक्षणोंसे युक्त तथा परिवारवाले श्रोत्रिय ब्राह्मणको अर्पण कर दे। जिसे स्वर्गमें जानेकी कामना हो, वह पुरुष नित्यप्रति 'रसधेनु'का दान करे। इसके फलस्वरूप वह सम्पूर्ण पापोंसे रहित होकर स्वर्गलोकमें जानेका अधिकारी होता है। इसके दान देनेवाले और लेनेवाले—दोनोंको उस दिन एक ही समय भोजन करना चाहिये। ऐसा करनेसे उसे सोमरस-पान करनेका फल सब जगह सुलभ हो सकता है। गोदानके समय जो उसका दर्शन करते हैं, उन्हें परम गति मिलती है। सबसे पहले धेनुकी पूजाकर गन्ध, धूप और माला आदिसे अलंकृत करना आवश्यक है। भक्तिके साथ विद्वान् पुरुष उस धेनुकी प्रार्थना करे। श्रद्धाके साथ श्रेष्ठ ब्राह्मणको वह 'रसधेनु' देनी चाहिये। इस दानके प्रभावसे दाताकी अपनी दस पीढ़ी पहलेकी और दस पीढ़ी बादकी तथा एक इक्कीसवाँ व्यक्ति स्वयं इस प्रकार इक्कीस पीढ़ियाँ स्वर्गको चली जाती हैं। वहाँसे पुनः संसारमें आना असम्भव है।

राजन्! यह 'रसधेनु'का दान सबसे उत्तम माना जाता है। इसका वर्णन मैंने तुम्हारे सामने कर दिया। महाराज! तुम यह दान करो। इससे तुम्हें परम उत्तम स्थान प्राप्त होना अनिवार्य है। जो पुरुष भक्तिके साथ इस प्रसङ्गको सदा पढ़ता और सुनता है, उसके समस्त पाप दूर भाग जाते हैं और वह पुरुष विष्णुलोकको प्राप्त होता है।

[अध्याय १००-१०१]

गुड़धेनु-दानकी विधि

पुरोहित होताजी कहते हैं—राजन्! अब गुड़धेनुका प्रसङ्ग बताता हूँ, उसे सुनो। इसके दान करनेसे सभी कामनाएँ सिद्ध हो जाती हैं। लिपी हुई भूमिपर काला मृगचर्म और कुश बिछाकर उसपर वस्त्र फैला दे। फिर पर्याप्त गुड़ लेकर उससे धेनुकी आकृति तथा पासमें बछड़ेकी आकृति बनाये। फिर काँसेकी दोहनी रखकर उसका मुख सोनेका और उसका सींग सोने अथवा अगुरुकी लकड़ीसे एवं मणि तथा मोतियोंसे दाँत बनाये। गर्दनकी जगह रत्न स्थापित करना चाहिये। उस धेनुकी नासिका चन्दनसे निर्माण करे और अगुरु काष्ठसे उसके दोनों सींग बनाये। उसकी पीठ ताँबेकी होनी चाहिये। उस धेनुकी पूँछ रेशमी वस्त्रसे कल्पित करे और फिर सभी आभूषणोंसे उसे अलंकृत करे। उसके पैरोंकी जगह चार ईख हों और खुर चाँदीके, फिर कम्बल और पट्टसूत्रसे उस धेनुको ढककर घण्टा और चँवरसे अलंकृत तथा सुशोभित करना चाहिये। श्रेष्ठ पत्तोंसे उसके कान तथा मक्खनसे उस धेनुके थनकी रचना करे। अनेक प्रकारके

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

फलोंसे उस धेनुको भलीभाँति सुशोभित करना चाहिये। उत्तम गुड़धेनुका निर्माण चार भार गुड़के वजनसे बनाना चाहिये। अथवा इसके आधे भागसे भी उसका निर्माण सम्भव है। मध्य श्रेणीकी धेनु इसके आधे परिमाणकी मानी जाती है और एक भारमें अधम श्रेणीकी धेनुका निर्माण होता है। यदि पुरुष धनहीन हो तो वह अपनी शक्तिके अनुसार एक सौ आठ गुड़की डलियोंसे ही धेनु बना सकता है। घरमें सम्पत्ति हो तो उसके अनुसार इससे अधिक मात्रामें भी बनानेका विधान है। फिर चन्दन और फूल आदिसे उसकी पूजाकर उसे ब्राह्मणको दान कर दे। चन्दन, पुष्प आदिसे पूजा करनेके पश्चात् घृतसे बना हुआ नैवेद्य एवं दीपक दिखाना अति आवश्यक है। अग्निहोत्री और श्रोत्रिय ब्राह्मणको गुड़धेनु देना उत्तम है। महाराज! एक हजार सोनेके सिक्कोंसहित अथवा इसके आधे या आधेके आधेके साथ गुड़धेनुका दान किया जाय अथवा अपनी शक्तिके अनुसार सौ या पचास सिक्कोंके साथ भी दान किया जा सकता है। चन्दन और फूलसे पूजा करके ब्राह्मणको अँगूठी और कानके आभूषण भी देना चाहिये। साथमें छाता और जूता दान देना चाहिये। दानके समय इस प्रकार प्रार्थना करे—'गुड़धेनो! तुममें अपार शक्ति है। शुभे! तुम्हारी कृपासे सम्पत्ति सुलभ हो जाती है। देवि! मैं जो दान कर रहा हूँ, इससे प्रसन्न होकर तुम मुझे भक्ष्य और भोज्य पदार्थ देनेकी कृपा करो और लक्ष्मी आदि सभी पदार्थ मुझे सुलभ हो जायँ।' ऐसी प्रार्थना करनेके उपरान्त पहले कहे हुए मन्त्रोंका स्मरण करे। दाताको पूर्व मुख बैठकर ब्राह्मणको गुड़धेनुका दान करना चाहिये। पुनः प्रार्थना करे—'गुड़धेनो! मेरे द्वारा मन, वाणी और कर्मद्वारा अर्जित पाप तुम्हारी कृपासे नष्ट हो जायँ।' जिस समय गुड़धेनुका दान होता है, उस अवसरपर जो इस दृश्यको देखते हैं, उन्हें वह उत्तम स्थान प्राप्त होता है, जहाँ दूध तथा घृत एवं दही बहानेवाली नदियाँ हैं। जिस दिव्यलोकमें ऋषि, मुनि और सिद्धोंका समुदाय शोभा पाता है, वहाँ इस धेनुके दाता पुरुष पहुँच जाते हैं। गुड़धेनु-सम्बन्धी दानके प्रभावसे दस पूर्वके, दस पीछे होनेवाले पुरुष तथा एक वह इस प्रकार इक्कीस पुरुष विष्णुलोकको यथाशीघ्र पहुँच जाते हैं। अयन, विषुवयोग, व्यतीपात और दिन-क्षय—ये इस दानमें साधन कहे गये हैं। इन्हीं अवसरोंपर गुड़धेनुके दानका विधान उत्तम है। महामते! सुपात्र ब्राह्मणको देखकर ही इस धेनुका श्रद्धाके साथ दान करना चाहिये। इससे भोग एवं मोक्ष सब सुलभ हो जाता है और समस्त कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं तथा दाता सभी पापोंसे मुक्त हो जाता है। गुड़धेनुकी कृपासे अखिल सौभाग्य, इस लोकमें अतुल आयु एवं आरोग्य तथा ऐश्वर्य सुलभ हो जाते हैं। जो इस प्रसङ्गको पढ़ता है तथा कई योजन दूर रहकर भी इस गुणधेनु-दानकी सम्मति देता है, वह इस संसारमें दीर्घकालतक वैभवसे सम्पन्न रहकर अन्तमें स्वर्गमें निवास करता है। [अध्याय १०२]

शर्करा तथा मधु-धेनुके दानकी विधि

पुरोहित होताजी कहते हैं—राजन्! अब शर्कराधेनुका वर्णन सुनो। लिपी हुई भूमिपर काला मृगचर्म और कुश बिछाना चाहिये। राजन्! चार भार शर्करासे बनी हुई धेनु उत्तम कही जाती है। उसके चौथाई भागसे उसका बछड़ा बनाये। यदि दानकर्ता राजा हो तो वह आठ सौ भारसे ऊपरतककी धेनु बना सकता है। दाता अपनी शक्तिके ही अनुसार धेनुका निर्माण कराये,

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

जिससे स्वयं अपनी आत्माको न कष्ट पहुँचे, न धनका ही समूल संहार हो जाय। धेनुकी चारों दिशाओंमें बीज स्थापितकर उसके मुखाग्र और सींग सोनेके तथा आँखें मोतीकी बनाये। गुड़से उसका मुखान्तर भाग तथा पिष्टसे उसकी जीभका निर्माण करे। गलकम्बलका निर्माण रेशमी सूत्रसे करे। कण्ठके भूषणोंसे उस धेनुको भूषित करे। ईखसे चरण, चाँदीसे खुर तथा मक्खनसे थनकी रचना करे। श्रेष्ठ पत्रोंसे उसके कान बनाकर उसे श्वेत चँवरसे अलंकृत करना चाहिये। तत्पश्चात् उसके पासमें पञ्चरत्न रखकर उसे वस्त्रसे ढक देना चाहिये। फिर चन्दन और फूलोंसे अलंकृत करके वह गाय ब्राह्मणको दे दे। ब्राह्मण श्रोत्रिय, दरिद्र और साधु स्वभाववाला हो। अयन, विषुव, व्यतीपात और दिनक्षय—इन पुण्य अवसरोंपर अपनी शक्तिके अनुसार इस प्रकारकी गौ बनाकर दान करना चाहिये। यदि सत्पात्र एवं श्रोत्रिय ब्राह्मण घरपर आया हुआ दीख जाय तो आये हुए उस ब्राह्मणको धेनुके पुच्छभागका स्पर्श करते हुए दान करनेकी विधि है। पूर्व अथवा उत्तरकी तरफ मुख करके दाता बैठे। गौका मुख पूर्व और बछड़ेका मुख उत्तर हो। दान करते समय गोदानके मन्त्रोंको पढ़कर ही गौका दान करना चाहिये। दाता एक दिनतक शर्कराके आहारपर रहे और लेनेवाला ब्राह्मण भी इसी प्रकार तीन दिनतक रहे। यह शर्कराधेनु सम्पूर्ण पापोंको दूर करनेवाली तथा अखिल कामनाओंको देनेमें पूर्ण समर्थ है। इस प्रकार दान करनेवाला पुरुष सम्पूर्ण कामनाओं और ऐश्वर्योंसे सम्पन्न हो जाता है, इसमें कोई संदेह नहीं। शर्कराधेनुका दान करते समय जो लोग उसका दर्शन करते हैं, उन्हें परम गति मिलती है। जो मानव भक्तिपूर्वक इसे सुनता अथवा पढ़ता भी है, वह सम्पूर्ण पापोंसे छूटकर विष्णुलोकको प्राप्त होता है।

पुरोहित होताजी कहते हैं—राजन्! अब सम्पूर्ण पापोंके नाशक 'मधुधेनु'के दानकी विधि सुनो। लिपी हुई पवित्र भूमिपर काला मृगचर्म और कुशा बिछाकर सोलह घड़े मधुसे एक धेनु तथा उसके चौथाई भागसे बछड़ेकी आकृति बनाकर स्थापित करे। उस धेनुका मुख सोनेका, उसके शृङ्ग (सींग) अगुरु एवं चन्दनके, पीठ ताँबेकी और सास्ना (गलकम्बल) रेशमी सूतके बनाये। उसके चरण ईखके हों। फिर उजले कम्बलसे उस धेनुको ढककर गुड़से उसके मुखकी तथा शर्करासे जिह्वाकी आकृति बनानी चाहिये। उसके ओंठ पुष्पके और दाँत फलोंके बने हों। वह कुशके रोयें तथा चाँदीके खुरोंसे सुशोभित हो और उसके कान श्रेष्ठ पत्तोंसे बनाने चाहिये। फिर उसके चारों दिशाओंमें सप्तधान्यके साथ तिलसे भरे हुए चार पात्र रखने चाहिये। फिर दो वस्त्रोंसे उसको ढककर कण्ठके आभूषणसे उसे अलंकृत कर दे। काँसेकी दोहनी बनाकर चन्दन और फूलोंसे उस धेनुकी पूजा करनी चाहिये। अयन, विषुव, व्यतीपात, दिनक्षय, संक्रान्ति और ग्रहणके अवसरपर इस धेनुके दानका विशेष महत्त्व है, अथवा अपनी इच्छासे इसे सभी कालमें सम्पादित किया जा सकता है। द्रव्य, ब्राह्मण और सम्पत्तिको देखकर दानका प्रतिपादन करना चाहिये। दान लेनेवाला ब्राह्मण दरिद्र, विद्याभ्यासी, अग्निहोत्री, वेद-वेदान्तका पारगामी तथा आर्यावर्तदेशमें उत्पन्न हुआ होना चाहिये। धेनुकी पूँछभागका स्पर्श करके हाथमें जल और दक्षिणा लेकर चन्दन और धूपसे पूजा-कर फिर दो वस्त्रोंसे ढककर अपनी शक्तिके अनुसार अन्नसहित उसका दान कर दे, कंजूसी न करे। सभी विधि जलपूर्वक होनी चाहिये।

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth

ब्राह्मणको दान करनेके पूर्व दाता इस प्रकार प्रार्थना करे—'मधुधेनो! तुम्हें मेरा नमस्कार है। तुम्हारी कृपासे मेरे पितर और देवतागण प्रसन्न हो जायँ।' ग्रहीता कहे—'देवि! मैं विशेष रूपसे कुटुम्बकी रक्षाके लिये तुम्हें ग्रहण करता हूँ। मधुधेनो! तुम कामदुहा हो। मेरी कामनाओंको पूर्ण करो। तुम्हें मेरा नमस्कार। '**मधुवाता०***' इस मन्त्रको पढ़कर इस धेनुका दान करना चाहिये। महाराज! दानके पश्चात् छाता और जूता भी देना चाहिये। राजन्! इस प्रकार भक्तिपूर्वक जो 'मधुधेनु'का दान करता है, वह एक दिन खीर और मधुके आहारपर रहे। दान लेनेवाले ब्राह्मणको मधु और खीरके आहार-पर तीन रातें व्यतीत करनी चाहिये। इसका दाता दस पूर्वजों और आगे होनेवाली दस पीढ़ियों एवं स्वयं आप—इस प्रकार इक्कीस पीढ़ियोंको तारकर भगवान् विष्णुके स्थानमें पहुँचता है। जो मानव इस प्रसङ्गको श्रद्धाके साथ सुनता अथवा सुनाता है, वह समस्त पापोंसे छूटकर विष्णुलोकमें चला जाता है।' [अध्याय १०३-१०४]

'क्षीरधेनु' तथा 'दधिधेनु'-दानकी विधि

पुरोहित होताजी कहते हैं—राजन्! अब क्षीरधेनु-दानकी विधि सुनो—राजेन्द्र! गायके गोबरसे लिपी गयी पवित्र भूमिपर 'गोचर्म'मात्र प्रमाणमें सब ओर कुशाएँ बिछा दे। उसके ऊपर विवेकी पुरुष कृष्णमृगका चर्म रखे। उसपर गायके गोबरसे एक विस्तृत कुण्डिकाका निर्माण करे और वहाँ दूधसे भरा हुआ एक घड़ा रखे। उसके चौथाई भागवाला कलश बछड़ेके स्थानमें रखे, जिसका मुख सोनेका एवं सींग चन्दन तथा अगुरु-काष्ठके बने हों। कानोंके स्थानमें वृक्षके उत्तम पत्ते रखे। इस कुम्भके ऊपर तिलका पात्र रखनेका विधान है। गुड़से उसके मुखकी, शर्करासे जिह्वाकी, उत्तम फलोंसे दाँतोंकी और मोतियोंसे आँखोंकी रचना करनी चाहिये। उसके ईखके चरण, कुशके रोयें और ताँबेकी पीठ बनायी जाय। सफेद कम्बलसे उसका गलकम्बल बनाये और काँसेकी दोहनी उसके पासमें रख दे। रेशमके सूतोंसे उसकी पूँछ तथा मक्खनसे उसका थन बनाये अथवा उसके सींग सोनेके एवं खुर चाँदीके हों। फिर पासमें पञ्चरत्न रखे। चारों दिशाओंमें तिलसे भरे हुए चार पात्र तथा सभी दिशाओंमें सप्तधान्य रखनेका नियम है। इस प्रकारके लक्षणोंसे सम्पन्न क्षीरधेनुकी कल्पना करनी चाहिये। फिर दो वस्त्रोंसे ढककर चन्दन और फूलोंसे उसकी पूजा करनी चाहिये। उसे वस्त्र आदिसे अलंकृत करके मुद्रिका और कानके कुण्डलसे भी सजाये। तत्पश्चात् धूप-दीप देकर वह क्षीरधेनु ब्राह्मणको अर्पण कर दे। दानके समय खड़ाऊँ, जूते और छाता भी दे। '**आप्यायस्व०**' (तै०आर०३।१७) इस वेदोक्त मन्त्रसे प्रार्थना करनेका नियम है। राजन्! पूर्वोक्त '**आश्रयः सर्वभूतानाम्०**' तथा '**आप्यायस्व ममाङ्गानि०**' इन मन्त्रोंको क्षीरधेनुका दान लेनेवाला ब्राह्मण भी पढ़े। यह इस दानकी विधि कही गयी है। इस प्रकार दी जानेवाली धेनुका जो दर्शन करते हैं, उन्हें भी परम गति प्राप्त होती है। इस

* यह पूरा मन्त्र इस प्रकार है—'मधु वाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः॥ माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः। मधु नक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिवं रजः। मधु द्यौरस्तु नः पिता॥ मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमाँ अस्तु सूर्यः। माध्वीर्गावो भवन्तु नः॥' (ऋक्० १।९०।६—८, यजु० १३।२७—२९)।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

दानके साथ अपनी शक्तिके अनुसार एक हजार अथवा सौ सोनेके सिक्के देने चाहिये। महाराज! 'क्षीरधेनु' देनेसे जो फल होता है, अब उसे सुनो—इसका दाता साठ हजार वर्षोंतक इन्द्रलोकमें स्थान पाता है। फिर वह उत्तम माला और चन्दनसे सुशोभित होकर अपने पिता-पितामह आदिके साथ दिव्य विमानमें सवार होकर ब्रह्मलोकको जाता है। वहाँ वह बहुत दिनोंतक आनन्दका अनुभव करके फिर सूर्यके समान प्रकाशमान उत्तम विमानपर सवार होकर वह विष्णुलोकमें जाता है। जाते समय मार्गमें अप्सराएँ उसकी संगीत और वाद्योंसे सेवा करती हैं। वह विष्णुभवनमें बहुत दिनोंतक रहकर फिर श्रीविष्णुमें ही लीन हो जाता है। राजन्! जो पुरुष इस 'क्षीरधेनु'के प्रसङ्गको सुनता है अथवा भक्तिभावसे पढ़ता है, वह सब पापोंसे छूटकर विष्णुलोकमें चला जाता है।

पुरोहित होताजी कहते हैं—राजन्! अब मैं तुम्हें 'दधिधेनु'का विधान बताता हूँ, सुनो। पहले गोबरसे 'गोचर्म'के प्रमाणयुक्त पृथ्वीको लीपकर उसे पुष्पोंसे सुशोभित कर ले और उसपर कुशा बिछा देना चाहिये। फिर उसपर काला मृगचर्म और कम्बल बिछाकर पृथ्वीपर सप्तधान्य बिखेर दे और उसके ऊपर दहीसे भरा हुआ एक घड़ा रखे। उसके चौथाई भागमें बछड़ेके लिये छोटा कलश रखनेका विधान है। सोनेसे उसके मुखकी शोभा बनाये और दो वस्त्रोंसे आच्छादित करके फूल और चन्दनसे उसकी पूजा करे। तत्पश्चात् जो कुलीन एवं साधु स्वभावका हो तथा क्षमा आदि गुणोंसे युक्त हो—ऐसे बुद्धिमान् ब्राह्मणको वह दधिधेनु दान कर दे। धेनुके पुच्छभागमें बैठकर यह विधि सम्पन्न करनी चाहिये। अँगूठी और कानके भूषणोंसे अलंकृतकर खड़ाऊँ, जूता और छाता देकर '**दधिक्राव्णोरकारिषं०**' (ऋक्० ४।३९।६)—यह मन्त्र पढ़कर भलीभाँति सुपूजित 'दधिधेनु'का दान करे। राजेन्द्र! जिस दिन यह दधिमयी धेनु दे, उस दिन दही खाकर ही रह जाय। राजन्! यजमान एक दिन दहीके आहारपर रहे और ब्राह्मणको तीन रात्रियोंतक दहीके आहारपर रहना चाहिये। जो दधिधेनुके दान करते समय इस दृश्यको देखते हैं, उनको परम पदार्थ प्राप्त हो जाता है। जो मनुष्य श्रद्धाके साथ इस प्रसङ्गको सुनता अथवा किसी दूसरेको सुनाता है, वह भी अश्वमेध-यज्ञके फलको प्राप्तकर विष्णुलोकमें चला जाता है। [अध्याय १०५-१०६]

'नवनीतधेनु' तथा 'लवणधेनु'की दानविधि

पुरोहित होताजी बोले—राजन्! अब 'नवनीतधेनु'के दानकी विधि सुनो, जिसे सुनकर मनुष्य सम्पूर्ण पापोंसे छूट सकता है। 'गोचर्मप्रमाण'-की भूमिको गोबरसे लीपकर उसके ऊपर काला मृगचर्म बिछाकर ढाई सेर वजनका मक्खनसे भरा हुआ एक घड़ा वहाँ स्थापित करे। उसके उत्तर दिशामें चतुर्थांश भागवाला एक कलश बछड़ेके प्रतिनिधिस्वरूप रखे। राजन्! उस घड़ेपर ही सोनेकी सींग और सुन्दर मुखकी रचना करनी चाहिये। मोतियोंसे उसके नेत्र तथा गुड़से जीभ बनाये। फूलोंद्वारा उसके होंठ, फलोंद्वारा दाँत तथा स्वच्छ सूत्रोंद्वारा उसका गलकम्बल बनाये, अथवा शर्करासे उसकी जीभ एवं रेशमी सूत्रोंसे उसके गलकम्बलका निर्माण करे। राजन्! मक्खनसे उसका थन बनाये, ईखसे चरण, उसकी ताम्रमय पीठ, रौप्यमय खुरकी रचनाकर दर्भमय

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

रोमोंसे उस धेनुको अलंकृत करे। पासमें पञ्चरत्न रखकर उसके चारों ओर तिलसे भरे हुए चार पात्र रख दिये जायँ। उस कलश (-रूपी गौ)-को दो वस्त्रोंसे ढककर चन्दन और फूलसे सुशोभित करे। फिर चारों दिशाओंमें दीपक प्रज्वलित कर वह गौ ब्राह्मणको अर्पण कर दे। पूर्वोक्त धेनुओंके विषयमें जो मन्त्र कहे गये हैं, उन्हीं मन्त्रोंका यहाँ भी जप करना चाहिये। साथमें इतना अधिक कहे—देवि! पूर्व समयमें सम्पूर्ण देवताओं और असुरोंने मिलकर समुद्रका मन्थन किया था। उस अवसरपर यह दिव्य अमृतमय पवित्र नवनीत निकला, जिससे सम्पूर्ण प्राणियोंकी तृप्ति होती है। ऐसे नवनीतको मेरा नमस्कार! ऐसा कहकर परिवारवाले ब्राह्मणको वह गौ देना चाहिये। धेनु देनेके पश्चात् दोहनीपात्र और उसके उपकरण दे तथा उस गौको ब्राह्मणके घरतक पहुँचा दे। राजन्! इस धेनुका दान लेनेवाले ब्राह्मणको चाहिये कि उस दिन वह हविष्य तथा रसपर ही रह जाय और देनेवाला भी इसी प्रकार तीन दिनोंतक रहे। राजन्! धेनुदान करते समय इस दृश्यको देखनेवाला भी सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त होकर भगवान् शिवके सायुज्यको प्राप्त कर लेता है। वह मानव अपने पहले हुए पितरों तथा आगे होनेवाले संततियोंके साथ प्रलयपर्यन्त विष्णुलोकमें निवास करता है। जो भक्तिपूर्वक इस प्रसङ्गको सुनता तथा सुनाता है, वह भी सम्पूर्ण पापोंसे शुद्ध होकर विष्णुलोकमें सम्मानित होता है।

पुरोहित होताजी बोले—राजेन्द्र! अब 'लवणधेनु' दानका प्रसङ्ग सुनो। मनुष्यको चाहिये कि वह एक मन वजनके नमकसे एक धेनु बनाकर लिपी हुई पवित्र भूमिपर मृगचर्मके ऊपर कुशा बिछाकर उसपर इस लवणमयी धेनुकी स्थापना करे। साथमें चार सेर नमकका एक बछड़ा भी बनाना चाहिये, जिसके चरण ईखसे बने हों। उसके मुँह और सींग सोनेके तथा खुर चाँदीके होने चाहिये। राजन्! उसके मुखका अन्तर्भाग गुड़का, दाँत फलके, जीभ शर्कराकी, नासिका चन्दनकी, आँखें रत्नकी, कान पत्तोंके, कोख श्रीखण्डकी, थन नवनीतके, पुच्छ सूत्रमय, पृष्ठ ताम्रमय और उसके रोयें कुशके हों। राजेन्द्र! पासमें काँसेकी दोहनीपात्र भी रखना चाहिये। फिर घण्टा और आभूषणोंसे उस धेनुको भूषित करे। चन्दन, फूल और धूप आदिसे विधिपूर्वक उसकी पूजाकर दो वस्त्रोंसे ढककर फिर उसे ब्राह्मणको अर्पण कर दे। नक्षत्र और ग्रहोंद्वारा कष्ट होनेपर मनुष्य किसी भी समय लवणधेनुका दान कर सकता है। वैसे ग्रहण, संक्रान्तिकाल, व्यतीपात योग और अयन बदलते समय इसके दानकी विशेष विधि है। दान ग्रहण करनेवाला ब्राह्मण साधु-स्वभावका, शुद्ध कुलमें उत्पन्न, बुद्धिमान्, वेद और वेदान्तका पूर्ण विद्वान्, श्रोत्रिय और अग्निहोत्री होना चाहिये तथा राजन्! ऐसे ब्राह्मणको, जो अमत्सरी—(किसीसे द्वेष न करता) हो, उसे यह गौ देनी चाहिये। इस प्रकार पूजा करके मन्त्र पढ़कर गौके पूँछकी ओर बैठकर गौका दान करना चाहिये। साथ ही छाता-जूता भी दान करना चाहिये। फिर उसे दो वस्त्रोंसे ढककर अँगूठी, कानके कुण्डलोंसे पूजा करके दक्षिणा और कम्बल प्रदान करे। पहले कही हुई विधिका पालन करनेके साथ अपनी शक्तिके अनुसार सुवर्णसे ब्राह्मणकी विधिवत् पूजाकर ब्राह्मणके हाथमें दक्षिणासहित गौकी पूँछ पकड़ा दे। साथ ही दान करते समय कहना चाहिये—'ब्राह्मणदेव! आप इस रुद्ररूपी धेनुको स्वीकार करें। आपको मेरा नमस्कार है।' फिर गौसे प्रार्थना करे—'परमवन्दनीये! रुद्ररूपिणी

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

गो! तुम्हें नमस्कार। तुम मेरा मनोरथ पूर्ण करो। लवणधेनु दानकर दाता एक दिन लवणके आहारपर रहे और लेनेवाले ब्राह्मणको तीन रातोंतक लवणके आहारपर रहना चाहिये। दाता इस दानके फलस्वरूप, जहाँ भगवान् शंकरका निवास है, उसे प्राप्त कर लेता है। जो भक्तिके साथ इसका श्रवण करता है अथवा दूसरेको सुनाता है, वह मनुष्य सम्पूर्ण पापोंसे छूटकर भगवान् रुद्रके लोकको प्राप्त करता है।

[अध्याय १०७-१०८]

'कार्पास' एवं 'धान्य-धेनु'की दानविधि

पुरोहित होताजी कहते हैं—राजन्! अब कर्पासमयी धेनुके दानकी विधि बताता हूँ, जिसके प्रभावसे मनुष्य उत्तम इन्द्रलोकको प्राप्त करता है। विषुवयोग, अयनके परिवर्तनका समय, युगादितिथि, ग्रहणके अवसर, ग्रहोंकी पीड़ा दुःस्वप्न-दर्शन तथा अरिष्टकी सम्भावना होनेपर मनुष्योंके लिये यह कर्पासधेनुका दान श्रेयोवह होता है। राजन्! दानके लिये गायके गोबरसे लिपी भूमिपर कुश बिछाकर उसपर तिल बिखेरकर बीचमें वस्त्र और मालासे सुशोभित (कपाससे बनी) धेनुकी स्थापना करनी चाहिये। धूप, दीप और नैवेद्य आदिसे श्रद्धापूर्वक (मात्सर्यरहित होकर) उसकी पूजा करनी चाहिये। कृपणताका त्यागकर चार भार कपाससे सर्वोत्तम गौकी रचना करे। दो भारसे गौकी रचना करना मध्यम तथा एक भारसे बनी हुई धेनु अधम श्रेणीकी कही गयी है। धनकी कंजूसीका सर्वथा त्याग करना अनिवार्य है। गायके चौथाई भागमें बछड़ेकी कल्पना करके उसका दान करना चाहिये। सोनेका सींग, चाँदीका खुर, अनेक फलोंके दाँत और रत्नगर्भसे युक्त धेनु होनी चाहिये। श्रद्धाके साथ ऐसी सर्वाङ्गपूर्ण कर्पासमयी धेनु बनाकर उसका मन्त्रोंके द्वारा आह्वान एवं प्रतिष्ठाकर उसे ब्राह्मणको निवेदित कर दे। श्रद्धाके साथ संयमपूर्वक गौको हाथसे स्पर्श करके दान करना चाहिये। पूर्वोक्त विधिका पालन करते हुए मन्त्र पढ़कर दान करे। मन्त्रका भाव इस प्रकार है—'देवि! तुम्हारे अभावमें किसी भी देवताका कार्य नहीं चलता, यदि यह बात सत्य है तो देवि! तुम इस संसारसागरसे मेरी रक्षा करो! मेरा उद्धार करो!'

पुरोहित होताजी कहते हैं—राजन्! अब धान्यमयी धेनुका प्रसङ्ग सुनो, जिससे स्वयं पार्वतीजी भी संतुष्ट हो जाती हैं। विषुवयोग, अयनके परिवर्तनका समय अथवा कार्त्तिककी पूर्णिमाके शुभ समयमें इस दानका विशेष महत्त्व है। इसके दान करनेसे जैसे राहुसे चन्द्रमाका उद्धार होता है, वैसे ही मनुष्य पापसे छूट जाता है। अब उसी धेनुदानकी उत्तम विधि मैं कहता हूँ। राजेन्द्र! दस धेनु-दान करनेसे जो फल मिलता है, वह फल एक धान्यमयी धेनुके दानसे सुलभ हो जाता है। विद्वान् पुरुषको चाहिये कि पहलेकी भाँति गोबरसे लिपी हुई पवित्र भूमिपर काले मृगका चर्म बिछाकर उसपर इस धान्य-धेनुकी स्थापनाकर उसकी पूजा करे। चार दोन, छः मन वजनके अन्नसे बनी हुई धेनु उत्तम और दो दोन, तीन मन अन्नके बनी धेनु मध्यम मानी गयी है। सोनेके सींग, चाँदीके खुर, रत्न-गोमेद तथा अगुरु एवं चन्दनसे उस गायकी नासिका, मोतीसे दाँत तथा घी और मधुसे उस गायके मुखकी रचना करे। श्रेष्ठ वृक्षके पत्तोंसे कानकी रचनाकर काँसेका दोहनीपात्र उसके साथमें रखना चाहिये। उसके चरण ईखके और

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi
In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shandu Peeth

पूँछ रेशमी वस्त्रके बनाये। फिर रत्नोंसे भरे अनेक प्रकारके फलोंको उसके पास रखे। खड़ाऊँ, जूता, छाता, पात्र तथा दर्पण भी वहाँ रखने चाहिये। पहलेके समान सभी अङ्गोंकी कल्पना करे और मधुसे उस गायका सुन्दर मुख बनाये। पुण्यकाल उपस्थित होनेपर पहले-जैसे ही दीपक आदिसे पूजा करनेके पश्चात् सर्वप्रथम स्नान करके श्वेत वस्त्र धारण करे। फिर तीन बार उस गायकी प्रदक्षिणा करे और दण्डकी भाँति उसके सामने लेटकर उसे साष्टाङ्ग प्रणाम करना चाहिये। तत्पश्चात् ब्राह्मणसे प्रार्थना करे—'ब्राह्मणदेवता! आप महान् ऐश्वर्यसे सम्पन्न, वेद और वेदान्तके पारगामी विद्वान् हैं। द्विजश्रेष्ठ! मेरी दी हुई यह गाय प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करनेकी कृपा कीजिये। इस दानके प्रभावसे देवाधिदेव भगवान् मधुसूदन मुझपर प्रसन्न हो जायँ। भगवान् गोविन्दके पास जो लक्ष्मी विराजती हैं, अग्निकी पत्नी स्वाहा इन्द्रकी शची, शिवकी गौरी, ब्रह्माजीकी पत्नी गायत्री, चन्द्रमाकी ज्योत्स्ना, सूर्यकी प्रभा, बृहस्पतिकी बुद्धि तथा मुनियोंकी जो मेधा है, वे सभी यहाँ धान्यमयी अन्नपूर्णादेवी धेनुरूपमें मेरे पास विराजमान हैं।' इस प्रकार कहकर वह धेनु ब्राह्मणको अर्पण कर दे।

इस प्रकार गोदान करनेके बाद दाता व्यक्ति ब्राह्मणकी प्रदक्षिणाकर क्षमा माँगे। राजन्! धन और रत्नोंसहित सम्पूर्ण पृथ्वीके दानसे अधिक पुण्यफल इस धान्यधेनुके दानसे मिलता है। राजेन्द्र! इससे मुक्ति और भुक्तिरूप फल सुलभ हो जाते हैं। अतः इसका दान अवश्य करना चाहिये। इस दानके प्रभावसे संसारमें दाताके सौभाग्य, आयु और आरोग्य बढ़ते हैं और मरनेपर सूर्यके समान प्रकाशमान किङ्किणीकी जालियोंसे सुशोभित विमानद्वारा, अप्सराओंसे स्तुति किया जाता हुआ, वह भगवान् शिवके निवासस्थान कैलासको जाता है। जबतक उसे यह दान स्मरण रहता है, तबतक स्वर्गलोकमें उसकी प्रतिष्ठा होती है। फिर स्वर्गसे च्युत होनेपर वह जम्बूद्वीपका राजा होता है। 'धान्यधेनु'का यह माहात्म्य स्वयं भगवान्‌द्वारा कथित है। इसे सुनकर मनुष्य समस्त पापोंसे मुक्त एवं परम शुद्ध-विग्रह होकर रुद्रलोकमें पूजा, प्रतिष्ठा और सम्मान प्राप्त करता है। [अध्याय १०९-११०]

कपिलादानकी विधि एवं माहात्म्य

पुरोहित होताजी कहते हैं—राजन्! अब परमोत्तम कपिला गौका वर्णन करता हूँ, जिसके दान करनेसे मनुष्य उत्तम विष्णुलोकको प्राप्त होता है। पूर्वनिर्दिष्ट विधिके अनुसार बछड़े-सहित समस्त अलंकारोंसे अलंकृत तथा रत्नोंसे विभूषितकर कपिला-धेनुका दान करना चाहिये। (भगवान् वराह पृथ्वीसे कहते हैं—) भामिनि! कपिला गायके सिर और ग्रीवामें सम्पूर्ण तीर्थ निवास करते हैं। जो मनुष्य प्रातःकाल उठकर कपिला गौके गले एवं मस्तकसे गिरे हुए जलको प्रेमपूर्वक सिर झुकाकर प्रणाम करता है, वह पवित्र हो जाता है और उसी क्षण उसके पाप भस्म हो जाते हैं। प्रातःकाल उठकर जिसने कपिला गौकी प्रदक्षिणा की, उसने मानो सम्पूर्ण पृथ्वीकी प्रदक्षिणा कर ली और उसके दस जन्मके किये हुए पाप उसी क्षण नष्ट हो जाते हैं। पवित्र व्रतके आचरण करनेवाले पुरुषको कपिला गौके मूत्रसे स्नान करना चाहिये। ऐसा करनेवाला मानो गङ्गा आदि सभी तीर्थोंमें स्नान कर चुका। भक्तिपूर्वक

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

उसके मूत्रसे स्नान करनेपर मनुष्य पवित्र हो जाता है। फिर जो जीवनपर्यन्त स्नान करता है, वह पापसे छूट जाय, इसमें तो संदेह ही क्या? एक मनुष्य जो एक हजार साधारण गौ-दान करता है और दूसरा व्यक्ति जो एक कपिला-दान करता है—इन दोनोंका फल समान है। यदि कपिला गौ कहीं मर गयी हो तो उसकी हड्डीकी गन्धको भी मनुष्य जबतक सूँघता है तबतक उसके शरीरमें पुण्य व्याप्त होते रहते हैं। कपिलाके शरीरको खुजलाना और उसकी सेवा करना परम श्रेष्ठ धर्म माना जाता है। भय एवं रोग आदिके अवसरपर इसकी सेवा करनेसे सौ गौके दानके तुल्य पुण्य होता है। जो प्रतिदिन भूखी हुई कपिला गौको एक भी तृण देता है, उसे 'गोमेधयज्ञ'का फल होता है और वह अग्निके समान देदीप्यमान होकर दिव्य विमानोंद्वारा भगवान्‌के लोकको जाता है।

सोनेके समान रंगवाली कपिला प्रथम श्रेणीकी है और पिङ्गलवर्णवाली द्वितीय श्रेणीकी। लाल आँखवाली कपिला गौ तीसरी श्रेणीकी कपिला कही जाती है तथा वैडूर्यके समान पिङ्गलवर्णवाली चौथी कपिला है। अनेक वर्णोंवाली कपिला पाँचवीं, कुछ श्वेत और पीले रंगवाली छठी, सफेद एवं पीली आँखवाली सातवीं, काले और पीले रंगसे मिश्रित आठवीं, गुलाबी रंगवाली नवीं, पीली पूँछवाली दसवीं और सफेद खुरवाली ग्यारहवीं श्रेणीकी कपिला गौ कही गयी है। इन सम्पूर्ण लक्षणोंसे युक्त तथा अखिल अलंकारोंसे अलंकृत की हुई कपिला गौ भक्त ब्राह्मणको दान करनी चाहिये। इस गौके दान करनेपर भुक्ति और मुक्तिकी प्राप्ति होती है। साथ ही इस गौका दान करनेके प्रभावसे देनेवालेको भगवान् विष्णुका मार्ग सुलभ हो जाता है।

[अध्याय १११]

कपिला-माहात्म्य, 'उभयतोमुखी' गोदान, हेम-कुम्भदान और पुराणकी प्रशंसा

पुरोहित होताजी कहते हैं—महाराज! अब मैं कपिलाके भेद तथा उभयमुखी गोदानका वर्णन करता हूँ, जिसे पूर्वकालमें पृथ्वीके पूछनेपर भगवान् वराहने कहा था।

पृथ्वीने पूछा—प्रभो! आपने जिस कपिला गौकी बात कही है तथा आपके द्वारा जिसका उत्पादन हुआ है, वह हेमधेनु सदा पुण्यमयी है। प्रभो! उसके कितने और क्या लक्षण हैं तथा स्वयम्भू ब्रह्माजीने स्वयं कितने प्रकारकी कपिलाएँ बतलायी हैं? माधव! दान करनेपर यह कपिला गौ किस प्रकारका पुण्य प्रदान कर सकती है? जगद्गुरो! विस्तारपूर्वक यह प्रसङ्ग मैं आपसे सुनना चाहती हूँ।

भगवान् वराह कहते हैं—देवि! यह प्रसङ्ग पवित्र एवं पापोंका नाश करनेवाला है। इसे भलीभाँति बतलाता हूँ, सुनो। इसके सुननेमात्रसे ही पुरुष अखिल पापोंसे मुक्त हो जाता है। वरानने! पूर्वकालमें ब्रह्माजीने सम्पूर्ण तेजोंका सार एकत्रकर यज्ञोंमें अग्निहोत्रकी सम्पन्नताके लिये कपिला गौका निर्माण किया था। वसुंधरे! कपिला गौ पवित्रोंको पवित्र करनेवाली, मङ्गलोंका मङ्गल तथा पुण्योंमें परम पुण्यमयी है। तप इसीका रूप है, व्रतोंमें यह उत्तम व्रत, दानोंमें यह उत्तम दान तथा निधियोंमें यह अक्षय निधि है। पृथ्वीमें गुप्तरूपसे या प्रकटरूपसे जितने पवित्र तीर्थ हैं एवं सम्पूर्ण लोकोंमें ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य प्रभृति द्विजातियोंद्वारा सायंकाल और प्रातः-काल अग्निहोत्र आदि हवनकी जो भी क्रियाएँ

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

हैं, वे सभी कपिला गायके घृत, क्षीर तथा दहीसे होती हैं। विधिपूर्वक मन्त्रोंका उच्चारणकर इनमें व्याप्त घृतसे जो हवन करता या अतिथिकी पूजा करता है, वह सूर्यके समान प्रकाशमान विमानों-पर चढ़कर सूर्यमण्डलके मध्यभागसे होते हुए विष्णुलोकमें जाता है। अनन्तरूपिणी कपिला धेनुमें सिद्धि और बुद्धि देनेकी पूर्ण योग्यता है। सम्पूर्ण लक्षणोंसे लक्षित जिन कपिला धेनुओंका पहले वर्णन किया गया है, वे सभी महान् ऐश्वर्यसे सम्पन्न हैं। उनकी कृपासे निश्चय ही मानवोंका उद्धार हो जाता है। जिनमें कपिलाके एक भी लक्षण घटित हो, ऐसी स्थितिमें सम्पूर्ण पापोंका नाश करनेवाली कपिलाधेनुको सर्वोत्तम कहा गया है। ऐसी कपिलाके पुच्छ, मुख और रोम सब अग्निके समान माने जाते हैं। वह अग्निमयी कपिलादेवी 'सुवर्णाख्या' बतायी जाती है। जो ब्राह्मण प्रबल इच्छाके कारण हीन व्यक्तिसे ऐसी कपिलाधेनु दानमें लेकर उसका दूध पीता है तो इस निन्दित कर्मके कारण उस अधम ब्राह्मणको पतितके समान समझना चाहिये। जो ब्राह्मण हीन व्यक्तियोंसे कपिलाका दान लेता है उसके पितर उसी समयसे अपवित्र स्थानमें पड़ जाते हैं। ऐसे ब्राह्मणसे बात भी नहीं करनी चाहिये और एक आसनपर भी नहीं बैठना चाहिये। वसुंधरे! ब्राह्मण-समाज दूरसे ही ऐसे प्रतिग्राही ब्राह्मणका त्याग कर दे। यदि ऐसे प्रतिग्राही ब्राह्मणसे वार्तालाप हो गया या एक आसनपर बैठ गया तो उस बैठनेवाले ब्राह्मणको प्राजापत्य एवं कृच्छ्र-व्रत करना चाहिये, तब उसकी शुद्धि होती है। अन्य करोड़ों विस्तृत दानोंकी क्या आवश्यकता? एक कपिला गौका दान ही साधारण हजार गौओंके दानके समान है। श्रोत्रिय, दरिद्र, शुद्ध आचारवाले तथा अग्निहोत्री ब्राह्मणको एक भी कपिला गौ देना सर्वोत्तम है।

गृहाश्रमी पुरुषको चाहिये कि दान देनेके लिये जल्दी ही प्रसव करनेवाली धेनुका पालन करे। जिस समय वह कपिला धेनु आधा प्रसव करनेकी स्थितिमें हो जाय, उसी समय उसे ब्राह्मणको दान कर देना चाहिये। जब उत्पन्न होनेवाले बछड़ेका मुख योनिके बाहर दीखने लगे और शेष अङ्ग अभी भीतर ही रहे, अर्थात् अभी पूरे गर्भका उसने मोचन (बाहर) नहीं किया, तबतक वह धेनु सम्पूर्ण पृथ्वीके समान मानी जाती है। वसुंधरे! ऐसी गायका दान करनेवाले पुरुष ब्रह्मवादियोंसे सुपूजित होकर ब्रह्मलोकमें उतने करोड़ वर्षोंतक निवास करते हैं, जितनी कि धेनु और बछड़ेके रोमोंकी संख्याएँ होती हैं। सोनेके सींग, चाँदीके खुरसे सम्पन्न करके कपिला गौ ब्राह्मणके हाथमें दे। दान करते समय उस धेनुका पुच्छ ब्राह्मणके हाथपर रख दे। हाथपर जल लेकर शुद्ध वाणीमें ब्राह्मणसे संकल्प पढ़वावे। जो पुरुष इस प्रकार (उभयमुखी गौका) दान करता है, उसने मानो समुद्रसे घिरी हुई पर्वतों और वनोंसे तथा रत्नोंसे परिपूर्ण समूची पृथ्वीका दान कर दिया—इसमें कोई संशय नहीं। ऐसा मनुष्य इस दानसे निश्चय ही पृथ्वी-दानके तुल्य फलका भागी होता है। वह अपने पितरोंके साथ आनन्दित होकर भगवान् विष्णुके परम धाममें पहुँच जाता है। ब्राह्मणका धन छीननेवाला, गोघाती अथवा गर्भपात करनेवाला पापी, दूसरोंको ठगनेवाला, वेदनिन्दक, नास्तिक, ब्राह्मणोंका निन्दक और सत्कर्ममें दोषदृष्टि रखनेवाला महान् पापी समझा जाता है। किंतु ऐसा घोर पापी भी बहुतसे सुवर्णोंसे युक्त उभयमुखी गौके दानसे सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त हो जाता है। श्रेष्ठ भावोंवाली पृथ्वी देवि! दाताको चाहिये कि उस दिन खीरका भोजन करे अथवा दूधके ही सहारे रहे। गोदानके

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

समय ब्राह्मणसे प्रार्थना करे—'मैं यह उभय-मुखी गाय देता हूँ आप इसे स्वीकार करें। इसके प्रभावसे मेरा इस लोक तथा परलोकमें निश्चय ही कल्याण हो।' फिर गायसे प्रार्थना करे—'अपने वंशकी वृद्धिके लिये मैंने तुम्हें दानमें दिया। तुम सदा मेरा कल्याण करो।' दान लेते समय ब्राह्मण उभयमुखी धेनुसे प्रार्थना करे—'धेनो! अपने कुटुम्बकी रक्षाके लिये मैं दानरूपमें तुम्हें स्वीकार कर रहा हूँ। देवताओंकी धात्रि! तुम्हें नमस्कार। रुद्राणि! तुम्हें बार-बार नमस्कार। तुम्हारी कृपासे मेरा निरन्तर कल्याण हो। आकाश तुम्हारा दाता और पृथ्वी गृहीत्री है। आजतक कौन इसे किसके लिये देनेमें समर्थ हो सका है!' वसुंधरे! ऐसा कह लेनेपर दाता ब्राह्मणको विदा करे और ब्राह्मण उस धेनुको अपने घर ले जाय।

वसुंधरे! इस प्रकार प्रसवके समय गायका जो दान करता है, उसने मानो सात द्वीपोंवाली पृथ्वीका दान कर दिया, इसमें कोई संशय नहीं। चन्द्रमाके समान मुखवाली, सूक्ष्म मध्य भागवाली, तपाये हुए सुवर्णवर्णकी कपिला गौकी प्रसव करते समय सम्पूर्ण देवसमुदाय निरन्तर स्तुति करता है। जो व्यक्ति प्रातःकाल उठकर समाहितचित्तसे तीन बार भक्तिपूर्वक इस कल्प—'गोदान-विधान' को पढ़ता है, उसके वर्षभरके किये हुए पाप उसी क्षण इस प्रकार नष्ट हो जाते हैं, जैसे वायुके झोंकेसे धूलके समूह। जो पुरुष श्राद्धके अवसरपर इस परम पावन प्रसङ्गका पाठ करता है, उस बुद्धिमान् पुरुषके अन्तरमें दिव्य संस्कार भर जाते हैं और पितर उसकी वस्तुओंको बड़े प्रेमसे ग्रहण करते हैं। अमावास्या तिथिमें ब्राह्मणोंके सम्मुख जो इसका पाठ करता है, उसके पितर सौ वर्षके लिये तृप्त हो जाते हैं। जो पुरुष मन लगाकर निरन्तर इसका श्रवण करता है, उसके सौ वर्षोंके भी किये हुए पाप नष्ट हो जाते हैं।

पुरोहित होताजी कहते हैं—राजेन्द्र! इस परम प्राचीन गोदान-महिमाके रहस्यको भगवान् वराहने पृथ्वीको सुनाया था। सम्पूर्ण पापोंको शान्त करनेवाला यह पूरा प्रसङ्ग मैंने तुम्हें सुना दिया। माघमासके शुक्लपक्षकी द्वादशीके दिन तिलधेनुका दान करना चाहिये। इसके फलस्वरूप दाता सम्पूर्ण कामनाओंसे सम्पन्न होकर अन्तमें भगवान् विष्णुके पदको प्राप्त करता है। महाराज! श्रावणमासके शुक्लपक्षकी द्वादशी तिथिके दिन सुवर्णके साथ प्रत्यक्ष धेनुका दान करना चाहिये। राजेन्द्र! ऐसे तो सभी समयमें सब प्रकारकी धेनुओंका दान करना उत्तम है, पर इस दानसे सब प्रकारके पाप शान्त हो जाते हैं और दाताको भुक्ति-मुक्ति सुलभ हो जाती है। यह प्रसङ्ग बड़ा विस्तृत है, जिसे मैंने तुमसे संक्षेपमें ही बतलाया है। धेनुओंका दान मनुष्योंके लिये सब प्रकारकी कामनाएँ पूर्ण करनेवाला है। राजेन्द्र! जो ऐसा कुछ भी नहीं करता, वह भूखसे अत्यन्त पीड़ित होता रहता है।

राजन्! इस समय कार्त्तिकका महीना चल रहा है। इसमें भौतिक रत्नों और ओषधियोंसे युक्त 'ब्रह्माण्ड' का दान करना चाहिये। देवता, दानव और यक्ष सब ब्रह्माण्डके ही अन्तर्गत हैं। यह सम्पूर्ण बीजों और रसोंसे समन्वित है। इसे हेममय बताया गया है। कार्त्तिकमें शुक्लपक्षकी द्वादशीके दिन अथवा विशेष करके पूर्णमासीके अवसरपर इस रत्नसहित ब्रह्माण्डाकृतिको श्रेष्ठ पुरोहितको भक्तिके साथ दान करे। राजन्! ब्रह्माण्डभरमें जितने तीर्थ हैं तथा जितने दान हैं, वे सभी इस ब्रह्माण्डदाता पुरुषके द्वारा सम्पन्न हो गये—ऐसा

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

समझना चाहिये। संक्षेपसे यह प्रसङ्ग तुम्हें बता दिया। राजन्! जो पुरुष हजारों दक्षिणाओंसे सम्पन्न होनेवाला यज्ञ करता है, वह तो ब्रह्माण्डके किसी एक देशकी पूजा करता है, पर जो पुरुष इस सारे ब्रह्माण्डकी अर्चनाकर, सामग्री दान करता है, उसके द्वारा मानो सभी हवन, पाठ और कीर्तन विधिपूर्वक सम्पन्न हो गये।'

इस प्रकारकी बात सुनकर राजाने उसी समय एक सुवर्ण-कुम्भमें ब्रह्माण्डकी कल्पनाकर विधिपूर्वक उन ऋषिको ब्रह्माण्डका दान किया और उसके फलस्वरूप वह राजा सम्पूर्ण कामनाओंसे सम्पन्न हो स्वर्गको चला गया। अतएव राजेन्द्र! तुम भी यह दान करके सुखी हो जाओ। वसिष्ठजीके ऐसा कहनेपर उस राजाने भी ऐसा ही किया। फिर उन्हें वह परम सिद्धि प्राप्त हुई, जिसे पाकर मनुष्य कभी सोच नहीं करता।*

भगवान् वराह कहते हैं—देवि! यह संहिता सम्पूर्ण इच्छाओंको पूर्ण करनेवाली है। इसका तुम्हारे सामने वर्णन कर दिया। वरारोहे! 'वराह' नामसे प्रसिद्ध इस संहितामें अखिल पातकोंको नष्ट करनेकी शक्ति है। सर्वज्ञ परम प्रभुसे ही इसका उद्भव हुआ था। तत्पश्चात् ब्रह्माजी इसके विशेषज्ञ हुए। ब्रह्माजीने इसे अपने पुत्र पुलस्त्यजीको बताया। पुलस्त्यजीने परशुरामजीको, परशुरामजीने अपने शिष्य उग्रको और उग्रने मनुको इसकी शिक्षा दी। यह तो पूर्वकल्पकी बात हुई। अब भविष्यकी बात सुनो। धराधरे! तुम्हारी कृपासे कपिल आदि सिद्ध पुरुष तपस्या करके इसे जाननेमें समर्थ होंगे। इसी क्रमसे फिर इसका ज्ञान वेदव्यासको होगा। व्यासदेवके शिष्य रोमहर्षणि नामसे विख्यात होंगे। वे शुनकके पुत्र शौनकसे इसका कथन करेंगे, इसमें कुछ संदेह नहीं। कृष्णद्वैपायन वेदव्यासजी सबके गुरु होंगे। वे अठारह पुराणोंके ज्ञाता हैं, जो इस प्रकार कहे गये हैं—पहला ब्रह्मपुराण, दूसरा पद्मपुराण, तीसरा वायुपुराण, चौथा शिवपुराण, पाँचवाँ भागवतपुराण, छठा नारदपुराण, सातवाँ मार्कण्डेयपुराण, आठवाँ अग्निपुराण, नवाँ भविष्यपुराण, दसवाँ ब्रह्मवैवर्तपुराण, ग्यारहवाँ लिङ्गपुराण, बारहवाँ वराहपुराण, तेरहवाँ स्कन्दपुराण, चौदहवाँ वामनपुराण, पंद्रहवाँ कूर्मपुराण, सोलहवाँ मत्स्यपुराण, सत्रहवाँ गरुडपुराण और अठारहवाँ ब्रह्माण्डपुराण। वसुंधरे! जो पुरुष कार्त्तिकमासकी द्वादशी तिथिके दिन भक्तिपूर्वक इसका पठन एवं व्याख्यान करता है, वह यदि संतानहीन हो तो उसे अवश्य ही पुत्रकी प्राप्ति होती है। प्राणियोंको आश्रय देनेवाली देवि! जिसके घरमें यह लिखा हुआ प्रसङ्ग सदा पूजित होता है, उसके यहाँ स्वयं भगवान् नारायण विराजते हैं। जो भक्तिके साथ निरन्तर इसका श्रवण करता है तथा सुनकर भगवान् आदिवराहसे सम्बन्ध रखनेवाले इस 'वराहपुराण' की पूजा करता है, उसने मानो सनातन भगवान् विष्णुकी पूजा कर ली। वसुंधरे! इसे सुनकर इस ग्रन्थ तथा भगवान्‌की गन्ध-पुष्पमाला और वस्त्रोंसे पूजन तथा भोजन-वस्त्रद्वारा ब्राह्मणोंका सम्मान करना चाहिये। यदि राजा हो तो अपनी शक्तिके अनुसार बहुतसे ग्राम देकर इस पुस्तक—वराहपुराणकी पूजा करे। ऐसा करनेवाला मानव सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त होकर भगवान् विष्णुके सायुज्यको प्राप्त कर लेता है। [अध्याय ११२]

---

* [**विशेष द्रष्टव्य**—वराहपुराणके ये 'तिलधेनु' आदि दानके ९९ से ११२ तकके अध्याय 'कृत्यकल्पतरु', 'अपरार्क', 'हेमाद्रि दानखण्ड', नीलकण्ठ भट्टके 'दानमयूख', रघुनन्दनके 'दानतत्त्व' तथा अन्योंकी 'दानचन्द्रिका', 'दानकौमुदी', वल्लालसेनके 'दानसागर' आदिमें प्रायः सर्वथा इसी क्रमसे इन्हीं श्लोकोंमें प्राप्त होते हैं। इनमें 'अपरार्क' का तथा 'कृत्यकल्पतरु' के रचयिता पं० लक्ष्मीधरका समय १०वीं एवं ११वीं शती है। उस समय इस पुराणकी कितनी प्रतिष्ठा थी, यह इससे सूर्यालोककी तरह सुस्पष्ट हो जाता है।]

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

पृथ्वीद्वारा भगवान्‌की विभूतियोंका वर्णन

नैमिषारण्यके ऋषिसत्रमें सूतजीने कहा कि एक बार श्रीसनत्कुमारजी भ्रमण करते हुए पृथ्वीसे आकर मिले और पूछा—देवि! जिनके आधारपर तुम अवलम्बित हो तथा जिन वराहभगवान्‌से तुमने पुराणका श्रवण किया है, उसे तत्त्वपूर्वक कहनेकी कृपा करो। ब्रह्मपुत्र सनत्कुमारकी बात सुनकर पृथ्वीने उनसे इस प्रकार कहना आरम्भ किया।

पृथ्वी बोली—विप्रेन्द्र! भगवद्विभूतिका यह विषय अत्यन्त गोपनीय है। जिस समय संसारमें चन्द्रमा, अग्नि, सूर्य और नक्षत्र—इन सभीका अभाव था, सभी दिशाएँ स्तम्भित थीं, किसीको कुछ भी ज्ञान नहीं था, न पवनकी गति थी, न अग्नि और विद्युत् ही अपना प्रकाश फैला सकते थे, उस समय परम प्रभु परमात्माने मत्स्यका अवतार धारणकर रसातलसे वेदोंका उद्धार किया। फिर उन्होंने कूर्मका अवतार धारणकर अमृत प्रकट किया। हिरण्यकशिपु वर पाकर दृप्त (गर्वीला) हो गया था, उस समय भगवान्‌ने नरसिंहका अवतार धारणकर उसका संहार करके प्रह्लाद तथा विश्वकी रक्षा की। इसी प्रकार उन्होंने परशुराम तथा रामका अवतार धारणकर रावणादि दुष्टोंका संहार किया और भगवान् वामनद्वारा बलि बाँधे गये।

फिर सृष्टिके आरम्भमें जब मैं समुद्रमें डूबी जा रही थी, तब मैंने भगवान्‌से प्रार्थना की—'जगत्प्रभो! आप सम्पूर्ण विश्वके स्वामी हैं। देवेश! आप मुझपर प्रसन्न होइये। माधव! भक्तिपूर्वक मैं आपकी शरणमें पहुँची हूँ, आप कृपा करें। सूर्य, चन्द्रमा, यमराज और कुबेर—इन रूपोंमें आप ही विराजमान हैं। इन्द्र, वरुण, अग्नि, पवन, क्षर-अक्षर, दिशा और विदिशा आप ही हैं। हजारों युग-युगान्तरोंके समाप्त हो जानेपर भी आप सदा एकरस स्थित रहते हैं। पृथ्वी-जल-तेज-वायु और आकाश—ये पाँच महाभूत तथा शब्द-स्पर्श-रूप-रस और गन्ध—ये पाँच विषय आपके ही रूप हैं। ग्रहोंसहित सम्पूर्ण नक्षत्र तथा कला, काष्ठा और मुहूर्त आपके ही परिणाम हैं। सप्तर्षिवृन्द, सूर्य-चन्द्र आदि ज्योतिश्चक्र और ध्रुव—इन सबमें आप ही प्रकाशित होते हैं। मास-पक्ष, दिन-रात, ऋतु और वर्ष—ये सब भी आप ही हैं। नदियाँ, समुद्र, पर्वत तथा सर्पादि जीवोंके रूपमें परम प्रसिद्ध आप ही सत्तावान् हैं। मेरु-मन्दराचल, विन्ध्य, मलय-दर्दुर, हिमालय, निषध आदि पर्वत और प्रधान आयुध सुदर्शन चक्र—ये सब आपके ही रूप हैं। आप धनुषोंमें शिवजीके धनुष—'पिनाक' हैं, योगोंमें उत्तम 'सांख्य' योग हैं। लोकोंके लिये आप परम परायण भगवान् श्रीनारायण हैं। यज्ञोंमें आप 'महायज्ञ' हैं और यूपों (यज्ञस्तम्भों)-में आप स्थिर रहनेकी शक्ति हैं। वेदोंमें आपको 'सामवेद' कहा जाता है। आप महाव्रतधारी पुरुषके अवयव वेद और वेदाङ्ग हैं। गरजना, बरसना आपके द्वारा ही होता है। आप ब्रह्मा हैं। विष्णो! आपके द्वारा अमृतका सृजन होता है, जिसके प्रभावसे जनता जीवन धारण कर रही है। श्रद्धा-भक्ति, प्रीति, पुराण और पुरुष भी आप ही हैं। धेय और आधेय—सारा जगत्, जो कुछ इस समय वर्तमान है, वह आप ही हैं। सातों लोकोंके स्वामी भी आपको ही कहा जाता है। काल, मृत्यु, भूत, भविष्य, आदि-मध्य-अन्त, मेधा-बुद्धि और स्मृति आप ही हैं। सभी आदित्य आपके ही रूप हैं। युगोंका परिवर्तन करना आपका ही कार्य है। आपकी किसीसे तुलना नहीं

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

की जा सकती, अतः आप अप्रमेय हैं। आप नागोंमें 'शेष' तथा सर्पोंमें 'तक्षक' हैं। उद्वह-प्रवह, वरुण और वारुणरूपसे भी आप ही विराजते हैं। आप ही इस विश्वलीलाके मुख्य सूत्रधार हैं। सभी गृहोंमें गृह-देवता आप ही हैं। सबके भीतर विराजमान, सबके अन्तरात्मा और मन आप ही हैं। विद्युत् और वैद्युत एवं महाद्युति—ये आपके ही अङ्ग हैं। वृक्षोंमें आप वनस्पति तथा आप सत्क्रियाओंमें श्रद्धा हैं। आप ही गरुड बनकर अपने आत्मरूप (श्रीहरि)-को वहन करते हैं और उनकी सेवामें परायण रहते हैं। दुन्दुभि और नेमिघोषसे जो शब्द होते हैं, वे आपके ही रूप हैं। निर्मल आकाश आपका ही रूप है। आप ही जय और विजय हैं। सर्वस्वरूप, सर्वव्यापी, चेतन और मन भी आप ही हैं। ऐश्वर्य आपका स्वरूप है। आप पर एवं परात्मक हैं। विष एवं अमृत भी आपके ही रूप हैं। जगद्वन्द्य प्रभो! आपको मेरा बारम्बार प्रणाम है। लोकेश्वर! मैं डूबी जा रही हूँ, आप मेरी रक्षा करें।'

यह भगवान् केशवकी स्तुति है। व्रतमें दृढ़ स्थिति रखनेवाला जो पुरुष इसका पाठ करता है, वह यदि रोगोंसे पीड़ा पा रहा हो तो उसका दुःख दूर हो जाता है। यदि बन्धनमें पड़ा हो तो उससे उसकी मुक्ति हो जाती है। अपुत्री पुत्रवान् बन जाता है। दरिद्रको सम्पत्ति सुलभ हो जाती है। विवाहकी कामनावाले अविवाहित व्यक्तिका विवाह हो जाता है। कन्याको सुन्दर पति प्राप्त होता है। महान् प्रभु भगवान् माधवकी इस स्तुतिका जो पुरुष सायं और प्रातः पाठ करता है, वह भगवान् विष्णुके लोकमें चला जाता है। इस विषयमें कुछ भी अन्यथा विचार नहीं करना चाहिये। भगवान्‌की कही हुई ऐसी वाणीकी जबतक परिचर्चा होती रहती है, तबतक वह पुरुष स्वर्गलोकमें सुख पाता है। [अध्याय ११३]

श्रीवराहावतारका वर्णन

सूतजी कहते हैं—पृथ्वीने जब भगवान् नारायणकी इस प्रकार स्तुति की तो परम समर्थ भगवान् केशव उसपर प्रसन्न हो गये। फिर कुछ समयतक वे योगजनित ध्यान-समाधिमें स्थित रहे। तदनन्तर वे मधुर स्वरमें पृथ्वीसे कहने लगे—'देवि! मैं पर्वतों और वनोंसहित तुम्हारा शीघ्र ही उद्धार करूँगा, साथ ही पर्वतसहित सभी समुद्रों, सरिताओं और द्वीपोंको भी धारण करूँगा।'

इस प्रकार भगवान् माधवने पृथ्वीको आश्वासन देकर एक महान् तेजस्वी वराहका रूप धारण किया और छः हजार योजनकी ऊँचाई तथा तीन हजार योजनकी चौड़ाईमें—यों नौ हजार योजनके परिमाणमें अपना विग्रह बनाया। फिर अपने बायीं दाढ़की सहायतासे पर्वत, वन, द्वीप और नगरोंसहित पृथ्वीको समुद्रसे ऊपर उठा लिया। कई विज्ञानसंज्ञक पर्वत जो पृथ्वीमें लगे हुए थे, वे समुद्रमें गिर पड़े। उनमें कुछ तो संध्याकालीन मेघोंकी तरह विचित्र शोभा प्राप्त कर रहे थे और कुछ निर्मल चन्द्रमाकी तरह भगवान् वराहके मुखके ऊपर लगे सुशोभित हो रहे थे। इनमें कुछ पर्वत भगवान् चक्रपाणिके हाथमें इस प्रकार सुशोभित हो रहे थे, मानो कमल खिले हों। इस प्रकार भगवान् वराह अपनी दाढ़पर एक हजार वर्षोंतक समुद्रसहित पृथ्वीको धारण किये रह गये। उस दाढ़पर ही कई युगोंके कालका परिमाण व्यतीत हो गया। फिर इकहत्तरवें कल्पमें कर्दमप्रजापतिका प्राकट्य हुआ। तबसे अविनाशी भगवान् विष्णु पृथ्वीके आराध्यदेव माने जाते हैं। परम्पराके अनुसार यही उत्तम 'वराह-कल्प' कहलाया।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

तदनन्तर पृथ्वीने भगवान्‌से प्रश्न किया—'भगवन्! आपकी प्रसन्नताका आधार क्या और कैसा है? प्रातः एवं सायंकालकी संध्याका स्वरूप क्या है? भगवन्! पूजामें आवाहन, स्थापन और विसर्जन कैसे किये जाते हैं तथा अर्घ्य, पाद्य, मधुपर्क-स्नानकी सामग्री, अगुरु, चन्दन और धूप कितने प्रमाणमें ग्राह्य हैं? शरद्, हेमन्त, शिशिर, वसंत, ग्रीष्म और वर्षा ऋतुओंमें आपकी आराधनाका क्या विधान है? उस समय उपयोग करने योग्य जो पुष्प और फल हैं तथा करने योग्य और न करने योग्य तथा शास्त्रसे निषिद्ध जो कर्म हैं, उन्हें भी बतानेकी कृपा करें। ऐश्वर्यवान् पुरुष कर्मोंका भोग करते हुए आपको कैसे प्राप्त करते हैं? कर्मों तथा इनके फलोंका दूसरेमें कैसे संक्रमण होता है, आप यह भी कृपाकर बतायें। पूजाका क्या प्रमाण है, प्रतिमाकी स्थापना किस प्रकार और किस प्रमाणमें होनी चाहिये? भगवन्! उपवासकी क्या विधि है और उसे कब किया जाय? शुक्ल, पीत और रक्त वस्त्रोंको किस प्रकार धारण करना चाहिये? उन वस्त्रोंमें कौन वस्त्र किनके लिये हितकारक होता है? प्रभो! आपके लिये फल-शाक आदि कैसे अर्पण किये जायँ? धर्मवत्सल! मन्त्रके द्वारा आमन्त्रित करनेपर आये हुए देवताओंके लिये शास्त्रानुकूल कर्मका अनुष्ठान कैसे हो? प्रभो! भोजन कर लेनेके बाद कौन-सा धर्म-कर्म अनुष्ठेय है तथा जो लोग एक समय भोजनकर आपकी उपासना करते हैं, आपके मार्गका अनुसरण करनेवाले उन व्यक्तियोंको कौन-सी गति प्राप्त होती है? माधव! कृच्छ्र और सांतपनव्रतके द्वारा जो आपकी उपासना करते हैं तथा जो वायुका आहार करके भगवान् श्रीकृष्णकी उपासना करनेवाले हैं, उन्हें कौन-सी गति मिलती है? प्रभो! आपकी भक्तिमें व्यवस्थित रहकर बिना लवणका भोजन करके जो आपकी आराधना करते हैं तथा जो आपकी भक्ति करते हुए पयोव्रत रखते हैं और माधव! जो प्रतिदिन गौको ग्रास देकर आपकी शरणमें जाते हैं, प्रभो! उन्हें कौन-सी गति मिलती है?'

भिक्षापर जीविका चलाकर गृहस्थधर्मका पालन करते हुए जो आपकी ओर अग्रसर होते हैं तथा जो आपके कर्मोंमें परायण रहकर आपके क्षेत्रोंमें प्राण त्यागते हैं, वे महाभाग किन लोकोंमें जाते हैं? जो पञ्चाग्नि-साधनकर उसका फल भगवान् माधवको समर्पण करते हैं तथा जो पञ्चाग्निव्रतमें अथवा कण्टकमय शय्यापर रहकर भगवान् अच्युतका दर्शन करते हैं, वे किस उत्तम गतिको पाते हैं? श्रीकृष्ण! आपके भक्ति-परायण जो व्यक्ति गोशालामें शयन करके आपके शरणागत बने रहते हैं तथा शाकाहार करके आप भगवान् अच्युतकी ओर अग्रसर होते हैं, उनकी कौन-सी गति निश्चित है? भगवन्! जो मानव कण-भक्षण करके तथा पञ्चगव्य पानकर आप माधवकी शरण ग्रहण करते हैं, जो यवके आहारपर तथा गोमय पीकर आपकी उपासना करते हैं, नारायण! उनके लिये वेदोंमें कौन-सी गति एवं विधि निर्दिष्ट है? जो यावक (जौसे बने पदार्थ) खाकर आपकी उपासना करते हैं तथा आपकी सेवामें सदा संलग्न रहकर दीपकको सिरसे प्रणाम करके आपकी अर्चना करते हैं एवं जो प्रतिदिन आपके चिन्तनमें संलग्न रहकर दुग्धाहारपर रहते हैं, वे कौन गति पाते हैं? आपके चिन्तनमें जो समय व्यतीत करनेवाले तथा 'अश्माशन' व्रत करके आपकी सदा उपासना करनेवाले हैं, उन्हें कौन गति सुलभ होती है? भगवन्! भक्ति-परायण जो विद्वान् व्यक्ति दूर्वाका आहार करके आपकी उपासना करते हैं एवं अपने धर्म-गुणका आचरण करते हुए प्रीतिपूर्वक

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

घुटनेके बल बैठकर आपकी अर्चना करते हैं, उन्हें कौन गति मिलती है? यह सब आप बतानेकी कृपा करें। भगवन्! पृथ्वीपर सोनेवाला तथा पुत्र, स्त्री और घरसे सदा उदासीन होकर जो आपकी शरणमें चला जाता है, देवेश्वर! उसे कौन-सी सिद्धि मिलती है? यह बतानेकी कृपा कीजिये।

माधव! आप सम्पूर्ण रहस्योंके ज्ञाता, विश्व-पिता और सम्पूर्ण धर्मोंके निर्णायक हैं, अतः योग और सांख्यमें निर्णीत सर्वहितावह यह निर्णययुक्त उपदेश आप ही कर सकते हैं। जो कृष्ण-नामका कीर्तन अथवा '**ॐ नमो नारायणाय**' कहकर आपकी उपासना करते हैं, उन्हें कौन-सी गति मिलती है? आप कृपापूर्वक यह भी बतायें।

भगवन्! मैं आपकी शिष्या और दासी हूँ। भक्तिभावसे आपकी शरणमें उपस्थित हूँ। जगद्गुरो! मुझपर आपकी कृपा है, लोकमें धर्मके प्रचार-हेतु आप इस धर्मरहस्यको मुझसे कहनेकी कृपा करें—यह मेरी आकांक्षा है।

[अध्याय ११४]

विविध धर्मोंकी उत्पत्ति

सूतजी कहते हैं—उस समय पृथ्वीकी बात सुनकर भगवान् नारायणने कहा—'जगत्को आश्रय देनेवाली देवि! मैं अब स्वर्गमें सुख देनेवाले साधनोंको तुम्हें बतलाऊँगा। मैं श्रद्धारहित प्राणीके सैकड़ों यज्ञों और हजारों प्रकारके दान आदि धर्मोंसे संतुष्ट नहीं होता और न मैं धनसे ही प्रसन्न होता हूँ। किंतु माधवि! यदि कोई व्यक्ति चित्तको एकाग्र करके श्रद्धापूर्वक मेरा ध्यान-स्मरण करता है, वह चाहे बहुत दोषोंसे युक्त भी क्यों न हो, मैं उसके व्यवहारसे सदा संतुष्ट रहता हूँ। पृथ्वीदेवि! जो अत्यन्त बुद्धिमान् पुरुष मुझे आधी रात, अन्धकारपूर्ण समय, मध्याह्न अथवा अपराह्णके समय निरन्तर नमस्कार करते हैं, मैं उनपर सदा संतुष्ट रहता हूँ। मेरी भक्तिमें व्यवस्थित चित्तवाला भक्त कभी भक्तिसे विचलित नहीं होता। द्वादशी तिथिके दिन मेरी भक्तिमें तत्पर रहकर जो लोग उपवास करते हैं—मेरी भक्तिके परायण वे पुरुष मेरा साक्षात् दर्शन प्राप्त कर लेते हैं। सुन्दरि! जो ज्ञानवान् एवं गुणज्ञ हैं तथा जिनका हृदय भक्तिसे ओतप्रोत है, ऐसे मनुष्य इच्छानुसार स्वर्गमें वास करते हैं। सुमुखि! मुझे पाना बड़ा कठिन है। थोड़े प्रयाससे मुझे कोई प्राप्त नहीं कर सकता। माधवि! भक्त जिन कर्मोंके फलस्वरूप मेरा दर्शन पाते हैं, अब उन कर्मोंका तुमसे वर्णन करता हूँ। जो श्रद्धालु व्यक्ति द्वादशी तिथिके दिन उपवास करते हैं, वे मेरा दर्शन प्राप्त कर लेते हैं। जो उपवास करके हाथमें एक अञ्जलि जल लेकर '**ॐ नमो नारायणाय**' कहकर सूर्यकी ओर देखते हुए जलसे उन्हें अर्घ्य प्रदान करते हैं, उनकी अञ्जलिसे जलकी जितनी बूँदें गिरती हैं, उतने हजार वर्षोंतक वे स्वर्गलोकमें प्रतिष्ठा प्राप्त करते हैं।

देवि! जो धर्मात्मा पुरुष द्वादशी तिथिमें विधिके साथ यत्नपूर्वक मेरी उपासना करते हैं तथा श्वेत पुष्पों एवं सुगन्धित धूपसे मेरी अर्चना करते हैं और मन्दिरमें मेरी स्थापनाकर पूजा करते हैं, उन्हें जो गति मिलती है, वह सुनो। वसुंधरे! उज्ज्वल वस्त्र धारणकर मन्त्रोच्चारणपूर्वक मेरे सिरपर पुष्प-अर्पण करना चाहिये। मन्त्रोंके भाव इस प्रकार हैं—'भगवान् श्रीहरि परम पूज्य एवं मान्य पुरुष हैं, वे पुष्पोंको स्वीकार करें एवं मुझपर प्रसन्न हो जायँ। भगवान् विष्णु व्यक्त और अव्यक्त गन्धको स्वीकार करनेवाले हैं। ऐसे

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भगवान् विष्णुके लिये मेरा बारम्बार नमस्कार है। वे सुगन्धोंको पुनः-पुनः स्वीकार करें। भगवान् अच्युत अपनी शरणमें आये हुए भक्तकी बातको सुनकर प्रसन्न हो जाते हैं, उन्हें मेरा नमस्कार है। वे जगद्व्याप्त सूक्ष्म गन्ध तथा मेरे द्वारा अर्पित किये हुए धूपको ग्रहण करें।' जो मेरा उपासक शास्त्रोंका श्रवण करके मेरे लिये ही कार्य-सम्पादन करता है, वह मेरे लोकमें जानेका अधिकारी है। वहाँ वह चार भुजावाला होकर शोभा पाता है। देवि! जो मन्त्रोंद्वारा मेरी पूजा करता है, वह मुझे बड़ा प्रिय लगता है, तुम्हारी प्रसन्नताके लिये यह सब उत्तम प्रसङ्ग मैंने तुम्हें कह सुनाया। साँवाँ, सत्तू, गेहूँ, मूँग, धान, यव, तीना और कंगुनी—ये परम पवित्र अन्न हैं। जो मेरे भक्त पुरुष इन्हें खाते हैं, उन्हें शङ्ख, चक्र, हल और मूसल आदिसहित मेरे चतुर्व्यूह स्वरूपका सदा दर्शन होता है।

वसुंधरे! अब मोक्षकामी ब्राह्मणका कर्म बतलाता हूँ, उसे सुनो। मेरे उपासक ब्राह्मणको अध्यापनादि छः कर्मोंमें निरत रहकर अहंकारसे सदा दूर रहना चाहिये। उसे लाभ और हानिकी चिन्ता छोड़ इन्द्रियोंको वशमें रखकर भिक्षाके आहारपर जीवन बिताना चाहिये। उसे सदा मुझसे प्रीतिवाले कर्म करने चाहिये तथा पिशुनता (चुगली) आदिसे सर्वथा दूर रहना चाहिये। शास्त्रानुसरण करे, बालक, युवा और वृद्ध सबके लिये समान धर्म है। वसुंधरे! एकाग्रचित्त होना, इन्द्रियोंको वशमें रखना और इष्टापूर्त* कर्म करना—वेदोक्त यज्ञोंका अनुष्ठान, बगीचा लगाना, कूप-तालाब आदिका निर्माण करना ब्राह्मणका स्वाभाविक गुण होना चाहिये। ऐसा करनेवाला ब्राह्मण मुझे प्राप्त कर लेता है।

अब मेरी उपासनामें तत्पर रहनेवाले मध्यम श्रेणीके क्षत्रियके कर्तव्य-धर्मोंका वर्णन सुनो। वह दान देनेमें शूर, कर्मकी जानकारी रखनेवाला, यज्ञोंमें परम कुशल, पवित्र क्षत्रिय मुझसे सम्बन्ध रखनेवाले कर्मोंमें ज्ञानवान् तथा अहंकारसे शून्य हो। वह थोड़ा बोले, दूसरोंके गुणोंको समझे, भगवान्में सदा प्रीति रखे, विद्यागुरुसे किसी प्रकार मनमें द्वेष न करे तथा कभी कोई निन्दित कर्म न करे। उसे स्वागत-सत्कारादि करनेमें कुशल तथा कृपणतासे दूर रहना चाहिये। देवि! इन गुणोंसे सम्पन्न क्षत्रिय भी मुझे निःसंदेह प्राप्त कर लेता है।

वसुंधरे! अब मैं अपनी उपासना या भक्तिमें संलग्न रहनेवाले वैश्योंके कर्म बतलाता हूँ। मेरे भक्तिमार्गका नित्य अवलम्बन वैश्यका धर्म है। उसके मनमें धनके प्रति विशेष लोभ, लाभ और हानिके भाव नहीं उठने चाहिये। वह ऋतुकालमें ही अपनी स्त्रीके पास जाय। वह अपने अन्तःकरणमें सदा शान्ति-संतोष बनाये रखे। वह मोहमें न पड़े, पवित्र एवं निपुण रहकर व्रतोंके अवसरपर उपवास करे और सदा मेरी उपासनामें रुचि रखे। वह नित्य गुरुकी पूजा करे तथा अपने सेवकोंपर दया रखे। इस प्रकारके लक्षणोंसे सम्पन्न जो वैश्य अपने कर्मोंका सम्पादन करता है, उसके लिये न तो मैं कभी अदृश्य होता हूँ और न वह कभी मेरे लिये; अर्थात् मेरा और उसका सदा साक्षात् सम्बन्ध बना रहता है।

माधवि! अब मैं शूद्रके उन कर्मोंका वर्णन करता हूँ, जिनका सम्पादन करके वह मुझमें

---

* 'अग्निहोत्रं तपः सत्यं वेदानां चैव साधनम्। आतिथ्यं वैश्वदेवं च इष्टमित्यभिधीयते॥ वापिकूपतडागानि देवतायतनानि च। अन्नप्रदानमर्थिभ्यः पूर्तमित्यभिधीयते॥' (मार्कण्डेयपुराण १८। ६-७, अत्रिसंहिता ४३-४४ के) इस वचनानुसार अग्निहोत्र, तप, वेदपाठ, अतिथिसत्कार, बलिवैश्वदेव—'इष्टकर्म' तथा कूप-बावली, मन्दिर, तालाबका निर्माण, अन्नदान आदि 'पूर्त' कर्म हैं।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

स्थित हो जाता है। जो शूद्र-दम्पति—स्त्री और पुरुष दोनों मेरी उपासना सदा भक्तिभावसे करनेवाले हों, भागवत-मतानुयायी, देश और कालकी जानकारी रखते हों, रजोगुण और तमोगुणके प्रभावसे मुक्त हों, अहंकाररहित, शुद्ध-हृदय, अतिथि-सेवी, विनम्र तथा सबके प्रति श्रद्धालु, अति पवित्र, लोभ और मोहसे दूर और बड़ोंको सदा सादर नमस्कार करनेवाले एवं मेरे स्वरूपका ध्यान करनेवाले हों तो मैं हजारों ऋषियोंको छोड़कर उन्हींपर रीझ जाता हूँ। देवि! तुमने जो चारों वर्णोंके कर्म पूछे थे, मैंने उनका वर्णन कर दिया।

देवि! इस प्रकार मेरी उपासनासे सम्बन्ध रखनेवाले गुणोंका, जिसने भक्तिके साथ अनुष्ठान कर लिया, वह मुझे पानेका अधिकारी है। अब क्षत्रियोंके लिये आचरणीय दूसरा कर्म बतलाता हूँ—उसे सुनो। वसुंधरे! यह ऐसा कर्म है, जिसके प्रभावसे उसे 'योग' सुलभ हो जाता है। वह लाभ और हानिका त्यागकर मोह और कामसे अलग होकर, शीत और उष्णमें निर्विकार रहकर, लाभ और हानिकी चिन्ता न करे। तिक्त-कटु-मधुर, खट्टा-नमकीन और कषाय स्वादवाले पदार्थोंकी भी उसे स्पृहा नहीं करनी चाहिये। उत्तम सिद्धि प्राप्त हो, इसकी भी उसे अभिलाषा नहीं करनी चाहिये। भार्या, पुत्र, माता-पिता—ये सब मुझे सेवाके लिये मिले हैं, वह मनमें ऐसा भाव रखे। पर इनमें भी आसक्ति न रखकर सदा मेरी भक्तिमें ही तत्पर रहे। वह धैर्यवान्, कार्यकुशल, श्रद्धालु एवं व्रतका पालन करनेवाला हो। उत्सुकताके साथ सदा कर्तव्य-कर्ममें तत्पर रहनेवाला, निन्दित कर्मोंसे अलग रहनेवाला और जिसका बचपन, यौवन समानरूपसे धर्ममें बीता हो, जो भोजन थोड़ा करे, कुलीनतासे रहे, सम्पूर्ण प्राणियोंपर दया करनेवाला हो, प्रातःकाल जगनेवाला, क्षमाशील, पर्वकालमें मौन रहनेवाला और जबतक कर्मकी समाप्ति न हो, तबतक इसे निरन्तर करनेवाला हो, ऐसा क्षत्रिय 'योग' का अधिकारी होता है। निश्चित धर्मके पथपर रहकर अखाद्य वस्तुका त्याग करे, धर्मके अनुष्ठानमें परायण रहे और अपना मन सदा मुझमें लगाये रखे। वह यथासमय मल-मूत्रका त्यागकर स्नान कर ले। पुष्प-चन्दन और धूपको मेरी पूजाकी सामग्री मानकर उनका संग्रह करनेमें सदा लगा रहे। कभी कन्दमूल और फलसे ही अपने शरीरका निर्वाह करे। कभी दूध, कभी सत्तू और कभी केवल जलके ही आहारपर रहे। कभी छठी साँझ (तीसरे दिन), कभी चौथी साँझ तथा कभी अनुकूल समयमें निर्दोष फल मिल जायँ तो उनका आहार कर ले। वसुंधरे! दस दिन, एक पक्ष अथवा एक मासमें जो कुछ स्वतः मिल जाय, उसी आहारपर रह जाय। इस प्रकार जो सात वर्षोंतक मेरी आराधना करता है तथा पूर्वकथित कर्मोंमें जिसकी स्थिति बनी रहती है, ऐसा क्षत्रिय 'योग' का अधिकारी होता है तथा योगी लोग भी उसका दर्शन करने आते हैं। [अध्याय ११५]

सुख और दुःखका निरूपण

भगवान् वराह कहते हैं—महाभागे! मेरे द्वारा निर्दिष्ट विधानके अनुसार जो कर्म करता-कराता है, उसे किस प्रकार सफलता प्राप्त होती है, अब मैं यह बतलाता हूँ, सुनो। मेरा भक्त एकाग्रचित्त, सुस्थिर होकर अहंकारका परित्याग कर दे एवं अपने चित्तको सदा मुझमें समाहितकर क्षमाशील, जितेन्द्रिय होकर रहे। वह द्वादशी तिथिको फल-मूल अथवा शाकका आहार करे,

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

अथवा पयोव्रती एवं सर्वथा शाकाहारपर रहनेवाला हो। षष्ठी, अष्टमी, द्वादशी, अमावास्या, चतुर्दशी—इन तिथियोंमें वह संयमपूर्वक ब्रह्मचर्यका पालन करे। इस प्रकार योगविधानपूर्वक मेरी उपासना करनेवाला दृढ़व्रती पवित्रात्मा व्यक्ति धर्मसे सम्पन्न होकर विष्णुलोकको जाता है। वहाँ उसकी अठारह भुजाएँ होती हैं और उनमें वह धनुष, तलवार, बाण तथा गदा धारणकर सारूप्य मोक्ष प्राप्त करता है। उसे ग्लानि, बुढ़ापा, मोह और रोग नहीं होते। वे छाछठ हजार वर्षोंतक मेरे लोकमें निवास करते हैं।

अब दुःखका स्वरूप बताता हूँ, उसे सुनो। उचित उपचार करनेसे दुःखसे मुक्ति अथवा उस क्लेशका विनाश सम्भव है। जो मानव सदा अहंकार एवं मोहसे आच्छादित है और मेरी शरणमें नहीं आता, अन्न सिद्ध हो जानेपर जो स्वयं पहले 'बलिवैश्वदेव' कर्म नहीं करता तथा जो सर्वभक्षी, सब कुछ बेचनेमें तत्पर तथा मुझे नमस्कार करनेसे भी विमुख है और मुझे प्राप्त करनेका प्रयत्न नहीं करता, भला इससे बढ़कर दूसरा दुःख और क्या होगा? जो बलिवैश्वदेवके समय आये हुए अतिथिको भोजन अर्पण न कर स्वयं खा लेता है, देवता उसके अन्नको ग्रहण नहीं करते। संसारकी विषम परिस्थितिमें यथाप्राप्त वस्तुसे जो असंतुष्ट रहकर दूसरेकी स्त्री आदिपर बुरी दृष्टि डालता है एवं दूसरोंको कष्ट पहुँचाता है, वह महान् मूर्ख है। जो मानव सत्कर्मोंका अनुष्ठान न करके घरमें ही आलस्यसे पड़ा रहता है, वह समयानुसार कालके चंगुलमें फँस जाता है, यह महान् दुःखका विषय है। कुछ पुरुष अपने कर्मोंके प्रभावसे सुन्दर रूप प्राप्त करते हैं और कुछ दूसरे कुरूप होते हैं। कुछ विद्वान् पुण्यात्मा, गुणोंके ज्ञाता और सम्पूर्ण शास्त्रोंके पारगामी होते हैं और कितने बोलनेमें भी असमर्थ, सर्वथा गूँगे। कितनोंके पास धन है, परंतु वे किसीको न तो देते हैं और न स्वयं ही उसका उपभोग करते हैं—इस प्रकार वे दरिद्र ही बने रहते हैं, फिर भला उस दारिद्र्यकी तुलनामें और कोई दूसरा दुःख क्या हो सकता है।* किसी पुरुषकी दो स्त्रियाँ हैं, उन दोनोंमेंसे पति एककी तो प्रशंसा करता है और दूसरीको हीन मानता है, तो उस भाग्यहीना स्त्रीके लिये इससे बढ़कर अन्य दुःख क्या होगा? यह सब पूर्वके ही कर्मोंका तो फल है।

सुमध्यमे! ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य इस प्रकार द्विजाति होकर भी जो पापकर्मोंमें ही सदा रचे-पचे रहें और जिन्हें पञ्चतत्त्वोंसे निर्मित मनुष्यशरीर प्राप्त हो फिर भी वे मुझे पानेमें असफल रहें तो इससे बढ़कर दुःख क्या होगा? भद्रे! तुमने जो पापका प्रसङ्ग मुझसे पूछा, वह पाप सम्पूर्ण प्राणियोंके हितमें बाधक है; अतः दुःखप्राप्ति करानेवाले प्राक्तन (पूर्वजन्मके) एवं तत्कालीन कर्मों और दुःखोंका स्वरूप मैंने तुम्हें बताया।

शुभ कर्मके विषयमें तुमने जो प्रश्न किया है, कल्याणि! इस विषयमें निर्णीत तत्त्व मैं तुम्हें बताता हूँ, वह भी सुनो। जो शुभ कर्मोंका अनुष्ठान करके उसका श्रेय मेरे भक्तोंको निवेदन कर देता है, उसके पास दुःखका आना सम्भव नहीं है। जो मेरी पूजा करके नैवेद्य अर्पण किये हुए अन्नको बाँटकर फिर बचे हुएको प्रसाद मानकर स्वयं ग्रहण करता है, उससे बढ़कर संसारमें सुखी कौन है?

* गोस्वामी तुलसीदासजीने भी कहा है—'नहिं दरिद्र सम दुख जग माहीं।' इत्यादि (रामचरितमानस ७।१२०।७)

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

वसुंधरे! मेरे कहे हुए नियमके अनुसार तीनों कालोंमें संध्या आदि उत्तम कर्म करके जो जीवन व्यतीत करता है, जगत्‌को आश्रय देनेवाली पृथ्वि! जो देवता, अतिथि और दुःखी मानवोंके लिये अन्न देकर फिर स्वयं उसे ग्रहण करता है, जिसके यहाँ आया हुआ अतिथि कभी निराश नहीं लौटता अर्थात् जिस किसी प्रकारसे उसे कुछ-न-कुछ अर्पितकर उसे सत्कृत करता है, जो प्रत्येक मासमें एकादशीव्रत और अमावास्याको श्राद्धकर्म करता है, जिससे पितृगण परम तृप्त होते हैं, जो भोजन तैयार हो जानेपर उसमें हव्यान्न डालता है और उसे समान स्वादसे भक्षण करता है—भला उससे बढ़कर संसारमें कोई दूसरा सुख क्या हो सकता है?

देवि! जिसकी दो भार्याएँ हैं और दोनोंमें जिसकी बुद्धि विकाररहित है,जो दोनोंको समान दृष्टिसे देखता है, जो पवित्रात्मा पुरुष सदा हिंसारहित कर्म करता है अर्थात् हिंसामें जिसकी कभी प्रवृत्ति नहीं होती, वह परम शुद्ध पुरुष मन्त्र-सुख भोगनेके लिये ही संसारमें आया है। दूसरेकी सुन्दर स्त्रीको देखकर जिसका चित्त चलायमान नहीं होता और जो मोती आदि रत्नों तथा सुवर्णको मिट्टीके ढेलेके समान देखता है, भला उससे बढ़कर सुखी कौन है? हाथी और घोड़ोंसे परिपूर्ण युद्धस्थलमें जो योद्धा अपने प्राणोंका परित्याग करता है, संयोग-वियोगमें सदा अनासक्त रहकर जो कुत्सित कर्मोंका परित्याग करता है एवं स्वयं भगवद्भजन करते हुए संतुष्ट रहकर जीवन धारण करता है, उससे बढ़कर भला संसारमें सुखी कौन है?

वसुंधरे! स्त्रियोंके लिये पतिकी सेवा ही व्रत है, ऐसा समझकर जो स्त्री अपने स्वामीको सदा संतुष्ट रखती है, धनी होकर भी जो पण्डित पुरुष जितेन्द्रिय और पाँचों ज्ञानेन्द्रियोंको वशमें रखे हुए है, जो अपमानको सहता है तथा दुःखमें उद्विग्न नहीं होता, इच्छा अथवा अनिच्छासे भी जो मेरे उत्तम क्षेत्रमें प्राणोंको छोड़ता है, जो पुरुष माता और पिताकी सदा पूजा करता है तथा देवताकी भाँति नित्यप्रति उनका दर्शन करता है, तो इस सुखसे बढ़कर संसारमें अन्य कोई सुख नहीं है। सम्पूर्ण देवताओंमें जो मेरी ही भावना करके पूजा करता है, उससे मैं तिरोहित नहीं होता हूँ और न वह मुझसे ही तिरोहित होता है। भद्रे! तुमने जो सम्पूर्ण लोकोंके हितसाधनके लिये पूछा था, वह पवित्र एवं निर्णीत वस्तुतत्त्व मैंने तुम्हारे सामने व्यक्त कर दिया। [अध्याय ११६]

भगवान्‌की सेवामें परिहार्य बत्तीस अपराध

भगवान् वराह कहते हैं—भद्रे! आहारकी एक सुनिश्चित शास्त्रीय मर्यादा है। अतः मनुष्यको क्या खाना चाहिये और क्या नहीं खाना चाहिये, अब यह बताता हूँ, सुनो। माधवि! जो भोजनके लिये उद्यत पुरुष मुझे अर्पित करके भोजन करता है, उसने अशुभ कर्म ही क्यों न किये हों, फिर भी वह धर्मात्मा ही समझा जाने योग्य है। धर्मके जाननेवाले पुरुषको प्रतिदिन धान, यव आदि—सब प्रकारके साधनमें सहायक (जीवनरक्षणीय) अन्नसे निर्मित आहारका ही सेवन करना चाहिये। अब जो साधनमें बाधक हैं, तुम्हें उन्हें बताता हूँ। जो मुझे अपवित्र वस्तुएँ भी निवेदन करके खाता है, वह धर्म एवं मुक्ति-परम्पराके विरुद्ध महान् अपराध करता है, चाहे वह महान् तेजस्वी ही क्यों न हो, यह मेरा पहला भागवत अपराध है। अपराधीका अन्न मुझे बिलकुल नहीं रुचता है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

जो दूसरेका अन्न खाकर मेरी सेवा या उपासना करता है, यह दूसरा अपराध है। जो मनुष्य स्त्री-सङ्ग करके मेरा स्पर्श करता है, उसके द्वारा होनेवाला यह तृतीय कोटिका सेवापराध है। इससे धर्ममें बाधा पड़ती है। वसुंधरे! जो रजस्वला नारीको देखकर मेरी पूजा करता है, मैं इसे चौथा अपराध मानता हूँ। जो मृतकका स्पर्श करके अपने शरीरको शुद्ध नहीं करता और अपवित्रावस्थामें ही मेरी सपर्यामें लग जाता है, यह पाँचवाँ अपराध है, जिसे मैं क्षमा नहीं करता। वसुंधरे! मृतकको देखकर बिना आचमन किये मेरा स्पर्श करना छठा अपराध है। पृथ्वि! यदि उपासक मेरी पूजाके बीचमें ही शौचके लिये चला जाय तो यह मेरी सेवाका सातवाँ अपराध है। वसुंधरे! जो नीले वस्त्रसे आवृत होकर मेरी सेवामें उपस्थित होता है, यह उसके द्वारा आचरित होनेवाला आठवाँ सेवा-अपराध है। जगत्‌को धारण करनेवाली पृथ्वि! जो मेरी पूजाके समय अनुचित—अनर्गल बातें कहता है, यह मेरी सेवाका नवाँ अपराध है। वसुंधरे! जो शास्त्रविरुद्ध वस्तुका स्पर्श करके मुझे पानेके लिये प्रयत्नशील रहता है, उसका यह आचरण दसवाँ अपराध माना जाता है।

जो व्यक्ति क्रोधमें आकर मेरी उपासना करता है, यह मेरी सेवाका ग्यारहवाँ अपराध है, इससे मैं अत्यन्त अप्रसन्न होता हूँ। वसुंधरे! जो निषिद्ध कर्मोंको पवित्र मानकर मुझे निवेदित करता है, वह बारहवाँ अपराध है। जो लाल वस्त्र या कौसुम्भ रंगके (वनकुसुमसे रँगे) वस्त्र पहनकर मेरी सेवा करता है, वह तेरहवाँ सेवा-अपराध है। धरे! जो अन्धकारमें मेरा स्पर्श करता है, उसे मैं चौदहवाँ सेवा-अपराध मानता हूँ। वसुंधरे! जो मनुष्य काले वस्त्र धारणकर मेरे कर्मोंका सम्पादन करता है, वह पंद्रहवाँ अपराध करता है। जगद्धात्रि! जो बिना धोती पहने हुए मेरी उपचर्यामें संलग्न होता है, उसके द्वारा आचरित इस अपराधको मैं सोलहवाँ मानता हूँ। माधवि! अज्ञानवश जो स्वयं पकाकर बिना मुझे अर्पण किये खा लेता है, यह सत्तरहवाँ अपराध है।

वसुंधरे! जो अभक्ष्य (मत्स्य-मांस) भक्षण करके मेरी शरणमें आता है, उसके इस आचरणको मैं अठारहवाँ सेवापराध मानता हूँ। वसुंधरे! जो जालपाद (बतख)-का मांस भक्षण करके मेरे पास आता है, उसका यह कर्म मेरी दृष्टिमें उन्नीसवाँ अपराध है। जो दीपकका स्पर्श करके बिना हाथ धोये ही मेरी उपासनामें संलग्न हो जाता है, जगद्धात्रि! उसका वह कर्म मेरी सेवाका बीसवाँ अपराध है। वरानने! जो श्मशानभूमिमें जाकर बिना शुद्ध हुए मेरी सेवामें उपस्थित हो जाता है, वह मेरी सेवाका इक्कीसवाँ अपराध है। वसुंधरे! बाईसवाँ अपराध वह है, जो पिण्याक (हींग)-भक्षण कर मेरी उपासनामें उपस्थित होता है।

देवि! जो सूअर आदिके मांसको प्राप्त करनेका यत्न करता है, उसके इस कार्यको मैं तेईसवाँ अपराध मानता हूँ। जो मनुष्य मदिरा पीकर मेरी सेवामें उपस्थित होता है, वसुंधरे! मेरी दृष्टिमें यह चौबीसवाँ अपराध है। जो कुसुम्भ (करमी)-का शाक खाकर मेरे पास आता है, देवि! वह मेरी सेवाका पचीसवाँ अपराध है। पृथ्वि! जो दूसरेके वस्त्र पहनकर मेरी सेवामें उपस्थित होता है, उसके उस कर्मको मैं छब्बीसवाँ अपराध मानता हूँ। वसुंधरे! सेवापराधोंमें सत्ताईसवाँ अपराध वह है, जो नया अन्न उत्पन्न होनेपर उसके द्वारा देवताओं और पितरोंका यजन न कर उसे स्वयं खा लेता है। देवि! जो व्यक्ति जूता पहनकर किसी जलाशय या बावलीपर चला जाता है, उसके इस कार्यको मैं अट्ठाईसवाँ अपराध मानता हूँ। गुणशालिनि! शरीरमें उबटन लगाकर जो बिना स्नान किये मेरे पास चला आता है, यह

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

उन्तीसवाँ सेवा-अपराध है, जो पुरुष अजीर्णसे ग्रस्त होकर मेरे पास आता है, उसका यह कार्य मेरी सेवाका तीसवाँ अपराध है। यशस्विनि! जो पुरुष मुझे चन्दन और पुष्प अर्पण किये बिना पहले धूप देनेमें ही तत्पर हो जाता है, उसके इस अपराधको मैं इकतीसवाँ मानता हूँ। मनस्विनि! भेरी आदिद्वारा मङ्गलशब्द किये बिना ही मेरे मन्दिरके फाटकको खोलना बत्तीसवाँ अपराध है। देवि! इस बत्तीसवें अपराधको महापराध समझना चाहिये।

वसुंधरे! जो पुरुष सदा संयमशील रहकर शास्त्रकी जानकारी रखता हुआ मेरे कर्ममें सदा संलग्न रहता है, वह आवश्यक कर्म करनेके पश्चात् मेरे लोकको चला जाता है। परम धर्म अहिंसामें परायण रहते हुए सम्पूर्ण प्राणियोंपर दया करना चाहिये। स्वयं अमानी, पवित्र और दक्ष रहकर सदा मेरे भजनके मार्गपर ही चलता रहे। साधक पुरुष इन्द्रियोंको जीतकर सेवा एवं नामादि अपराधोंसे निरन्तर बचा रहे। वह उदार हो और धर्मपर आस्था रखे, अपनी स्त्रीसे ही संतुष्ट रहे। शास्त्रज्ञ और सूक्ष्म बुद्धिसम्पन्न होकर मेरे मार्गपर आरूढ़ रहे। भद्रे! मेरी कल्पनामें चारों वर्णोंके लिये सन्मार्गमें रहनेकी यही व्यवस्था है।

वसुंधरे! जो स्त्री आचार्यमें श्रद्धा रखती है, देवताओंकी भक्ति करती है, अपने स्वामीके प्रति निष्ठा एवं प्रीति रखती है और संसारमें भी उत्तम व्यवहार करती है, वह यदि पतिसे पहले मेरे लोकमें पहुँचती है, तो वह अपने स्वामीकी प्रतीक्षा करती है। यदि पुरुष मेरा भक्त है और अपनी पत्नीको छोड़कर मेरे धाममें पहले पहुँचता है, वह भी अपनी उस भार्याकी प्रतीक्षा करता है। देवि! अब कर्मोंमें दूसरे उत्तम कर्मको तुम्हारे सामने व्यक्त करता हूँ।

सुमुखि! ऋषिलोग भी मेरी उपासनामें स्थित रहते हुए भी मेरा दर्शन पानेमें असमर्थ हैं। ऐसी स्थितिमें मेरे कर्मपरायण अन्य मनुष्योंकी तो बात ही क्या? माधवि! जो अन्य देवताओंमें श्रद्धा रखते हैं, उनकी बुद्धि मारी गयी है। वे मूर्ख मेरी मायाके प्रभावसे मुग्ध हैं, उनके चित्तमें पाप भरा हुआ है। ऐसे व्यक्ति मुझे पानेके अधिकारी नहीं हैं। भगवति! मोक्षकी इच्छा रखनेवाले जिन पुरुषोंद्वारा मैं प्राप्य हूँ, उन परम शुद्ध भाववाले पुरुषोंका विवरण सुनाता हूँ। देवि! यह आख्यान धर्मसे ओत-प्रोत है। इसे तुम्हें सुना चुका। माधवि! दुष्ट व्यक्तिको इसका उपदेश नहीं करना चाहिये। जो अश्रद्धालु व्यक्ति इसका अधिकारी नहीं है, जिसने दीक्षा नहीं ली है एवं जो कभी मेरे पास आनेका प्रयत्न नहीं करता, उसे इसका उपदेश नहीं देना चाहिये। माधवि! दुष्ट, मूर्ख और नास्तिक व्यक्ति इस उपदेशको सुननेके अधिकारी नहीं हैं। देवि! यह मेरा धर्म महान् एवं ओजस्वी है, इसका मैं वर्णन कर चुका। अब सम्पूर्ण प्राणियोंके हितके लिये तुम दूसरा कौन-सा प्रसङ्ग पूछना चाहती हो, वह बताओ। (यह अध्याय 'कल्याण'—साधनाङ्कके पृष्ठ ५३८ पर 'वराहपुराण' के नामोल्लेखपूर्वक उद्धृत है।)

[अध्याय ११७]

पूजाके उपचार

भगवान् वराह बोले—भद्रे! अब मैं प्रायश्चित्तोंका तत्त्वपूर्वक वर्णन करता हूँ, तुम उसे सुनो! भक्तको चाहिये, मन्त्रविद्याकी सहायतासे यथावत् सभी वस्तु मुझे वा अन्य देवताओंको अर्पण करे। फिर आगे कहे जानेवाले मन्त्रका उच्चारणकर दीवटका काष्ठ उठाना चाहिये। दीपकाष्ठका भूमिस्पर्श करना आवश्यक है, अतः जबतक वह पृथ्वीका स्पर्श न करे, तबतक

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

दीपक जलाना निषिद्ध है। दीपक जलानेके पश्चात् हाथ धो लेना चाहिये। तत्पश्चात् पुनः इष्टदेवके पास उपस्थित होकर सर्वप्रथम उनके चरणोंकी वन्दना करनी चाहिये। फिर आगे कहे जानेवाले मन्त्र-भावसे भगवान्‌को दन्तधावन देना चाहिये। मन्त्रका भाव यह है—'भगवन्! प्रत्येक भुवन आपका स्वरूप है, आपके द्वारा सूर्यका तेज भी कुण्ठित रहता है, आप अनादि, अनन्त और सर्वस्वरूप हैं। यह दन्तधावन आप स्वीकार कीजिये।' वसुंधरे! तुमसे जो कुछ कहा है, वह सब धर्मसे निर्णीत है। श्रीविग्रहके हाथमें दन्तधावन देकर पुनः यथावत् कर्म करना चाहिये। इष्टदेवके सिरसे निर्माल्य उतारकर उसे स्वयं अपने सिरपर रखे। सुन्दरि! इसके बाद जलसे हाथको शुद्धकर मुख-प्रक्षालन आदि कर्म करना चाहिये। फिर शुद्ध जलसे इष्टदेवताके मुखका प्रक्षालन करे। सुन्दरि! इसका मन्त्र इस प्रकार है।[1] इस मन्त्रसे पूजा करनेके फलस्वरूप पूजक संसारसे मुक्त हो जाता है। मन्त्रका भाव यह है—'भगवन्! आत्म (विष्णु)-स्वरूप इस जलको ग्रहण करें। इसी जलद्वारा अन्य देवताओंने भी सदा अपना मुख धोया है।' फिर पञ्चरात्र-मन्त्रद्वारा सुन्दर चन्दन, धूप-दीप और नैवेद्य अर्पण करना चाहिये। इसके बाद हाथमें पुष्पाञ्जलि लेकर यह प्रार्थना करे—'भगवन्! आप भक्तोंपर कृपा करनेवाले हैं। आप नारायणको मेरा नमस्कार है।' पुनः प्रार्थना करे—'भगवन्! आपकी कृपासे मन्त्रके जाननेवाले यज्ञ करनेमें सफल होते हैं। प्राणियोंकी सृष्टि आपकी ही कृपासे होती है।' माधवि! इस प्रकार प्रातःकाल उठकर फिर अन्य फूल हाथमें ले मुझमें श्रद्धा रखनेवाला ज्ञानी पुरुष पवित्र होकर मुझ देवेश्वरकी पूजा करे। सम्पूर्ण कार्य सम्पन्न हो जानेपर वह भूमिपर डण्डेकी भाँति पड़कर साष्टाङ्ग प्रणाम करे[2] और प्रार्थना करे—'भगवन्! आप मुझपर प्रसन्न हो जायँ।' फिर सिरपर अञ्जलि रखकर निम्नलिखित प्रार्थना करनी चाहिये— 'भगवन्! शास्त्रोंके प्रभावसे आपकी जानकारी प्राप्त हो जानेपर साधककी यदि आपको पानेकी इच्छा और चेष्टा होती है तो आप उसे प्राप्त हो जाते हैं। योगियोंको भी आपकी कृपासे ही मुक्ति सुलभ हुई, अतएव मैं भी आपके उपासना-कार्य करनेमें संलग्न हो गया हूँ। आपकी शास्त्रीय आज्ञाका मैंने सम्पादन किया है, इससे आप मुझपर प्रसन्न हो जायँ।' फिर मेरी भक्तिमें संलग्न रहनेवाला साधक पुरुष इस प्रकार शास्त्रकी विधिका पालनकर कुछ देरतक मेरी प्रदक्षिणा करे।

मेरा भक्त कोई भी क्रिया उतावलेपनसे न करे। इस प्रकार सभी कार्य सम्पन्नकर मेरी भक्तिमें दृढ़ आस्था रखनेवाला पुरुष घृत तथा तेलसे मेरा अभ्यञ्जन करे। कार्य सम्पादन करनेवाला मन्त्रज्ञ व्यक्ति तेल, घृत आदि स्नेह-पदार्थोंकी ओर लक्ष्यकर एकाग्रचित्तसे इस प्रकार उच्चारण करे—'लोकनाथ! प्रेमके साथ मैं यह स्निग्ध पदार्थ लेकर आपको अपने हाथसे अर्पण कर रहा हूँ। इसके फलस्वरूप सम्पूर्ण लोकोंमें मुझे आत्मसिद्धि प्राप्त हो। भगवन्! आपको मेरा बारम्बार नमस्कार है। मेरे मुखसे जो अनुचित बात निकल गयी हो, उसे क्षमा कीजिये।'

इस प्रकार कहते हुए सर्वप्रथम मेरे मस्तकपर स्नेह-पदार्थ (तेल या घी) लगाना चाहिये। पहले

---

१. तद्भगवंस्त्वं गुणांश्च आत्मनश्चापि गृह्ण वारिणः। इमा आपस्तु देवानां मुखान्यप्रक्षालयन्॥ (१।११८।१०)

२. साष्टाङ्ग प्रणाममें हृदय, सिर, नेत्र, मन, वचन, पैर, हाथ और घुटने—इन आठ अङ्गोंका पृथ्वीसे स्पर्श होना चाहिये—
उरसा शिरसा दृष्ट्या मनसा वचसा तथा। पद्भ्यां कराभ्यां जानुभ्यां प्रणामोऽष्टाङ्ग उच्यते॥

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

उसे मेरे दाहिने अङ्गमें लगाकर फिर बायें अङ्गमें लगाये। इसके बाद पीठमें लगाकर कटिभागमें लगानेकी विधि है। भद्रे! इसके पश्चात् अपने व्रतमें अटल रहनेवाला पुरुष गायके गोबरसे भूमिका उपलेपन करे। भद्रे! गोमयद्वारा उपलेपन करते समय देखने तथा सुननेसे प्राणीको जो पुण्य प्राप्त होता है, उसे मैं कहता हूँ, सुनो। साथ ही मैं अभ्यञ्जन करनेका पुण्य भी सुनाता हूँ। उनकी जितनी बूँदें (उस गोमयकी पृथ्वीपर तथा इत्र, तेल आदिकी) इष्टदेवके ऊपर गिरती हैं, उतने हजार वर्षोंतक वह श्रद्धालु पुरुष स्वर्गलोकमें प्रतिष्ठा पाता है। इसके पश्चात् उसे पुण्यात्माओंके लोक प्राप्त होते हैं। इतना ही नहीं, इस प्रकार जो भी मेरे गात्रोंमें तेल अथवा घृतसे अभ्यञ्जन करता है, वह एक-एक कणकी जितनी संख्याएँ होती हैं, उतने हजार वर्षोंतक स्वर्गलोकमें रहता है और मेरे उस लोकमें उसकी महान् प्रतिष्ठा होती है।

भद्रे! अब जो उद्वर्तन (सुगन्धित वस्तुओंसे बना हुआ अनुलेप) मुझे प्रिय है, उसे बताता हूँ, जिससे मेरे अङ्ग तो शुद्ध होते ही हैं, मुझे प्रसन्नता भी प्राप्त होती है। कार्य-सम्पादन करनेवाला शास्त्रज्ञानी पुरुष लोध, पीपर, मधु, मधूक (महुवा), अश्वपर्ण अथवा रोहिण एवं कर्कट आदिके चूर्णको एकत्र करके उपलेपन बनाये तो मुझे अधिक प्रिय है। यह अनुलेपन अथवा अन्य अन्नोंके चूर्णद्वारा भी अनुलेपन बनाया जा सकता है। जिसके हाथोंद्वारा मेरा अनुलेप होता है, उसपर मैं बहुत प्रसन्न होता हूँ। क्योंकि यह अनुलेपन मेरे शरीरको बहुत सुख देनेवाला है। अतः इसे अवश्य करना चाहिये। यदि मेरी भक्ति करनेवाला परम सिद्धि चाहता है तो इस प्रकार अनुलेपन लगाकर मेरा स्नान कराये। इसके बाद आँवला और सुगन्धित उत्तम पदार्थोंको एकत्र करे और दृढव्रती पुरुष उससे मेरे सम्पूर्ण गात्रोंको मले। तत्पश्चात् जलका घड़ा लेकर इस आशयका मन्त्र उच्चारण करे—'भगवन्! आप देवताओंके भी देवता, अनादि, सर्वश्रेष्ठ पुरुष हैं। आपका स्वरूप अत्यन्त शुद्ध है, व्यक्तरूपसे पधारकर यह स्नान स्वीकार कीजिये।' मेरे मार्गका अनुसरण करनेवाला पुरुष इस प्रकार कहकर मेरा स्नान कराये। घड़ा सोने अथवा चाँदीका हो। यदि ये द्रव्य न उपलब्ध हो सकें तो कर्मका ज्ञान रखनेवाला पुरुष मेरा ताँबेके घड़ेसे स्नान करा सकता है। इस प्रकार सविधिकर्मसे स्नान कराकर मन्त्रोंको पढ़ते हुए चन्दन अर्पण करना चाहिये। मन्त्रार्थ यह है—'प्रभो! सम्पूर्ण गन्धोंसे आपके मनमें प्रसन्नता प्राप्त होती है। ये चन्दन कई प्रकारके होते हैं, यह शास्त्रकी सम्मति है। ये सभी देवादि लोकोंमें उत्पन्न होते हैं। आपकी कृपासे सत्कार्योंमें इनका उपयोग होता है। मैंने आपके अङ्गोंमें लगानेके लिये इन पवित्र चन्दनोंको प्रस्तुत किया है। भक्तिसे संतुष्ट भगवन्! आप इन्हें कृपाकर स्वीकार करें।'

इस प्रकार चन्दन आदि सुगन्धयुक्त पदार्थ एवं माला आदि अर्पण करके पूजन करनेका विधान है। कर्ममें श्रद्धा रखनेवाला कर्मशील पुरुष ऐसी अर्चना करके यह कहते हुए पुष्पाञ्जलि दे—'अच्युत! ये समयानुसार जलमें तथा स्थलमें उत्पन्न होनेवाले पवित्र पुष्प हैं। संसारसे मेरा उद्धार हो जाय, इसलिये यह पुष्प आप स्वीकार कीजिये! स्वीकार कीजिये!'

इस प्रकार मेरे भागवत-सम्प्रदायोक्त विधिका पालन करते हुए मेरी अर्चना करनेके पश्चात् मुझे सुगन्धद्रव्योंसे बना हुआ धूप देना चाहिये। धूपसे मुझे बहुत प्रेम है। इसके प्रदानसे दाताके मातृ-

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

पितृकुलोंकी आत्मा पवित्र हो जाती है। विधिके साथ धूप लेकर यह मन्त्र[1] पढ़ना चाहिये—मन्त्रका भाव यह है—'भगवन्! यह दिव्य धूप बहुत-से सुगन्धित द्रव्योंसे सम्पन्न है। इसमें वनस्पतिका रस भी सम्मिलित है। जन्म-मृत्युसे मुझे मोक्ष मिल जाय, इसलिये मैं आपको यह धूप निवेदित करता हूँ, आप इसे स्वीकार करनेकी कृपा कीजिये। 'भगवन्! सम्पूर्ण देवताओं तथा प्राणियोंके लिये शान्ति सुलभ हो। मैं भी सदा शान्तिसे सम्पन्न रहूँ। ज्ञानियोंकी योगभावमयी शान्तिसे आप धूप ग्रहण करें। आपको मेरा नमस्कार है। जगद्गुरो! आपके अतिरिक्त इस संसारसागरसे मेरा उद्धार करनेवाला दूसरा कोई नहीं है।'

इस प्रकार माला, चन्दन, अनुलेपन आदि सामग्रियोंसे पूजा करके रेशमी स्वच्छ वस्त्र, जिसका कुछ भाग पीले रंगका हो, निवेदित करना चाहिये। ऐसी अभ्यर्चना करनेके उपरान्त सिरपर अञ्जलि बाँधे हुए इस मन्त्रका पाठ करे[2]। मन्त्रका भाव यह है—'सम्पूर्ण प्राणियोंकी रक्षा करनेवाले भगवन्! आप पुरुषोंमें श्रेष्ठ हैं! लक्ष्मी आपके पास शोभा पाती हैं, आपका विग्रह आनन्दमय है। आप ही सबके रक्षक, रचयिता और अधिष्ठाता हैं। प्रभो! आप आदि पुरुष हैं, आपका रूप सर्वथा दुर्दर्श, दुर्ज्ञेय है। आपके दिव्य अङ्गको आच्छादित करनेके लिये यह कौशेय (रेशमी) वस्त्र, जो कुछ पीले रंगसे सुशोभित एवं मनोहर है, मैं अर्पण करता हूँ। आप स्वीकार कीजिये।'

'देवि! फिर मुझे वस्त्रोंसे विभूषितकर हाथमें एक पुष्प ले और उससे आसनकी कल्पनाकर मुझे अर्पण करे। वस्त्र मेरे विग्रहके अनुसार होना चाहिये। पूजा करते समय प्रणव, धर्म एवं पुण्यमय विचारसे पूजनको सम्पन्न करना चाहिये। आसन अर्पण करनेके मन्त्रका भाव यह है—'भगवन्! यह आसन बैठने योग्य, आपकी प्रीति उत्पन्न करनेवाला, प्राज्ञकी रक्षामें उपयुक्त, प्राणियोंके लिये श्रेयोवह, आपके योग्य एवं सत्यस्वरूप है। इसे आप ग्रहण कीजिये।'

इस प्रकार श्लाघ्य नैवेद्य आदि पदार्थोंको अर्पणकर मेरे मार्गका अनुसरण करनेवाला पुरुष यथाशीघ्र कल्पित मुख-प्रक्षालन देनेके लिये उद्यत हो जाय। पुनः पवित्र होकर देवताओंके लिये स्तुति करे—आप सभी लोग भगवत्-परायण हों। फिर उत्तम जल लेकर अपनी शुद्धि करे। यों भगवान्‌को नैवेद्य अर्पण करके शेष प्रसाद हटा दे। इसके उपरान्त हाथमें ताम्बूल लेकर यह मन्त्र पढ़े। मन्त्रका भाव यह है—'जगत्प्रभो! यह ताम्बूल सम्पूर्ण सुगन्धयुक्त पदार्थोंसे संयुक्त है। देवताओंके लिये सम्यक् प्रकारसे यह अलंकारका कार्य देता है। आप इसे स्वीकार करें, साथ ही आपकी प्रतिमाके प्रभावसे हमारा भवन विशिष्ट हो जाय। भगवन्! आपकी प्रसन्नताके लिये मैंने श्रीमुखमें यह श्रेष्ठ अलंकार अर्पण किया है। इससे मुखकी शोभा बढ़ती है। अतः आप इसे ग्रहण करनेकी कृपा कीजिये।' मेरा

---

१. वनस्पतिरसो दिव्यो बहुद्रव्यसमन्वितः।
मम संसारमोक्षाय धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्। शान्तिर्वै सर्वदेवानां शान्तिर्मम परायणम्॥
सांख्यानां शान्तियोगेन धूपं गृह्ण नमोऽस्तु ते। त्राता नान्योऽस्ति मे कश्चित्त्वां विहाय जगद्गुरो॥ (११८। ४४—४६)

२. प्रीयतां भगवान्पुरुषोत्तमः श्रीनिवासः श्रीमानानन्दरूपः। गोप्ता कर्त्ताधिकर्त्ता मान्यनाथो भूतनाथ आदिरव्यक्तरूपः॥
क्षौमं वस्त्रं पीतरूपं मनोज्ञं देवाङ्गे स्वे गात्रप्रच्छादनाय। (११८। ४९)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भक्त इन उपचारोंसे मेरी आराधना करे। इसके परिणामस्वरूप वह सदा मेरे महान् लोकोंको प्राप्तकर वहाँ नित्य निवास करता है।

[अध्याय ११८]

श्रीहरिके भोज्य पदार्थ एवं भजन-ध्यानके नियम

पृथ्वीने कहा—माधव! मैं आपके मुखारविन्दसे पूजनकी विधिका श्रवण कर चुकी। निश्चय ही इस कर्म (पूजा)-में संसारसे मुक्ति दिलानेकी सामर्थ्य है। भगवन्! अब मैं आपसे आपकी पूजाविधि एवं द्रव्योंके विषयमें कुछ जानना चाहती हूँ, आप इसे मुझे बतलानेकी कृपा करें।

भगवान् वराह बोले—वसुंधरे! जिस विधिसे पूजाकी वस्तु मुझको अर्पित करनी चाहिये, अब वह बताता हूँ, सुनो। सात प्रकारके अन्नोंको लेकर उनमें दूधका सम्मिश्रण करे। साथ ही मुझे मधूक और उदुम्बर आदिके शाक भी प्रिय हैं। माधवि! अब मेरे योग्य जो धान्य हैं, उन्हें कहता हूँ—अच्छे गन्धसे युक्त 'धर्मचिल्लिक' नामक शाक और लाल धानका चावल तथा अन्य उत्तम स्वादिष्ठ चावल मुझे प्रिय हैं। उत्तम कुङ्कुम और मधु भी मुझे प्रिय हैं। आमोदा, शिवसुन्दरी, शिरीष और आकुल संज्ञक धानके चावल भी मेरे लिये उपयुक्त हैं। यवसे बने अनेक प्रकारके अन्न तथा शाक भी मेरे पूजनमें उपयुक्त होते हैं। मूँग, माष (उड़द), तिल, कंगुनी, कुल्थी, गेहूँ, साँवाँ—ये सभी मुझे प्रिय हैं। जब ब्रह्मयज्ञ विस्तृतरूपसे चल रहा हो, वेदके पारगामी विद्वान् यज्ञ करा रहे हों, उस समय मेरी प्रसन्नताके लिये ये वस्तुएँ मुझे अर्पण करनी चाहिये। यज्ञमें बकरी, भैंस आदि पशुओंका दूध, दही और घृत सर्वथा निषिद्ध हैं।

वसुंधरे! मुझसे सम्बन्ध रखनेवाले कर्मोंमें जो वस्तुएँ योग्य हैं, उन्हें मैंने बतला दिया। मेरे भक्तोंको सुख पहुँचानेवाले उक्त पदार्थ भोज्य और कल्याणप्रद हैं। वसुंधरे! जिसे उत्तम सिद्धि पानेकी इच्छा हो, उसे इस प्रकार मेरा यजन करना चाहिये। इस विधिसे जो यजन करेंगे, वे कर्ममें कुशल पुरुष मेरी परम सिद्धि पानेके पूर्ण अधिकारी होंगे।

भगवान् वराह कहते हैं—'वसुंधरे! मेरा उपासक इन्द्रियोंको वशमें रखकर जो कुछ अन्न उपलब्ध हो, उसे ग्रहण करे। भामिनि! मैं नीचे-ऊपर, इधर-उधर, दिशाओं और विदिशाओंमें तथा सभी जीवोंमें सर्वत्र विराजमान हूँ। अतएव जिसे परम गति पानेकी इच्छा हो, उसे चाहिये कि सब प्रकारसे सभी प्राणियोंको मेरा ही रूप जानकर उनकी वन्दना करे। प्रातःकाल एक अञ्जलि जल लेकर पूर्वाभिमुख हो मेरी उपासना करनी चाहिये। '**ॐ नमो नारायणाय**' यह मन्त्र जपना चाहिये। उसे यह भावना करनी चाहिये कि जो सम्पूर्ण संसारमें श्रेष्ठ हैं, जिनकी 'ईशान' संज्ञा है, जो आदि पुरुष हैं, जो स्वभावतया ही कृपालु हैं, उन भगवान् नारायणका हम संसारसे अपने उद्धारके लिये यजन करते हैं।'

इसके बाद पश्चिमाभिमुख होकर फिर अञ्जलि भर जल हाथमें ले। साथ ही द्वादशाक्षर वासुदेव-मन्त्र पढ़कर इस मन्त्रका उच्चारण करे—* 'भगवन्! आप जिस प्रकार सर्वप्रथम संसारकी सृष्टि करनेवाले हैं, पुराण पुरुष हैं और परम विभूति हैं, वैसे ही आप आदि पुरुषके अनेक रूप भी हैं। आपका संकल्प कभी विफल नहीं होता। इस प्रकार

* यथा तु देवः प्रथमादिकर्त्ता पुराणकल्पश्च यथा विभूतिः। तथा स्थितं चादिमनन्तरूपममोघसंकल्पमनन्तमीडे॥ (१२०।११)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

अनन्तरूपसे विराजनेवाले आप (प्रभु)-को मैं नमस्कार करता हूँ।' इसके बाद उसी समयसे पुनः एक अञ्जलि जल हाथमें ले और उत्तरमुख खड़ा होकर '**ॐ नमो नारायणाय**' कहकर इस मन्त्रका उच्चारण करे—'जो परम दिव्य, पुराण पुरुष हैं, आदि, मध्य और अन्तमें जिनकी सत्ता काम करती है, जिनके अनन्त रूप हैं, जो संसारको उत्पन्न करते तथा जो शान्तस्वरूप हैं, संसारसे मुक्त करनेके लिये जो अद्वितीय पुरुष हैं, उन जगत्स्रष्टा प्रभुका हम यजन करते हैं।'[१]

इसके पश्चात् उसी समयसे दक्षिणाभिमुख होकर '**ॐ नमः पुरुषोत्तमाय**' यह मन्त्र पढ़कर ऐसी धारणा करनी चाहिये कि 'जो यज्ञस्वरूप हैं, एवं जिनके अनन्त रूप हैं, सत्य और ऋत जिनकी अनादिकालसे संज्ञाएँ हैं, जो अनादिस्वरूप काल हैं तथा समयानुसार विभिन्न रूप धारण करते हैं, उन प्रभुको संसारसे मुक्त होनेके लिये हम भजते हैं।' तदनन्तर काष्ठकी भाँति अपने शरीरको निश्चल बनाकर, इन्द्रियोंको वशमें करते हुए, मनको भगवान्‌में लगाकर इस प्रकार धारणा करे—'भगवन्! सूर्य और चन्द्रमा आपके नेत्र हैं, कमलके समान आपकी आँखें हैं, जगत्‌में आपकी प्रधानता है, आप लोकके स्वामी हैं, तीनों लोकोंसे उद्धार करना आपका स्वभाव है, ऐसे सोमरस पीनेवाले आप (प्रभु)-का हम यजन करते हैं।'

वसुंधरे! यदि उत्तम गति पानेकी इच्छा हो तो साधकको तीनों संध्याओंमें बुद्धि, युक्ति और मतिकी सहायता लेकर इसी प्रकारसे मेरी उपासना करनी चाहिये। यह प्रसङ्ग गोपनीयोंमें परम गोपनीय, योगोंकी परम निधि, सांख्योंका परम तत्त्व और कर्मोंमें उत्तम कर्म है। देवि! मूर्ख, कृपण और दुष्ट व्यक्तिको इसका उपदेश नहीं करना चाहिये। किंतु जो दीक्षित, उत्तम शिष्य एवं दृढव्रती है, उसे ही इसे बताना उचित है। मुझ विष्णुके मुखारविन्दसे निकला हुआ यह गुह्य तत्त्व मरणकाल उपस्थित होनेपर भी बुद्धिमें धारण करने योग्य है। इसे कभी विस्मृत नहीं करना चाहिये। जो प्रातःकाल उठकर सदा इसका पाठ करता है, वह दृढव्रती पुरुष मेरे लोकमें स्थान पानेका अधिकारी है, इसमें किसी प्रकारका संदेह नहीं करना चाहिये। इस प्रकार जो व्यक्ति तीनों संध्याओंमें कर्मका सम्पादन करता है, वह हीन योनियोंमें कभी नहीं पड़ता। [अध्याय ११९-१२०]

मुक्तिके साधन

भगवान् वराह कहते हैं—वसुंधरे! अब जिस कर्मके प्रभावसे प्राणीको पुनः गर्भमें नहीं जाना पड़ता, उसे बताता हूँ, तुम सुनो! यह सम्पूर्ण शास्त्रों एवं धर्मोंका निचोड़ है। जो बड़ा-से-बड़ा कार्य करके भी अपनी प्रशंसा नहीं करता और जो सदा शुद्ध अन्तःकरणसे शास्त्रीय सत्कर्मोंका अनुष्ठान करता रहता है, वह उन सत्-कर्मोंके प्रभावसे भी पुनः जन्म नहीं पाता। जो मेरा सामर्थ्यशाली भक्त होकर सबपर कृपा करता है तथा कार्य और अकार्यके विषयमें जिसे पूर्ण ज्ञान है एवं जिसकी सम्पूर्ण धर्मोंमें श्रद्धा है, वह पुनः गर्भमें नहीं आता। जो सर्दी-गरमी, वात-वर्षा और भूख-प्यासको सहता है, जो गरीब होनेपर भी लोभ, मोह एवं आलस्यसे दूर रहता है, कभी झूठ नहीं बोलता, किसीकी निन्दा नहीं करता, जो अपनी ही स्त्रीसे संतुष्ट रहता है, दूसरेकी स्त्रियोंसे दूर रहता है तथा जो सत्यवादी, पवित्र आत्मा एवं निरन्तर भगवान्‌का प्रिय भक्त

१. यजामहे दिव्यपरं पुराणमनादिमध्यान्तमनन्तरूपम्। भवोद्भवं विश्वकरं प्रशान्तं संसारमोक्षावहमद्वितीयम्॥ (१२०। १३)

Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

है, वह मेरे लोकको प्राप्त होता है। जो संवि-भाग (बाँट)-कर खाता है, जो ब्राह्मणोंका भक्त है और जो सबसे मधुर वाणी बोलता है, वह कुत्सित योनियोंमें न जाकर मेरे लोकका अधिकारी होता है।

वसुंधरे! अब मैं तुम्हें एक दूसरा उपाय बतलाता हूँ, सुनो! जिसके प्रभावसे मेरी निरंतर उपासना करनेवाला पुरुष विकृत योनियोंमें नहीं जाता। जो कभी किसी जीवकी हिंसा नहीं करता, जो सम्पूर्ण प्राणियोंके हितमें लगा रहता है और जो मन, कर्म, वचनसे पवित्र है, वह विकृत योनियोंमें नहीं पड़ता। जिसके मनमें सदा सर्वत्र समता है, जो मिट्टीके ढेले, पत्थर और सुवर्णको समान समझता है, जो बाल्यकालमें भी शान्तस्वभावसे रहनेवाला, इन्द्रियविजयी और सदा शुभ कार्यमें रत रहता है, उसे नीच योनि नहीं प्राप्त होती। जो दूसरे द्वारा किये अपकारोंपर कभी किंचिन्मात्र भी ध्यान नहीं देता, जिसे सदा कर्तव्य-कर्म ही स्मृत रहते हैं और जो सब कुछ यथार्थ बोलता है, वह नीच योनियोंमें नहीं पड़ता। जो व्यर्थ बातोंसे सदा दूर रहता है, जिसकी तत्त्वज्ञानमें अटल निष्ठा है, जो सदा अपनी वृत्तिमें तत्पर रहकर परोक्षमें भी कभी किसीकी निन्दा नहीं करता, उसे हीन योनियोंमें नहीं जाना पड़ता। भद्रे! जो ऋतुकालमें ही संतान-प्राप्तिकी इच्छासे अपनी स्त्रीसे सहवास करता और सदा मेरी उपासनामें लगा रहता है, वह साधक हीन योनिमें नहीं जाता।

वसुंधरे! अब एक दूसरी बात बताता हूँ, तुम उसे सुनो। जो सदा संयत रहनेवाले पुरुषोंका धर्म है और जिसको मनु, अङ्गिरा, शुक्राचार्य, गौतम मुनि, चन्द्रमा, रुद्र, शङ्ख-लिखित, कश्यप, धर्मदेव, अग्निदेव, पवनदेव, यमराज, इन्द्र, वरुण, कुबेर, शाण्डिल्यमुनि, पुलस्त्य, आदित्य, पितृगण और स्वयम्भू ब्रह्मा आदि वेद-धर्म-द्रष्टाओंने पृथक्-पृथक् रूपसे देखा और वर्णन किया है, उस धर्मके पालनमें जो मनुष्य निश्चितरूपसे तत्पर रहकर अपने-आपमें परमात्माको देखता है, वह विकृत योनिमें न जाकर मेरे लोकमें जानेका अधिकारी है। जो अपने धर्मका पालन करता है तथा अपनी बुद्धिके अनुसार ठीक बोलता है, दूसरेकी निन्दासे दूर रहता है, सम्पूर्ण धर्मोंमें जिसकी निश्चित बुद्धि रहती है, जो दूसरोंके धर्मोंकी निन्दा नहीं करता तथा जो अपने धार्मिक मार्गपर अटल रहता है, ऐसे उत्तम गुणोंसे युक्त एवं मेरे कर्मोंका सम्पादन करनेवाला पुरुष विकृत योनिमें न जाकर मेरे लोकको ही प्राप्त होता है।

जिनकी इन्द्रियाँ वशमें हैं, जिन्होंने क्रोधपर पूरा नियन्त्रण कर लिया है, जो लोभ और मोहसे सदा दूर रहते हैं, जो विश्वके उपकारमें तत्पर हैं, जो देवता, अतिथि तथा गुरुमें श्रद्धा रखते हैं, जो कभी किसीकी हिंसा नहीं करते, मद्य-मांसका कभी सेवन नहीं करते, जो अनुचित भाव-बन्धन करनेकी चेष्टा नहीं करते, जो ब्राह्मणको 'कपिला' धेनुका दान करते हैं—ऐसे धर्मसे युक्त पुरुष गर्भमें नहीं पड़ते; वे मेरे लोकको ही प्राप्त होते हैं। जो अपने सभी पुत्रोंके प्रति समता रखता है, क्रोधमें भरे हुए ब्राह्मणको देखकर भी उसे प्रसन्न करनेकी ही चेष्टा करता है, जो भक्तिपूर्वक कपिला-गौका स्पर्श करता है, जो कुमारी कन्याके प्रति कभी अपवित्र भाव नहीं करता, जो कभी अग्निका लङ्घन नहीं करता, जो जलमें शौच नहीं करता एवं गुरुमें श्रद्धा-बुद्धि रखता है, जो उनकी तथा ईश्वरकी कभी निन्दा नहीं करता, इस प्रकारका धर्ममें तत्पर पुरुष निश्चय ही मुझे प्राप्त कर लेता है और वह पुरुष माताके गर्भमें न जाकर मेरे ही लोकको प्राप्त होता है।

[अध्याय १२१]

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

कोकामुखतीर्थ (वराहक्षेत्र*)-का माहात्म्य

भगवान् वराह कहते हैं—वसुंधरे! अब मैं तुम्हें गोपनीयोंमें भी एक परम गोपनीय रहस्य बतलाता हूँ, जिसके प्रभावसे पशु-योनिमें गये हुए प्राणी भी पापसे मुक्त हो जाते हैं, इसे तुम ध्यानसे सुनो। जो मानव अष्टमी और चतुर्दशी तिथिमें स्त्रीसङ्ग नहीं करता तथा दूसरेके अन्नको खाकर उसकी निन्दा नहीं करता, वह मेरे लोकको प्राप्त होता है। बाल्यकालमें भी जो सदा मेरे व्रतका पालन करता है, जो जिस-किसी प्रकारसे भी सदा संतुष्ट रहता है तथा जो माता-पिताकी पूजा करता है, वह मेरे लोकमें जाता है। जो परिश्रमसे भी प्राप्त सामग्रीको बाँटकर खाता-पीता है, जो गुणी, दाता तथा संयतभोक्ता है तथा जो सभी कर्तव्य-कार्योंमें स्वतः लगा रहता है एवं अपने मनको सदा वशमें किये रहता है, वह मेरे लोकको प्राप्त होता है। जो कुत्सित कर्म नहीं करता, जो ब्रह्मचर्य-व्रतका पालन करता है, समर्थ होकर भी जो सम्पूर्ण प्राणियोंपर क्षमा-दया करता है, वह मेरे लोकको प्राप्त होता है। जो निःस्पृह रहकर दूसरोंकी सम्पत्तिके प्रति कभी लोभ नहीं करता, ऐसा पुरुष मेरे लोकमें जाता है। वरारोहे! एक गोपनीय विषय जो देवताओंके लिये भी दुष्प्राप्य एवं दुर्ज्ञेय है, उसे अब मैं तुम्हें बता रहा हूँ, सुनो। जरायुज, अण्डज, उद्भिज्ज और स्वेदज—इन चार प्रकारके प्राणियोंकी जो हिंसा नहीं करता, जो पवित्रात्मा एवं दयाशील है और जो 'कोकामुख' नामक तीर्थमें अपने प्राणोंका परित्याग करता है, वह मुझे परम प्रिय है। मेरी कृपादृष्टिसे वह कभी वियुक्त नहीं होता।'

पृथ्वी बोली—माधव! मैं आपकी शिष्या, दासी और आपमें अटल श्रद्धा रखनेवाली हूँ, आपमें भक्ति रखनेके बलपर आपसे पूछती हूँ कि वाराणसी, चक्रतीर्थ, नैमिषारण्य, अट्टहासतीर्थ, भद्रकर्णह्रद, द्विरण्ड, मुकुट, मण्डलेश्वर, केदारक्षेत्र, देवदारुवन, जालेश्वर, दुर्ग, गोकर्ण, कुब्जाम्रेश्वर, एकलिङ्ग—ऐसे प्रसिद्ध एवं पवित्र तीर्थस्थानोंको छोड़कर आप 'कोकामुख' क्षेत्रकी ही इतनी प्रशंसा क्यों करते हैं?

भगवान् वराह बोले—भीरु! तुम्हारा कहना ठीक है, बात ऐसी ही है, 'कोकामुख' मुझे अत्यन्त ही प्रिय है। अब 'कोकामुख'-क्षेत्र जिन कारणोंसे अधिक प्रसिद्ध है, वह मैं तुम्हें बताता हूँ। तुमसे जिन क्षेत्रोंका वर्णन किया है, वे सभी भगवान् रुद्रसे सम्बन्ध रखनेवाले 'पाशुपततीर्थ' हैं, जिन्हें 'पाशुपत-क्षेत्र' कहते हैं, किंतु यह 'कोकामुख-क्षेत्र' मुझ श्रीहरिका है। वरानने! इसी विषयमें मैं तुम्हें एक परम प्रसिद्ध उपाख्यान बताता हूँ, इसमें 'कोकामुख' क्षेत्रकी प्रसिद्धिका हेतु संनिहित है।

एक बार इस 'कोकामुख'-क्षेत्रमें मांसके लोभमें एक व्याध घूम रहा था। वहीं एक अल्प जलवाले सरोवरमें एक मत्स्य भी रहता था। उसको देखकर व्याधने तुरंत ही बंसी (कटिया)-से उसे बाहर खींच लिया, तथापि वह बलवान् मत्स्य उसके हाथसे तुरंत निकल गया। इतनेमें एक बाजकी दृष्टि, जो आकाशमें चक्कर लगा रहा था, उस मत्स्यपर पड़ी और वह उसको पकड़नेके लिये नीचे उतरा और फिर उसे पकड़कर तेजीसे उड़ चला। परंतु वह भी उसके बोझको न सँभाल सका और उस मछलीके साथ

* इसका उल्लेख आगे १४०वें अध्यायमें भी है। नंदलाल देके अनुसार यह स्थान नाथपुरके पास तम्बर, अरुणा और सुनकोशी नदियोंके त्रिवेणी सङ्गमद्वारा निर्मित है। (Geographical Dictionary of Ancient and Mediaeval India, Page 101;

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

ही इसी 'कोकामुख'-क्षेत्रमें गिर पड़ा। किंतु आश्चर्य! वह गिरते ही इस तीर्थके प्रभावसे रूप, गुण एवं वयसे युक्त एक कुलीन राजपुत्रके रूपमें परिणत हो गया! कुछ समय बाद उसी व्याधकी स्त्री भी मांस लिये हुए वहाँ जा पहुँची। इतनेमें ही मांसके लिये लालायित रहनेवाली एक मादा चील भी उसके हाथसे मांस छीननेके लिये आयी, जो मांस छीननेके लिये बार-बार झपाटा मारने लगी। उसी क्षण बलपूर्वक मांस लेनेकी इच्छा रखनेवाली उस मादा चीलपर व्याधने बाण मारा, जिससे वह मेरे इस 'कोकामुख-क्षेत्र' में गिर पड़ी और उसके प्राण निकल गये।

तदनन्तर उस चीलने चन्द्रपुर नामक नगरमें सुन्दरी राजपुत्रीके रूपमें जन्म ग्रहण किया। उसका यश बड़ी तेजीसे चारों ओर फैलने लगा। वह कन्या धीरे-धीरे बढ़ती गयी और शनैः-शनैः रूप, गुण, अवस्था एवं सभी (चौसठ) कलाओंके ज्ञानसे सम्पन्न हो गयी, परंतु वह पुरुषोंकी सदा निन्दा करती। उसे रूपवान्, गुणवान्, शूर-वीर तथा सौम्य स्वभावके पुरुषोंकी चर्चा भी अच्छी न लगती थी और वह उनकी भी निन्दा किया करती थी। युवती होनेपर उसका 'आनन्दपुर' नगरके एक शकजातिके पुरुषके साथ विवाह हुआ। विवाहके बाद दोनों पति-पत्नी गार्हस्थ्यधर्मका पालन करते हुए साथ रहने लगे। फिर वे परस्पर प्रेमके बन्धनमें इस प्रकार बँध गये कि एक मुहूर्त भी कोई किसीको छोड़ना न चाहता था। अब वही कन्या अत्यन्त नम्र होकर अपने स्वामीकी सब प्रकार सेवा करने लगी।

एक दिन मध्याह्नके समय राजकुमारके सिरमें तीव्र वेदना उत्पन्न हुई। अनेक कुशल वैद्य चिकित्सामें लगे; किंतु उसकी शिरोव्यथा दूर न हो सकी। अन्य मन्त्र-यन्त्र भी विफल हुए। इस प्रकार पर्याप्त समय बीत जानेके बाद एक दिन उस राजकुमारीने अपने स्वामीसे यह जिज्ञासा की—'प्रभो! आपके सिरमें जो यह वेदना है, यह क्या और कैसे है? यदि मुझपर आपका तनिक भी स्नेह हो तो आप मुझे इसे तत्त्वतः बतानेकी कृपा कीजिये। अनेक कुशल वैद्य आपका उपचार कर रहे हैं, पर उन्हें वेदना दूर करनेमें सफलता नहीं मिलती है। इसपर राजकुमारने कहा—'भद्रे! क्या तुम यह भूल गयी कि यह मनुष्य-शरीर व्याधियोंका ही मन्दिर है? यह मनुष्य-शरीर रोग और दुःखोंसे ही भरा है, संसाररूपी सागरमें पड़े हुए मुझसे तुम्हें बार-बार ऐसा प्रश्न करना उचित नहीं है।' राजकुमारके ऐसा कहनेपर उस राजकन्याके मनमें उत्सुकता अब और बढ़ गयी।

कुछ दिन बाद पुनः उस राजपुत्रीने अत्यन्त आग्रहपूर्वक उस प्रश्नको राजकुमारसे पूछा। इसपर शक-नरेशने अपनी भार्यासे कहा—'भद्रे! तुम इस मानुषी भावका त्याग करो और अपने पूर्वजन्मकी बातें स्मरण करो। अथवा यदि तुम्हें पूर्वजन्मकी बातें जाननी हों तो कल्याणि! तुम चलकर मेरे माता-पिताको प्रसन्न करो। तुम उनकी पूजा करो; क्योंकि उन्होंने मुझे अपने उदरमें धारण किया था। उनका सम्मान करके और उनकी आज्ञा लेनेके पश्चात् मैं 'कोकामुख'क्षेत्रमें चलकर तुम्हें निःसंदेह यह प्रसङ्ग सुनाऊँगा। अनिन्दिते! अपने पूर्वजन्मोंका ज्ञान देवताओंके लिये भी दुर्लभ है। सारा वृत्तान्त मैं तुम्हें वहीं बताऊँगा।'

तदनन्तर वह राजकुमारी अपने सास और श्वशुरके सामने गयी और उनके चरणोंको पकड़कर बोली—'मुझे आप दोनोंसे कुछ निवेदन करना है। मैं इस विषयमें आपलोगोंसे अनुमति प्राप्त करना चाहती हूँ। फिर उसने कहा कि 'हम दोनों स्त्री-पुरुष आपकी आज्ञासे पवित्र 'कोकामुख'नामक

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES
FIND ALL AT HTTPS://DSC.GG/DHARMA
Made with
By
Avinash/Shashi
[creator of
hinduism
server]
KAPWING

COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES
FIND ALL AT HTTPS://DSC.GG/DHARMA
Made with
By
Avinash/Shashi
[creator of
hinduism
server]
KAPWING

क्षेत्रमें जाना चाहते हैं। आपलोग ही हमारे गुरु हैं। इस कार्यकी गरिमाको देखकर आप हमलोगोंको रोकें नहीं। आजतक मैंने कभी कुछ भी आपलोगोंसे नहीं माँगा है। यह प्रथम अवसर है कि हम आपके सामने याचना करने आये हैं। अतः आपलोग मेरी इस याचनाको पूर्ण करनेकी कृपा करें। समस्या यह है कि आपके ये कुमार निरन्तर सिरकी वेदनासे पीड़ित रहते हैं और दोपहरके समयमें तो ये मृतकके तुल्य हो जाते हैं। कोई भी उपचार सफल नहीं हो रहा है। ये सब सुख-भोगोंको छोड़कर सदा पीड़ासे दुःखी रहते हैं। इनका यह दुःख 'कोकामुख'क्षेत्रमें गये बिना दूर होनेका नहीं है।'

उस समय शकजातियोंके अध्यक्ष उन नरेशने पुत्रवधूकी बात सुनकर अपने हाथसे पुत्र एवं पुत्रवधूके सिरको सहलाकर कहा—'पुत्र! 'कोकामुख'क्षेत्रमें जानेकी बात तुमलोगोंके मनमें कैसे आयी? हाथी, घोड़े, सवारियाँ, अप्सराओंकी तुलना करनेवाली स्त्रियाँ, कोष और रत्नभंडार तथा सात अङ्गोंसहित हमारी यह सम्पूर्ण राज्य-सम्पत्ति आदि सभी तुम्हारे अधीन हैं। तुम इन सबको ले लो। सारी सम्पत्तियोंका उत्तराधिकारी पुत्र ही होता है। मेरे प्राण तुम्हींमें सदा बसे रहते हैं। तुम 'कोकामुख' क्षेत्र मत जाओ।' पिताके इस प्रकार कहनेपर राजकुमारने उनके चरण पकड़ लिये और नम्रतापूर्वक कहने लगा—'पिताजी! राज, कोष, सवारी अथवा सेनासे मेरा क्या प्रयोजन? मैं तो अभी उस 'कोकामुख'-क्षेत्रमें ही जाना चाहता हूँ। मैं सिरकी वेदनासे नितान्त पीड़ित हूँ। यदि मैं जीवित रहा, तब राज्य, सेना और कोष भी मेरे ही होंगे, इसमें कोई संशय नहीं, पर इस पीड़ासे मुक्ति तो मुझे वहाँ जानेसे ही मिलेगी।

अन्तमें शक-नरेशने पुत्रकी बातपर विचार करके उसे जानेकी आज्ञा दे दी। जब राजकुमारने 'कोकामुख'की यात्रा आरम्भ की तो उसके साथ बहुत-से व्यापारीवर्ग और नागरिक स्त्री-पुरुष भी चल पड़े। बहुत समयके बाद वे सभी इस 'कोकामुख'क्षेत्रमें पहुँचे। वहाँ पहुँचकर राजकुमारीने अपने स्वामीसे ये वचन कहे—'स्वामिन्! आपसे मैंने जो पहले प्रश्न किया था, उस समय आपने मुझे 'कोकामुख-क्षेत्र' में पहुँचकर बतलानेका आश्वासन दिया था, अतः अब बतानेकी कृपा कीजिये।' इसपर राजकुमारने अपनी भार्यासे स्नेहपूर्वक कहा—'प्रिये! अब रात्रि हो गयी है। इस समय तुम सुखपूर्वक सो जाओ। वह सब मैं प्रातःकाल बताऊँगा।' प्रातःकाल वे दोनों स्नान करके रेशमी वस्त्र धारण करके बैठे। राजकुमारने सर्वप्रथम सिर झुकाकर भगवान् विष्णुको प्रणाम किया। तत्पश्चात् वह अपनी पत्नीको पकड़कर, पूर्व-उत्तर-भागमें (अपने मत्स्य-देहकी पड़ी) अस्थियोंको दिखाकर कहने लगा—'प्रिये! ये मेरे पूर्व शरीरकी हड्डियाँ हैं। पूर्वजन्ममें मैं मत्स्य था। एक बार जब मैं इस 'कोकामुख' क्षेत्रके जलमें विचर रहा था कि एक व्याधने बंसीसे मुझे पकड़ लिया। उस समय मैं अपनी शक्ति लगाकर उसके हाथसे तो निकल गया; पर एक चील मुझे लेकर फिर उड़ गयी और नखोंसे मेरे शरीरको क्षत-विक्षत कर दिया। इतनेमें उससे छूटकर मैं गिर गया। उसीके किये हुए प्रहारके कारण अब भी मेरे सिरमें वेदना बनी रहती है। इस प्रसङ्गको केवल मैं ही जानता हूँ। मेरे बिना इस रहस्यको कोई दूसरा नहीं जानता। भद्रे! तुमने जो बात पूछी थी, मैंने उसका रहस्य बतला दिया। सुन्दरि! तुम्हारा कल्याण हो, अब तुम्हारा मन जहाँ लगे, वहाँ जा सकती हो।'

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi